Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका

(पूर्वार्द्ध)

पण्डित प्रवर टोडरमलजी

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आचार्य नेमीचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती विरचित गोम्मटसार कर्मकाण्ड की
आचार्यकल्प पण्डित प्रवर टोडरमलजी कृत भाषाटीका

सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका

(द्वितीय खण्ड पूर्वार्द्ध)

गोम्मटसार कर्मकाण्ड एवं उसकी भाषा टीका

प्रकाशक :
सत्साहित्य प्रकाशन एवं प्रचार विभाग
श्री कुन्दकुन्द कहान दिगम्बर जैन तीर्थ सुरक्षा ट्रस्ट
ए-४, बापूनगर , जयपुर - ३०२०१५

प्रथम संस्करण : २२००
(२६ जनवरा १९९४)

मूल्य : पच्चीस रुपया
मुद्रक : श्री बालचन्द्र यन्त्रालय, जयपुर - १८

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Thanks & Our Request

This shastra has been donated by Suresh and Mina Shah, London who has paid for it to be "electronised" and made available on the internet.

Our request to you:

1) Great care has been taken to ensure this electronic version of Samyag Gnaan Chandrika Part 2 - Purva Ardh (Hindi) is a faithful copy of the paper version. However if you find any errors please inform us on rajesh@AtmaDharma.com so that we can make this beautiful work even more accurate.

2) Keep checking the version number of the on-line shastra so that if corrections have been made you can replace your copy with the corrected one.

Version History

Version Number	Date	Changes
001	28 Mar 2011	First electronic version

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रकाशकीय

आचार्य नेमीचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती विरचित गोम्मटसार कर्मकाण्ड की आचार्यकल्प पण्डित टोडरमलजी कृत भाषाटीका, जो सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका के नाम से विख्यात है, के द्वितीय खण्ड का पूर्वार्द्ध प्रकाशन करते हुए हमें हार्दिक प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है।

दिगम्बराचार्य नेमीचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती करणानुयोग के महान् आचार्य थे। गोम्मटसार जीवकाण्ड, गोम्मटसार कर्मकाण्ड, लब्धिसार, क्षपणासार, त्रिलोकसार तथा द्रव्यसंग्रह ये महत्त्वपूर्ण कृतियाँ आपकी प्रमुख देन हैं। पण्डितप्रवर टोडरमलजी ने गोम्मटसार जीवकाण्ड व कर्मकाण्ड तथा लब्धिसार व क्षपणासार की भाषाटीकाएँ पृथक-पृथक बनाई थीं। चूँकि ये चारों टीकाएँ परस्पर एक दूसरे से सम्बन्धित तथा सहायक थीं, अत: सुविधा की दृष्टि से उन्होंने उक्त चारों टीकाओं को मिलाकर एक ही ग्रन्थ के रूप में प्रस्तुत कर दिया तथा इस ग्रन्थ का नामकरण उन्होंने "सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका" किया।

इस सम्बन्ध में पण्डित टोडरमलजी स्वयं लिखते हैं —

या विधि गोम्मटसार, लब्धिसार ग्रन्थनिकी,
भिन्न-भिन्न भाषाटीका कीनी अर्थ गायकैं।
इनिकै परस्पर सहायकपनौ देख्यौ
तातैं एककर दई हम तिनकौ मिलायकै॥
सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका धर्यो है याकौ नाम,
सोई होत है सफल ज्ञानानन्द उपजायकै।
कलिकाल रजनी में अर्थ को प्रकाश करै,
यातै निजकाय कीजै इष्टभाव भायकै॥

इस ग्रन्थ की पीठिका के सम्बन्ध में मोक्षमार्ग प्रकाशक की प्रस्तावना लिखते हुए डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल लिखते हैं —

"सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका विवेचनात्मक गद्यशैली में लिखी गई है। प्रारम्भ में इकहतर पृष्ठ की पीठिका है। आज नवीन शैली के क्षेत्र में लगभग दो सौ बीस वर्ष पूर्व लिखी गई सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका की पीठिका आधुनिक भूमिका का आरम्भिक रूप है। किन्तु भूमिका का आद्यरूप होने पर भी उसमें प्रौढ़ता पाई जाती है, उसमें हल्कापन कहीं भी देखने को नहीं मिलता। इसके पढ़ने से ग्रन्थ का पूरा हार्द खुल जाता है एवं इस गूढ़ ग्रन्थ के पढ़ने में आनेवाली पाठक की समस्त कठिनाइयाँ दूर हो जाती हैं। हिन्दी आत्मकथा के साहित्य में जो महत्त्व महाकवि पण्डित बनारसीदास के "अर्द्धकथानक" को प्राप्त है, वही महत्त्व हिन्दी भूमिका साहित्य में सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका की पीठिका का है।"

इस ट्रस्ट द्वारा गतवर्ष सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका का प्रथम भाग (गोम्मटसार जीवकाण्ड) प्रकाशित किया गया था, जिसका समाज ने बड़े आदर के साथ स्वागत किया और अल्पकाल में ही इस बृहत ग्रन्थ की हजारों प्रतियाँ बिक गई। अब इसका यह द्वितीय भाग का पूर्वार्द्ध (कर्मकाण्ड) प्रकाशित किया जा रहा है।

गोम्मटसार कर्मकाण्ड के पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध दो भाग करने की हमारी मजबूरी रही है। कर्मकाण्ड को लैटरप्रेस पर मुद्रण हेतु दिया था पर लम्बे अन्तराल के पश्चात् भी वह आधा ही छप सका। मुद्रण की

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तकनीक में इस बीच बड़ा बदलाव आया और अब कम्प्यूटर से तत्काल कम्पोज होकर सालों में होने वाला काम कुछ ही महिनों में होने लग गया है। तकनीक में आये इस बदलाव को देखते हुए यही निश्चय किया कि अब जितना छप चुका है उसका विषय वहीं समाप्त कर नए विषय से उत्तरार्द्ध का भाग कम्प्यूटर से कम्पोज करवाकर ऑफसैट पद्धति से मुद्रित करा लिया जाए। फलतः यह भाग पूर्वार्द्ध के रूप में आपके समक्ष प्रस्तुत है। इस कर्मकाण्ड का उत्तरार्द्ध भी प्रेस में दे दिया गया है जो शीघ्र ही आपके हाथों में होगा। तृतीय खण्ड लब्धिसार तो प्रकाशित हो ही चुका है।

इस ग्रन्थ का प्रकाशन बड़ा ही श्रम साध्य कार्य था। इसके प्रथम खण्ड जीवकाण्ड एवं लब्धिसार-क्षपणसार के तो संतोषजनक संपादन होकर पहले प्रकाशित हो ही चुके हैं। इस द्वितीय खण्ड कर्मकाण्ड के संपादन के लिये बहुत परिश्रम के साथ हस्तलिखित प्रतियों से पाठभेद मिलाकर एवं अशुद्धियाँ निकालकर सामग्री तैयार करने का कठिन कार्य ब्र. बहिन श्री कल्पनाबहन एम. ए. ने किया था लेकिन भाग्ययोग से वह समस्त सामग्री हमें प्राप्त होने से पूर्व ही खो गई, फलतः इसका संपादन कार्य नहीं हो सका। अन्ततोगत्वा पिछली प्रकाशित प्रति से इस प्रकाशन का मिलान कर ही इसको प्रकाशित करना पड़ा। इस कार्य को सम्पन्न करने में एवं अन्तिम प्रूफ देखने का कार्य श्री सौभागमलजी वोहरा, बापूनगर, जयपुर ने किया, यदि वे यह काम नहीं देखते तो फिर न मालूम यह कबतक प्रकाशित हो पाता। अतः वे दोनों महानुभाव धन्यवाद के पात्र हैं।

ग्रन्थ का प्रकाशन इस विभाग के प्रभारी श्री अखिल बंसल ने सम्हाला है, अतः उनका आभार मानते हुए जिन महानुभावों ने इस ग्रन्थ की कीमत कम करने में आर्थिक सहयोग दिया है उनके नाम ग्रन्थ के अन्त में दिये गये हैं; उन्हें धन्यवाद देता हूँ।

इस ट्रस्ट के विषय में तो कया कहूँ, ट्रस्ट की गतिविधियों से सारा समाज परिचित ही है। तीर्थक्षेत्रों का जीर्णोद्धार एवं उनका सर्वेक्षण तो इस ट्रस्ट के माध्यम से हुआ ही है। इसकी सबसे बड़ी उपलब्धि है श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय, जिसके माध्यम से सैंकड़ों विद्वान जैन समाज को मिले हैं और निरन्तर मिल रहे हैं।

साहित्य प्रकाशन एवं प्रचार विभाग के माध्यम से अनुकरणीय कार्य इस ट्रस्ट द्वारा हो रहा है। आचार्य कुन्दकुन्द के पंचपरमागम समयसार, प्रवचनसार, नियमसार, अष्टपाहुड़ तथा पंचास्तिकायसंग्रह जैसे महत्त्वपूर्ण ग्रन्थों का प्रकाशन तो इस विभाग द्वारा हुआ ही है, साथ ही मोक्षशास्त्र, मोक्षमार्ग प्रकाशक, श्रावकधर्मप्रकाश, पुरुषार्थसिद्ध्युपाय, ज्ञानस्वभाव-ज्ञेयस्वभाव, छहढाला, समयसार-नाटक, चिद्विलास, वीतराग-विज्ञान प्रवचन भाग-१, २, ३ व ४ आदि का प्रकाशन भी इस विभाग ने किया है। प्रचार कार्य को भी गति देने के लिए विद्वानों को नियुक्त किया गया है, जो गाँव-गाँव में जाकर विभिन्न माध्यमों से तत्त्वप्रचार में संलग्न हैं।

इस अनुपम ग्रन्थ के माध्यम से आप अपना आत्मकल्याण कर भव का अभाव करें ऐसी मंगलकामना के साथ।

– नेमीचन्द पाटनी

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

विषय-सूची

गोम्मटसार कर्मकाण्ड

क्रम	प्रकरण	पृष्ठ संख्या
१.	सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका पीठिका	१-६८
२.	मंगलाचरण एवं प्रतिज्ञा	६९
	प्रथमाधिकार (प्रकृति समुत्कीर्तनाधिकार)	**६९-११९**
३.	प्रकृति का स्वरूप	७०
४.	संसारी जीवों में कर्म नोकर्म का ग्रहण	७१
५.	प्रत्येक समय में ग्रहणयोग्य परमाणुओं की संख्या	७१
६.	समय-समय में बंध, उदय और सत्त्व का परिणाम	७२
७.	कर्मों के भेद वा प्रभेद	७२-७३
८.	आठ कर्मों के नाम एवं घातिया-अघातिया का स्वरूप	७३-७४
९.	जीव के गुण	७४
१०.	आयु कर्म का कार्य	७४
११.	नाम कर्म का कार्य	७५
१२.	गोत्र कर्म का कार्य	७५
१३.	वेदनीय कर्म का कार्य	७५
१४.	जीव के गुणों को आवरण करने वाले कर्मों का क्रम	७६
१५.	अंतराय को सबसे अंत में देने का कारण तथा अन्य कर्मों का क्रम	७७
१६.	कर्मों के दृष्टांत	७८
१७.	उत्तर प्रकृतियों की उत्पत्ति का अनुक्रम तथा उनका स्वरूप	७९-८२
१८.	पाँच शरीरों के अंग	८२-८३
१९.	शरीर बंधन के पाँच प्रकार	८३-८४
२०.	छह प्रकार के संहनन	८४
२१.	कौन-कौन संहनन वाले कहाँ-कहाँ उत्पन्न हो सकते हैं	८४-८५
२२.	पाँच प्रकार के वर्ण आदि नामकर्म के तेरानवे व एक सौ तीन भेद	८५-८६
२३.	गोत्र कर्म के दो भेद	८६
२४.	अंतराय कर्म के पाँच प्रकार	८६
२५.	उत्तर प्रकृतियों की निरुक्ति	८७-९४
२६.	उत्तर प्रकृतियों की अभेद विवक्षा	९५

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

२७. बंध, उदय और सत्ता रूप प्रकृतियाँ	९५-९६
२८. घातिकर्म के दो भेद, सर्वघाति और देशघाति	९६-९७
२९. अघाति कर्मों के दो भेद, प्रशस्त, अप्रशस्त प्रकृति	९८-९९
३०. कषायों के कार्य	१००
३१. संज्वलनादि चार कषायों का वासनाकाल	१०१
३२. पुद्गल विपाकी प्रकृतियाँ	१०१
३३. भव विपाकी, क्षेत्र विपाकी और जीव विपाकी प्रकृतियाँ	१०२
३४. जीव विपाकी प्रकृतियों के नाम और संख्या	१०२
३५. नामकर्म की ७२ जीव विपाकी प्रकृतियों के नाम और क्रम	१०२-१०४
३६. नामादि निक्षेपों का स्वरूप	१०४
३७. ज्ञानावरणादि समुदाय रूप सामान्य कर्म तथा उनके नाम, द्रव्य और भाव	१०५-१०७
३८. मूल शरीर के विशेष	१०७
३९. कदलीघात का लक्षण	१०७
४०. सन्यास मरण के तीन विधान	१०८
४१. सन्यास मरण के काल प्रमाण	१०८
४२. इंगिनी और प्रायोपगमन-मरण के लक्षण	१०८
४३. नो आगम द्रव्यकर्म का दूसरा भेद भावि शरीर का स्वरूप	१०९
४४. नो आगम द्रव्यकर्म का तीसरा भेद तद् व्यतिरिक्त शरीर का स्वरूप	१०९-११०
४५. मूलप्रकृति, उत्तरप्रकृति और उनके नामादि भेद	१११
४६. मूल प्रकृतियों में नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव	११२
४७. उत्तर-प्रकृतियों में नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव	११३-११८
४८. नो आगम-भावकर्म की परिभाषा	११८-११९
बंधोदय सत्त्वाधिकार	**१२०-३९९**
४९. मंगलाचरण	१२०
प्रकृति बंध वर्णन	**१२०-१५५**
५०. सत्त्व की परिभाषा	१२०-१२१
५१. बंध का कथन एवं बंध के भेद	१२१
५२. उत्कृष्टादि के भेद	१२२
५३. अजघन्य के चार प्रकार	१२३
५४. गुणस्थानों में प्रकृति बंध का नियम	१२३
५५. तीर्थंकर प्रकृति के बंध में विशेष नियम	१२४

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

५६. गुणस्थानादि में बंध व्युच्छित्ति वा बंध वा अबंध का कथन	१२४
५७. गुणस्थानों में व्युच्छित्ति	१२५
५८. व्युच्छित्ति के कथन में उत्पादानुच्छेद और अनुत्पादानुच्छेद	१२५
५९. व्युच्छित्तिरूप प्रकृतियों के नाम	१२६-१२९
६०. बंध और अबंध	१३०-१३१
६१. मार्गणाओं में व्युच्छित्ति, बंध, अबंध का वर्णन (नरकगति में)	१३१-१३३
६२. तिर्यंचगति में व्युच्छित्ति आदि का वर्णन	१३४-१३५
६३. मनुष्यगति में व्युच्छित्ति आदि का वर्णन	१३५
६४. देवगति में व्युच्छित्ति आदि का वर्णन	१३६-१३८
६५. अनुदिश-अनुत्तरवासी देवों में इकहत्तर प्रकृतियों का बंध	१३९-१४०
६६. चारों गति संबंधी निवृत्ति-अपर्याप्तकों का कथन	१४०-१५०
६७. मूल प्रकृतियों में सादि-अनादि बंध का विशेष कथन	१५१
६८. बंधों के लक्षण	१५१-१५२
६९. उत्तर प्रकृतियों सादि-अनादि बंध का कथन	१५२-१५३
७०. इन्हीं में अप्रतिपक्ष और सप्रतिपक्षरूप भेद	१५३-१५५
७१. अध्रुव प्रकृतियों में सादि और अध्रुव बंध ही कहने का कारण	१५५
७२. स्थिति बंध वर्णन	१५५-१९५
७३. मूल प्रकृतियों की उत्कृष्ट स्थिति	१५५
७४. उत्तर प्रकृतियों की उत्कृष्ट स्थिति	१५६-१५९
७५. अवशेष एक सौ सोलह प्रकृतियों की उत्कृष्ट-स्थिति	१५९-१६३
७६. मूल प्रकृतियों का जघन्य स्थिति बंध	१६३
७७. उत्तर प्रकृतियों का जघन्य स्थिति बंध	१६४-१६७
७८. जघन्य स्थितिबंध की कुछ विशेषतायें	१६७-१६९
७९. जघन्य स्थितिबंध का साधनभूत करणसूत्र का वर्णन	१६९-१८१
८०. शलाकाओं का विवरण	१८३-१८५
८१. संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्तक-अपर्याप्तक के उत्कृष्ट और जघन्य स्थितिबंध के भेद	१८५-१८७
८२. जघन्य स्थितिबंध किन जीवों के होता है	१८७
८३. अजघन्यादि स्थिति भेदों में सावद्यादि के भेद	१८८
८४. उत्तर प्रकृतियों में विशेष	१८८
८५. आबाधा का लक्षण	१८९
८६. मूल प्रकृतियों में आबाधा का वर्णन	१८९-१९०

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

८७. अंत: कोटाकोटी सागर प्रमाण स्थिति की आबाधा का प्रमाण १९०-१९१
८८. आयुकर्म की आबाधा १९१
८९. उदीरणा की अपेक्षा आबाधा १९२
९०. निषेक का स्वरूप १९३-१९५

अनुभाग बंध वर्णन **१९६-२०६**

९१. जघन्य अनुभाग बंध वालों का वर्णन १९६-१९८
९२. पंद्रह और दो प्रकृतियों का विवरण १९८-२००
९३. मूल प्रकृतियों उत्कृष्टादि अनुभाग तथा उनमें
साादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव भेदों का वर्णन २००-२०२
९४. ध्रुव प्रकृतियों में प्रशस्त अप्रशस्त और अध्रुव
प्रकृतियों के अनुभाग बंध में सादि आदि भेद २०३
९५. अनुभाग का स्वरूप एवं घातिकर्मों में अनुभाग का कथन २०३-२०४
९६. उत्तर-प्रकृतियों में मिथ्यात्व प्रकृति की विशेषता २०४-२०६
९७. अघातिकर्मों की प्रकृतियाँ २०६
९८. प्रशस्त-अप्रशस्त अघातिकर्मों के स्पर्धक एवं नाम २०६

प्रदेशबंध वर्णन **२०७-२८७**

९९. प्रदेशबंध का प्रमाण २०७-२०९
१००. पूर्वोक्त भेदों में सादि द्रव्य का प्रमाण २०९
१०१. अनादि द्रव्य का प्रमाण २१०-२११
१०२. समयप्रबद्ध का प्रमाण २११
१०३. समय प्रबद्ध का मूल प्रकृतियों में विभाग २११-२१२
१०४. विभाग का अनुक्रम २१३
१०५. मूल प्रकृतियों में पिंड रूप द्रव्य का उत्तर प्रकृतियों में विभाग २१४
१०६. घातिकर्मों में सर्वघाति देशघाति द्रव्य का बँटवारा २१५
१०७. सर्वघाति द्रव्य का प्रमाण के लिए प्रति भाग हार का प्रमाण २१६
१०८. सर्वघाति देशघाति द्रव्य के विशेष विभाग का अनुक्रम २१८
१०९. उत्तर प्रकृतियों में विभाग २१९
११०. मोहनीय की विशेषता और विभाग २२२
१११. नोकषायरूप पिंड प्रकृतियों का द्रव्य विशेष २२४
११२. नोकषाय के निरन्तर बंध का काल २२५
११३. अंतराय की पाँच प्रकृति में नाम के बंधस्थान २२६

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

११४. मूल प्रकृतियों में उत्कृष्टादि प्रदेशबंधों के सादि आदि का विशेष	२२९
११५. उत्तर प्रकृतियों में उत्कृष्टादि प्रदेशबंधों का विशेष	२२९
११६. तेंतीस प्रकृतियों का विवरण	२३०
११७. उत्कृष्ट प्रदेशबंध होने की सामग्री	२३०
११८. मूलप्रकृतियों के उत्कृष्ट बंध का स्वामीपना (गुणस्थानों में)	२३१
११९. उत्तर प्रकृतियों के उत्कृष्ट बंध का विवरण	२३१
१२०. जघन्य प्रदेशबंध का स्वामित्व मूलप्रकृतियों में	२३२
१२१. जघन्य प्रदेशबंध का स्वामित्व उत्तरप्रकृतियों में	२३२
१२२. प्रकृति प्रदेशबंध का कारण योगस्थान, उनका स्वरूप संख्या व सामग्री	२३६
१२३. उपपादयोग स्थानों का स्वरूप	२३६
१२४. परिणाम योगस्थानों का स्वरूप	२३७
१२५. एकांतानुवृद्धि योगस्थानों का स्वरूप	२३७
१२६. योगस्थानों के अवयव	२३८
१२७. योगस्थानों का स्वरूप	२३९
१२८. एक स्थान में सर्व स्पर्धादिक का प्रमाण	२४०
१२९. जघन्य योगस्थानक का कथन	२४७
१३०. जघन्य स्थान से लेकर उत्कृष्टपर्यंत जीवों के योगस्थान	२४८
१३१. आगामी कथन की प्रतिज्ञा	२५०
१३२. सूक्ष्मबादर का जघन्य और उत्कृष्ट क्रम	२५४
१३३. गुणक का विवरण	२५६
१३४. एक योगस्थान से अन्ययोगस्थान का विवरण, यवकार रचना	२५६-२५९
१३५. पर्याप्त त्रस जीवों का परिणाम, योगस्थानों में जीवों का प्रमाण उसकी यव रचना	२५९-२६९
१३६. इन योगस्थानों के धारक जीवों की संख्या	२६९-२७०
१३७. प्रदेशबंध में समयप्रबद्ध की वृद्धि का प्रमाण	२७०-२७२
१३८. योगस्थानों में आदि अंत स्थान कहते हैं	२७२
१३९. पूर्व चार प्रकार के बंध-कारण	२७२
१४०. योगस्थान, प्रकृति संग्रह, स्थिति भेद, स्थिति बंधाध्यवसाय-स्थान, अनुभाग बंधाध्यवसायस्थान और कर्मों के प्रदेश का अल्पबहुत्व	२७३-२८७
१४१. उदय वर्णन	२८७-२९७
१४२. गुणस्थानों में उदय का निरुपण	२८७
१४३. आनुपूर्वी के उदय का विशेष वर्णन	२८७-२८८

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

१४४. चूर्ण सूत्र के कर्ता यतिवृषभाचार्य के अनुसार उदयादि का अनुक्रम	२८८-२९०
१४५. भूतबलि आचार्यकृत धवलशास्त्र के उपदेशानुसार व्युच्छित्ति प्रकृतियों का वर्णन	२९०-२९१
१४६. सयोग केवली को साता, असाता का उदय	२९४-२९६
१४७. उदय-अनुदय का वर्णन	२९६
१४८. उदय प्रकृतियों की उदीरणा	२९७
१४९. उदीरणा की व्युच्छित्ति	२९८
१५०. उदीरणा-अनुदीरणा रूप प्रकृतियों की संख्या	२९९-३००
१५१. अब गत्यादिक मार्गणाओं में उदय की त्रिभंगी	३००
१५२. गत्यादिक में उदय का अनुक्रम और परिभाषा	३००-३०२
१५३. नरकगति में उदय का नियम, उनतीस प्रकृतियों के नाम	३०२-३०३
१५४. नरकगति में उदयव्युच्छित्ति	३०३-३०४
१५५. तिर्यंचगति में उदयव्युच्छित्ति	३०४-३०८
१५६. मनुष्यगति में उदयव्युच्छित्ति	३०८-३१३
१५७. देवगति में उदयव्युच्छित्ति	३१३-३१५
१५८. इन्द्रिय मार्गणा में उदय व्युच्छित्ति	३१५-३१७
१५९. कायमार्गणा में उदय व्युच्छित्ति	३१७-३१९
१६०. त्रस मार्गणा में उदय व्युच्छित्ति	३१९-३२१
१६१. योगमार्गणा में उदय व्युच्छित्ति	३२१-३२८
१६२. वेदमार्गणा में उदय व्युच्छित्ति	३२८-३३२
१६३. कषायमार्गणा में उदय व्युच्छित्ति	३३२-३३३
१६४. ज्ञानमार्गणा में उदय व्युच्छित्ति	३३३-३३६
१६५. दर्शन मार्गणा में उदय व्युच्छित्ति	३३६-३३७
१६६. लेश्यामार्गणा में उदय व्युच्छित्ति	३३७-३४०
१६७. भव्य मार्गणा में उदय व्युच्छित्ति	३४१-३४२
१६८. सम्यक्त्व मार्गणा में उदय व्युच्छित्ति	३४२-३४४
१६९. संज्ञी मार्गणा में उदय व्युच्छित्ति	३४४-३४६
१७०. आहार मार्गणा में उदय व्युच्छित्ति	३४६-३४७
सत्त्व वर्णन	३४७-३६७
१७१. गुणस्थानों में सत्ता का निरुपण	३४७-३४९
१७२. अनिवृत्तिकरणादिक में क्षययोग प्रकृतियों का अनुक्रम	३५०

१७३. सोलह आदि प्रकृतियों का वर्णन ३५०-३५२
१७४. सत्त्व असत्त्व का वर्णन ३५२-३५३
१७५. उपशम श्रेणी में अवशेष इक्कीस प्रकृतियों का उपशम विधान ३५३-३५५
१७६. नरकगति में सत्त्व वर्णन ३५५-३५६
१७७. मनुष्यगति में सत्त्व वर्णन ३५७
१७८. देवगति में सत्त्व वर्णन ३५७-३५८
१७९. इन्द्रिय, काय मार्गणा में सत्त्व वर्णन ३५८-३५९
१८०. उद्वेलन प्रकृतियों का वर्णन ३५९
१८१. कौन जीव किस प्रकृति की उद्वेलना करता है ? ३५९
१८२. योगमार्गणा में उद्वेलना वर्णन ३६१-३६२
१८३. औदारिक मिश्र योग में उद्वेलना वर्णन ३६२
१८४. वेद मार्गणा आदि में उद्वेलना वर्णन ३६२-३६७

सत्त्वस्थान भंगाधिकार **३६९-३९९**

१८५. गुणस्थानों में स्थान और भंग कहने का विधान ३६९
१८६. प्रथम पक्ष में आयु का बंध-अबंध का वर्णन ३६९-३७०
१८७. सामान्य वर्णन में सत्ता का वर्णन ३७०
१८८. घटायी गई प्रकृतियों का वर्णन ३७०
१८९. गुणस्थानों में आयु बंधाबंध के भेदों में स्थान संख्या ३७१
१९०. इन स्थानों में भंगों की संख्या ३७१-३७२
१९१. मिथ्यादृष्टि में अठारह स्थानों में प्रकृतियों की संख्या, आयु बंध-अबंध की विवक्षा ३७२
१९२. घटाई हुई प्रकृतियों के नाम ३७३-३८०
१९३. अठारह स्थानों के पुनरुक्त और समभंग बिना जो भंग कहे उनकी संख्या ३८०-३८१
१९४. सासादन-मिश्र में स्थान और भंगों की संख्या ३८१
१९५. मिश्र गुणस्थान में हीन प्रकृति और भंग संख्या ३८२
१९६. असंयत में चालीस स्थान और उनके एक सौ बीस बंध ३८३
१९७. तीर्थंकर, आहारक की अपेक्षा विशेष है ३८५
१९८. घटाई हुई प्रकृतियों का वर्णन ३८६-३९१
१९९. उपशम श्रेणी संबंधी गुणस्थानों में स्थान भंग कहते हैं ३९२
२००. अपूर्वकरण स्थान भंग, घटाई हुई प्रकृतियों के नाम, स्थानों में भंग ३९२-३९५
२०१. क्षपक सूक्ष्मसांपराय और क्षीणकषाय में स्थान भंग ३९५-३९६
२०२. सयोगी-अयोगी में स्थान भंग ३९६-३९७

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

२०३. स्थानों की और भंगों की संख्या ३९७-३९९
२०४. अथ त्रिचूलिका अधिकार ४००-४०६
२०५. नवप्रश्न चूलिका ४००-४०१
२०६. तीन प्रश्नों की प्रकृति ४०१-४०२
२०७. तीन प्रश्नों की प्रकृति ४०२-४०३
२०८. तीन प्रश्नों की प्रकृति ४०३-४०६
अथ पंचभागहारचूलिका **४०७-४१९**
२०९. संक्रमण का स्वरूप ४०७-४१०
२१०. सर्व संक्रमण प्रकृतियों में तिर्यक् एकादश है ४१०
२११. उद्वेलना-प्रकृति वर्णन ४१०
२१२. सर्व संक्रमण रूप प्रकृतियों का क्रम ४११-४१५
२१३. स्थिति-अनुभाग बंध के और प्रदेश-बंध का संक्रमण के गुणस्थानों की संख्या ४१५
२१४. पंचभागहार का अल्पबहुत्व ४१६-४१९
२१५. दशकरण चूलिका ४१९-४२४
२१६. श्रुतगुरु को नमस्कार ४१९
२१७. गुणस्थानों में हुये करण का वर्णन ४२१

श्री कुन्दकुन्द कहान दि. जैन तीर्थ सुरक्षा ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित महत्त्वपूर्ण साहित्य

१.	समयसार	२०.००	१०.	श्रावकधर्म प्रकाश	५.००
२.	प्रवचनसार	१६.००	११.	पुरुषार्थसिद्ध्युपाय	६.००
३.	नियमसार	१५.००	१२.	चिद्विलास	२.५०
४.	अष्टपाहुड़	१६.००	१३.	भक्तामर प्रवचन	४.५०
५.	पंचास्तिकाय संग्रह	१०.००	१४.	वीतराग-विज्ञान भाग-४ (छहढाला प्रवचन)	५.००
६.	मोक्षशास्त्र	२०.००			
७.	मोक्षमार्ग प्रकाशक	१०.००	१५.	ज्ञानस्वभाव-ज्ञेयस्वभाव	१२.००
८.	समयसार नाटक	१५.००	१६.	युगपुरुष कानजी स्वामी	२.००
९.	छहढाला	५.००			

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आचार्यकल्प पण्डितप्रवर टोडरमलजीकृत

सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका

पीठिका

॥ मंगलाचरण ॥

बंदौं ज्ञानानंदकर, नेमिचन्द गुणकंद ।
माधव वंदित विमलपद, पुण्यपयोनिधि नंद ॥ १ ॥
दोष दहन गुन गहन घन, अरि करि हरि अरहंत ।
स्वानुभूति रमनी रमन, जगनायक जयवंत ॥ २ ॥
सिद्ध सुद्ध साधित सहज, स्वरससुधारसधार ।
समयसार शिव सर्वगत, नमत होहु सुखकार ॥ ३ ॥
जैनी वानी विविध विधि, वरनत विश्वप्रमान ।
स्यात्पद-मुद्रित अहित-हर, करहु सकल कल्यान ॥ ४ ॥
मैं नमो नगन जैन जन, ज्ञान-ध्यान धन लीन ।
मैन मान बिन दान घन, एन हीन तन छीन ॥ ५ ॥ [१]
इहविधि मंगल करन तैं, सबविधि मंगल होत ।
होत उदंगल दूरि सब, तम ज्यौं भानु उदोत ॥ ६ ॥

सामान्य प्रकरण

अथ मंगलाचरण करि श्रीमद् गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसंग्रह ग्रंथ, ताकी देशभाषामयी टीका करने का उद्यम करौ हौं। सो यहु ग्रंथसमुद्र तौ ऐसा है जो सातिशय बुद्धि-बल संयुक्त जीवनि करि भी जाका अवगाहन होना दुर्लभ है । अर मैं मंदबुद्धि अर्थ प्रकाशनेरूप याकी टीका करनी विचारौं हौं ।

सो यहु विचार ऐसा भया जैसें कोऊ अपने मुख तैं जिनेंद्रदेव का सर्व गुण वर्णन किया चाहै, सो कैसें बनै ?

इहां कोऊ कहै – नाहीं बनै है तो उद्यम काहे कौं करौ हौ ?

ताकौं कहिये है – जैसें जिनेंद्रदेव के सर्व गुण कहने की सामर्थ्य नाहीं, तथापि भक्त पुरुष भक्ति के वश तैं अपनी बुद्धि अनुसार गुण वर्णन करै, तैसें इस ग्रंथ का संपूर्ण अर्थ प्रकाशने की सामर्थ्य नाहीं । तथापि अनुराग के वश तैं मैं अपनी बुद्धि अनुसार (गुण)[२] अर्थ प्रकाशोंगा ।

१. यह चित्रालंकारयुक्त है ।
२. गुण शब्द घ प्रति में मिला ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि कोऊ कहै कि – अनुराग है तो अपनी बुद्धि अनुसार ग्रंथाभ्यास करो, मंदबुद्धिनि कौं टीका करने का अधिकारी होना युक्त नाहीं ।

ताकौं कहिये है – जैसै किसी शिष्यशाला विषैं बहुत बालक पढैं हैं । तिनिविषैं कोऊ बालक विशेष ज्ञान रहित है, तथापि अन्य बालकनि तैं अधिक पढ्या है, सो आपतैं थोरे पढ़ने वाले बालकनि कौं अपने समान ज्ञान होने के अर्थि किछू लिखि देना आदि कार्य का अधिकारी हो है । तैसैं मेरे विशेष ज्ञान नाहीं, तथापि काल दोष तैं मोतैं भी मंदबुद्धि हैं, अर होंहिंगे । तिनिकैं मेरे समान इस ग्रंथ का ज्ञान होने के अर्थि टीका करने का अधिकारी भया हौं ।

बहुरि कोऊ कहै कि – यहु कार्य करना तो विचार्या, परन्तु जैसैं छोटा मनुष्य बड़ा कार्य करना विचारै, तहां उस कार्य विषैं चूक होई ही, तहां वह हास्य कौं पावै है । तैसैं तुम भी मंदबुद्धि होय, इस ग्रंथ की टीका करनी विचारौ हौं सो चूक होइगी, तहां हास्य कौं पावोगे ।

ताकौं कहिये है – यहु तौ सत्य है कि मैं मंदबुद्धि होइ ऐसैं महान ग्रंथ की टीका करनी विचारौ हौं, सो चूक तौ होइ, परन्तु सज्जन हास्य नाहीं करैंगे । जैसैं औरनि तैं अधिक पढ़्या बालक कहीं भूलै तब बड़े ऐसा विचारैं हैं कि बालक है, भूलै ही भूलै, परंतु और बालकनि तैं भला है, ऐसैं विचारि हास्य नाहीं करैं हैं । तैसैं मैं इहां कहीं भूलोंगा तहां सज्जन पुरुष ऐसा विचारैंगे कि मंदबुद्धि था, सौ भूलै ही भूलै, परंतु केतेइक अतिमंदबुद्धीनि तैं भला है, ऐसैं विचारि हास्य न करैंगे ।

सज्जन तो हास्य न करैंगे, परन्तु दुर्जन तौ हास्य करैंगे ?

ताकौं कहिये है कि – दुष्ट तौ ऐसैं ही हैं, जिनके हृदय विषैं औरनि के निर्दोष भले गुण भी विपरीतरूप ही भासैं । सो उनका भय करि जामैं अपना हित होय ऐसे कार्य कौं कौन न करैगा ?

बहुरि कोऊ कहै कि – पूर्व ग्रंथ थे ही, तिनिका अभ्यास करने-करावने तैं ही हित हो है, मंदबुद्धिनि करि ग्रंथ की टीका करने की महंतता काहेकौं प्रगट कीजिये ?

ताकौं कहिये है कि – ग्रंथ अभ्यास करने तैं ग्रंथ की टीका रचना करने विषैं उपयोग विशेष लागै है, अर्थ भी विशेष प्रतिभासै है । बहुरि अन्य जीवनि कौं ग्रंथ अभ्यास करावने का संयोग होना दुर्लभ है । अर संयोग होइ तौ कोई ही जीव के अभ्यास होइ । अर ग्रंथ की टीका बनै तौ परंपरा अनेक जीवनि कैं अर्थ का ज्ञान होइ । तातै अपना अर अन्य जीवनि का विशेष हित होने के अर्थि टीका करिये है, महंतता का तौ किछू प्रयोजन नाहीं ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि कोऊ कहै कि इस कार्य विषैं विशेष हित हो है सो सत्य, परंतु मंदबुद्धि तैं कहीं भूलि करि अन्यथा अर्थ लिखिए, तहां महत् पाप उपजने तैं अहित भी तो होइ ?

ताकौं कहिए है – यथार्थ सर्व पदार्थनि का ज्ञाता तौ केवली भगवान हैं। औरनि कैं ज्ञानावरण का क्षयोपशम के अनुसारी ज्ञान है, तिनिकौं कोई अर्थ अन्यथा भी प्रतिभासै, परंतु जिनदेव का ऐसा उपदेश है – कुदेव, कुगुरु, कुशास्त्रनि के वचन की प्रतीति करि वा हठ करि वा क्रोध, मान, माया, लोभ करि वा हास्य, भयादिक करि जो अन्यथा श्रद्धान करै वा उपदेश देइ, सो महापापी है। अर विशेष ज्ञानवान गुरु के निमित्त बिना, वा अपने विशेष क्षयोपशम बिना कोई सूक्ष्म अर्थ अन्यथा प्रतिभासै अर यहु ऐसा जानै कि जिनदेव का उपदेश ऐसैं ही है, ऐसा जानि कोई सूक्ष्म अर्थ कौं अन्यथा श्रद्धै है वा उपदेश दे तौ याकौं महत् पाप न होइ। सोइ इस ग्रंथ विषैं भी आचार्य करि कहा है –

सम्माइट्ठी जीवो, उवइट्ठं पवयणं तु सद्दहदि।
सद्दहदि असब्भावं, अजाणमाणो गुरुणियोगा ॥२७॥ जीवकांड ॥

बहुरि कोऊ कहै कि – तुम विशेष ज्ञानी तैं ग्रंथ का यथार्थ सर्व अर्थ का निर्णय करि टीका करने का प्रारंभ क्यों न कीया ?

ताकौं कहिये है – काल दोष तैं केवली, श्रुतकेवली का तौ इहां अभाव ही भया। बहुरि विशेष ज्ञानी भी विरले पाइए। जो कोई है तौ दूरि क्षेत्र विषैं हैं, तिनिका संयोग दुर्लभ। अर आयु, बुद्धि, बल, पराक्रम आदि तुच्छ रहि गए। तातैं जो बन्या सो अर्थ का निर्णय कीया, अवशेष जैसैं है तैसैं प्रमाण हैं।

बहुरि कोऊ कहै कि – तुम कही सो सत्य, परंतु इस ग्रंथ विषैं जो चूक होइगी, ताके शुद्ध होने का किछू उपाय भी है ?

ताकौं कहिये है – एक उपाय यहु कीजिए है – जो विशेष ज्ञानवान पुरुषनि का प्रत्यक्ष तौ संयोग नाहीं, तातैं परोक्ष ही तिनिस्यों ऐसी बीनती करौ हौं कि मैं मंद बुद्धि हौं, विशेषज्ञान रहित हौं, अविवेकी हौं, शब्द, न्याय, गणित, धार्मिक आदि ग्रंथनि का विशेष अभ्यास मेरे नाहीं है, तातैं शक्तिहीन हौं; तथापि धर्मानुराग के वश तैं टीका करने का विचार कीया, सो या विषैं जहां-जहां चूक होइ, अन्यथा अर्थ होइ, तहां-तहां मेरे ऊपरि क्षमा करि तिस अन्यथा अर्थ कौं दूरि करि यथार्थ अर्थ लिखना। ऐसैं विनती करि जो चूक होइगी, ताके शुद्ध होने का उपाय कीया है।

बहुरि कोऊ कहै कि तुम टीका करनी विचारी सो तौ भला कीया, परंतु ऐसे महान ग्रंथनि की टीका संस्कृत ही चाहिये। भाषा विषैं याकी गंभीरता भासै नाहीं।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ताकौं कहिये है – इस ग्रंथ की **जीवतत्त्वप्रदीपिका** नामा संस्कृत टीका तौ पूर्वें है ही। परन्तु तहां संस्कृत, गणित, आम्नाय आदि का ज्ञान रहित जे मंदबुद्धि हैं, तिनिका प्रवेश न हो है। बहुरि इहां काल दोष तें बुद्धयादिक के तुच्छ होने करि संस्कृतादि ज्ञान रहित घने जीव हैं। तिनिके इस ग्रंथ के अर्थ का ज्ञान होने के अर्थि भाषा टीका करिए है। सो जे जीव संस्कृतादि विशेषज्ञान युक्त हैं, ते मूलग्रंथ वा संस्कृत टीका तें अर्थ धारैंगे। बहुरि जे जीव संस्कृतादि विशेष ज्ञान रहित हैं, ते इस भाषा टीका तें अर्थ धारौ। बहुरि जे जीव संस्कृतादि ज्ञान सहित हैं, परंतु गणित आम्नायादिक के ज्ञान के अभाव तें मूलग्रंथ वा संस्कृत टीका विषैं प्रवेश न पावै हैं, ते इस भाषा टीका तें अर्थ कौं धारि, मूल ग्रंथ वा संस्कृत टीका विषैं प्रवेश करहु। बहुरि जो भाषा टीका तें मूल ग्रंथ वा संस्कृत टीका विषैं अधिक अर्थ होइ, ताके जानने का अन्य उपाय बनै सो करहु।

इहां कोऊ कहै – संस्कृत ज्ञानवालों कैं भाषा अभ्यास विषैं अधिकार नाहीं।

ताकौं कहिये है – संस्कृत ज्ञानवालों कौं भाषा वांचने तें कोई दोष तो नाहीं उपजै है, अपना प्रयोजन जैसें सिद्ध होइ तैसें ही करना। पूर्वें अर्धमागधी आदि भाषामय महान ग्रंथ थे। बहुरि बुद्धि की मंदता जीवनि के भई, तब संस्कृतादि भाषामय ग्रंथ बने। अब विशेष बुद्धि की मंदता जीवनि कैं भई तातैं देश भाषामय ग्रंथ करने का विचार भया। बहुरि संस्कृतादिक का अर्थ भी अब भाषाद्वार करि जीवनि कौं समझाइये है। इहां भाषाद्वार करि ही अर्थ लिख्या तो किछू दोष नाहीं है।

ऐसें विचारि श्रीमद् **गोम्मटसार** द्वितीयनामा **पंचसंग्रह** ग्रंथ की 'जीवतत्त्व प्रदीपिका' नामा संस्कृत टीका, ताकै अनुसारि **'सम्यग्ज्ञानचंद्रिका'** नामा यहु देशभाषामयी टीका करने का निश्चय किया है। सो श्री अरहंत देव वा जिनवाणी वा निर्ग्रंथ गुरुनि के प्रसाद तें वा मूल ग्रंथकर्ता नेमिचद्र आदि आचार्यनि के प्रसाद तें यहु कार्य सिद्ध होहु।

अब इस शास्त्र के अभ्यास विषैं जीवनि कौं सन्मुख करिए है। हे भव्यजीव हौ! तुम अपने हित कौं वांछौ हौ तौ तुमकौं जैसें बनै तैसें या शास्त्र का अभ्यास करना। जातैं आत्मा का हित मोक्ष है। मोक्ष बिना अन्य जो है, सो परसंयोग-जनित है, विनाशीक है, दुःखमय है। अर मोक्ष है सोई निज स्वभाव है, अविनाशी है, अनंत सुखमय है। तातैं मोक्ष पद पावने का उपाय तुमकौं करना। सो मोक्ष के उपाय सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र हैं। सो इनकी प्राप्ति जीवादिक के स्वरूप जानने ही तैं हो है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सो कहिए है – जीवादि तत्त्वनि का श्रद्धान सम्यग्दर्शन है । सो बिना जानैं श्रद्धान का होना आकाश का फूल समान है । पहिलैं जानै तब पीछैं तैसैं ही प्रतीति करि श्रद्धान कौं प्राप्त हो है । तातैं जीवादिक का जानना श्रद्धान होने तें पहिलैं जो होइ सोई तिनके श्रद्धान रूप सम्यग्दर्शन का कारण जानना । बहुरि श्रद्धान भए जो जीवादिक का जानना होइ, ताही का नाम सम्यग्ज्ञान है । बहुरि श्रद्धानपूर्वक जीवादि जानै स्वयमेव उदासीन होइ, हेय कौं त्यागै, उपादेय कौं ग्रहै, तब सम्यक् चारित्र हो है । अज्ञानपूर्वक क्रियाकांड तें सम्यक्चारित्र होइ नाहीं । ऐसैं जीवादिक कौं जानने ही तें सम्यग्दर्शनादि मोक्ष के उपायनि की प्राप्ति निश्चय करनी । सो इस शास्त्र के अभ्यास तें जीवादिक का जानना नीकै हो है । जातैं संसार है सोई जीव अर कर्म का सबंध रूप है । बहुरि विशेष जानैं इनका संबंध का जो अभाव होइ सोई मोक्ष है । सो इस शास्त्र विषैं जीव अर कर्म का ही विशेष निरूपण है । अथवा जीवादिक षड् द्रव्य, सप्त तत्त्वादिकनि का भी या विषें नीकैं निरूपण है । तातैं इस शास्त्र का अभ्यास अवश्य करना ।

अब इहां केइ जीव इस शास्त्र का अभ्यास विषैं अरुचि होने कौं कारण विपरीत विचार प्रकट करै हैं । तिनिकौं समझाइए है । तहां जीव प्रथमानुयोग वा चरणानुयोग वा द्रव्यानुयोग का केवल पक्ष करि इस करणानुयोगरूप शास्त्र विषैं अभ्यास कौं निषेधै हैं ।

तिनिविषैं प्रथमानुयोग का पक्षपाती कहै है कि – इदानीं जीवनि की बुद्धि मंद बहुत है, तिनिकैं ऐसैं सूक्ष्म व्याख्यानरूप शास्त्र विषैं किछु समझना होइ नाहीं तातैं तीर्थंकरादिक की कथा का उपदेश दीजिए तौ नीकै समझैं, अर समझि करि पाप तें डरैं, धर्मानुरागरूप होइ, तातैं प्रथमानुयोग का उपदेश कार्यकारी है ।

ताकौं कहिये है – अब भी सर्व ही जीव तौ एक से न भए हैं । हीनाधिक बुद्धि देखिए है । तातैं जैसा जीव होइ, तैसा उपदेश देना । अथवा मंदबुद्धि भी सिखाए हुए अभ्यास तें बुद्धिमान होते देखिए है । तातैं जे बुद्धिमान हैं, तिनिकौं तौ यहु ग्रंथ कार्यकारी है ही अर जे मंदबुद्धि हैं, ते विशेषबुद्धिनि तें सामान्य-विशेष रूप गुणस्थानादिक का स्वरूप सीखि इस शास्त्र का अभ्यास विषैं प्रवर्तौ ।

इहां मंदबुद्धि कहै है कि – इस गोम्मटसार शास्त्र विषैं तौ गणित समस्या अनेक अपूर्व कथन करि बहुत कठिनता सुनिए है, हम कैसैं या विषैं प्रवेश पावैं ?

तिनकौं कहिये है – भय मति करौ, इस भाषा टीका विषै गणित आदि का अर्थ सुगमरूप करि कह्या है , तातैं प्रवेश पावना कठिन रह्या नाहीं । बहुर या

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

शास्त्र विषैं कथन कहीं सामान्य है, कहीं विशेष है, कहीं सुगम है, कहीं कठिन है; तहां जो सर्व अभ्यास बनै तौ नीकै ही है, अर जो न बनै तौ अपनी बुद्धि के अनुसार जैसा बनै तैसा ही अभ्यास करौ। अपने उपाय में आलस्य करना नाहीं।

बहुरि तैं कह्या – प्रथमानुयोग संबंधी कथादिक सुनैं पाप तैं डरै हैं, अर धर्मानुरागरूप हो हैं।

सो तहां तौ दोऊ कार्य शिथिलता लीए हो हैं। इहां पाप-पुण्य के कारणकार्यादिक विशेष जानने तैं ते दोऊ कार्य दृढता लिए हो हैं। तातैं याका अभ्यास करना। ऐसैं प्रथमानुयोग के पक्षपाती कौं इस शास्त्र का अभ्यास विषैं सन्मुख कीया।

अब चरणानुयोग का पक्षपाती कहै है कि – इस शास्त्र विषैं कह्या जीव-कर्म का स्वरूप, सो जैसें है तैसें है ही, तिनिकौं जानैं कहा सिद्धि हो है ? जो हिंसादिक का त्याग करि व्रत पालिए, वा उपवासादि तप करिए, वा अरहंतादिक की पूजा, नामस्मरण आदि भक्ति करिए, वा दान दीजिए, वा विषयादिक स्यों उदासीन हूजै इत्यादि शुभ कार्य करिए तो आतमहित होइ। तातैं इनका प्ररूपक चरणानुयोग का उपदेशादिक करना।

ताकौं कहिए है – हे स्थूलबुद्धि ! तैं व्रतादिक शुभ कार्य कहे, ते करने योग्य ही हैं। परंतु ते सर्व सम्यक्त्व विना असै है जैसै अंक बिना बिंदी। अर जीवादिक का स्वरूप जानैं बिना सम्यक्त्व का होना ऐसा जैसे बांझ का पुत्र। तातैं जीवादिक जानने के अर्थि इस शास्त्र का अभ्यास अवश्य करना। बहुरि तैं जैसैं व्रतादिक शुभ कार्य कहे अर तिनितैं पुण्यबंध हो है। तैसैं जीवादिक का स्वरूप जाननेरूप ज्ञानाभ्यास है, सो प्रधान शुभ कार्य है। यातैं सातिशय पुण्य का बंध हो है। बहुरि तिन व्रतादिकनि विषैं भी ज्ञानाभ्यास की ही प्रधानता है, सो कहिए है–

जो जीव प्रथम जीव समासादि जीवादिक के विशेष जानै, पीछै यथार्थ ज्ञान करि हिंसादिक कौं त्यागि व्रत धारै, सोई व्रती है। बहुरि जीवादिक के विशेष जानै बिना कथंचित् हिंसादिक का त्याग तैं आपकौं व्रती मानै, सो व्रती नाहीं। तातैं व्रत पालने विषैं ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है।

बहुरि तप दोय प्रकार है – एक बहिरंग, एक अंतरंग। तहां जाकरि शरीर का दमन होइ, सो बहिरंग तप है, अर जातैं मन का दमन होइ, सो अंतरंग तप है। इनि विषैं बहिरंग तप तैं अंतरंग तप उत्कृष्ट है। सो उपवासादिक तौ बहिरंग तप है। ज्ञानाभ्यास अंतरंग तप है। सिद्धांत विषैं भी छह प्रकार अंतरंग तपनि विषैं चौथा स्वाध्याय नाम तप कह्या है। तिसतैं

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

उत्कृष्ट व्युत्सर्ग अर ध्यान ही है । तातैं तप करने विषैं भी ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है । बहुरि जीवादिक के विशेषरूप गुणस्थानादिकनि का स्वरूप जानै ही अरहंतादिकनि का स्वरूप नीकै पहिचानिए है, वा अपनी अवस्था पहिचानिए है । ऐसी पहिचानि भए जो तीव्र अंतरंग भक्ति प्रकट हो है, सोई बहुत कार्यकारी है । बहुरि जो कुलक्रमादिक तें भक्ति हो है, सो किंचिन्मात्र ही फल की दाता है । तातैं भक्ति विषैं भी ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है ।

बहुरि दान चार प्रकार है – तिनिविषैं आहारदान, औषधदान, अभयदान तौ तात्कालिक क्षुधा के दुःख कौं वा रोग के दुःख कौं, वा मरणादि भय के दुःख ही कौं दूर करै है । **अर ज्ञानदान है सो अनंत भव संतान संबंधी दुःख दूर करने कौं कारण है ।** तीर्थंकर, केवली, आचार्यादिकनि कैं भी ज्ञानदान की प्रवृत्ति है । तातैं ज्ञानदान उत्कृष्ट है, सो अपनैं ज्ञानाभ्यास होइ तो अपना भला करै, अर अन्य जीवनि कौं ज्ञानदान देवै । ज्ञानाभ्यास बिना ज्ञानदान देना कैसैं होइ ? तातैं दान विषैं भी ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है ।

बहुरि जैसैं जन्म तें ही केई पुरुष ठिगनि के घर गए – तहां तिन ठिगनि कौं अपने मानै हैं । बहुरि कदाचित् कोऊ पुरुष किसी निमित्त स्यों अपने कुल का वा ठिगनि का यथार्थ ज्ञान होनै तें ठिगनि स्यों अंतरंग विषैं उदासीन भया, तिनिकौं पर जानि संबंध छुड़ाया चाहै है । बाह्य जैसा निमित्त है तैसा प्रवर्त्तै है । बहुरि कोऊ पुरुष तिन ठिगनि कौं अपना ही जानै है अर किसी कारण तें कोऊ ठिग स्यों अनुरागरूप प्रवर्तै है । कोई ठिग स्यों लड़ि करि उदासीन भया आहारादिक का त्यागी होइ है ।

तैसैं अनादि तें सर्व जीव संसार विषैं प्राप्त हैं, तहां कर्मनि कौं अपने मानै हैं । बहुरि कोइ जीव किसी निमित्त स्यों जीव का अर कर्म का यथार्थ ज्ञान होनै तें कर्मनि स्यों उदासीन भया, तिनिकौं पर जानने लगा, तिनस्यों संबंध छुड़ाया चाहै है । बाह्य जैसै निमित्त है तैसैं वर्त्तै है । ऐसैं जो ज्ञानाभ्यास तें उदासीनता होइ सोई कार्यकारी है । बहुरि कोई जीव तिन कर्मनि कौं अपने जानै है । अर किसी कारण तें कोई शुभ कर्म स्यों अनुराग रूप प्रवर्तै है । कोई अशुभ कर्म स्यों दुःख का कारण जानि उदासीन भया विषयादिक का त्यागी हो है । ऐसैं ज्ञान बिना जो उदासीनता होइ सो पुण्यफल की दाता है, मोक्ष कार्य कौं न साधे है । तातैं उदासीनता विषैं भी ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है । याही प्रकार अन्य भी शुभ कार्यनि विषैं ज्ञानाभ्यास ही प्रधान जानना । देखो ! महामुनीनि कैं भी ध्यान-अध्ययन दोय ही कार्य मुख्य हैं । तातैं शास्त्र अध्ययन तें जीव-कर्म का स्वरूप जानि स्वरूप का ध्यान करना ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि इहां कोऊ तर्क करै कि – कोई जीव शास्त्र अध्ययन तौ बहुत करै है। अर विषयादिक का त्यागी न हो है, ताकैं शास्त्र अध्ययन कार्यकारी है कि नाहीं ? जो है तौ महंत पुरुष काहेकौं विषयादिक तजैं, अर नाहीं है तौ ज्ञानाभ्यास का महिमा कहां रह्या ?

ताका समाधान – शास्त्राभ्यासी दोय प्रकार हैं, एक लोभार्थी, एक धर्मार्थी। तहां जो अंतरंग अनुराग बिना-ख्याति-पूजा-लाभादिक के अर्थि शास्त्राभ्यास करै, सो लोभार्थी है, सो विषयादिक का त्याग नाही करै है। अथवा ख्याति, पूजा, लाभादिक कै अर्थि विषयादिक का त्याग भी करै है, तौ भी ताका शास्त्राभ्यास कार्यकारी नाहीं।

बहुरि जो अंतरंग अनुराग तैं आत्म हित के अर्थि शास्त्राभ्यास करै है, सो धर्मार्थी है। सो प्रथम तौ जैन शास्त्र ऐसे हैं जिनका धर्मार्थी होइ अभ्यास करै, सो विषयादिक का त्याग करै ही करै। ताकै तौ ज्ञानाभ्यास कार्यकारी है ही। बहुरि कदाचित् पूर्वकर्म का उदय की प्रबलता तैं न्यायरूप विषयादिक का त्याग न बनै है तौ भी ताकैं सम्यग्दर्शन, ज्ञान के होने तैं ज्ञानाभ्यास कार्यकारी हो है। जैसै असंयत गुणस्थान विषैं विषयादिक का त्याग बिना भी मोक्षमार्गपना संभवै है।

इहां प्रश्न – जो धर्मार्थी होइ जैन शास्त्र अभ्यासै, ताकै विषयादिक का त्याग न होइ सो यहु तौ बनै नाहीं। जातैं विषयादिक के सेवन परिणामनि तैं हो है, परिणाम स्वाधीन हैं।

तहाँ समाधान – परिणाम ही दोय प्रकार है। एक बुद्धिपूर्वक, एक अबुद्धिपूर्वक। तहां अपने अभिप्राय के अनुसारि होइ सो बुद्धिपूर्वक। अर दैव – निमित्त तै अपने अभिप्राय तैं अन्यथा होइ सो अबुद्धिपूर्वक। जैसै सामायिक करतें धर्मात्मा का अभिप्राय ऐसा है कि मैं मेरे परिणाम शुभरूप राखों। तहां जो शुभपरिणाम ही होइ सो तौ बुद्धिपूर्वक। अर कर्मोदय तैं स्वयमेव अशुभ परिणाम होइ, सो अबुद्धिपूर्वक जानने। तैसै धर्मार्थी होइ जो जैन शास्त्र अभ्यासै है ताको अभिप्राय तौ विषयादिक का त्याग रूप वीतराग भाव का ही होइ, तहां वीतराग भाव होइ, तौ बुद्धिपूर्वक है। अर चारित्रमोह के उदय तैं सराग भाव होइ तौ अबुद्धिपूर्वक है। तातैं बिना वश जे सरागभाव हो हैं, तिनकरि ताकैं विषयादिक की प्रवृत्ति देखिये है। जातैं बाह्य प्रवृत्ति को कारण परिणाम है।

इहां तर्क – जो ऐसैं है तो हम भी विषयादिक सेवेंगे अर कहेंगे – हमारे उदयाधीन कार्य हो है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ताकौं कहिये है – रे मूर्ख ! किछू कहने तैं तौ होता नाहीं ! सिद्धि तौ अभिप्राय के अनुसारि है। तातैं जैन शास्त्र के अभ्यास तैं अपना अभिप्राय कौं सम्यक्‌रूप करना। अर अंतरंग विषैं विषयादिक सेवन का अभिप्राय होतैं तौ धर्मार्थी नाम पावै नाहीं।

ऐसैं चरणानुयोग के पक्षपाती कौं इस शास्त्र का अभ्यास विषैं सन्मुख कीया।

अब द्रव्यानुयोग का पक्षपाती कहै है कि – इस शास्त्र विषैं जीव के गुणस्थानादिक रूप विशेष अर कर्म के विशेष वर्णन किए, तिनकौं जानैं अनेक विकल्प तरंग उठैं, अर किछू सिद्धि नाहीं। तातैं अपने शुद्धस्वरूप कौं अनुभवना वा अपना अर पर का भेदविज्ञान करना – इतना ही कार्यकारी है। अथवा इनके उपदेशक जे अध्यात्मशास्त्र, तिनका ही अभ्यास करना योग्य है।

ताकौं कहिये है – हे सूक्ष्माभासबुद्धि ! तैं कह्या सो सत्य, परंतु अपनी अवस्था देखनी। जो स्वरूपानुभव विषैं वा भेदविज्ञान विषैं उपयोग निरंतर रहै, तौ काहेकौं अन्य विकल्प करने। तहां ही स्वरूपानंदसुधारस का स्वादी होइ संतुष्ट होना। परन्तु नीचली अवस्था विषैं तहां निरन्तर उपयोग रहै नाहीं। उपयोग अनेक अवलंबनि कौं चाहै है। तातैं जिस काल तहां उपयोग न लागै, तब गुणस्थानादि विशेष जानने का अभ्यास करना।

बहुरि तैं कह्या कि - अध्यात्मशास्त्रनि का ही अभ्यास करना, सो युक्त ही है। परन्तु तहां भेदविज्ञान करने के अर्थि स्व-पर का सामान्यपनैं स्वरूप निरूपण है। अर विशेष ज्ञान बिना सामान्य का जानना स्पष्ट होइ नाहीं। तातैं जीव के अर कर्म के विशेष नीकै जानैं ही स्व-पर का जानना स्पष्ट हो है। तिस विशेष जानने कौं इस शास्त्र का अभ्यास करना। जातैं सामान्य शास्त्र तैं विशेष शास्त्र बलवान है। सो ही कह्या है– "**सामान्यशास्त्रतो नूनं विशेषो बलवान् भवेत्।**"

इहां वह कहै है कि – अध्यात्मशास्त्रनि विषैं तौ गुणस्थानादि विशेषनिकरि रहित शुद्धस्वरूप का अनुभवना उपादेय कह्या है। इहां गुणस्थानादि सहित जीव का वर्णन है। तातैं अध्यात्मशास्त्र अर इस शास्त्र विषैं तौ विरुद्ध भासै है, सो कैसैं है ?

ताकौं कहिये है नय दोय प्रकार है – एक निश्चय, एक व्यवहार। तहां निश्चयनय करि जीव का स्वरूप गुणस्थानादि विशेष रहित अभेद वस्तु मात्र ही है। अर व्यवहारनय करि गुणस्थानादि विशेष संयुक्त अनेक प्रकार है। तहां जे जीव सर्वोत्कृष्ट, अभेद, एक स्वभाव कौं अनुभवै हैं, तिनकौं तौ तहां शुद्ध उपदेश रूप जो शुद्ध निश्चयनय सो ही कार्यकारी है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जे स्वानुभव दशा कौं न प्राप्त भए, वा स्वानुभवदशा तैं छूटि सविकल्प दशा कौं प्राप्त भए ऐसे अनुत्कृष्ट जो अशुद्ध स्वभाव, तिहि विषैं तिष्ठते जीव, तिनकौं व्यवहारनय प्रयोजनवान है। सोई आत्मख्याति अध्यात्मशास्त्र विषैं कह्या है–

सुद्धो सुद्धादेसो, णादव्वो परमभावदरसीहिं।
ववहारदेसिदो पुण जे दु अपरमेट्ठिदा भावे ॥[१]

इस सूत्र की व्याख्या का अर्थ विचारि देखना।

बहुरि सुनि ! तेरे परिणाम स्वरूपानुभव दशा विषैं तौ प्रवर्तैं नाहीं। अर विकल्प जानि गुणस्थानादि भेदनि का विचार न करैगा तौ तू इतो भ्रष्ट ततो भ्रष्ट होय अशुभोपयोग ही (विषैं) प्रवर्त्तैगा, तहां तेरा बुरा होयगा।

बहुरि सुनि ! सामान्यपनैं तौ वेदांत आदि शास्त्राभासनि विषैं भी जीव का स्वरूप शुद्ध कहैं हैं, तहां विशेष जानैं बिना यथार्थ-अयथार्थ का निश्चय कैसैं होय ? तातैं गुणस्थानादि विशेष जानैं जीव की शुद्ध, अशुद्ध, मिश्र अवस्था का ज्ञान होइ, तब निर्णय करि यथार्थ का अंगीकार करै। **बहुरि सुनि ! जीव का गुण ज्ञान है, सो विशेष जानैं आत्मगुण प्रकट होइ, अपना श्रद्धान भी दृढ़ होय। जैसैं सम्यक्त्व है, सो केवलज्ञान भए परमावगाढ नाम पावै है।** तातैं विशेष जानना।

बहुरि वह कहै है – तुम कह्या सो सत्य, परंतु करणानुयोग तैं विशेष जानैं भी द्रव्यलिंगी मुनि अध्यात्म श्रद्धान बिना संसारी ही रहै। अर अध्यात्म अनुसारि तिर्यंचादिक कैं स्तोक श्रद्धान तैं भी सम्यक्त्व हो है। वा तुषमाष भिन्न इतना ही श्रद्धान तैं शिवभूति मुनि मुक्त भया। तातैं हमारी तौ बुद्धि तैं विशेष विकल्पनि का साधन होता नाहीं। प्रयोजनमात्र अध्यात्म अभ्यास करेंगे।

याकौं कहिये है – जो द्रव्यलिंगी जैसैं करणानुयोग तैं विशेष जानै है, तैसैं अध्यात्मशास्त्रनि का भी ज्ञान वाकै होय, परंतु मिथ्यात्व के उदय तैं अयथार्थ साधन करै तौ शास्त्र कहा करै ? शास्त्रनि विषैं तौ परस्पर विरुद्ध है नाहीं। कैसैं ? सो कहिये है – करणानुयोगशास्त्रनि विषैं भी अर अध्यात्मशास्त्रनि विषैं भी रागादिक भाव आत्मा के कर्म निमित्त तैं उपजे कहे। द्रव्यलिंगी तिनका आप कर्त्ता हुवा प्रवर्तै है। बहुरि शरीराश्रित सर्व शुभाशुभ क्रिया पुद्गलमय कहीं। द्रव्यलिंगी अपनी जानि तिनविषैं त्यजन, ग्रहण बुद्धि करै है। बहुरि सर्व ही शुभाशुभ भाव, आस्रव बंध के कारण कहे। द्रव्यलिंगी शुभभावन को संवर, निर्जरा, मोक्ष का कारण मानै है। बहुरि

१. समयसार, गाथा १२

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

शुद्धभाव संवर, निर्जरा, मोक्ष का कारण कह्या, ताकौं द्रव्यलिंगी पहिचानै ही नाहीं। बहुरि शुद्धात्मस्वरूप मोक्ष कह्या, ताका द्रव्यलिंगी के यथार्थ ज्ञान नाहीं। ऐसैं अन्यथा साधन करै तौ शास्त्रनि का कहा दोष है ?

बहुरि तैं तिर्यंचादिक कैं सामान्य श्रद्धान तैं कार्यसिद्धि कही, सो उनकैं भी अपना क्षयोपशम अनुसारि विशेष का जानना हो है। अथवा पूर्व पर्यायनि विषैं विशेष का अभ्यास कीया था, तिस संस्कार के बल तैं हो है। बहुरि जैसैं काहूने कहीं गड्या धन पाया, सो हम भी ऐसैं ही पावैंगे, ऐसा मानि सब ही कौं व्यापारादिक का त्यजन न करना। तैसैं काहूनैं स्तोक श्रद्धान तैं ही कार्य सिद्ध किया तो हम भी ऐसैं ही कार्य सिद्धि करैंगे – ऐसैं मानि सर्व ही कौं विशेष अभ्यास का त्यजन करना योग्य नाहीं, जातैं यहु राजमार्ग नाहीं। **राजमार्ग तौ यहु ही है – नानाप्रकार विशेष जानि तत्त्वनि का निर्णय भए ही कार्यसिद्धि हो है।**

बहुरि तैं कह्या, मेरी बुद्धि तैं विकल्पसाधन होता नाहीं, सो जेता बनैं तेता ही अभ्यास कर। बहुरि तू पापकार्य विषैं तौ प्रवीण, अर इस अभ्यास विषैं कहै मेरी बुद्धि नाहीं, सो यहु तौ पापी का लक्षण है।

ऐसैं द्रव्यानुयोग का पक्षपाती कौं इस शास्त्र का अभ्यास विषैं सन्मुख कीया। अब अन्य विपरीत विचारवालों कौं समझाइए है।

तहां शब्द-शास्त्रादिक का पक्षपाती बोलै है कि – व्याकरण, न्याय, कोश, छंद, अलंकार, काव्यादिक ग्रंथनि का अभ्यास करिए तो अनेक ग्रंथनि का स्वयमेव ज्ञान होय वा पंडितपना प्रगट होय। अर इस शास्त्र के अभ्यास तैं तो एक याही का ज्ञान होय वा पंडितपना विशेष प्रकट न होय, तातैं शब्द-शास्त्रादिक का अभ्यास करना।

ताकौं कहिये है – जो तू लोक विषैं ही पंडित कहाया चाहै है तौ तू तिन ही का अभ्यास किया करि। अर जो अपना कार्य किया चाहै है तो ऐसे जैनग्रन्थनि का अभ्यास करना ही योग्य है। बहुरि जैनी तौ जीवादिक तत्त्वनि के निरूपक जे जैनग्रन्थ तिन ही का अभ्यास भए पंडित मानैंगे।

बहुरि वह कहै है कि – मैं जैनग्रंथनि का विशेष ज्ञान होने ही के अर्थि व्याकरणादिकनि का अभ्यास करौं हौं।

ताकौं कहिए है – ऐसैं है तो भलै ही है, परंतु इतना है जैसैं स्याना खितहर अपनी शक्ति अनुसारि हलादिक तैं थोडा बहत खेत कौं संवारि समय विषैं बीज

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बोवै तौ ताकौं फल की प्राप्ति होइ। **वैसें तू भी जो अपनी शक्ति अनुसारि व्याकरणादिक का अभ्यास तें थोरी बहुत बुद्धि कौं संवारि यावत् मनुष्य पर्याय वा इंद्रियनि की प्रबलता इत्यादिक वर्तें हैं, तावत् समय विषैं तत्त्वज्ञान कौं कारण जे शास्त्र, तिनिका अभ्यास करेगा तौ तुझकौं सम्यक्त्वादि की प्राप्ति होयगी।**

बहुरि जैसें अयाना खितहर हलादिक तें खेत कौं संवारता संवारता ही समय कौं खोवै, तौं ताकौं फलप्राप्ति होने की नाहीं, वृथा ही खेदखिन्न भया। तैसें तू भी जो व्याकरणादिक तें बुद्धि कौं संवारता संवारता ही समय खोवेगा तौ सम्यक्त्वादिक की प्राप्ति होने की नाहीं। वृथा ही खेदखिन्न भया। बहुरि इस काल विषैं आयु बुद्धि आदि स्तोक हैं, तातैं प्रयोजनमात्र अभ्यास करना, शास्त्रनि का तौ पार है नाहीं। बहुरि सुनि ! केई जीव व्याकरणादिक का ज्ञानबिना भी तत्त्वोपदेशरूप भाषा शास्त्रनि करि, वा उपदेश सुनने करि, वा सीखने करि तत्त्वज्ञानी होते देखिये हैं। अर केई जीव केवल व्याकरणादिक का ही अभ्यास विषैं जन्म गमावै हैं, अर तत्त्वज्ञानी न होते देखिये हैं।

बहुरि सुनि ! व्याकरणादिक का अभ्यास करने तें पुण्य न उपजै है। धर्मार्थी होइ तिनका अभ्यास करै तौ किंचित् पुण्य उपजै। बहुरि तत्त्वोपदेशक शास्त्रनि का अभ्यास तें सातिशय महत् पुण्य उपजै है। तातैं भला यहु है – ऐसे तत्त्वोपदेशक शास्त्रनि का अभ्यास करना। ऐसें शब्द शास्त्रादिक का पक्षपाती कौं सन्मुख किया।

बहुरि अर्थ का पक्षपाती कहै है कि - इस शास्त्र का अभ्यास किए कहा है ? सर्व कार्य धन तें बनै हैं, धन करि ही प्रभावना आदि धर्म निपजै हैं। धनवान के निकट अनेक पंडित आनि (आय) प्राप्त होइ। अन्य भी सर्वकार्यसिद्धि होइ। तातैं धन उपजावने का उद्यम करना।

ताकौं कहिए है - रे पापी ! धन किछू अपना उपजाया तौ न हो है। भाग्य तें हो है, सो ग्रंथाभ्यास आदि धर्म साधन तें जो पुण्य निपजै, ताही का नाम भाग्य है। बहुरि धन होना है तौ शास्त्राभ्यास किए कैसें न होगा ? अर न होना है तौ शास्त्राभ्यास न किए कैसें होगा ? तातैं धन का होना, न होना तौ उदयाधीन है। शास्त्राभ्यास विषैं काहे कौं शिथिल हूजै। बहुरि सुनि ! धन है सो तौ विनाशीक है, भय संयुक्त है, पाप तें निपजै है, नरकादिक का कारण है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अर यहु **शास्त्राभ्यासरूप ज्ञानधन है सो अविनाशी है, भय रहित है, धर्मरूप है, स्वर्ग मोक्ष का कारण है**। सो महंत पुरुष तौ धनकादिक कौं छोड़ि शास्त्राभ्यास विषैं लगै हैं। तू पापी शास्त्राभ्यास कौं छुड़ाय धन उपजावने की बड़ाई करै है, सो तू अनंत संसारी है।

बहुरि तैं कह्या - प्रभावना आदि धर्म भी धन ही तैं हो हैं। सो प्रभावना आदि धर्म हैं सो किंचित् सावद्य क्रिया संयुक्त हैं। तिसतैं समस्त सावद्य रहित शास्त्राभ्यास रूप धर्म है, सो प्रधान है। ऐसें न होइ तौ गृहस्थ अवस्था विषैं प्रभावना आदि धर्म साधते थे, तिनि कौं छांड़ि संजमी होइ शास्त्राभ्यास विषैं काहे को लागै है ? बहुरि शास्त्राभ्यास तैं प्रभावनादिक भी विशेष हो है।

बहुरि तैं कह्या - धनवान के निकट पंडित भी आनि प्राप्त होइ। सो लोभी पंडित होंइ, अर अविवेकी धनवान होइ तहां ऐसैं हो है। अर शास्त्राभ्यासवालौं की तौ इंद्रादिक सेवा करै हैं। इहां भी बड़े बड़े महंत पुरुष दास होते देखिए हैं। तातैं शास्त्राभ्यासवालौं तैं धनवान कौं महंत मति जानै।

बहुरि तैं कह्या – धन तैं सर्व कार्यसिद्धि हो है। सो धन तैं तौ इस लोक संबंधी किछू विषयादिक कार्य ऐसा सिद्ध होइ, जातैं बहुत काल पर्यंत नरकादि दुःख सहने होइ। अर शास्त्राभ्यास तैं ऐसा कार्य सिद्ध हो है जातैं इहलोक विषैं अर परलोक विषैं अनेक सुखनि की परंपरा पाइए। तातैं धन उपजावने का विकल्प छोड़ि शास्त्राभ्यास करना। अर जो सर्वथा ऐसें न बनै तौ संतोष लिए धन उपजावने का साधनकरि शास्त्राभ्यास विषैं तत्पर रहना। ऐसैं अर्थ उपजावने का पक्षपाती कौं सन्मुख किया।

बहुरि कामभोगादिक का पक्षपाती बोलै है कि - शास्त्राभ्यास करने विषैं सुख नाहीं, बड़ाई नाहीं। तातैं जिन करि इहां ही सुख उपजै ऐसे जे स्त्रीसेवना, खाना, पहिरना, इत्यादि विषय, तिनका सेवन करिए। अथवा जिन करि यहां ही बड़ाई होइ ऐसे विवाहादिक कार्य करिए।

ताकौं कहिए है – विषयजनित जो सुख है सो दुःख ही है। जातैं विषय सुख है, सो परनिमित्त तैं हो है। पहिले, पीछैं, तत्काल आकुलता लिए है, जाके नाश होने के अनेक कारण पाइए है। आगामी नरकादि दुर्गति कौं प्राप्त करणहारा है। ऐसा है तौ भी तेरा चाह्या मिलै नाहीं, पूर्व पुण्य तैं हो है, तातैं विषम है। जैसे खाजि करि पीड़ित पुरुष अपना अंग कौं कठोर वस्तु तैं खुजावै, तैंसे इंद्रियनि करि

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पीड़ित जीव, तिनकी पीड़ा सही न जाय तब किंचिन्मात्र तिस पीडा के प्रतिकार से भासै – ऐसैं जे विषयसुख तिन विषैं झंपापात लेवै है, परमार्थरूप सुख है नाहीं ।

बहुरि **शास्त्राभ्यास करनेतैं भया जो सम्यग्ज्ञान, ताकरि निपज्या जो आनन्द, सो सांचा सुख है । जातैं सो सुख स्वाधीन है, आकुलता रहित है, काहू करि नष्ट न हो है, मोक्ष का कारण है, विषम नाहीं ।** जैसैं खाजि न पीडै, तब सहज ही सुखी होइ, तैसैं तहां इंद्रिय पीड़ने कौं समर्थ न होइ, तब सहज ही, सुख कौं प्राप्त हो है । तातैं विषय सुख छोड़ि शास्त्राभ्यास करना । (जो) सर्वथा न छूटे तौ जेता बनै तेता छोड़ि, शास्त्राभ्यास विषैं तत्पर रहना ।

बहुरि तैं विवाहादिक कार्य विषैं बड़ाई होने की कही, सो केतेक दिन बड़ाई रहेगी ? जाकै अर्थि महापापारंभ करि नरकादि विषैं बहुतकाल दुःख भोगना होइगा । अथवा तुझ तैं भी तिन कार्यनि विषैं धन लगावनेवाले बहुत हैं, तातैं विशेष बड़ाई भी होने की नाहीं ।

बहुरि शास्त्राभ्यास तैं ऐसी बडाई हो है, जाकी सर्वजन महिमा करें, इंद्रादिक भी प्रशंसा करें अर परंपरा स्वर्ग मुक्ति का कारण है । तातैं विवाहादिक कार्यनि का विकल्प छोड़ि, शास्त्राभ्यास का उद्यम राखना । सर्वथा न छूटै तो बहुत विकल्प न करना । ऐसैं काम भोगादिक का पक्षपाती कौं शास्त्राभ्यास विषैं सन्मुख किया । या प्रकार अन्य जीव भी जे विपरीत विचार तैं इस ग्रंथ अभ्यास विषैं अरुचि प्रगट करें, तिनकौं यथार्थ विचार तैं इस शास्त्र के अभ्यास विषैं सन्मुख होना योग्य है ।

इहां अन्यमती कहै है कि – तुम अपने ही शास्त्र अभ्यास करने कौं दृढ किया । हमारे मत विषैं नाना युक्ति आदि करि संयुक्त शास्त्र हैं, तिनका भी अभ्यास क्यों न कराइए ?

ताकौं कहिए है – तुमारे मत के शास्त्रनि विषैं आत्महित का उपदेश नाहीं । जातैं कहीं शृंगार का, कहीं युद्ध का, कहीं काम सेवनादि का, कहीं हिंसादि का कथन है । सो ए तो बिना ही उपदेश सहज ही बनि रहें हैं । इनकौं तजें हित होई, ते तहां उलटे पोषे हैं, तातैं तिनतैं हित कैसे होइ ?

तहां वह कहै है – ईश्वरनै ऐसैं लीला करी है, ताकौं गावैं हैं, तिसतैं भला हो है ।

तहां कहिये है – जो ईश्वर कै सहज सुख न होगा, तब संसारीवत् लीला करि सुखी भया । जो (वह) सहज सुखी होता तौ काहेकौं विषयादि सेवन वा

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

युद्धादिक करता ? जातैं मंदबुद्धि हू बिना प्रयोजन किंचिन्मात्र भी कार्य न करै। तातैं जानिए है – वह ईश्वर हम सारिखा ही है, ताका जस गाएं कहा सिद्धि है ?

बहुरि वह कहै है कि – हमारे शास्त्रनि विषै वैराग्य, त्याग, अहिंसादिक का भी तौ उपदेश है।

तहां कहिए है – सो उपदेश पूर्वापर विरोध लिए है। कही विषय पोषे हैं, कहीं निषेधे हैं। कहीं वैराग्य दिखाय, पीछै हिंसादि का करना पोष्या है। तहां वातुलवचन-वत् प्रमाण कहा ?

बहुरि वह कहै है कि वेदांत आदि शास्त्रनि विषै तो तत्त्व ही का निरूपण है।

तहां कहिए है – सो निरूपण प्रमाण करि बाधित, अयथार्थ है। ताका निराकरण जैन के न्यायशास्त्रनि विषैं किया है, सो जानना। तातैं अन्यमत के शास्त्रनि का अभ्यास न करना।

ऐसै जीवनि कौं इस शास्त्र के अभ्यास विषै सन्मुख किया, तिनकौ कहिए है–

हे भव्य ! शास्त्राभ्यास के अनेक अंग हैं। शब्द का वा अर्थ का वांचना, या सीखना, सिखावना, उपदेश देना, विचारना, सुनना, प्रश्न करना, समाधान जानना, बार बार चरचा करना, इत्यादि अनेक अंग हैं। तहां जैसै बनै तैसै अभ्यास करना। जो सर्व शास्त्र का अभ्यास न बनै तौ इस शास्त्र विषैं सुगम वा दुर्गम अनेक अर्थनि का निरूपण है। तहां जिसका बनै तिसही का अभ्यास करना। परंतु अभ्यास विषै आलसी न होना।

देखो ! शास्त्राभ्यासकी महिमा, जाकौं होतैं परंपरा आत्मानुभव दशा कौं प्राप्त होइ – सो मोक्ष रूप फल निपजै है; सो तौ दूर ही तिष्ठौ। शास्त्राभ्यास तें तत्काल ही इतने गुण हो हैं। १. क्रोधादि कषायनि की तौ मंदता हो है। २. पंचइंद्रियनि की विषयनि विषैं प्रवृत्ति रुकै है। ३. अति चंचल मन भी एकाग्र हो है। ४. हिंसादि पंच पाप न प्रवर्तैं हैं। ५. स्तोक ज्ञान होतैं भी त्रिलोक के त्रिकाल संबंधी चराचर पदार्थनि का जानना हो है। ६. हेयोपादेय की पहिचान हो है। ७. आत्मज्ञान सन्मुख हो है, (ज्ञान आत्मसन्मुख हो है)। ८. अधिक-अधिक ज्ञान होतैं आनंद निपजै है। ९. लोकविषैं महिमा, यश विशेष हो है।१०. सातिशय पुण्य का बंध हो है – इत्यादिक गुण शास्त्राभ्यास करतैं तत्काल ही प्रगट होई हैं।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तातैं शास्त्राभ्यास अवश्य करना। बहुरि हे भव्य! शास्त्राभ्यास करने का समय पावना महादुर्लभ है। काहे तैं? सो कहिए हैं—

एकेंद्रियादि असंज्ञी पर्यंत जीवनिकें तौ मन ही नाहीं। अर नारकी वेदना पीड़ित, तिर्यंच विवेक रहित, देव विषयासक्त, तातैं मनुष्यनि कें अनेक सामग्री मिले शास्त्राभ्यास होइ। सो मनुष्य पर्याय का पावना ही द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव करि महादुर्लभ है।

तहां द्रव्य करि लोक विषैं मनुष्य जीव बहुत थोरे हैं, तुच्छ संख्यात मात्र ही हैं। अर अन्य जीवनि विषैं निगोदिया अनंत हैं, और जीव असंख्याते हैं।

बहुरि क्षेत्र करि मनुष्यनि का क्षेत्र बहुत स्तोक है, अढाई द्वीप मात्र ही है। अर अन्य जीवनि विषैं एकेंद्रिनि का सर्व लोक है, औरनिका केते इक राजू प्रमाण है। बहुरि काल करि मनुष्य पर्याय विषैं उत्कृष्ट रहने का काल स्तोक है, कर्मभूमि अपेक्षा पृथक्त्व कोटि पूर्व मात्र ही है। अर अन्य पर्यायनि विषैं उत्कृष्ट रहने का काल – एकेंद्रिय विषैं तो असंख्यात पुद्गल परिवर्तन मात्र, अर और विषैं संख्यातपल्य मात्र है।

बहुरि भाव करि तीव्र शुभाशुभपना करि रहित ऐसे मनुष्य पर्याय कौं कारण परिणाम होने अति दुर्लभ है। अन्य पर्याय कौं कारण अशुभरूप वा शुभरूप परिणाम होने सुलभ है। ऐसैं शास्त्राभ्यास का कारण जो पर्याप्त कर्मभूमिया मनुष्य पर्याय, ताका दुर्लभपना जानना।

तहां सुवास, उच्चकुल, पूर्णआयु, इंद्रियनि की सामर्थ्य, नीरोगपना, सुसंगति, धर्मरूप अभिप्राय, बुद्धि की प्रबलता इत्यादिक का पावना उत्तरोत्तर महादुर्लभ है। सो प्रत्यक्ष देखिए है। अर इतनी सामग्री मिले बिना ग्रंथाभ्यास बनै नाहीं। सो तुम भाग्यकरि यहु अवसर पाया है। तातैं तुमकौ हठ करि भी तुमारे हित होने के अर्थि प्रेरै हैं। जैसैं बनै तैसैं इस शास्त्र का अभ्यास करो। बहुरि अन्य जीवनि कौ जैसें बनै तैसें शास्त्राभ्यास करावौ। बहुरि जे जीव शास्त्राभ्यास करते होंइ, तिनकी अनुमोदना करहु। बहुरि पुस्तक लिखावना, वा पढ़ने, पढ़ावनेवालों की स्थिरता करनी, इत्यादिक शास्त्राभ्यास कौं बाह्यकारण, तिनका साधन करना। जातैं इनकरि भी परंपरा कार्यसिद्धि हो है वा महत्पुण्य उपजै है।

ऐसैं इस शास्त्र का अभ्यासादि विषैं जीवनि कौ रुचिवान किया।

—❀—

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

गोम्मटसार जीवकाण्ड सम्बन्धी प्रकरण

बहुरि जो यहु **सम्यग्ज्ञानचंद्रिका** नामा भाषा टीका, तिहिंविषैं संस्कृत टीका तें कहीं अर्थ प्रकट करने के अर्थि, वा कहीं प्रसंगरूप, वा कहीं अन्य ग्रंथ का अनुसारि लेइ अधिक भी कथन करियेगा। अर कहीं अर्थ स्पष्ट न प्रतिभासैगा, तहां न्यून कथन होइगा ऐसा जानना। सो इस भाषा टीका विषैं मुख्यपनैं जो-जो मुख्य व्याख्यान है, ताकौ अनुक्रमतें संक्षेपता करि कहिए है। जातै याके जानें अभ्यास करने-वालौं कें सामान्यपनै इतना तौ जानना होइ जो या विषैं ऐसा कथन है। अर क्रम जाने जिस व्याख्यान कौ जानना होइ, ताकौं तहां शीघ्र अवलोकि अभ्यास करै, वा जिनने अभ्यास किया होइ, ते याकौं देखि अर्थ का स्मरण करैं, सो सर्व अर्थ की सूचनिका कीए तौ विस्तार होई, कथन आगै है ही, तातैं मुख्य कथन की सूचनिका क्रम तैं करिए है।

तहाँ इस भाषा टीका विषैं सूचनिका करि कर्माष्टक आदि गरिणत का स्वरूप दिखाइ संस्कृत टीका के अनुसारि मंगलाचरणादि का स्वरूप कहि मूल गाथानि की टीका कीजिएगा। तहां इस शास्त्र विषैं दोय महा अधिकार हैं – एक जीवकांड, एक कर्मकांड। तहां जीवकांड विषैं बाईस अधिकार हैं।

तिनिविषैं **प्रथम गुणस्थानाधिकार** है। तिस विषैं गुणस्थाननि का नाम, वा सामान्य लक्षण कहि तिनिविषैं सम्यक्त्व, चारित्र अपेक्षा औदयिकादि संभवते भावनि का निरूपण करि क्रम तैं मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थाननि का वर्णन है। तहां मिथ्यादृष्टि विषैं पंच मिथ्यात्वादि का सासादन विषैं ताके काल वा स्वरूप का, मिश्र विषैं ताके स्वरूप का वा मरण न होने का, असंयत विषैं वेदकादि सम्यक्त्वनि का वा ताके स्वरूपादिक का, देश संयत विषैं ताके स्वरूप का वर्णन है। बहुरि प्रमत्त का कथन विषैं ताके स्वरूप का अर पंद्रह वा अस्सी वा साढ़े सैंतीस हजार प्रमाद भेदनि का अर तहां प्रसंग पाइ संख्या, प्रस्तार, परिवर्तन, नष्ट, समुद्दिष्ट करि वा गूढ यंत्र करि अक्षसंचार विधान का कथन है। जहां भेदनि कौ पलटि पलटि परस्पर लगाइए तहां अक्षसंचार विधान हो है। बहुरि अप्रमत्त का कथन विषैं स्वस्थान अर सातिशय दोय भेद कहि, सातिशय अप्रमत्त कै अधःकरण हो है, ताके स्वरूप वा काल वा परिणाम वा समय-समय संबंधी परिणाम वा एक-एक समय विषैं अनुकृष्टि विधान, वा तहां संभवते च्यारि आवश्यक इत्यादिक का विशेष वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ श्रेणी व्यवहार रूप गणित का कथन है। तिसविषैं सर्वधन, उत्तरधन, मुख,

भूमि, चय, गच्छ इत्यादि संज्ञानि का स्वरूप वा प्रमाण ल्यावनै कौं करणसूत्रनि का वर्णन है। बहुरि अपूर्वकरण का कथन विषैं ताके काल, स्वरूप, परिणाम, समय-समय संबंधी परिणामादिक का कथन है। बहुरि अनिवृत्तिकरण का कथन विषैं ताके स्वरूपादिक का कथन है। बहुरि सूक्ष्मसांपराय का कथन विषैं प्रसंग पाइ कर्मप्रकृतिनि के अनुभाग अपेक्षा अविभागप्रतिच्छेद, वर्ग, वर्गणा, स्पर्द्धक, गुणहानि, नाना-गुणहानिनि का अर पूर्वस्पर्द्धक, अपूर्वस्पर्धक, बादरकृष्टि, सूक्ष्मकृष्टि का वर्णन है। इत्यादि विशेष कथन है सो जानना। बहुरि उपशांतकषाय, क्षीणकषाय का कथन विषैं तिनके दृष्टांतपूर्वक स्वरूप का, सयोगी जिन का कथन विषैं नव केवललब्धि आदिक का, अयोगी विषैं शैलेश्यपना आदिक का कथन है। ग्यारह गुणस्थाननि विषैं गुणश्रेणी निर्जरा का कथन है। तहां द्रव्य कौं अपकर्षण करि उपरितन स्थिति अर गुणश्रेणी आयाम अर उदयावली विषैं जैसे दीजिए है, ताका वा गुणश्रेणी आयाम के प्रमाण का निरूपण है। तहां प्रसंग पाइ अंतर्मुहूर्त के भेदनि का वर्णन है। बहुरि सिद्धनि का वर्णन है।

बहुरि दूसरा जीवसमास अधिकार विषैं – जीवसमास का अर्थ वा होने का विधान कहि चौदह, उगणीस, वा सत्तावन, जीवसमासनि का वर्णन है। बहुरि च्यारि प्रकारि जीवसमास कहि, तहां स्थानभेद विषैं एक आदि उगणीस पर्यंत जीवस्थाननि का, वा इन ही के पर्याप्तादि भेद करि स्थाननि का वा अठ्याणवै वा च्यारि सै छह जीवसमासनि का कथन है। बहुरि योनि भेद विषैं शंखावर्तादि तीन प्रकार योनि का, अर सम्मूर्च्छनादि जन्म भेद पूर्वक नव प्रकार योनि के स्वरूप वा स्वामित्व का अर चौरासी लक्ष योनि का वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ च्यारि गतिनि विषैं सम्मूर्च्छनादि जन्म वा पुरुषादि वेद संभवै, तिनका निरूपण है। बहुरि अवगाहना भेद विषैं सूक्ष्मनिगोद अपर्याप्त आदि जीवनि की जघन्य, उत्कृष्ट शरीर की अवगाहना का विशेष वर्णन है। तहां एकेंद्रियादिक की उत्कृष्ट अवगाहना कहने का प्रसंग पाइ गोलक्षेत्र, संखक्षेत्र, आयत, चतुरस्रक्षेत्र का क्षेत्रफल करने का, अर अवगाहना विषैं प्रदेशनि की वृद्धि जानने के अर्थि अनंतभाग आदि चतुःस्थानपतित वृद्धि का, अर इस प्रसंग तें दृष्टांतपूर्वक षट्स्थानपतित आदि वृद्धि-हानि का, सर्व अवगाहना भेद जानने के अर्थि मत्स्यरचना का वर्णन है। बहुरि कुल भेद विषैं एक सौ साढा निण्याणवै लाख कोडि कुलनि का वर्णन है।

बहुरि तीसरा पर्याप्त नामा अधिकार विषैं – पहलै मान का वर्णन है। तहां लौकिक-अलौकिक मान के भेद कहि। बहुरि द्रव्यमान के दोय भेदनि विषैं, संख्या

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

मान विषैं संख्यात, असंख्यात, अनंत के इकईस भेदनि का वर्णन है। बहुरि संख्या के विशेष रूप चौदह धारानि का कथन है। तिनि विषैं द्विरूपवर्गधारा, द्विरूपघनधारा द्विरूपघनाघनधारानि कै स्थाननि विषैं जे पाइए हैं, तिनका विशेष वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ पणट्ठी, बादाल, एकट्ठी का प्रमाण, अर वर्गशलाका, अर्धच्छेदनि का स्वरूप, वा अविभागप्रतिच्छेद का स्वरूप, वा उत्क्रम् च गाथानि करि अर्धच्छेदादिक के प्रमाण होने का नियम, वा अग्निकायिक जीवनि का प्रमाण ल्यावने का विधान इत्यादिकनि का वर्णन है। बहुरि दूसरा उपमा मान के पल्य आदि आठ भेदनि का वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ व्यवहारपल्य के रोमनि की संख्या ल्यावने कौं परमाणू तें लगाय अंगुल पर्यंत अनुक्रम का, अर तीन प्रकार अंगुल का, अर जिस जिस अंगुल करि जाका प्रमाण वर्णिए ताका, अर गोलगर्त के क्षेत्रफल ल्यावने का वर्णन है। अर उद्धारपल्य करि द्वीप-समुद्रनि की संख्या ल्याइए है। अद्धापल्य करि आयु आदि वर्णिए है, ताका वर्णन है। अर सागर की सार्थिक संज्ञा जानने कौं, लवण समुद्र का क्षेत्रफल कौं आदि देकर वर्णन है। अर सूच्यंगुल, प्रतरांगुल, घनांगुल, जगत्श्रेणी, जगत्-प्रतर, (जगत्घन) लोकनि का प्रमाण ल्यावने कौं विरलन आदि विधान का वर्णन है। बहुरि पल्यादिक की वर्गशलाका अरु अर्धच्छेदनि का प्रमाण वर्णन है। तिनिके प्रमाण जानने कौं उत्क्रम् च गाथा रूप करणसूत्रनि का कथन है। बहुरि पीछैं पर्याप्ति प्ररूपणा है। तहां पर्याप्त, अपर्याप्त के लक्षण का, अर छह पर्याप्तिनि के नाम का, स्वरूप का, प्रारंभ संपूर्ण होने के काल का, स्वामित्व का वर्णन है। बहुरि लब्धिअपर्याप्त का लक्षण, वा ताके निरंतर क्षुद्रभवनि के प्रमाणादिक का वर्णन है। तहां ही प्रसंग पाइ प्रमाण, फल, इच्छारूप त्रैराशिक गणित का कथन है। बहुरि सयोगी जिन कैं अपर्याप्तपना संभवने का, अर लब्धि अपर्याप्त, निर्वृति अपर्याप्त, पर्याप्त के संभवते गुणस्थाननि का वर्णन है।

बहुरि चौथा प्राणाधिकार विषैं – प्राणनि का लक्षण, अर भेद, अर कारण अर स्वामित्व का कथन है।

बहुरि पाँचमां संज्ञा अधिकार विषैं – च्यारि संज्ञानि का स्वरूप, अर भेद, अर कारण, अर स्वामित्व का वर्णन है।

बहुरि छट्ठा मार्गणा महा अधिकार विषैं – मार्गणा की निरुक्ति का, अर चौदह भेदनि का, अर सांतर मार्गणा के अंतराल का, अर प्रसंग पाइ तत्त्वार्थसूत्र टीका के अनुसारि नाना जीव, एक जीव अपेक्षा गुणस्थाननि विषैं, अर गुणस्थान

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अपेक्षा लिएं मार्गणानि विषैं काल का, अर अंतर का कथन करि छट्ठा गति मार्गणा अधिकार है। तहां गति के लक्षण का, अर भेदनि का अर च्यारि भेदनि के निरुक्ति लिए लक्षणनि का, अर पाँच प्रकार तिर्यंच, च्यारि प्रकार मनुष्यनि का अर सिद्धनि का वर्णन है। बहुरि सामान्य नारकी, जुदे-जुदे सात पृथ्वीनि के नारकी, अर पाँच प्रकार तिर्यंच, च्यारि प्रकार मनुष्य, अर व्यंतर, ज्योतिषी, भवनवासी, सौधर्मादिक देव, सामान्य देवराशि इन जीवनि की संख्या का वर्णन है। तहां पर्याप्त मनुष्यनि की संख्या कहने का प्रसंग पाइ "**कटपयपुरस्थवर्णैं**" इत्यादि सूत्र करि ककारादि अक्षररूप अंक वा बिंदी की संख्या का वर्णन है।

बहुरि सातमां इंद्रियमार्गणा अधिकार विषैं – इंद्रियनि का निरुक्ति लिए लक्षण का, अर-लब्धि उपयोगरूप भावेंद्रिय का, अर बाह्य अभ्यन्तर भेद लिए निवृत्ति-उपकरणरूप द्रव्येन्द्रिय का, अर इन्द्रियनि के स्वामी का, अर तिनके विषयभूत क्षेत्र का, अर तहां प्रसंग पाइ सूर्य के चार क्षेत्रादिक का अर इंद्रियनि के आकार का वा अवगाहना का, अर अतींद्रिय जीवनि का वर्णन है। बहुरि एकेन्द्रियादिकनि का उदाहरण रूप नाम कहि, तिनकी सामान्य संख्या का वर्णन करि, विशेषपने सामान्य एकेन्द्री, अर सूक्ष्म बादर एकेंद्री, बहुरि सामान्य त्रस, अर बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चौइंद्रिय, पंचेन्द्रिय इन जीवनि का प्रमाण, अर इन विषैं पर्याप्त-अपर्याप्त जीवनि का प्रमाण वर्णन है।

बहुरि आठमां कायमार्गणा अधिकार विषैं – काय के लक्षण का वा भेदनि का वर्णन है। बहुरि पंच स्थावरनि के नाम, अर काय, कायिक जीवरूप भेद, अर बादर, सूक्ष्मपने का लक्षणादि, अर शरीर की अवगाहना का वर्णन है।

बहुरि वनस्पती के साधारण-प्रत्येक भेदनि का, प्रत्येक के सप्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित भेदनि का, अर तिनकी अवगावहना का अर एक स्कंध विषैं तिनके शरीरनि के प्रमाण का, अर योनीभूत बीज विषैं जीव उपजने का, वा तहां सप्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित होने के काल का, अर प्रत्येक वनस्पती विषैं सप्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित जानने कौं तिनके लक्षण का, बहुरि साधारण वनस्पती निगोदरूप तहां जीवनि के उपजने, पर्याप्ति धरने, मरने के विधान का, अर निगोद शरीर की उत्कृष्ट स्थिति का, अर स्कंध, अंडर, पुलवी, आवास, देह, जीव इनके लक्षण प्रमाणादिक का अर नित्यनिगोदादि के स्वरूप का वर्णन है। बहुरि त्रस जीवनि का अर तिनके क्षेत्र का वर्णन है। बहुरि वनस्पतीवत् औरनि के शरीर विषैं सप्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठितपने का, अर स्थावर, त्रस

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

जीवनि के आकार का, अर काय सहित, काय रहित जीवनि का वर्णन है। बहुरि अग्नि, पृथ्वी, अप्, वात, प्रतिष्ठित-अप्रतिष्ठित प्रत्येक-साधारण वनस्पती जीवनि की, अर तिनविषैं सूक्ष्म-बादर जीवनि की, अर तिनविषैं भी पर्याप्त-अपर्याप्त जीवनि की संख्या का वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ पृथ्वी आदि जीवनि की उत्कृष्ट आयु का वर्णन है। बहुरि त्रस जीवनि की, अर तिनविषैं पर्याप्त-अपर्याप्त जीवनि की संख्या का वर्णन है। बहुरि बादर अग्निकायिक आदि की संख्या का विशेष निर्णय करने के अर्थि तिनके अर्धच्छेदादिक का, अर प्रसंग पाइ **"दिण्णछेदेणवहिद"** इत्यादिक करणसूत्र का वर्णन है।

बहुरि नवमां योगमार्गणा अधिकार विषैं – योग के सामान्य लक्षण का अर सत्य आदि च्यारि-च्यारि प्रकार मन, वचन योग का वर्णन है। तहां सत्य वचन का विशेष जानने कौं दश प्रकार सत्य का, अर अनुभय वचन का विशेष जानने कौं आमंत्रणी आदि भाषानि का, अर सत्यादिक भेद होने के कारण का, अर केवली के मन, वचन योग संभवने का अर द्रव्य मन के आकार का इत्यादि विशेष वर्णन है। बहुरि काय योग के सात भेदनि का वर्णन है। तहां औदारिकादिकनि के निरुक्ति पूर्वक लक्षण का, अर मिश्रयोग होने के विधान का, अर आहारक शरीर होने के विशेष का, अर कार्माणयोग के काल का विशेष वर्णन है। बहुरि युगपत् योगनि की प्रवृत्ति होने का विधान वर्णन है। अर योग रहित आत्मा का वर्णन है। बहुरि पंच शरीरनि विषैं कर्म-नोकर्म भेद का, अर पंच शरीरनि की वर्गणा वा समय प्रबद्ध विषैं परमाणूनि का प्रमाण वा क्रम तैं सूक्ष्मपना वा तिनकी अवगाहना का वर्णन है। बहुरि विस्रसोपचय का स्वरूप वा तिनकी परमाणुनि के प्रमाण का वर्णन है। बहुरि कर्म-नोकर्म का उत्कृष्ट संचय होने का काल वा सामग्री का वर्णन है। बहुरि औदारिक आदि पंच शरीरनि का द्रव्य तौ समय प्रबद्धमात्र कहि। तिनकी उत्कृष्ट स्थिति, अर तहाँ संभवती गुणहानि, नाना गुणहानि, अन्योन्याभ्यस्तराशि, दो गुणहानि का स्वरूप प्रमाण कहि, करणसूत्रादिक तैं तहां चयादिक का प्रमाण ल्याय समय-समय संबंधी निषेकनि का प्रमाण कहि, एक समय विषैं केते परमाणू उदयरूप होइ निर्जरैं, केते सत्ता विषैं अवशेष रहैं, ताके जानने कौं अंकसंदृष्टि की अपेक्षा लिये त्रिकोण यंत्र का कथन है। बहुरि वैक्रियिकादिकनि का उत्कृष्ट संचय कौनकै कैसै होइ सो वर्णन है। बहुरि योगमार्गणा विषैं जीवनि की संख्या का वर्णन विषैं वैक्रियिक शक्ति करि संयुक्त बादर पर्याप्त अग्निकायिक, वातकायिक अर पर्याप्त पंचेन्द्रिय तिर्यंच, मनुष्यनि के प्रमाण का, अर भोगभूमियां आदि

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

जीवनि कै पृथक् विक्रिया, अर औरनि कै अपृथक् विक्रिया हो है, ताका कथन है। बहुरि त्रियोगी, द्वियोगी, एकयोगी जीवनि का प्रमाण कहि त्रियोगीनि विषैं आठ प्रकार मन-वचनयोगी अर काययोगी जीवनि का, अर द्वियोगीनि विषैं वचन-काययोगीनि का प्रमाण वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ सत्यमनोयोगादि वा सामान्य मन-वचन-काय योगनि के काल का वर्णन है। बहुरि काययोगीनि विषैं सात प्रकार काययोगीनि का जुदा-जुदा प्रमाण वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ औदारिक, औदारिकमिश्र, कार्माण के काल का, वा व्यंतरनि विषैं सोपक्रम, अनुपक्रम काल का वर्णन है। बहुरि यहु कथन है (जो) जीवनि की संख्या उत्कृष्टपनै युगपत् होने की अपेक्षा कही है।

बहुरि दशवां वेदमार्गणा अधिकार विषैं – भाव-द्रव्यवेद होने के विधान का, अर तिनके लक्षण का, अर भाव-द्रव्यवेद समान वा असमान हो है ताका, अर वेदनि का कारण दिखाई ब्रह्मचर्य अंगीकार करने का अर तीनों वेदनि का निरुक्ति लिये लक्षण का, अर अवेदी जीवनि का वर्णन है। बहुरि तहां संख्या का वर्णन विषैं देव राशि कही। तहां स्त्री-पुरुषवेदीनि का, अर तिर्यंचनि विषैं द्रव्य-स्त्री आदि का प्रमाण कहि समस्त पुरुष, स्त्री, नपुंसकवेदीनि का प्रमाण वर्णन है। बहुरि सैनी पंचेन्द्री गर्भज, नपुंसकवेदी इत्यादिक ग्यारह स्थाननि विषैं जीवनि का प्रमाण वर्णन है।

बहुरि ग्यारहवां कषायमार्गणा अधिकार विषैं – कषाय का निरुक्ति लिये लक्षण का, वा सम्यक्त्वादिक घातने रूप दूसरे अर्थ विषैं अनन्तानुबंधी आदि का निरुक्ति लिए लक्षण का वर्णन है। बहुरि कषायनि के एक, च्यारि, सोलह, असंख्यात लोकमात्र भेद कहि क्रोधादिक की उत्कृष्टादि च्यारि प्रकार शक्तिनि का दृष्टांत वा फल की मुख्यता करि वर्णन है। बहुरि पर्याय धरने के पहलै समय कषाय होने का नियम है वा नाहीं है सो वर्णन है। बहुरि अकषाय जीवनि का वर्णन है। बहुरि क्रोधादिक के शक्ति अपेक्षा च्यार, लेश्या अपेक्षा चौदह, आयुबंध अर अबंध अपेक्षा बीस भेद हैं, तिनका अर सर्व कषायस्थाननि का प्रमाण कहि तिन भेदनि विषैं जेते-जेते स्थान संभवैं तिनका वर्णन है। बहुरि इहां जीवनि की संख्या का वर्णन विषैं नारकी, देव, मनुष्य, तिर्यंच गति विषैं जुदा-जुदा क्रोधी आदि जीवनि का प्रमाण वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ तिन गतिनि विषैं क्रोधादिक का काल वर्णन है।

बहुरि बारहवां ज्ञानमार्गणा अधिकार विषैं – ज्ञान का निरुक्ति पूर्वक लक्षण कहि, ताके पंच भेदनि का अर क्षयोपशम के स्वरूप का वर्णन है। बहुरि तीन मिथ्या ज्ञाननि का, अर मिश्र ज्ञाननि का अर तीन कुज्ञाननि के परिणमन के उदाहरण का

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

वर्णन है । बहुरि मतिज्ञान का वर्णन विषैं याके नामांतर का, अर इंद्रिय-मन तैं उपजने का अर तहां अवग्रहादि होने का, अर व्यंजन-अर्थ के स्वरूप का, अर व्यंजन विषैं नेत्र, मन वा ईहादिक न पाइए ताका, अर पहले दर्शन होइ पीछै अवग्रहादि होने के क्रम का अर अवग्रहादिकनि के स्वरूप का, अर अर्थ-व्यंजन के विषयभूत बहु, बहुविध आदि बारह भेदनि का, तहां अनिसृति विषैं च्यारि प्रकार परोक्ष प्रमाण गर्भितपना आदि का, अर मतिज्ञान के एक, च्यारि, चौबीस, अट्ठाईस अर इनतैं बारह गुणे भेदनि का वर्णन है । बहुरि श्रुतज्ञान का वर्णन विषैं श्रुतज्ञान का लक्षण निरुक्ति आदि का, अर अक्षर-अनक्षर रूप श्रुतज्ञान के उदाहरण वा भेद वा प्रमाण का वर्णन है। बहुरि भाव श्रुतज्ञान अपेक्षा बीस भेदनि का वर्णन है । तहां पहिला जघन्यरूप पर्याय ज्ञान का वर्णन विषैं ताके स्वरूप का, अर तिसका आवरण जैसैं उदय हो है ताका, अर यहु जाकै हो हैं ताका, अर याका दूसरा नाम लब्धि अक्षर है, ताका वर्णन है । अर पर्यायसमास ज्ञान का वर्णन विषैं षट्स्थानपतित वृद्धि का वर्णन है । तहां जघन्य ज्ञान के अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण कहि । अर अनंतादिक का प्रमाण अर अनंत भागादिक की सहनानी कहि, जैसैं अनंतभागादिक षट्स्थानपतित वृद्धि हो है, ताके क्रम का यंत्र द्वार तैं वर्णन करि अनंत भागादि वृद्धिरूप स्थाननि विषैं अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण ल्यावने कौं प्रक्षेपक आदि का विधान, अर तहां प्रसंग पाइ एक बार, दोय बार, आदि संकलन धन ल्यावने का विधान, अर साधिक जघन्य जहां दूणा हो है, ताका विधान, अर पर्याय समास विषैं अनंतभाग आदि वृद्धि होने का प्रमाण इत्यादि विशेष वर्णन है । बहुरि अक्षर आदि अठारह भेदनि का क्रम तैं वर्णन है । तहां अर्थाक्षर के स्वरूप का, अर तीन प्रकार अक्षरनि का अर शास्त्र के विषयभूत भावनि के प्रमाण का, अर तीन प्रकार पदनि का अर चौदह पूर्वनि विषैं वस्तु वा प्राभृत नामा अधिकारनि के प्रमाण का इत्यादि वर्णन है । बहुरि बीस भेदनि विषैं अक्षर, अनक्षर श्रुतज्ञान के अठारह, दोय भेदनि का अर पर्यायज्ञानादि की निरुक्ति लिए स्वरूप का वर्णन है ।

बहुरि द्रव्यश्रुत का वर्णन विषैं द्वादशांग के पदनि की अर प्रकीर्णक के अक्षरनि की संख्यानि का, बहुरि चौसठ मूल अक्षरनि की प्रक्रिया का, अर अपुनरुक्त सर्व अक्षरनि का प्रमाण वा अक्षरनि विषैं प्रत्येक द्विसंयोगी आदि भंगनि करि तिस प्रमाण ल्यावने का विधान अर सर्व श्रुत के अक्षरनि का प्रमाण वा अक्षरनि विषैं अंगनि के पद अर प्रकीर्णकनि के अक्षरनि के प्रमाण ल्यावने का विधान इत्यादि वर्णन है । बहुरि आचारांग आदि ग्यारह अंग, अर दृष्टिवाद अंग के पांच भेद, तिनमैं परिकर्म के पांच

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

भेद, तहां सूत्र अर प्रथमानुयोग का एक-एक भेद, अर पूर्वगत के चौदह भेद, चूलिका के पांच भेद, इन सबनि के जुदा-जुदा पदनि का प्रमाण अर इन विषैं जो-जो व्याख्यान पाइए, ताकी सूचनिका का कथन है। तहां प्रसंग पाइ तीर्थंकर की दिव्यध्वनि होने का विधान, अर वर्द्धमान स्वामी के समय दश-दश जीव अंतःकृत केवली अर अनुत्तरगामी भए तिनकानाम अर तीन सौ तिरेसठि कुवादनि के धारकनि विषैं केई कुवादीनि के नाम अर सप्त भंग का विधान, अर अक्षरनि के स्थान-प्रयत्नादिक, अर बारह भाषा अर आत्मा के जीवादि विशेषरण इत्यादि घने कथन हैं। बहुरि सामायिक आदि चौदह प्रकीर्णकनि का स्वरूप वर्णन है। बहुरि श्रुतज्ञान की महिमा का वर्णन है।

बहुरि अवधिज्ञान का वर्णन विषैं निरुक्ति पूर्वक स्वरूप कहि, ताके भवप्रत्यय-गुणप्रत्यय भेदनि का, अर ते भेद कौनकै होय, कौन आत्मप्रदेशनि तैं उपजै ताका, अर तहां गुणप्रत्यय, के छह भेदनि का, तिनविषैं अनुगामी, अननुगामी के तीन-तीन भेदनि का वर्णन है। बहुरि सामान्यपनै अवधि के देशावधि, परमावधि, सर्वावधि भेदनि का, अर तिन विषैं भवप्रत्यय-गुणप्रत्यय के संभवपने का, अर ए कौनकै होइ-ताका, अर तहां प्रतिपाती, अप्रतिपाती, विशेष का, अर इनके भेदनि के प्रमाण का, वर्णन है। बहुरि जघन्य देशावधि का विषयभूत द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव का वर्णन करि द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव अपेक्षा द्वितीयादि उत्कृष्ट पर्यंत क्रम तैं भेद होने का विधान, अर तहां द्रव्यादिक के प्रमाण का अर सर्व भेदनि के प्रमाण का वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ ध्रुवहार, वर्ग, वर्गणा, गुणकार इत्यादिक का अनेक वर्णन है। अर तहां ही क्षेत्र-काल अपेक्षा तिस देशावधि के उगणीस कांडकनि का वर्णन है।

बहुरि परमावधि के विषयभूत द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव अपेक्षा जघन्य तैं उत्कृष्ट पर्यन्त क्रम तैं भेद होने का विधान, वा तहां द्रव्यादिक का प्रमाण वा सर्व भेदनि के प्रमाण का वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ संकलित धन ल्यावने का अर "**इच्छिदरासिच्छेदं**" इत्यादि दोय करणसूत्रनि का आदि अनेक वर्णन है।

बहुरि सर्वावधि अभेद है। ताकै विषयभूत द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव का वर्णन है। बहुरि जघन्य देशावधि तैं सर्वावधि पर्यंत द्रव्य अर भाव अपेक्षा भेदनि की समानता का वर्णन है। बहुरि नरक विषैं अवधि का वा ताके विषयभूत क्षेत्र का, अर मनुष्य, तिर्यंच विषैं जघन्य-उत्कृष्ट अवधि होने का, अर देव विषैं भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषीनि के अवधिगोचर क्षेत्रकाल का, सौधर्मादि द्विकनि विषैं क्षेत्रादिक का, वा द्रव्य का भी वर्णन है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि मन:पर्ययज्ञान का वर्णन विषैं ताके स्वरूप का, अर दोय भेदनि का अर तहां ऋजुमति तीन प्रकार, विपुलमति छह प्रकार ताका, अर मन:पर्यय जहातैं उपजै है अर जिनकैं हो है ताका, अर दोय भेदनि विषैं विशेष है ताका, अर जीव करि चिंतया हुवा द्रव्यादिक कौं जानै ताका, अर ऋजुमति का विषयभूत द्रव्य का अर मन:पर्यय संबंधी ध्रुवहार का, अर विपुलमति के जघन्य तैं उत्कृष्ट पर्यन्त द्रव्य अपेक्षा भेद होने का विधान, वा भेदनि का प्रमाण, वा द्रव्य का प्रमाण कहि, जघन्य उत्कृष्ट क्षेत्र, काल, भाव का वर्णन है ।

बहुरि केवलज्ञान सर्वज्ञ है, ताका वर्णन है। बहुरि इहां जीवनि की संख्या का वर्णन विषैं मति, श्रुति, अवधि, मन:पर्यय, केवलज्ञानी का अर च्यारों गति संबंधी विभंगज्ञानीनि का, अर कुमति-कुश्रुत-ज्ञानीनि का प्रमाण वर्णन है ।

बहुरि तेरहवां संयममार्गणा अधिकार विषैं – ताके स्वरूप का, अर संयम के भेद के निमित्त का वर्णन है । बहुरि संयम के भेदनि का स्वरूप वर्णन है । तहां परिहारविशुद्धि का विशेष, अर ग्यारह प्रतिमा, अट्ठाईस विषय इत्यादिक का वर्णन है । बहुरि इहां जीवनि की संख्या का वर्णन विषैं सामायिक, छेदोपस्थापन, परिहार-विशुद्धि, सूक्ष्मसांपराय, यथाख्यात संयमधारी, अर संयतासंयत, अर असंयत जीवनि का प्रमाण वर्णन है ।

बहुरि चौदहवां दर्शनमार्गणा अधिकार विषैं – ताके स्वरूप का, अर दर्शन भेदनि के स्वरूप का वर्णन है । बहुरि इहां जीवनि की संख्या का वर्णन विषैं शक्ति चक्षुर्दर्शनी, व्यक्त चक्षुर्दर्शनीनि का अर अवधि, केवल, अचक्षुर्दर्शनीनि का प्रमाण वर्णन है ।

बहुरि पंद्रहवां लेश्यामार्गणा अधिकार विषैं – द्रव्य, भाव करि दोय प्रकार लेश्या कहि, भावलेश्या का निरुक्ति लिए लक्षण अर ताकरि बंध होने का वर्णन है । बहुरि सोलह अधिकारनि के नाम है । बहुरि निर्देशाधिकार विषैं छह लेश्यानि के नाम है । अर वर्णाधिकार विषैं द्रव्य लेश्यानि के कारण का, अर लक्षण का, अर छहों द्रव्य लेश्यानि के वर्ण का दृष्टांत का, अर जिनकैं जो-जो द्रव्य लेश्या पाइए, ताका व्याख्यान है । बहुरि प्रमाणाधिकार विषैं कषायनि के उदयस्थाननि विषैं संक्लेशविशुद्धि स्थाननि के प्रमाण का, अर तिनविषैं भी कृष्णादि लेश्यानि के स्थाननि के प्रमाण का, अर संक्लेशविशुद्धि की हानि, वृद्धि तें अशुभ, शुभलेश्या होने के

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अनुक्रम का वर्णन है । बहुरि संक्रमणाधिकार विषैं स्वस्थान-परस्थान संक्रमण कहि संक्लेशविशुद्धि का वृद्धि-हानि तैं जैसैं संक्रमण हो है ताका, अर संक्लेशविशुद्धि विषैं जैसैं लेश्या के स्थान होइ, अर तहां जैसैं षट्स्थानपतित वृद्धि-हानि संभवैं, ताका वर्णन है । बहुरि कर्माधिकार विषैं छहों लेश्यावाले कार्य विषैं जैसैं प्रवर्तैं, ताके उदाहरण का वर्णन है । बहुरि लक्षणाधिकार विषैं छहो लेश्यावालेनि का लक्षण वर्णन है ।

बहुरि गति अधिकार विषैं लेश्यानि के छब्बीस अंश, तिनविषैं आठ मध्यम अंश आयुबंध कौं कारण, ते आठ अपकर्षकालनि विषैं होइ, तिन अपकर्षनि का उदाहरणपूर्वक स्वरूप का अर तिनविषैं आयु न बंधै तौ जहां बंधै ताका, अर सोपक्रमायुष्क, निरुपक्रमायुष्क, जीवनि कै अपकर्षणरूप काल का, वा तहां आयु बंधने का विधान वा गति आदि विशेष का, अर अपकर्षनि विषैं आयु बंधनेवाले जीवनि के प्रमाण का वर्णन करि पीछैं लेश्यानि के अठारह अंशनि विषैं जिस-जिस अंश विषैं मरण भए, जिस-जिस स्थान विषैं उपजै ताका वर्णन है ।

बहुरि स्वामी अधिकार विषैं भाव लेश्या की अपेक्षा सात नरकनि के नारकीनि विषैं, अर मनुष्य-तिर्यंच विषैं, तहां भी एकेंद्रिय-विकलत्रय विषैं, असैनी पचेंद्रिय विषैं लब्धि अपर्याप्तक तिर्यंच-मनुष्य विषैं, अपर्याप्तक तिर्यंच-मनुष्य-भवनत्रिकदेव सासादन वालों विषैं, पर्याप्त-अपर्याप्त भोगभूमियां विषैं, मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थानिनि विषैं, पर्याप्त भवनत्रिक-सौधर्मादिक आदि देवनि विषैं जो-जो लेश्या पाइए ताका वर्णन है । तहां असैनी के लेश्यानिमित्त तैं गति विषैं उपजने का आदि विशेष कथन है ।

बहुरि साधन अधिकार विषैं द्रव्य लेश्या अर भाव लेश्यानि के कारण का वर्णन है ।

बहुरि संख्याधिकार विषैं द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव, मान करि कृष्णादि लेश्यावाले जीवनि का प्रमाण वर्णन है ।

बहुरि क्षेत्राधिकार विषैं सामान्यपनैं स्वस्थान, समुद्घात, उपपाद अपेक्षा, विशेषपनैं दोय प्रकार स्वस्थान, सात प्रकार समुद्घात, एक उपपाद इन दश स्थाननि विषैं संभवतै स्थाननि की अपेक्षा कृष्णादि लेश्यानि का (स्थान वर्णन कहिए) क्षेत्र वर्णन है । तहां प्रसंग पाइ विवक्षित लेश्या विषैं संभवतै स्थान, तिन विषैं जीवनि के प्रमाण का, तिन स्थाननि विषैं क्षेत्र के प्रमाण का, समुद्घातादिक के विधान का, क्षेत्रफलादिक का, मरने वाले आदि देवनि के प्रमाण का, केवल समुद्घात विषैं दंड-कपाटादिक का, तहां लोक के क्षेत्रफल का इत्यादिक का वर्णन है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि स्पर्शाधिकार विषैं पूर्वोक्त सामान्य-विशेषपनैं करि लेश्यानि का तीन काल संबंधी क्षेत्र का वर्णन है। तहाँ प्रसंग पाइ मेरु तैं सहस्रार पर्यंत सर्वत्र पवन के सद्भाव का, अर जंबूद्वीप समान लवणसमुद्र के खंड, लवणसमुद्र के समान अन्य समुद्र के खंड करने के विधान का, अर जलचर रहित समुद्रनि का मिलाया हुआ क्षेत्रफल के प्रमाण का, अर देवादिक के उपजने, गमन करने का इत्यादि वर्णन है।

बहुरि काल अधिकार विषैं कृष्णादि लेश्या जितने काल रहै ताका वर्णन है।

बहुरि अंतराधिकार विषैं कृष्णादि लेश्या का जघन्य, उत्कृष्ट जितने काल-अभाव रहै, ताका वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ एकेंद्री, विकलेंद्री विषैं उत्कृष्ट रहने के काल का वर्णन है।

बहुरि भावाधिकार विषैं छहौं लेश्यानि विषैं औदयिक भाव के सद्भाव का वर्णन है।

बहुरि अल्पबहुत्व अधिकार विषैं संख्या के अनुसारि लेश्यानि विषैं परस्पर अल्प-बहुत्व का व्याख्यान है, ऐसैं सोलह अधिकार कहि लेश्या रहित जीवनि का व्याख्यान है।

बहुरि सोलहवां भव्यमार्गणा अधिकार विषैं – दोय प्रकार भव्य अर अभव्य अर भव्य-अभव्यपना करि रहित जीवनि का स्वरूप वर्णन है। बहुरि इहां संख्या का कथन विषैं भव्य-अभव्य जीवनि का प्रमाण वर्णन है। बहुरि इहां प्रसंग पाइ द्रव्य, क्षेत्र, काल, भव, भावरूप पंचपरिवर्तननि के स्वरूप का, वा जैसे क्रम तैं परिवर्तन हो है ताका, अर परिवर्तननि के काल का, अनादि तैं जेते परिवर्तन भए, तिनके प्रमाण का वर्णन है। तहां गृहीतादि पुद्गलनि के स्वरूप संदृष्टि का, वा योग स्थान आदिकनि का वर्णन पाइए है।

बहुरि सतरहवां सम्यक्त्वमार्गणा अधिकार विषैं – सम्यक्त्व के स्वरूप का, अर सराग-वीतराग के भेदनि का अर षट् द्रव्य, नव पदार्थनि के श्रद्धानरूप लक्षण का वर्णन है। बहुरि षट् द्रव्य का वर्णन विषैं सात अधिकारनि का कथन है।

तहां नाम अधिकार विषैं द्रव्य के एक वा दोय भेद का, अर जीव-अजीव के दोय-दोय भेदनि का, अर तहां पुद्गल का निरुक्ति लिए लक्षण का, पुद्गल परमाणु के आकार का वर्णनपूर्वक रूपी-अरूपी अजीव द्रव्य का कथन है।

बहुरि उपलक्षणानुवादाधिकार विषैं छहों द्रव्यनि के लक्षणनि का वर्णन है। तहां गति आदि क्रिया जीव-पुद्गल कै है, ताका कारण धर्मादिक है, ताका दृष्टांत-

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पूर्वक वर्णन है । अर वर्तनाहेतुत्व काल कें लक्षण का दृष्टांतपूर्वक वर्णन है । अर मुख्य काल के निश्चय होने का, काल कैं धर्मादिक कौं कारणपने का, समय, आवली आदि व्यवहारकाल के भेदनि का, तहां प्रसंग पाइ प्रदेश के प्रमाण का, वा अंतर्मुहूर्त के भेदनि का, वा व्यवहारकाल जानने कौं निमित्त का, व्यवहारकाल के अतीत, अनागत, वर्तमान भेदनि के प्रमाण का, वा व्यवहार निश्चय काल के स्वरूप का वर्णन है ।

बहुरि स्थिति अधिकार विषैं सर्व अपने पर्यायनि का समुदायरूप अवस्थान का वर्णन है ।

बहुरि क्षेत्राधिकार विषैं जीवादिक जितना क्षेत्र रोकैं, ताका वर्णन है । तहां प्रसंग पाइ तीन प्रकार आधार वा जीव के समुद्घातादि क्षेत्र का वा संकोच विस्तार शक्ति का वा पुद्गलादिकनि की अवगाहन शक्ति का वा लोकालोक के स्वरूप का वर्णन है ।

बहुरि संख्याधिकार विषैं जीव द्रव्यादिक का वा तिनके प्रदेशनि का, वा व्यवहार काल के प्रमाण का, द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव मान करि वर्णन है ।

बहुरि स्थान स्वरूपाधिकार विषैं (द्रव्यनि का वा) द्रव्य के प्रदेशनि का चल, अचलपने का वर्णन है । बहुरि अणुवर्गणा आदि तेईस पुद्गल वर्गणानि का वर्णन है । तहां तिन वर्गणानि विषैं जेती-जेती परमाणू पाइए, ताका आहारादिक वर्गणा तैं जो-जो कार्य निपजै है ताका जघन्य, उत्कृष्ट, प्रत्येकादि वर्गणा जहां पाईए ताका, महास्कंध वर्गणा के स्वरूप का, अणुवर्गणा आदि का वर्गणा लोक विषैं जितनी जितनी पाइए ताका इत्यादि का वर्णन है । बहुरि पुद्गल के स्थूल-स्थूल आदि छह भेदनि का, वा स्कंध, प्रदेश, देश इन तीन भेदनि का वर्णन है ।

बहुरि फल अधिकार विषैं धर्मादिक का गति आदि साधनरूप उपकार, जीवनि के परस्पर उपकार, पुद्गलनि का कर्मादिक वा सुखादिक उपकार, तिनका प्रश्नोत्तरादिक लिए वर्णन है । तहां प्रसंग पाइ कर्मादिक पुद्गल ही हैं ताका, अर कर्मादिक जिस-जिस पुद्गल वर्गणा तैं निपजैं हैं ताका, अर स्निग्ध-रूक्ष के गुणनि के अंशनि करि जैसै पुद्गल का संबंध हो है, ताका वर्णन है । ऐसैं षट् द्रव्य का वर्णन करि तहां काल विना पंचास्तिकाय हैं, ताका वर्णन है । बहुरि नव पदार्थनि का वर्णन विषैं जीव-अजीव का तौ षट् द्रव्यनि विषैं वर्णन भया । बहुरि पाप जीव पुण्य जीवनि का वर्णन है । तहां प्रसंग पाइ चौदह गुण-स्थाननि विषैं जीवनि का

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रमाण वर्णन है। तहां उपशम, क्षपक श्रेणीवाले निरंतर अष्ट समयनि विषैं जेते जेते होंइ ताका, वा युगपत् बोधितबुद्धि आदि जीव जेते-जेते होंइ ताका, अर सकल संयमीनि के प्रमाण का वर्णन है। बहुरि सात नरक के नारकी, भवनत्रिक, सौधर्मद्विकादिक देव, तिर्यंच, मनुष्य ए जेते-जेते मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थाननि विषैं पाइए, तिनका वर्णन है। बहुरि गुणस्थाननि विषैं पुण्य जीव, पाप जीवनि का भेद वर्णन है। बहुरि पुद्गलीक द्रव्य पुण्य-पाप का वर्णन है। बहुरि आस्रव, बंध, संवर निर्जरा, मोक्षरूप पुद्गलनि का प्रमाण वर्णन है। ऐसें षट् द्रव्यादिक का स्वरूप कहि, तिनके श्रद्धानरूप सम्यक्त्व के भेदनि का वर्णन है।

तहां क्षायिक सम्यक्त्व के भेदनि का वर्णन है।[1] तहां क्षायिक सम्यक्त्व होने के कारण का, ताके स्वरूप का, ताकौं पाएं जेते भवनि विषैं मुक्ति होइ ताका, तिसकी महिमा का, अर तिसका प्रारंभ, निष्ठापन जहां होइ, ताका वर्णन है।

बहुरि वेदकसम्यक्त्व के कारण का वा स्वरूप का वर्णन है। बहुरि उपशम सम्यक्त्व के स्वरूप का, कारण का, पंचलब्धि आदि सामग्री का, वा जाके उपशम सम्यक्त्व होइ ताका वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ आयुबंध भए पीछैं सम्यक्त्व, व्रत होने न होने का वर्णन है। बहुरि सासादन, मिश्र, मिथ्यारुचि का वर्णन है। बहुरि इहां जीवनि की संख्या का वर्णन विषैं क्षायिक, उपशम, वेदक सम्यग्दृष्टिनि का अर मिथ्यादृष्टि, सासादन, मिश्र जीवनि का प्रमाण वर्णन है। बहुरि नव पदार्थनि का प्रमाण वर्णन है। तहां जीव अर अजीव विषैं पुद्गल, धर्म, अधर्म, आकाश, काल अर पुण्य-पाप रूप जीव, अर पुण्य-पाप रूप अजीव अर आस्रव, संवर, निर्जरा, बंध, मोक्ष इनके प्रमाण का निरूपण है।

बहुरि अठारहवां संज्ञी मार्गणा अधिकार विषैं – संज्ञी के स्वरूप का, संज्ञी असंज्ञी जीवनि के लक्षण का वर्णन है। अर इहां संख्या का वर्णन विषैं संज्ञी-असंज्ञी जीवनि का प्रमाण वर्णन है।

बहुरि उगणीसवां आहारमार्गणा अधिकार विषैं – आहारक के स्वरूप वा निरुक्ति का अर अनाहारक जिनके हो है ताका, तहां प्रसंग पाइ सात समुद्घातनि के नाम वा समुद्घात के स्वरूप का, अर आहारक अनाहारक के काल का वर्णन है। बहुरि तहां आहारक-अनाहारक जीवनि का प्रमाण वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ **प्रक्षेपयोगोद्धृतिमिश्रपिंड** इत्यादि सूत्र करि मिश्र के व्यवहार का कथन है।

---

१. यह वाक्य छपी प्रति में मिलता है, किन्तु इसका अर्थ स्पष्ट नहीं होता।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

बहुरि बीसवां उपयोग अधिकार विषैं – उपयोग के लक्षण का, साकार-अनाकार भेदनि का, उपयोग है सो व्याप्ति, अव्याप्ति, असंभवी दोष रहित जीव का लक्षण है ताका, अर केवलज्ञान-केवलदर्शन बिना साकार-अनाकार उपयोगनि का काल अंतर्मूहुर्त मात्र है, ताका वर्णन है। बहुरि इहां जीवनि की संख्या साकारोपयोग विषैं ज्ञानमार्गणावत् अर अनाकारोपयोग विषैं दर्शनमार्गणावत् है ताका वर्णन है।

बहुरि इक्कीसवां ओघादेशयो प्ररूपणा प्ररूपण अधिकार विषैं – गति आदि मार्गणानि के भेदनि विषैं यथासंभव गुणस्थान अर जीवसमासनि का वर्णन है। तहां द्वितीयोपशम सम्यक्त्व विषैं पर्याप्त-अपर्याप्त अपेक्षा गुणस्थाननि का विशेष कह्या है। बहुरि गुणस्थाननि विषैं संभवते जे जीवसमास, पर्याप्ति, प्राण, संज्ञा, चौदह मार्गणानि के भेद, उपयोग, तिनका वर्णन है। तहां मार्गणा वा उपयोग के स्वरूप का भी किछू वर्णन है। तहां योग भव्यमार्गणानि के भेदनि का, वा सम्यक्त्वमार्गणा विषैं प्रथम द्वितीयोपशम सम्यक्त्व का इत्यादि विशेष-सा वर्णन है। अर गति आदि केई मार्गणानि विषैं पर्याप्त, अपर्याप्त अपेक्षा कथन है।

बहुरि बावीसवां आलाप अधिकार विषैं – मंगलाचरण करि सामान्य, पर्याप्त, अपर्याप्त करि तीन आलाप, अर अनिवृत्तिकरण विषैं पंच भागनि की अपेक्षा पंच आलाप, तिनका गुणस्थाननि विषैं वा गुणस्थान अपेक्षा चौदह मार्गणा के भेदनि विषैं यथासंभव कथन है। तहां गतिमार्गणा विषैं किछू विशेष-सा कथन है। बहुरि गुणस्थान मार्गणास्थाननि विषैं गुणस्थानादि बीस प्ररूपणा यथासंभव आलापनि की अपेक्षा निरूपण करनी। तहां पर्याप्त, अपर्याप्त एकेंद्रियादि जीवनी कैं संभवते पर्याप्ति, प्राण, जीवसमासादिक का किछू वर्णन करि यथायोग्य सर्व प्ररूपणा जानने का उपदेश है। बहुरि तिनके जानने कौं यंत्रनि करि कथन है। तहां पहिलैं यंत्रनि विषैं जैसैं अनुक्रम है, वा समस्या है, वा विशेष है सो कथन है। पीछैं एक-एक रचना विषैं वीस-वीस प्ररूपणा का कथन स्वरूप छह सौ चौदह यंत्रनि की रचना है। तहां केई रचना समान जानि बहुत रचनानि की एक रचना है। बहुरि मनः-पर्यय ज्ञानादिक विषैं एक होतैं अन्य न होय ताका, उपशम श्रेणी तैं उतरि मरण भए उपजने का, सिद्धनि विषैं संभवती प्ररूपणानि का निक्षेपादिक करि प्ररूपणा जानने के उपदेश का वर्णन है। बहुरि आशीर्वाद है। बहुरि टीकाकार के वचन हैं।

ऐसैं जीवकाण्ड नामा महा अधिकार के बावीस अधिकारनि विषैं क्रम तैं व्याख्यान की सूचनिका जाननी।

गोम्मटसार कर्मकाण्ड सम्बन्धी प्रकरण

ॐ नमः। अथ कर्म (अजीवकांड) नामा महाअधिकार के नव अधिकार हैं। तिनके व्याख्यान की सूचना मात्र क्रम तैं कहिए है –

तहां पहिला **प्रकृतिसमुत्कीर्तन-अधिकार** विषैं मंगलाचरणपूर्वक प्रतिज्ञा करि प्रतिज्ञा के स्वरूप का, जीव-कर्म के संबंध का, तिनके अस्तित्व का, दृष्टांतपूर्वक कर्म-परमाणूनि के ग्रहण का, बंध, उदय, सत्त्वरूप कर्मपरमाणूनि के प्रमाण का वर्णन है। बहुरि ज्ञानावरणादिक आठ मूल प्रकृतिनि के नाम का, इन विषैं घाती-अघाती भेद का, इनकरि कार्य हो है ताका, इनके क्रम संभवने का, दृष्टांत निरुक्ति लिए इनके स्वरूप का वर्णन है। बहुरि इनकी उत्तर प्रकृतिनि का कथन है। तहां पंच निद्रा का, तीन दर्शनमोह होने के विधान का, पंच शरीरनि के पंद्रह भंगनि का, विवक्षित संहननवाले देव-नरक गतिविषैं जहां उपजैं ताका, कर्मभूमि की स्त्रीनि कै तीन संहनन हैं ताका, आताप प्रकृति के स्वरूप वा स्वामित्व का विशेष-व्याख्यान सा है।

बहुरि मतिज्ञानावरणादि उत्तर प्रकृतिनि के निरुक्ति लिए स्वरूप का वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ अभव्य के केवलज्ञान के सद्भाव विषैं प्रश्नोत्तर का, सात धातु, सात उपधातु का इत्यादि वर्णन है। बहुरि अभेद विवक्षाकरि जे प्रकृति गर्भित हो हैं, तिनका वर्णनकरि बंध-उदय-सत्तारूप जेती-जेती प्रकृति हैं, तिनका वर्णन है। बहुरि घातियानि विषैं सर्वघाती-देशघाती प्रकृतिनि का, अर सर्व प्रकृतिनि विषैं प्रशस्त-अप्रशस्त प्रकृतिनि का वर्णन है। बहुरि अनंतानुबंधी आदि कषायनि का कार्य वा वासनाकाल का वर्णन है। बहुरि कर्म-प्रकृतिनि विषैं पुद्‌गलविपाकी, भवविपाकी, क्षेत्रविपाकी, जीवविपाकी प्रकृतिनि का वर्णन है।

बहुरि प्रसंग पाइ संशय, विपर्यय, अनध्यवसाय का वर्णनपूर्वक तीन प्रकार श्रोतानि का वर्णनकरि प्रकृतिनि के चार निक्षेपनि का वर्णन है। तहां नामादि निक्षेपनि का स्वरूप कहि नाम निक्षेप का अर तदाकार-अतदाकाररूप दोय प्रकार स्थापना निक्षेप का अर आगम-नोआगम रूप दोय प्रकार द्रव्य निक्षेप का; तहां नो-आगम के ज्ञायक, भावी, तद्व्यतिरिक्तरूप तीन प्रकार का, तहां भी भूत, भावी, वर्तमानरूप ज्ञायकशरीर के तीन भेदनि का, तहां भी च्युत, च्यावित, त्यक्तरूप भूत शरीर के तीन भेदनि का, तहां भी त्यक्त के भक्त, प्रतिज्ञा, इंगिनी, प्रायोपगमनरूप भेदनि का, तहां भी भक्त प्रतिज्ञा के उत्कृष्ट, मध्य, जघन्यरूप तीन प्रकारनि का अर तद्व्यतिरिक्त नो-आगम द्रव्य के कर्म-नोकर्म भेदनि का, बहुरि भावनिक्षेप के आगम,

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

नोआगम भेदनि का वर्णन है। तहां मूल प्रकृतिनि विषैं इनकौं कहि उत्तर प्रकृतिनि विषैं वर्णनहै। तहां औरनि का सामान्यपनैं संभवपना कहि, नोकर्मरूप तद्व्यतिरिक्त-नो-आगम-द्रव्य का जुदी-जुदी प्रकृतिनि विषैं वर्णन है। अर नोआगमभाव का समुच्चयरूप वर्णन है।

बहुरि दूसरा **बंध-उदय-सत्त्वयुक्तस्तवनामा** अधिकार है। तहां नमस्कार पूर्वक प्रतिज्ञाकरि स्तवनादिक का लक्षण वर्णन है। बहुरि बंध-व्याख्यान विषैं बंध के प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेशरूप भेदनि का, अर तिनविषैं उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य, अजघन्यपने का; अर इनविषैं भी सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव संभवने का वर्णन है।

बहुरि प्रकृतिबंध का कथन विषैं गुणस्थाननि विषैं प्रकृतिबंध के नियम का; तहां भी तीर्थंकरप्रकृति बंधने के विशेष का, अर गुणस्थाननि विषैं व्युच्छित्ति, बंध, अबंध प्रकृतिनि का, तहां भी व्युच्छित्ति के स्वरूप दिखावने कौं द्रव्यार्थिक-पर्यायार्थिकनय की अपेक्षा का, अर गति आदि मार्गणा के भेदनि विषैं सामान्यपनैं वा संभवते गुणस्थान अपेक्षा व्युच्छित्ति-बंध-अबंध प्रकृतिनि के विशेष का, अर मूल-उत्तर प्रकृतिनि विषैं संभवते सादिनैं आदि देकर बंध का, तहां अध्रुव-प्रकृतिनि विषैं सप्रतिपक्ष-निःप्रतिपक्ष प्रकृतिनि का, अर निरंतर बंध होने के काल का वर्णन है।

बहुरि स्थितिबंध का वर्णन विषैं मूल-उत्तर प्रकृतिनि के उत्कृष्ट स्थितिबंध का, अर उत्कृष्ट स्थितिबंध संज्ञी पंचेंद्रिय ही के होय ताका, अर जिस परिणाम तैं वा जिस जीव कैं जिस प्रकृति का उत्कृष्ट स्थितिबंध होय ताका, तहां प्रसंग पाय उत्कृष्ट ईषत् मध्यम संक्लेश परिणामनि के स्वरूप दिखावने कौं अनुकृष्टि आदि विधान का, अर मूल-उत्तर प्रकृतिनि के जघन्य स्थितिबंध के प्रमाण का, अर जघन्य-स्थितिबंध जाकैं होय ताका वर्णन है। अर एकेंद्री, बेइंद्री, तेइंद्री, चौइंद्री, असंज्ञी, संज्ञी पंचेंद्री जीवनि कैं मोहादिक की उत्कृष्ट-जघन्यस्थिति के प्रमाण का, तहां प्रसंग पाइ तिनके आबाधा के कालभेदकाण्डकनि के प्रमाण कौं कहि भेद प्रमाण करि गुणितकांडक प्रमाण कौं उत्कृष्टस्थिति विषैं घटाएं जघन्यस्थिति का प्रमाण होने का वर्णन है।

बहुरि एकेंद्रियादि जीवनि के स्थितिभेदनि कौं स्थापनकरि तहां चौदह जीवसमासनि विषैं जघन्य-उत्कृष्ट-स्थितिबंध अर अबाधा अर भेदनि के प्रमाण अर तिनके जानने का विधान वर्णन है। तहां प्रकृतिनि का जघन्य स्थितिबंध जिनकैं होइ

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ताका, अर जघन्य आदि स्थितिबंध विषैं सादि नैं आदि देकर संभवपने का, अर विशुद्ध-संक्लेशपरिणामनि तैं जैसें जघन्य-उत्कृष्ट स्थितिबंध होय ताका, अर आबाधा के लक्षण का, मोहादिक की आबाधा के काल का, आयु की आबाधा के विशेष का, तहां प्रसंग पाइ देव, नारकी, भोगभूमियां, कर्मभूमियांनि के आयुबंध होने के समय का, उदीर्णा अपेक्षा आबाधाकाल के प्रमाण का, प्रसंग पाइ अचलावली, उदयावली, उपरितन स्थिति विषैं कर्मपरमाणु खिरने का, उदीर्णा के स्वरूप का, आयु वा अन्य कर्मनि के निषेकनि के स्वरूप का, अंकसंदृष्टिपूर्वक निषेकनि विषैं द्रव्यप्रमाण का, तहां गुणहानि आदि का वर्णन है ।

बहुरि अनुभागबंध का व्याख्यान विषैं प्रकृतिनि का अनुभाग जैसें संक्लेश-विशुद्धिपरिणामनिकरि बंधै है ताका, अर जिस प्रकृति का जाकैं तीव्र वा जघन्य अनुभाग बंधै है ताका, तहां प्रसंग पाइ अपरिवर्तमान, परिवर्तमान मध्यम परिणामनि के स्वरूपादिक का अर उत्कृष्टादि अनुभागबंध विषैं सादि नैं आदि देकरि भेदनि के संभवपने का वर्णन है । बहुरि घातियानि विषैं लता, दारु, अस्थि शैलभागरूप अनुभाग का, तहां देशघातिया स्पर्द्धकनि का मिथ्यात्व विषैं विशेष है ताका, अर जिन प्रकृतिनि विषैं जेते प्रकार अनुभाग प्रवर्त्तै ताका, अर अघातियानि विषैं प्रशस्त प्रकृतिनि का गुड़, खांड, शर्करा, अमृतरूप; अप्रशस्त प्रकृतिनि का निंब, कांजीर, विष, हलाहलरूप अनुभाग का, अर इन प्रकृतिनि कैं तीन-तीन प्रकार अनुभाग प्रवर्त्तै, ताका वर्णन है ।

बहुरि प्रदेशबंध का कथन विषैं एकक्षेत्र, अनेकक्षेत्रसंबंधी वा तहां कर्मरूप होनै कौं योग्य-अयोग्यरूप; तिनविषैं भी जीव का ग्रहण की अपेक्षा सादि-अनादिरूप पुद्गलनि का प्रमाणादिक कहि, तहां जिन पुद्गलनि कौं समयप्रबद्ध विषैं ग्रहै है ताका, अर ग्रहे जे परमाणु तिनके प्रमाण कौं कहि तिनका आठ वा सात मूल प्रकृतिनि विषैं जैसें विभाग हो है ताका, तहां हीनाधिक विभाग होने के कारण का वर्णन है । अर उत्तर प्रकृतिनि विषैं विभाग के अनुक्रम का अर ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय विषैं सर्वघाती-देशघाती द्रव्य के विभाग का, तहां प्रसंग पाइ मतिज्ञानावरणादि प्रकृतिनि विषैं सर्वघाती-देशघाती स्पर्द्धकनि का, तहां अनुभागसंबंधी नानागुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त-द्रव्य-स्थिति-गुणहानि का प्रमाण कहि, तहां वर्गणानि का प्रमाण ल्याइ तिनविषैं जहां सर्वघाती-देशघातीपना पाइए ताका वर्णनकरि च्यारि घातिया कर्मनि की उत्तर प्रकृतिनि विषैं कर्मपरमाणुनि के विभाग का वर्णन है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तहां संज्वलन अर नोकषाय विषैं विशेष है ताका, अर नोकषायनि विषैं जिनका युगपत् बंध होइ तिनका, अर तिनके निरंतर बंधने के काल का, अर अंतराय की प्रकृतिनि विषैं सर्वघातीपना नाहीं ताका वर्णन है। बहुरि युगपत् नामकर्म की तेईस आदि प्रकृति बंधैं तिनविषैं विभाग का, अर वेदनीयादिक की एक-एक ही प्रकृति बंधै; तातैं तहां विभाग न करने का वर्णन है ।

बहुरि मूल-उत्तर प्रकृतिनि का उत्कृष्टादि प्रदेशबंध विषैं सादि इत्यादि भेद संभवने का, अर जिस प्रकृति का उत्कृष्ट-जघन्य प्रदेशबंध जाकैं होय ताका, अर तहां प्रसंग पाइ स्तोकसा एक जीव के युगपत् जेते-जेते प्रकृति बंधें, ताका वर्णन है। बहुरि इहां प्रसंग पाइ योगनि का कथन है। तहां उपपाद, एकांतवृद्धि, परिणामरूप योगनि के स्वरूपादिक का वर्णन है। अर योगनि के अविभागप्रतिच्छेद, वर्ग, वर्गणा, स्पर्द्धक, गुणहानि, नानागुणहानि स्थाननि के स्वरूप, प्रमाण, विधान का योगशक्ति या प्रदेश अपेक्षा विशेष वर्णन है। अर योगनि का जघन्य स्थान तैं लगाय स्थाननि विषैं वृद्धि के अनुक्रम कौं आदि देकरि वर्णन है। अर सूक्ष्मनिगोदिया लब्धि-अपर्याप्तक का जघन्य उपपादयोगस्थान कौं आदि देकरि चौरासी स्थाननि का, अर बीचि-बीचि जिनका स्वामी न पाइए तिनका, अर तिनविषैं गुणकार के अनुक्रम का, अर जघन्य स्थान तैं उत्कृष्ट स्थान के गुणकार का वर्णन है। अर तीन प्रकार योग निरंतर जेते काल प्रवर्त्तै ताका, अर पर्याप्त त्रस संबंधी परिणामयोगस्थाननि विषैं जे-जे जेते-जेते योगस्थान दोय आदि आठ समयपर्यंत निरंतर प्रवर्त्तैं तिनके प्रमाण ल्यावने कौं कालयवमध्य रचना का, अर पर्याप्त त्रससंबंधी परिणामयोगस्थाननि विषैं जेते-जेते जीव पाइए तिनके प्रमाण जानने कौं गुणहानि आदि विशेष लीए जीवयवमध्य रचना का अर योगस्थाननि तैं जेता-जेता प्रदेशबंध होय ताका, अर जघन्य तैं उत्कृष्ट स्थान पर्यंत बंधने के क्रम का बीचि-बीचि जेते अविभागप्रतिच्छेद होइ तिनका वर्णन है ।

बहुरि च्यारि प्रकार बंध के कारणनि का वर्णन है। बहुरि योगस्थानादिक के अल्पबहुत्व का वर्णन है। तहां योगस्थान श्रेणी के असंख्यातवां भागमात्र तिनका वर्णनकरि तिनतैं असंख्यात लोकगुणे कर्मप्रकृतिनि के भेदनि का वर्णन विषैं मतिज्ञानादिकनि के भेदनि का, अर क्षेत्र अपेक्षा आनुपूर्वी के भेदनि का कथन है। बहुरि तिनतैं असंख्यातगुणे कर्मस्थिति के भेदनि का वर्णन विषैं तिन एक-एक प्रकृति

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

की जघन्यादि उत्कृष्ट पर्यंत स्थिति भेदनि का कथन है। बहुरि तिनतैं असंख्यातगुणे स्थितिबंधाध्यवसायनि का वर्णन विषैं द्रव्यस्थिति, गुणहानि, निषेक, चयादिककरि स्थितिबंध कौं कारण परिणामनि का स्तोकसा कथन है। बहुरि तिनतैं असंख्यात लोकगुणे अनुभागबंधाध्यवसायस्थाननि का वर्णन विषैं द्रव्यस्थिति-गुणहान्यादिककरि अनुभाग कौं कारण परिणामनि का स्तोकसा कथन है। बहुरि तिनतैं अनंतगुणे कर्मप्रदेशनि का वर्णन विषैं द्रव्यस्थिति, गुणहानि, नानागुणहानि, चय, निषेकनि का अंकसंदृष्टि वा अर्थकरि कथन है। तहां एक समय विषैं समय-प्रबद्धमात्र पुद्गल बंधै, एक-एक निषेक मिलि समयप्रबद्धमात्र ही निर्जरैं, असैं होतैं द्वयर्द्धगुणहानिगुणित समयप्रबद्धमात्र सत्त्व रहै, ताका विधान जानने कै अर्थि त्रिकोणयंत्र की रचना करी है।

बहुरि असैं बंध वर्णनकरि उदय का वर्णन विषैं उदय-प्रकृतिनि का नियम कहि गुणस्थाननि विषैं व्युच्छित्ति, उदय, अनुदय प्रकृतिनि का वर्णन है। बहुरि इहां ही उदीर्णा विषैं विशेष कहि गुणस्थाननि विषैं व्युच्छित्ति, उदीर्णा, अनुदीर्णारूप प्रकृतिनि का वर्णन है। बहुरि मार्गणा विषैं उदय प्रकृतिनि का नियम कहि गति आदि मार्गणानि के भेदनि विषैं संभवते गुणस्थाननि की अपेक्षा लीए व्युच्छित्ति, उदय, अनुदय प्रकृतिनि का वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ अनेक कथन है।

बहुरि सत्त्व का कथन विषैं तीर्थंकर, आहारक की सत्ता का, मिथ्यादृष्टयादि विषैं विशेष अर आयुबंध भए पीछैं सम्यक्त्व-व्रत होने का विशेष, क्षायिक-सम्यक्त्व होने का विशेष कहि मिथ्यादृष्टि आदि सात गुणस्थाननि विषैं सत्त्व प्रकृतिनि का वर्णन करि, ऊपरि क्षपकश्रेणी अपेक्षा व्युच्छित्ति, सत्त्व, असत्त्व प्रकृतिनि का वर्णन है। बहुरि मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थाननि विषैं सत्त्व, असत्त्व प्रकृतिनि का वर्णनकरि उपशम-श्रेणी विषैं इकईस मोहप्रकृति उपशमावने का क्रम का, अर तहां सत्त्व-प्रकृतिनि का कथन है। बहुरि मार्गणानि विषैं सत्ता-असत्ता प्रकृतिनि का नियम कहि गति आदि मार्गणानि के भेदनि विषैं संभवते गुणस्थाननि की अपेक्षा लीए व्युच्छित्ति, सत्त्व, असत्त्व प्रकृतिनि का वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ इन्द्रिय-काय मार्गणा विषैं प्रकृतिनि की उद्वेलना का इत्यादि अनेक वर्णन है।

बहुरि **विवेष सत्तारूप तीसरा सत्त्वस्थान-अधिकार विषैं** एक जीव कैं एकै कालि प्रकृति पाइए तिनके प्रमाण की अपेक्षा स्थान, अर स्थान विषैं प्रकृति बदलने की अपेक्षा भंग, तिनका वर्णन है। तहां नमस्कारपूर्वक प्रतिज्ञाकरि स्थानभंगनि का

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

स्वरूप कहि गुणस्थाननि विषैं सामान्य सत्त्व प्रकृतिनि का वर्णन करि विशेष वर्णन विषैं मिथ्यादृष्टयादि गुणस्थाननि विषैं जेते स्थान वा भंग पाइए तिनकौं कहि जुदा-जुदा कथन विषैं तिनका विधान वा प्रकृति घटने, बधने, बदलने के विशेष का बद्धायु-अबद्धायु अपेक्षा वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ मिथ्यादृष्टि विषैं तीर्थंकर सत्तावाले कैं नरकायु ही का सत्त्व होइ ताका, वा एकेंद्रियादिक कैं उद्वेलना का अर सासादन विषैं आहार सत्ता के विशेष का, मिश्र विषैं अनंतानुबंधीरहित सत्त्वस्थान जैसें संभवै ताका, असंयत विषैं मनुष्यायु-तीर्थंकर सहित एक सौ अडतीस प्रकृति की सत्तावाले कैं दोय वा तीन ही कल्याणक होइ ताका, अपूर्वकरणादि विषैं उपशमक-क्षपक श्रेणी अपेक्षा का इत्यादि अनेक वर्णन है। बहुरि आचार्यनि के मतकरि जो विशेष है ताकौं कहि तिस अपेक्षा कथन है।

बहुरि चौथा त्रिचूलिका नामा अधिकार है। तहां प्रथम नव प्रश्नकरि चूलिका का व्याख्यान है। तिसविषैं पहिलैं तीन प्रश्नकरि तिनका उत्तर विषैं जिन प्रकृतिनि की उदयव्युच्छित्ति तैं पहिले बंधव्युच्छित्ति भई तिनका, अर जिनकी उदयव्युच्छित्ति तैं पीछैं बंधव्युच्छित्ति भई तिनका, अर जिनकी उदयव्युच्छित्ति-बंधव्युच्छित्ति युगपत् भई तिनका वर्णन है। बहुरि दूसरा – तीन प्रश्नकरि तिनका उत्तर विषैं जिनका अपना उदय होतैं ही बंध होइ तिनका, अर जिनका अन्य प्रकृतिनि का उदय होतैं ही बंध होइ तिनका, अर जिनका अपना वा अन्य प्रकृतिनि का उदय होतैं बंध होय तिन प्रकृतिनि का वर्णन है। बहुरि तीसरा – तीन प्रश्नकरि तिनका उत्तर विषैं जिनका निरन्तर बंध होइ तिनका, अर जिनका सांतर बंध होइ तिनका, अर जिनका सांतर वा निरंतर बंध होइ तिनका कथन है। इहां तीर्थंकरादि प्रकृति निरंतर बंधी जैसें है ताका, अर सप्रतिपक्ष-निःप्रतिपक्ष अवस्था विषैं सांतर-निरंतर बंध जैसें संभवै है ताका वर्णन है।

बहुरि दूसरी पंचभागहारचूलिका का व्याख्यान विषैं मंगलाचरणकरि उद्वेलन, विध्यात, अधःप्रवृत्त, गुणसंक्रम, सर्वसंक्रम – इन पंच भागहारनि के नाम का, अर स्वरूप का, अर ते भागहार जिनि-जिनि प्रकृतिनि विषैं वा गुणस्थाननि विषैं संभवैं ताका वर्णन है। अर सर्वसंक्रमभागहार, गुणसंक्रमभागहार, उत्कर्षण वा अपकर्षणभागहार, अधःप्रवृत्तभागहार, योगनि विषैं गुणकार, स्थिति विषैं नानागुणहानि, पल्य के अर्धच्छेद, पल्य का वर्गमूल, स्थिति विषैं गुणहानि-आयाम, स्थिति विषैं अन्योन्याभ्यस्त राशि, पल्य, कर्म की उत्कृष्ट स्थिति, विध्यातसंक्रमभागहार, उद्वेलनभागहार,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अनुभाग विषैं नानागुणहानि, गुणहानि, द्वयर्द्धगुणहानि, दो गुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त इनका प्रमाणपूर्वक अल्पबहुत्व का कथन है ।

बहुरि तीसरी दशकरणचूलिका का व्याख्यान विषैं बंध, उत्कर्षण, संक्रम, अपकर्षण, उदीर्णा, सत्त्व, उदय, उपशम, निधत्ति, निःकांचना – इन दशकरणनि के नाम का, स्वरूप का, जिनि-जिनि प्रकृतिनि विषैं वा गुणस्थाननि विषैं जैसें संभवैं तिनका वर्णन है ।

बहुरि पांचवां बंध-उदय-सत्त्वसहित स्थानसमुत्कीर्तन नामा अधिकार विषैं मंगलाचरण करि एक जीव कैं युगपत् संभवतां बंधादिक प्रकृतिनि का प्रमाणरूप स्थान वा तहां प्रकृति बदलने करि भये भंगनि का वर्णन है । तहां मूल प्रकृतिनि के बंधस्थाननि का, अर तहां संभवते भुजाकारादि बंध विशेष का, अर भुजाकार, अल्पतर, अवस्थित, अवक्तव्यरूप बंध विशेषनि के स्वरूप का, अर मूल प्रकृतिनि कैं उदयस्थान, उदीर्णास्थान, सत्त्वस्थाननि का वर्णन है । बहुरि उत्तर प्रकृतिनि का कथन विषैं दर्शनावरण, मोहनीय, नाम की प्रकृतिनि विषैं विशेष है ।

तहां दर्शनावरण के बंधस्थाननि का, अर तहां गुणस्थान अपेक्षा भुजाकारादि विशेष संभवने का, अर दर्शनावरण के गुणस्थाननि विषैं संभवते बंधस्थान, उदयस्थान, सत्त्वस्थाननि का वर्णन है ।

बहुरि मोहनीय के बंधस्थाननि का, अर ते गुणस्थाननि विषैं जैसें संभवै ताका, अर तहां प्रकृतिनि के नाम जानने कौं ध्रुवबंधी प्रकृति, वा कूटरचना आदिक का, अर तहां प्रकृति बदलने तैं भए भंगनि का, अर तिन बंधस्थाननि विषैं संभवते भुजाकारादि विशेषनि का, वा भुजाकारादिक के लक्षण का, वा सामान्य-अवक्तव्य भंगनि की संख्या का, अर भुजाकारादि संभवने के विधान का, अर इहां प्रसंग पाइ गुणस्थाननि विषैं चढना, उतरना इत्यादि विशेषनि का वर्णन है । बहुरि मोह के उदयस्थाननि का, अर गुणस्थाननि विषैं संभवता दर्शनमोह का उदय कहि तहां संभवते मोह के उदयस्थाननि का, अर तहां प्रकृत्यादि के जानने कूं कूटरचना आदि का, अर तहां प्रकृति बदलने तैं भए भंगनि का, अर अनिवृत्तिकरण विषैं वेदादिक के उदयकालादिक का, अर सर्वमोह के उदयस्थान, अर तिनकी प्रकृतिनि का विधान, वा संख्या वा मिलाई हुई संख्या का, अर गुणस्थाननि विषैं संभवते उपयोग, योग, संयम, लेश्या, सम्यक्त्व तिनकी अपेक्षा मोह कैं उदयस्थाननि का, वा तिनकी प्रकृतिनि

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

का विधान, संख्या आदिक का, तहां अनंतानुबंधी रहित उदयस्थान मिथ्यादृष्टि की अपर्याप्त-अवस्था में न पाइए इत्यादि विशेष का वर्णन है ।

बहुरि मोह के सत्त्वस्थाननि का वा तहां प्रकृति घटने का, अर ते स्थान गुणस्थाननि विषैं जैसें संभवै ताका, अर अनिवृत्तिकरण विषैं विशेष है ताका वर्णन है ।

बहुरि नामकर्म का कथन विषैं आधारभूत इकतालीस जीवपद, चौंतीस कर्मपदनि का व्याख्यान करि नाम के बंधस्थाननि का अर ते गुणस्थाननि विषैं जैसें संभवै ताका, अर ते जिस-जिस कर्मपदसहित बंधै हैं ताका, अर तिनविषैं क्रम तैं नवध्रुवबंधी आदि प्रकृतिनि के नाम का, अर तेइस के नै आदि दै करि नाम के बंधस्थाननि विषैं जे-जे प्रकृति जैसें पाइए ताका, अर तहां प्रकृति बदलने तैं भए भंगनि का वर्णन है। अर इहां प्रसंग पाइ जीव मरि जहां उपजै ताका वर्णन विषैं प्रथमादि पृथ्वी नारकी मरि जहां उपजै वा न उपजै ताका, तहां प्रसंग पाइ स्वयंभू-रमण-समुद्रपरैं कूणानि विषैं कर्मभूमियां तिर्यंच हैं इत्यादि विशेष का, अर बादर-सूक्ष्म, पर्याप्त-अपर्याप्त अग्निकायिक आदि जीव जहां उपजैं ताका, तहां सूक्ष्मनिगोद तैं आए मनुष्य सकल संयम न ग्रहै इत्यादि विशेष का, अर अपर्याप्त मनुष्य जहां उपजैं ताका, अर भोगभूमि-कुभोगभूमि के तिर्यंच-मनुष्य, अर कर्मभूमि के मनुष्य जहां उपजैं ताका, अर सर्वार्थसिद्धि तैं लगाय भवनत्रिक पर्यंत देव जहां उपजैं ताका वर्णन है। बहुरि जैसें च्यवन-उत्पाद कहि चौदह मार्गणानि विषैं गुणस्थाननि की अपेक्षा लीएं जैसें जे-जे नामकर्म के बंधस्थान संभवैं तिनका वर्णन है ।

तहां गति, इंद्रिय, काय, योग, वेद मार्गणानि विषैं तो लेश्या अपेक्षा बंधस्थाननि का कथन है । कषाय मार्गणा विषैं अनंतानुबंधी आदि जैसें उदय हो है ताका, वा इनके देशघाती-सर्वघाती स्पर्द्धकनि का, वा सम्यक्त्व-संयम घातने का, वा लेश्या अपेक्षा बंधस्थाननि का कथन है । अर ज्ञान मार्गणा विषैं गति आदिक की अपेक्षा करि बंधस्थाननि का कथन है । अर संयम मार्गणा विषैं सामायिकादिक के स्वरूप का, अर संयतासंयत विषैं दोय गति अपेक्षा, अर असंयम विषैं च्यारि गति अपेक्षा बंधस्थाननि का कथन है । तहां निर्वृत्यपर्याप्त देव कैं बंधस्थान कहने कौं देवगति विषैं जे-जे जीव जहां पर्यंत उपजैं ताका, अर सासादन विषैं बंधस्थान कहने कौं जे-जे जीव जैसें उपशम-सम्यक्त्व कौं छोडि सासादन होइ ताका इत्यादि कथन है । अर दर्शन मार्गणा विषैं गति अपेक्षा बंधस्थाननि का कथन है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अर लेश्या मार्गणा विषैं प्रथमादि नरक पृथ्वीनि विषैं लेश्या संभवने का, जिस-जिस संहनन के धारी जे-जे जीव जहां-जहां पर्यंत नरकविषैं उपजैं ताका, नरकनिविषैं पर्याप्त-निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था अपेक्षा बंधस्थाननि अर का, तिर्यंच विषैं एकेंद्रियादिक कैं वा भोगभूमियां तिर्यंच कैं जो-जो लेश्या पाइए ताका, अर जे-जे जीव जिस-जिस लेश्याकरि तिर्यंच विषैं उपजैं ताका, अर तिनकैं निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था विषैं बंधस्थाननि का, अर जहां तैं आए सासादन वा असंयत होइ अर तिनके जे बंधस्थान होइ ताका, अर शुभाशुभलेश्यानि विषैं परिणामनि का, तहां प्रसंग पाइ कषायनि के स्थान वा तहां संक्लेश-विशुद्धस्थान वा कषायनि के च्यारि शक्तिस्थान, चौदह लेश्या स्थान, बीस आयु बन्धाबन्धस्थान तिनका, अर लेश्यानि के छब्बीस अंश, तहां आठ मध्यम अंश आयुबन्ध कौं कारण, ते आठ अपकर्षकालनि विषैं होइ, अन्य अठारह अंश च्यारि गतिनि विषैं गमन कौं कारण तिनके विशेष का, अर लेश्यानि के पलटने के क्रम का वर्णन करि, तिर्यंच कैं मिथ्यादृष्टि आदि विषैं जैसैं मिथ्यात्व-कषायनि का उदय पाइए है ताकौं कहि, तहां जे बंधस्थान पाइए ताका, अर भोगभूमियां तिर्यंच कैं वा प्रसंग पाई औरनि कैं जैसें निर्वृत्यपर्याप्त वा पर्याप्त मिथ्यादृष्टि आदि विषैं जैसें लेश्याकरि बंधस्थान पाइए, वा भोगभूमि विषैं जैसैं उपजना होइ ताका वर्णन है ।

बहुरि मनुष्यगति विषैं लब्धिअपर्याप्त, निर्वृत्यपर्याप्त, पर्याप्त दशा विषैं जो-जो लेश्या पाइए वा तहां संभवते गुणस्थाननि विषैं बंधस्थान पाइए ताका वर्णन है ।

बहुरि देवगति विषैं भवनत्रिकादिक कैं निर्वृत्यपर्याप्त वा पर्याप्त दशा विषैं जो-जो लेश्या पाइए, वा देवनि के जहां जन्मस्थान हैं वा जे जीव जिस-जिस लेश्याकरि जहां-जहां देवगति विषैं उपजैं, वा निर्वृत्यपर्याप्त वा पर्याप्त-दशा विषैं मिथ्यादृष्टि आदि जीवनी कैं जे-जे बंधस्थान पाइए तिनका, अर तहां प्रासंगिक गाथानिकरि जे-जे जीव जहां-जहां पर्यंत देवगति विषैं उपजैं, वा अनुदिशादिक विमाननि तैं चयकरि जे पद न पावैं, वा जे जीव देवगति तैं चयकरि मनुष्य होइ निर्वाण ही जाय, वा जहां के आये तिरेसठि शलाका पुरुष न होइ, वा देवपर्याय पाइ जैसैं जिनपूजादिक कार्य करैं तिनका वर्णन है ।

बहुरि भव्यमार्गणा विषैं बंधस्थाननि का वर्णन है ।

बहुरि सम्यक्त्व मार्गणा विषैं सम्यक्त्व के लक्षण का, भेदनि का, जहां मरण न होय ताका, अर प्रथमोपशम सम्यक्त्व जाकैं होइ ताका, वा वाकैं जिन प्रकृतिनि

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

का उपशम होइ ताका, तहां लब्धि आदि होने का, अर प्रथमोपशम सम्यक्त्व भए मिथ्यात्व के तीन खंड हो हैं ताका, तहां नारकादिक कैं जे बंधस्थान पाइए तिनका, तहां नरक विषैं तीर्थंकर के बंध होने के विधान का, वा साकार-उपयोग होने का, वा निसर्गज-अधिगमज के स्वरूप का अर द्वितीयोपशम सम्यक्त्व जाकैं होइ ताका, तहां अपूर्वकरणादि विषैं जो-जो क्रिया करता चढै वा उतरै ताका, तहां जे बंधस्थान संभवैं ताका, वा तहां मरि देव होय ताकैं बंधस्थान संभवैं ताका वर्णन है। बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व का प्रारंभ-निष्ठापन जाकैं होइ ताका, वा तहां तीन करण हो हैं तिनका, तहां गुणश्रेणी आदि होने का अर अनंतानुबंधी का विसंयोजनकरि पीछैं केई क्रिया करि करणादि विधान तैं दर्शनमोह क्षपावने का, अर तहां प्रारंभ-निष्ठापन के काल का, वा तिनके स्वामीनि का, वा तहां तीर्थंकर सत्तावाले कैं तद्भव-अन्यभव विषैं मुक्ति होने का वर्णनकरि क्षायिक सम्यक्त्व विषैं संभवते बंधस्थाननि का वर्णन है। बहुरि वेदक-सम्यक्त्व जिनकैं होइ अर प्रथमोपशम, द्वितीयोपशम सम्यक्त्व तैं वा मिथ्यात्व तैं जैसैं वेदक सम्यक्त्व होइ, अर तिनकैं जे बंधस्थान पाइए तिनका वर्णन है।

बहुरि सासादन, मिश्र, मिथ्यात्व जहां-जहां जिस-जिस दशा विषैं संभवै अर तहां जे बंधस्थान पाइए तिनका वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ विवक्षित गुणस्थान तैं जिस-जिस गुणस्थान कौं प्राप्त होइ ताका वर्णन है।

बहुरि संज्ञी अर आहार मार्गणा विषैं बंधस्थाननि का वर्णन है। बहुरि नाम के बंधस्थाननि विषैं भुजाकारादि कहने कौं पुनरुक्त, अपुनरुक्त भंगनि का, अर स्वस्थानादि तीन भेदनि का, प्रसंग पाइ गुणस्थाननि तैं चढने-उतरने का, जहां मरण न होइ ताका, कृतकृत्य-वेदक सम्यग्दृष्टि मरि जहां उपजै ताका, भुजाकारादिक के लक्षण का, अर इकतालीस जीव पदनि विषैं भंगसहित बंधस्थाननि का वर्णन करि मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थाननि विषैं सभवते भुजाकार, अल्पतर, अवस्थित, अवक्तव्य भंगनि का वर्णन है।

बहुरि नाम के उदयस्थाननि का वर्णन विषैं कार्माण[१], मिश्रशरीर, शरीरपर्याप्ति, उच्छ्वासपर्याप्ति, भाषापर्याप्ति इन पंचकालनि का स्वरूप प्रमाणादिक कहि, वा केवली के समुद्घात अपेक्षा इनका संभवपना कहि, नाम के उदयस्थान हानि

१. 'होने का' ऐसा ख पुस्तक में पाठ है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

का विधान विषैं ध्रुवोदयी आदि प्रकृतिनि का वर्णन करि, तिन पंचकालनि की अपेक्षा लीए जिस-जिस प्रकार वीस प्रकृति रूप स्थान तैं लगाय संभवते नाम के उदयस्थाननि का, अर तहां प्रकृति बदलने करि संभवते भंगनि का वर्णन है। बहुरि नाम के सत्त्वस्थाननि का वर्णन विषैं तिराणवे प्रकृतिरूप स्थान आदि जैसें जे सत्त्वस्थान हैं तिनका, अर तहां जिन प्रकृतिनि की उद्वेलना हो है तिनके स्वामी वा क्रम वा कालादिक विशेष का, अर सम्यक्त्व, देशसंयम, अनंतानुबंधी का विसंयोजन, उपशमश्रेणी चढना, सकलसंयम धरना, ए उत्कृष्टपनै केती वार होइ तिनका, अर च्यारि गति की अपेक्षा लीए गुणस्थाननि विषैं जे सत्त्वस्थान संभवैं तिनका, अर इकतालीस जीवपदनि विषैं सत्त्वस्थान संभवैं तिनका वर्णन है।

बहुरि त्रिसंयोग विषैं स्थान वा भंगनि का वर्णन है। तहां मूल प्रकृतिनि विषैं जिस-जिस बंधस्थान होतैं जो-जो उदय वा सत्त्वस्थान होइ ताका, अर ते गुणस्थाननि विषैं जैसें संभवैं ताका वर्णन है। बहुरि उत्तर प्रकृतिनि विषैं ज्ञानावरण, अंतराय का तौ पांच-पांच ही का बंध, उदय, सत्त्व होइ; तातैं तहां विशेष वर्णन नाहीं। अर दर्शनावरण विषैं जिस-जिस बंधस्थान होतैं जो-जो उदय वा सत्त्वस्थान गुणस्थान अपेक्षा संभवै ताका वर्णन है, अर वेदनीय विषैं एक-एक प्रकृति का उदय-बंध होतैं भी प्रकृति बदलने की अपेक्षा, वा सत्त्व दोय का वा एक का भी हो है, ताकी अपेक्षा गुणस्थान विषैं संभवते भंगनि का वर्णन है। बहुरि गोत्र विषैं नीच-उच्च गोत्र के बंध, उदय, सत्त्व के बदलने की अपेक्षा गुणस्थाननि विषैं संभवते भंगनि का वर्णन है। बहुरि आयु विषैं भोगभूमियां आदि जिस काल विषैं आयुबंध करैं ताका, एकेंद्रियादि जिस आयु कौं बांधै ताका, नारकादिकनि कैं आयु का उदय, सत्त्व संभवै ताका, अर आठ अपकर्ष विषैं बंधै ताका, तहां दूसरी, तीसरी बार आयुबंध होने विषैं घटने-बधने का, अर बध्यमान-भुज्यमान आयु के घटनेरूप अपवर्तनघात, कदलीघात का वर्णन करि बंध, अबंध, उपरितबंध की अपेक्षा गुणस्थाननि विषैं संभवते भंगनि का वर्णन है। बहुरि वेदनीय, गोत्र, आयु इनके भंग मिथ्यादृष्टयादि विषैं जेते-जेते संभवैं, वा सर्व भंग जेते-जेते हैं तिनका वर्णन है।

बहुरि मोह के स्थाननि की अपेक्षा भंग कहि गुणस्थाननि विषैं बंध, उदय, सत्त्वस्थान जैसें पाइए ताका वर्णन करि मोह के त्रिसंयोग विषैं एक आधार, दोय आधेय, तीन प्रकार, तहां जिस-जिस बंधस्थान विषैं जो-जो उदयस्थान, वा

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सत्त्वस्थान संभवै, अर जिस-जिस उदयस्थान विषैं जो-जो बंधस्थान वा सत्त्वस्थान संभवै, अर जिस-जिस सत्त्वस्थान विषैं जो-जो बंधस्थान वा उदयस्थान संभवै तिनका वर्णन है। बहुरि मोह के बंध, उदय, सत्त्वनि विषैं दोय आधार, एक आधेय तीन प्रकार, तहां जिस-जिस बंधस्थानसहित उदयस्थान विषैं जो-जो सत्त्वस्थान जिसप्रकार संभवै, अर जिस-जिस बंधस्थानसहित सत्त्वस्थान विषैं जो-जो उदयस्थान संभवै अर जिस-जिस उदयस्थान सहित सत्त्वस्थान विषैं जो-जो बंधस्थान पाइए ताका वर्णन है। बहुरि नामकर्म के स्थानोक्त भंग कहि गुणस्थाननि विषैं, अर चौदह जीवसमासनि विषैं अर गति आदि मार्गणानि के भेदनि विषैं संभवते बंध, उदय, सत्त्वस्थाननि का वर्णनकरि एक आधार, दोय आधेय का वर्णन विषैं जिस-जिस बंधस्थाननि विषैं जो-जो उदयस्थान वा सत्त्वस्थान जिसप्रकार संभवैं, अर जिस-जिस उदयस्थान विषैं जो-जो बंधस्थान वा सत्त्वस्थान जिसप्रकार संभवै, अर जिस-जिस सत्त्वस्थान विषैं जो-जो बंधस्थान वा उदयस्थान जिस-जिसप्रकार संभवै तिनका वर्णन है। बहुरि दोय आधार, एक आधेय विषैं जिस-जिस बंधस्थानसहित उदय स्थान विषैं जो-जो सत्त्वस्थान संभवै, अर जिस-जिस बंधस्थानसहित सत्त्वस्थान विषैं जो-जो उदयस्थान संभवैं अर जिस-जिस उदयस्थानसहित सत्त्वस्थान विषैं जो-जो बंधस्थान पाइए तिनका वर्णन है।

बहुरि **छठा प्रत्यय अधिकार** है, तहां नमस्कारपूर्वक प्रतिज्ञा करि च्यारि मूल आस्रव अर सत्तावन उत्तरआस्रवनि का, अर ते जैसे गुणस्थाननि विषैं संभवै ताका, तहां व्युच्छित्ति वा आस्रवनि के प्रमाण, नामादिक का वर्णन करि, तहां विशेष जानने कौं पंच प्रकारनि का वर्णन है। तहां प्रथम प्रकार विषैं एक जीव कैं एकै काल संभवैं ऐसे जघन्य, मध्यम, उत्कृष्टरूप आस्रवस्थान जेते-जेते गुणस्थाननि विषैं पाइए तिनका वर्णन है।

बहुरि दूसरा प्रकार विषैं एक-एक स्थान विषैं आस्रवभेद बदलने तें जेते-जेते प्रकार होइ तिनका वर्णन है।

बहुरि तीसरा प्रकार विषैं तिन स्थाननि के प्रकारनि विषैं संभवते आस्रवनि की अपेक्षा कूटरचना के विधान का वर्णन है।

बहुरि चौथा प्रकार विषैं तिनहूं कूटनि के अनुसारि अक्षसंचारि विधान तें जैसें आस्रवस्थाननि कौं कहने का विधानरूप कूटोच्चारण विधान का वर्णन है। तहां

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अविरत विषैं युगपत् संभवतै हिंसा के प्रत्येक द्विसंयोगी आदि भेदनि का, अर ते भेद जेते होइ ताका वर्णन है ।

बहुरि पांचवां प्रकार विषैं तिन स्थाननि विषैं भंग ल्यावने के विधान का वा गुणस्थाननि विषैं संभवते भंगनि का, तहाँ अविरत विषैं हिंसा के प्रत्येक द्विसंयोगी आदि भंग ल्यावने कौं गणितशास्त्र के अनुसार प्रत्येक द्विसंयोगी, त्रिसंयोगी आदि भंगनि के ल्यावने के विधान का वर्णन है । बहुरि आस्रवनि के विशेषभूत जिनि-जिनि भाव तैं स्थिति-अनुभाग की विशेषता लीयें ज्ञानावरणादि जुदि-जुदि प्रकृति का बंध होइ तिनका क्रम तैं वर्णन है ।

बहुरि सातवां भावचूलिका नामा अधिकार है । तहां नमस्कारपूर्वक प्रतिज्ञा करि भावनि तैं गुणस्थानसंज्ञा हो है ऐसें कहि पंच मूल भावनि का, अर इनके स्वरूप का, [१] अर तिरेपन उत्तर भावनि का, अर मूल-उत्तर भावनि विषैं अक्षसंचार विधान तैं प्रत्येक परसंयोगी, स्वसंयोगी, द्विसंयोगी आदि भंग जैसे होइ ताका, अर नाना जीव, नाना काल अपेक्षा गुणस्थान विषैं संभवते भावनि का वर्णन है ।

बहुरि एक जीव कैं युगपत् संभवते भावनि का वर्णन है । तहां गुणस्थाननि विषैं मूल भावनि के प्रत्येक, परसंयोगी, द्विसंयोगी आदि संभवते भंगनि का वर्णन है । तहां प्रसंग पाइ प्रत्येक, द्विसंयोगी, त्रिसंयोगी आदि भंग ल्यावने के गणितशास्त्र अनुसार विधान वर्णन है । बहुरि गुणस्थाननि विषैं मूल भावनि की वा तिनके भंगनि की संख्या का वर्णन है ।

बहुरि उत्तर भावनि के भंग स्थानगत, पदगत भेद तैं दोय प्रकार कहे हैं । तहां एक जीव कैं एक काल संभवते भावनि का समूह सो स्थान । तिस अपेक्षा जे स्थानगत भंग, तिन विषैं स्वसंयोगी भंग के अभाव का अर गुणस्थाननि विषैं संभवते औपशमिकादिक भावनि का अर औदयिक के स्थाननि के भंगनि का वर्णन करि तहां संभवते स्थाननि के परस्पर संयोग की अपेक्षा गुण्य, गुणकार, क्षेपादि विधान तैं जैसें जेतै प्रत्येक भंग अर परसंयोगी विषैं द्विसंयोगी आदि भंग होइ तिनका, अर तहां गुण्य, गुणकार, क्षेप का प्रमाण कहि सर्वभंगनि के प्रमाण का वर्णन है ।

बहुरि जातिपद, सर्वपद भेदकरि पदगत भंग दोय प्रकार, तिनका स्वरूप कहि गुणस्थाननि विषैं जेते-जेते जातिपद संभवैं तिनका, अर तिनकौं परस्पर

१. ख पुस्तक में यह पाठ नहीं है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

लगावने की अपेक्षा गुण्य, गुणकार, क्षेप आदि विधान तैं जेते-जेते प्रत्येक स्वसंयोगी परसंयोगी, द्विसंयोगी आदि भंग संभवैं तिनका, अर तहां गुण्य, गुणकार, क्षेप का प्रमाण कहि सर्व भंगनि के प्रमाण का वर्णन है ।

बहुरि पिंडपद, प्रत्येकपद भेदकरि सर्वपद भंग दोय प्रकार है । तिनके स्वरूप का, अर गुणस्थान विषैं ए जेतै जैसैं संभवैं ताका, अर तहां परस्पर लगावने तैं प्रत्येक द्विसंयोगी आदि भंग कीए जे भंग होहि तिनका, तहां मिथ्यादृष्टि का पन्द्रहवां प्रत्येक पद विषै भंग ल्यावने का, प्रसंग पाइ गणितशास्त्र के अनुसार एकवार, दोयवार आदि संकलन धन के विधान का, अर गुणस्थाननि विषैं प्रत्येकपद, पिंडपदनि की रचना के विधान का, अर प्रत्येकपदनि के प्रमाण का, अर तहां जेते सर्वपद भंग भए तिनका वर्णन है। बहुरि यहां तीनसै तिरेसठि कुवाद के भेदनि का अर तिन विषैं जैसै प्ररूपण है ताका, अर एकान्तरूप मिथ्यावचन, स्याद्वादरूप सम्यग्वचन का वर्णन है ।

बहुरि आठवां त्रिकरण चूलिका नामा अधिकार है । तहां मंगलाचरण करि करणनि का प्रयोजन कहि अधःकरण का वर्णन विषैं ताके काल का अर तहां संभवते सर्व परिणाम, प्रथम समय संबंधी परिणाम, अर समय-समय प्रति वृद्धिरूप परिणाम, वा द्वितीयादि समय संबन्धी परिणाम, वा समय-समय सम्बन्धी परिणामनि विषैं खंड रचनाकरि अनुकृष्टि विधान, तहां खंडनि विषैं प्रथम खंड विषैं वा खंड-खंड प्रति वृद्धिरूप वा द्वितीयादि खंडनि विषैं परिणाम तिनका अंकसंदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा वर्णन है । तहां श्रेणीव्यवहार नामा गणित के सूत्रनि के अनुसार ऊर्ध्वरूप गच्छ, चय, उत्तर धन, आदि धन, सर्व धनादिक का, अर अनुकृष्टि विषैं तिर्यग्रूप गच्छादिक के प्रमाण ल्यावने का विधान वर्णन है । अर तिन खंडनि विषैं विशुद्धता का अल्प-बहुत्व का वर्णन है । बहुरि अपूर्वकरण का वर्णन विषैं अनुकृष्टि विधान नाहीं, ऊर्ध्वरूप गच्छादिक का प्रमाण ल्यावने का विधान पूर्वक ताके काल का वा सर्व परिणाम, प्रथम समयसंबन्धी परिणाम, समय-समय प्रति वृद्धिरूप परिणाम, द्वितीयादि समय संबन्धी परिणाम, तिनका अंकसंदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा वर्णन है। बहुरि अनिवृत्तिकरण विषैं भेद नाहीं, तातैं तहां कालादिक का वर्णन है ।

बहुरि नवमा कर्मस्थिति अधिकार है । तहां नमस्कारपूर्वक प्रतिज्ञाकरि आबाधा के लक्षण का वा स्थिति अनुसार ताके काल का, वा उदीर्णा अपेक्षा

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आबाधाकाल का वर्णन है। बहुरि कर्मस्थिति विषैं निषेकनि का वर्णन है। बहुरि प्रथमादि गुणहानिनि के प्रथमादि निषेकनि का वर्णन है। बहुरि स्थितिरचना विषैं द्रव्य, स्थिति, गुणहानि, नानागुणहानि, दोगुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त इनके स्वरूप, का, अर अंकसंदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा तिनके प्रमाण का वर्णन है। तहां नानागुणहानि अन्योन्याभ्यस्त राशि सर्व कर्मनि का समान नाहीं, तातैं इनका विशेष वर्णन है। तहां मिथ्यात्वकर्म की नानागुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त जानने का विधान वर्णन है। इहां प्रसंग पाइ **'अंतधणं गुणगुणियं'** इत्यादि करणसूत्रकरि गुणकाररूप पंक्ति के जोडने का विधान आदि वर्णन है। बहुरि गुणहानि, दो गुणहानि के प्रमाण का वर्णन है। तहां ही विशेष जो चय ताका प्रमाण वर्णन है। ऐसे प्रमाण कहि प्रथमादि गुणहानिनि का वा तिनविषैं प्रथमादि निषेकनि का द्रव्य जानने का विधान वा ताका प्रमाण अंकसंदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा वर्णन है। बहुरि मिथ्यात्ववत् अन्यकर्मनि की रचना है। तहां गुणहानि, दो गुणहानि तो समान हैं, अर नानागुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त राशि समान नाहीं। तिनके जानने कौं सात पंक्ति करि विधान कहि तिनके प्रमाण का, अर जिस-जिसका जेता-जेता नानागुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त का प्रमाण आया, ताका वर्णन है। बहुरि ऐसे कहि अंकसंदृष्टि अपेक्षा त्रिकोणयंत्र, अर त्रिकोणयंत्र का प्रयोजन, अर तहां एक-एक निषेक मिलि एक समयप्रबद्ध का उदय त्रिकोणयंत्र हो है। अर सर्व त्रिकोणयंत्र के निषेक जोड़ें किंचिदून द्वयर्द्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सत्त्व हो है तिनका वर्णन है। बहुरि निरंतर-सांतररूप स्थिति के भेद, स्वरूप स्वामीनि का वर्णन है। बहुरि स्थितिबंध कौं कारण जे स्थितिबंधाध्यवसायस्थान तिनका वर्णन विषैं आयु आदि कर्म के स्थितिबंधाध्यवसायस्थाननि के प्रमाण का अर स्थितिबंधाध्यवसाय के स्वरूप जानने कौं सिद्धांत वचनिका वर्णनकरि स्थिति के भेदनि कौं कहि तिन विषैं जेते-जेते स्थितिबंधाध्यवसायस्थान संभवैं तिनके जानने कौं द्रव्य, स्थिति, गुणहानि, नानागुणहानि, दो-गुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त का वा चय का, वा प्रथमादि गुणहानिनि का, वा तिनके निषेकनि का, वा आदि धनादिक का द्रव्यप्रमाण अर ताके जानने का विधान, ताका वर्णन है। बहुरि इहां एक-एक स्थितिभेद संबंधी स्थितिबन्धाध्यवसायस्थननि विषैं नानाजीव अपेक्षा खंड हो है। तहां ऊपरली-नीचली स्थिति संबंधी खंड समान भी हो हैं; तातैं तहां अनुकृष्टि-रचना का वर्णन है। तहां आयुकर्म का जुदा ही विधान है, तातैं पहिले आयु की कहि, पीछे मोहादिक की अनुकृष्टि-रचना का अंकसंदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा वर्णन है। तहां

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

खंडनि की समानता-असमानता इत्यादि अनेक कथन है । बहुरि अनुभागबंध को कारण जे अनुभागाध्यवसायस्थान तिनका वर्णन विषैं तिन सर्वनि का प्रमाण कहि, तहां एक-एक स्थितिभेद संबंधी स्थितिबंधाध्यवसायस्थाननि विषैं द्रव्य, स्थिति, गुणहानि आदि का प्रमाणादिक कहि एक-एक स्थितिबंधाध्यवसायस्थानरूप जे निषेक तिनविषैं जेते-जेते अनुभागाध्यवसायस्थान पाइए तिनका वर्णन है । बहुरि मूलग्रंथकर्त्ताकरि कीया हुवा ग्रंथ की संपूर्णता होने विषैं ग्रंथ के हेतु का, चामुंडराय राजा को आशीर्वाद का, ताकरि बनाया चैत्यालय वा जिनबिंब का, वीरमार्तंड राजा कौं आशीर्वाद का वर्णन है । बहुरि संस्कृत टीकाकार अपने गुरुनि का वा ग्रंथ होने के समाचार कहे हैं तिनका वर्णन है ।

ऐसें श्रीमद् गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसंग्रह मूलशास्त्र, ताकी जीवतत्त्व-प्रदीपिका नामा संस्कृतटीका के अनुसार इस भाषाटीका विषैं अर्थ का वर्णन होसी ताकौं सूचनिका कही ।

अर्थसंदृष्टि सम्बन्धी प्रकरण

बहुरि तहां जे संदृष्टि हैं, तिनका अर्थ, वा कहे अर्थ तिनकी संदृष्टि जानने कौं इस भाषाटीका विषैं जुदा ही संदृष्टि अधिकार विषैं वर्णन होसी ।

इहां कोऊ कहै – अर्थ का स्वरूप जान्या चाहिए, संदृष्टिनि के जानें कहा सिद्धि हो है ?

ताका समाधान – संदृष्टि जानैं पूर्वाचार्यनि की परंपरा तैं चल्या आया जो संकेतरूप अभिप्राय, ताकौं जानिए है । अर थोरे में बहुत अर्थ कौं नीकै पहिचानिए है । अर मूलशास्त्र वा संस्कृतटीका विषैं, वा अन्य ग्रंथनि विषैं, जहां संदृष्टिरूप व्याख्यान है, तहां प्रवेश पाइये है । अर अलौकिक गणित के लिखने का विधान आदि चमत्कार भासै है । अर संदृष्टिनि कौं देखते ही ग्रंथ की गंभीरता प्रगट हो है – इत्यादि प्रयोजन जानि संदृष्टि अधिकार करने का विचार कीया है ।

तहां केई संदृष्टि आकाररूप है, केई अंकरूप है, केई अक्षररूप है, केई लिखने ही का विशेषरूप है, सो तिस अधिकार विषैं पहिले तौ सामान्यपनैं संदृष्टिनि का वर्णन है, तहां पदार्थनि के नाम तैं, संख्या तैं अर अक्षरनि तैं अंकनि की अर प्रभृति आदि की संदृष्टिनि का वर्णन है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि सामान्य संख्यात, असंख्यात,अनंत की, अर इनके इकईस भेदनि की, अर पल्य आदिआठ उपमा प्रमाण की, अर इनके अर्धच्छेद वा वर्गशलाकानि की संदृष्टिनि का वर्णन है। बहुरि परिकर्माष्टक विषैं संकलनादि होतैं जैसैं सहनानि हो है अर बहुत प्रकार संकलनादि होतैं वा संकलनादि आठ विषैं एकत्र दोय, तीन आदि होतैं जो सहनानी हो है, वा संकलनादि विषैं अनेक सहनानी का एक अर्थ हो है इत्यादिकिनि का वर्णन है। अर स्थिति-अनुभागादिक विषैं आकाररूप सहनानी है, वा केई इच्छित सहनानी है, इत्यादिकनि का वर्णन है । अैसें सामान्य वर्णन करि पीछैं श्रीमद् गोम्मटसार नामा मूलशास्त्र वा ताकी जीवतत्त्वप्रदीपिका नामा टीका, ताविषैं जिस-जिस अधिकार विषैं कथन का अनुक्रम लीए संख्यादिक अर्थ की जैसें-जैसें संदृष्टि है, तिनका अनुक्रम तैं वर्णन है। तहां केई करण वा त्रिकोणयंत्र का जोड़ इत्यादिकनि का संदृष्टिनि का संस्कृत टीका विषैं वर्णन था अर भाषा करतैं अर्थ न लिख्या था, तिनका इस संदृष्टि अधिकार विषैं अर्थ लिखिएगा। अर मूलशास्त्र के यंत्ररचना विषैं वा संस्कृत टीका विषैं केई संदृष्टिरूप रचना ही लिखी थी। तिनकौं अर्थपूर्वक इस संदृष्टि अधिकार विषैं लिखिएगा, सो इहां तिनकी सूचनिका लिखैं विस्तार होई, तातैं तहां ही वर्णन होगा सो जानना।

इहां कोऊ कहै – मूलशास्त्र वा टीका विषैं जहां संदृष्टि वा अर्थ लिख्या था, तहां ही तुम भी तिनके अर्थनि का निरूपण करि क्यों न लिखान किया ? तहां छोडि तिनकौं एकत्र करि संदृष्टि अधिकार विषैं कथन किया सो कौंन कारण ?

तहां समाधान – जो यहु टीका मंदबुद्धीनि कैं ज्ञान होने के अर्थि करिए है, सो या विषैं बीचि-बीचि संदृष्टि लिखने तैं कठिनता तिनकौं भासै, तब अभ्यास तैं विमुख होइ, तातैं जिनकौं अर्थमात्र ही प्रयोजन होहि, सो अर्थ ही का अभ्यास करौ अर जिनकौं संदृष्टि कौं भी जाननी होइ, ते संदृष्टि अधिकार विषैं तिनका भी अभ्यास करौ।

बहुरि इहां कोई कहै – तुम असा विचार कीया, परंतु कोई इस टीका का अवलंबन तैं संस्कृत टीका का अभ्यास कीया चाहै, तो कैसैं अभ्यास करै ?

ताकौं कहिए है – अर्थ का तौ अनुक्रम जैसै संस्कृत टीका विषैं है, तैसैं या विषैं है ही। अर जहां जो संदृष्टि आदि का कथन बीचि मैं आवै, ताकौं संदृष्टि अधिकार विषैं तिस स्थल विषैं बाकी कथन है; ताकौं जानि तहां अभ्यास करौ। ऐसैं विचारि संदृष्टि अधिकार करने का विचार कीया है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

लब्धिसार-क्षपणासार सम्बन्धी प्रकरण

बहुरि ऐसा विचार भया जो लब्धिसार अर क्षपणासार नामा शास्त्र है, तिन विषैं सम्यक्त्व का अर चारित्र का विशेषता लीए बहुत नीकैं वर्णन है । अर तिस वर्णन कौं जानैं मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थाननि का भी स्वरूप नीकैं जानिए है, सो इनका जानना बहुत कार्यकारी जानि, तिन ग्रंथनि के अनुसारि किछू कथन करना । तातैं लब्धिसार शास्त्र के गाथा सूत्रनि की भाषा करि इस ही टीका विषैं मिलाइएगा । तिस ही के क्षपक श्रेणी का कथन रूप गाथा सूत्रनि का अर्थ विषैं क्षपणासार का अर्थ गर्भित होयगा ऐसा जानना ।

इहां कोऊ कहै – तिन ग्रंथनि की जुदी ही टीका क्यों न करिए ? याही विषैं कथन करने का कहा प्रयोजन ?

ताका समाधान – गोम्मटसार विषैं कह्या हुवा केतेइक अर्थनि कौं जानैं बिना तिन ग्रंथनि विषैं कह्या हुवा केतेइक अर्थनि का ज्ञान न होय, वा तिन ग्रंथनि विषैं कह्या हुवा अर्थ कौं जानैं इस शास्त्र विषैं कहे हुए गुणस्थानादिक केतेइक अर्थनि का स्पष्ट ज्ञान होइ, सो ऐसा संबंध जान्या अर तिन ग्रंथनि विषैं कहे अर्थ कठिन हैं, सो जुदा रहे प्रवृत्ति विशेष न होइ तातैं इस ही विषैं तिन ग्रंथनि का अर्थ लिखने का[1] विचार कीया है । सो तिस विषैं प्रथमोपशम सम्यक्त्वादि होने का विधान धाराप्रवाह रूप वर्णन है । तातैं ताकी सूचनिका लिखें विस्तार होइ, कथन आगैं होयहीगा । तातैं इहां अधिकार मात्र ताकी सूचनिका लिखिए है ।

प्रथम मंगलाचरण करि प्रकार कारण का वा प्रकृतिबंधापसरण, स्थिति-बंधापसरण, स्थितिकांडक, अनुभागकांडक, गुणश्रेणी फालि इत्यादि, केतीइक संज्ञानि का स्वरूप वर्णन करि प्रथमोपशम सम्यक्त्व होने का विधान वर्णन है ।

तहां प्रथमोपशम सम्यक्त्व होने योग्य जीव का, अर पंचलब्धिनि के नामादिक कहि, तिनके स्वरूप का वर्णन है । तहां प्रायोग्यता लब्धि का कथन विषैं जैसें स्थिति घटै है अर तहां च्यारि गति अपेक्षा प्रकृतिबन्धापसरण हो है ताका, अर स्थिति, अनुभाग, प्रदेशबंध का वर्णन है । बहुरि च्यारि गति अपेक्षा एक जीव कैं युगपत् संभवता भंगसहित प्रकृतिनि के उदय का, अर स्थिति, अनुभाग, प्रदेश के

१. घ प्रति में 'अर्थ लिखने का' स्थान पर 'अनुसारि किछु कथन' ऐसा पाठ मिलता है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

उदय का वर्णन है। बहुरि एक जीव कैं युगपत् संभवती प्रकृतिनि के सत्त्व का अग्र स्थिति, अनुभाग, प्रदेश के सत्त्व का वर्णन है। बहुरि करणलब्धि का कथन विषैं तीन करणनि का नाम-कालादिक कहि तिनके स्वरूपादिक का वर्णन है।

तहां अधःकरण विषैं स्थितिबंधापसरणादिक आवश्यक हो हैं, तिनका वर्णन है।

अर अपूर्वकरण विषैं च्यारि आवश्यक, तिनविषैं गुणश्रेणी निर्जरा का कथन है। तहां अपकर्षण किया हुआ द्रव्य कौं जैसें उपरितन स्थिति गुणश्रेणी आयाम उदयावली विषैं दीजिए है, सो वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ उत्कर्षण वा अपकर्षण किया हुआ द्रव्य का निक्षेप अर अतिस्थापन का विशेष वर्णन है। बहुरि गुणसंक्रमण इहां न संभवै है, सो जहां संभवै है ताका वर्णन है। बहुरि स्थितिकांडक, अनुभाग-कांडक के स्वरूप, प्रमाणादिक का अर स्थिति, अनुभागकांडकोत्करण काल का वर्णनपूर्वक स्थिति, अनुभाग, सत्त्व घटावने का वर्णन है।

बहुरि अनिवृत्तिकरण विषैं स्थितिकांडकादि विधान कहि ताके काल का संख्यातवां भाग रहें अंतरकरण हो है, ताके स्वरूप का, अर आयाम प्रमाण का, अर ताके निषेकनि का अभाव करि जहां निक्षेपण कीजिए है ताका इत्यादि वर्णन है। बहुरि अंतरकरण करने का अर प्रथम स्थिति का, अर अंतरायाम का काल वर्णन है। बहुरि अंतरकरण का काल पूर्ण भए पीछैं प्रथम स्थिति का काल विषैं दर्शनमोह के उपशमावने का विधान, काल, अनुक्रमादिक का, तहां आगाल, प्रत्यागाल जहां पाइए है वा न पाइए है ताका, दर्शनमोह की गुणश्रेणी जहां न होइ है, ताका इत्यादि अनेक वर्णन है।

बहुरि पीछैं अंतरायाम का काल प्राप्त भए उपशम सम्यक्त्व होने का, तहां एक मिथ्यात्व प्रकृति कौं तीन रूप परिणमावने के विधान का वर्णन है। बहुरि उपशम सम्यक्त्व का विधान विषैं जैसें काल का अल्पबहुत्व पाइए है, तैसें वर्णन है।

बहुरि प्रथमोपशम सम्यक्त्व विषैं मरण के अभाव का, अर तहां तैं सासादन होने के कारण का, अर उपशम सम्यक्त्व का प्रारंभ वा निष्ठापन विषैं जो-जो उपयोग, योग, लेश्या पाइए ताका, अर उपशम सम्यक्त्व के काल, स्वरूपादिक का, अर तिस काल कौं पूर्ण भए पीछैं एक कोई दर्शनमोह की प्रकृति उदय आवने का, तहां जैसें

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

द्रव्य कौं अपकर्षण करि अंतरायामादि विषैं दीजिए है ताका, अर दर्शनमोह का उदय भए वेदक सम्यक्त्व वा मिश्र गुणस्थान वा मिथ्यादृष्टि गुणस्थान हो है, तिनके स्वरूप का वर्णन है।

बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व का विधान वर्णन है। तहां क्षायिक सम्यक्त्व का प्रारंभ जहां होइ ताका, अर प्रारंभ-निष्ठापन अवस्था का वर्णन है। बहुरि अनंतानुबंधी के विसंयोजन का वर्णन है। तहां तीन करणनि का अर अनिवृत्तिकरण विषैं स्थिति घटने का अर अन्य कषायरूप परिणमने के विधान प्रमाणादिक का कथन है। बहुरि विश्राम लेइ दर्शनमोह की क्षपणा हो है, ताका विधान वर्णन है। तहां संभवता स्थितिकांडादिक का वर्णन है। अर मिथ्यात्व, मिश्रमोहनी, सम्यक्त्वमोहनी विषैं स्थिति घटावने का, वा संक्रमण होने का विधान वर्णन करि सम्यक्त्वमोहनी की आठ वर्ष प्रमाण स्थिति रहे अनेक क्रिया विशेष हो हैं, वा तहां गुणश्रेणी, स्थितिकांडकादिक विषैं विशेष हो है, तिनका वर्णन है। बहुरि कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि होने का वा तहां मरण होतैं लेश्या वा उपजने का, वा कृतकृत्य वेदक भए पीछै जे क्रिया विशेष हो हैं अर तहां अंतकांडक वा अंतफालि विषैं विशेष हो है, तिनका वर्णन है। बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व होने का वर्णन है। बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व के विधान विषैं संभवते काल का तेतीस जायगां अल्पबहुत्व वर्णन है। बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व के स्वरूप का वा मुक्त होने का इत्यादि वर्णन है।

बहुरि चारित्र दोय प्रकार – देशचारित्र, सकलचारित्र। सो ए जाकैं होइ वा सन्मुख होतैं जो क्रिया होइ सो कहि देशचारित्र का वर्णन है। तहां वेदक सम्यक्त्व सहित देशचारित्र जो ग्रहै, ताके दोइ ही करण होइ, गुणश्रेणी न होइ, देशसंयत को प्राप्त भए गुणश्रेणी होइ इत्यादि वर्णन है। बहुरि एकांतवृद्धि देशसंयत के स्वरूपादिक का वर्णन है। बहुरि अध:प्रवृत्त देशसंयत का वर्णन है। तहां ताके स्वरूप-कालादिक का, अर तहां स्थिति-अनुभागखंडन न होइ, अर तहां देशसंयत तैं भ्रष्ट होइ देशसंयत कौं प्राप्त होइ ताकैं करण होने न होने का, अर देशसंयत विषैं संभवते गुणश्रेण्यादि विशेष का वर्णन है। बहुरि देशसंयम के विधान विषैं संभवते काल का अल्पबहुत्वता का वर्णन है। बहुरि जघन्य, उत्कृष्ट देशसंयम जाकैं होइ ताका, अर देशसंयम विषैं स्पर्द्धक का अविभागप्रतिच्छेद पाइए ताका वर्णन है। बहुरि देशसंयम के स्थाननि का, अर तिनके प्रतिपात, प्रतिपद्यमान, अनुभयरूप तीन प्रकारनि का, अर ते क्रम

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तैं जैसैं जिनकैं जेते पाइए, अर बीचि में स्वामीरहित स्थान पाइए तिनका, अर तहां विशुद्धता का वर्णन है।

बहुरि सकलचारित्र तीन प्रकार – क्षायोपशमिक, औपशमिक, क्षायिक; तहां क्षायोपशमिक चारित्र का वर्णन है। तिसविषैं यहु जाकैं होइ ताका, वा सन्मुख होतैं जो क्रिया होइ, ताका वर्णन करि वेदक सम्यक्त्व सहित चारित्र ग्रहण करनेवाले कैं दोय ही करण होइ इत्यादि अल्पबहुत्व पर्यंत सर्व कथन देशसंयतवत् है, ताका वर्णन है। बहुरि सकलसंयम स्पर्द्धक वा अविभागप्रतिच्छेदनि का कथन करि प्रतिपात, प्रतिपद्यमान, अनुभयरूप स्थान कहि ते जैसैं जेते जिस जीव के पाइए, तिनका क्रम तैं वर्णन है। तहां विशुद्धता का वा म्लेच्छ के सकलसंयम संभवने का वा सामयिकादि संबंधी स्थाननि का इत्यादि विशेष वर्णन है। बहुरि औपशमिक चारित्र का वर्णन है। तहां वेदक सम्यक्त्वी जिस-जिस विधानपूर्वक क्षायिक सम्यक्त्वी वा द्वितीयोपशम सम्यक्त्वी होइ उपशम श्रेणी चढै है, ताका वर्णन है। तहां द्वितीयोपशम सम्यक्त्व होने का विधान विषैं तीन करण, गुणश्रेणी, स्थितिकांडकादिक वा अंतरकरणादिक का विशेष वर्णन है।

बहुरि उपशम श्रेणी विषैं आठ अधिकार हैं, तिनका वर्णन है। तहां प्रथम अधःकरण का वर्णन है। बहुरि दूसरा अपूर्वकरण का वर्णन है। इहां संभवते आवश्यकनि का वर्णन है। इहांतैं लगाय उपशम श्रेणी का चढ़ना वा उतरणा विषैं स्थितिबंधापसरण अर स्थितिकांडक वा अनुभागकांडक के आयामादिक के प्रमाण का, अर इनकौं होतैं जैसा-जैसा स्थितिबंध अर स्थितिसत्त्व वा अनुभागसत्त्व अवशेष रहै, ताका यथा ठिकाणैं बीचि-बीचि वर्णन है, सो कथन आगैं होइगा तहां जानना। बहुरि अपूर्वकरण का वर्णन विषैं प्रसंग पाइ, अनुभाग के स्वरूप का वा वर्ग, वर्गणा, स्पर्द्धक, गुणहानि, नानागुणहानि का वर्णन है। अर इहां गुणश्रेणी, गुणसंक्रम हो है, अर प्रकृतिबंध का व्युच्छेद हो है, ताका वर्णन है। बहुरि अनिवृत्तिकरण का कथन विषैं दश करणनि विषैं तीन करणनि का अभाव हो है। ताका अनुक्रम लीएं कर्मनि का स्थितिबंध करनेरूप क्रमकरण हो है ताका, तहां असंख्यात समयप्रबद्धनि की उदीरणादिक का, अर कर्मप्रकृतिनि के स्पर्द्धक देशघाती करनेरूप देशघातीकरण का, अर कर्मप्रकृतिनि कैं केतेइक निषेकनि का अभाव करि अन्य निषेकनि विषैं निक्षेपण करनेरूप अंतरकरण का, अर अंतरकरण की समाप्तता भए युगपत् सात करननि का प्रारंभ हो है ताका, तहां ही आनुपूर्वी संक्रमण का – इत्यादि वर्णन करि नपुंसकवेद

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अर स्त्रीवेद अर छह हास्यादिक, पुरुषवेद, तीन क्रोध अर तीन माया अर दोय लोभ; इनके उपशमावने के विधान का अनुक्रम तैं वर्णन है। तहां गुणश्रेणी का वा स्थिति-अनुभागकांडकघात होने न होने का अर नपुंसकवेदादिक विषैं नवकबंध के स्वरूप-परिणमनादि विशेष का, वा प्रथम स्थिति के स्वरूप का आदि विशेष का, वा तहां आगाल, प्रत्यागाल गुणश्रेणी न हो है इत्यादि विशेषनि का, अर संक्रमणादि विशेष पाइए हैं, तिनका इत्यादि अनेक वर्णन पाइए है। बहुरि संज्वलन लोभ का उपशम विधान विषैं लोभ-वेदककाल के तीन भागनि का, अर तहां प्रथम स्थिति आदिक का वर्णन करि सूक्ष्मकृष्टि करने का विधान वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ वर्ग, वर्गणा, स्पर्द्धकनि का कथन करि अर कृष्टि करने का वर्णन है। इहां बादरकृष्टि तो है ही नाहीं, सूक्ष्मकृष्टि है, तिनविषैं जैसैं कर्मपरमाणु परिणमैं हैं वा तहां ही जैसैं अनुभागादिक पाइए है, वा तहां अनुसमयापवर्त्तनरूप अनुभाग का घात हो है इत्यादिकनि का, अर उपशमावने आदि क्रियानि का वर्णन है। बहुरि सूक्ष्मसांपराय गुणस्थान कौं प्राप्त होइ सूक्ष्मकृष्टि कौं प्राप्त जो लोभ, ताके उदय कौं भोगवने का, तहां संभवती गुणश्रेणी, प्रथम स्थिति आदि का इहां उदय-अनुदयरूप जैसैं कृष्टि पाइए तिनका, वा संक्रमण-उपशमनादि क्रियानि का वर्णन है। बहुरि सर्व कषाय उपशमाय उपशांत कषाय हो है ताका, अर तहां संभवती गुणश्रेणी आदि क्रियानि का, अर इहां जे प्रकृति उदय हैं, तिनविषैं परिणामप्रत्यय अर भवप्रत्ययरूप विशेष का वर्णन है। ऐसैं संभवती इकईस चारित्रमोह की प्रकृति उपशमावने का विधान कहि उपशांत कषाय तैं पड़नेरूप दोय प्रकार प्रतिपात का, तहां भवक्षय निमित्त प्रतिपात तैं देव संबन्धी असंयत गुणस्थान कौं प्राप्त हौ है। तहां गुणश्रेणी वा अनुपशमन वा अंतर का पूरण करना इत्यादि जे क्रिया हो है, तिनका वर्णन है। अर अद्धाक्षय निमित्त तैं क्रम तैं पडि स्वस्थान अप्रमत्त पर्यंत आवै तहां गुणश्रेणी आदिक का, वा चढ़तैं जे क्रिया भई थी, तिनका अनुक्रम तैं नष्ट होने का वर्णन है। बहुरि अप्रमत्त तैं पड़ने का तहां संभवति क्रियानि का अर अप्रमत्त तैं चढै तौ बहुरि श्रेणी मांडै ताका वर्णन है। ऐसैं पुरुषवेद, संज्वलन क्रोध का उदय सहित जो श्रेणी मांडै, ताकी अपेक्षा वर्णन है। बहुरि पुरुषवेद, संज्वलन मान-सहित आदि ग्यारह प्रकार उपशम श्रेणी चढनेवालों कैं जो-जो विशेष पाइए है, तिनका वर्णन है। बहुरि इस उपशम चारित्र विधान विषैं संभवते काल का अल्पबहुत्व वर्णन है।

बहुरि क्षपणासार के अनुसारि लीएं क्षायिकचारित्र के विधान का वर्णन है। तहां अधःकरणादि सोलह अधिकारनि का अर क्षपक श्रेणी कौं सन्मुख जीव का वर्णन है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि अधःकरण का वर्णन है। तहां विशुद्धता की वृद्धि आदि च्यारि आवश्यकनि का, अर तहां संभवते परिणाम, योग, कषाय, उपयोग, लेश्या, वेद; अर प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेशरूप कर्मनि का सत्त्व, बंध उदय, तिनका वर्णन है।

बहुरि अपूर्वकरण का वर्णन है। तहां संभवते स्थितिकांडकघात, अनुभाग-कांडकघात, गुणश्रेणी, गुणसंक्रम इनका विशेष वर्णन है। अर इहां प्रकृतिबंध की व्युच्छित्ति हो है, तिनका वर्णन है। इहांतैं लगाय क्षपक श्रेणी विषैं जहां-जहां जैसा-जैसा स्थितिबंधापसरण, अर स्थितिकांडकघात, अनुभागकांडकघात पाइए अर इनकौं होतैं जैसा-जैसा स्थितिबंध, अर स्थितिसत्त्व अर अनुभागसत्त्व रहै, तिनका बीच-बीच वर्णन है, सो कथन होगा तहां जानना।

बहुरि अनिवृत्तिकरण का कथन है। तहां स्वरूप, गुणश्रेणी, स्थितिकांडकादि का वर्णन करि कर्मनि का क्रम लीएं स्थितिबंध, स्थितिसत्त्व करने रूप क्रमकरण का वर्णन है। बहुरि गुणश्रेणी विषैं असंख्यात समयप्रबद्धनि की उदीरणा होने लगी, ताका वर्णन है।

बहुरि प्रत्याख्यान-अप्रत्याख्यानरूप आठ कषायनि के खिपावने का विधान वर्णन है। बहुरि निद्रा-निद्रा आदि सोलह प्रकृति खिपावने का विधान वर्णन है। बहुरि प्रकृतिनि की देशघाती स्पर्द्धकनि का बंध करनेरूप देशघातीकरण का वर्णन है। बहुरि च्यारि संज्वलन, नव नोकषायनि के केतेइक निषेकनि का अभाव करि अन्यत्र निक्षेपण करनेरूप अंतरकरण का वर्णन है। बहुरि नपुंसकवेद खिपावने का विधान वर्णन है। तहां संक्रम का वा युगपत् सात क्रियानि का प्रारंभ हो है, तिनका इत्यादि वर्णन है। बहुरि स्त्रीवेद क्षपणा का वर्णन है। बहुरि छह नोकषाय अर पुरुषवेद इनकी क्षपणा का विधान वर्णन है। बहुरि अश्वकर्णकरणसहित अपूर्वस्पर्द्धक करने का वर्णन है। तहां पूर्वस्पर्द्धक जानने कौं वर्ग, वर्गणा, स्पर्द्धकनि का अर तिन-विषैं देशघाती, सर्वघातिनि के विभाग का, वा वर्गणा की समानता, असमानता आदिक का कथन करि अश्वकरण के स्वरूप, विधान क्रोधादिकनि के अनुभाग का प्रमाणादिक का अर अपूर्वस्पर्द्धकनि के स्वरूप प्रमाण का तिनविषैं द्रव्य-अनुभागा-दिक का, तहां समय-समय संबंधी क्रिया का वा उदयादिक का बहुत वर्णन है।

बहुरि कृष्टिकरण का वर्णन है। तहां क्रोधवेदककाल के विभाग का, अर बादर-कृष्टि के विधान विषैं कृष्टिनि के स्वरूप का, तहां बारह संग्रहकृष्टि, एक-एक संग्रहकृष्टि

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

विषैं अनंती अंतरकृष्टि तिनका, अर तिनविषैं प्रदेश अनुभागादिक के प्रमाण का, तहां समय-समय संबंधी क्रियानि का वा उदयादिक का अनेक वर्णन है। बहुरि कृष्टि वेदना का विधान वर्णन है। तहां कृष्टिनि के उदयादिक का, वा संक्रम का, वा घात करने का, वा समय-समय संबंधीं क्रिया का विशेष वर्णन करि क्रम तैं दश संग्रहकृष्टिनि के भोगवने का विधान-प्रमाणादिक का बहुत कथन करि तिनकी क्षपणा का विधान वर्णन है। बहुरि अन्य प्रकृति संक्रमण करि इनरूप परिणमी, तिनके द्रव्यसहित लोभ की द्वितीय, तृतीय संग्रहकृष्टि के द्रव्य कौं सूक्ष्मकृष्टिरूप परिणमावै है, ताके विधान-स्वरूप-प्रमाणादिक का वर्णन है। असैं अनिवृत्तिकरण का बहुत वर्णन है। याविषैं गुणश्रेणी-अनुभागघात के विशेष आदि बीचि-बीचि अनेक कथन पाइए है, सो आगै कथन होइगा तहां जानना।

बहुरि सूक्ष्मसांपराय का वर्णन है। तहां स्थिति, अनुभाग का घात वा गुणश्रेणी आदि का कथन करि बादरकृष्टि संबंधी अर्थ का निरूपण पूर्वक सूक्ष्मसांपराय संबंधी कृष्टिनि के अर्थ का निरूपण, अर तहां सूक्ष्मकृष्टिनि का उदय, अनुदय, प्रमाण अर संक्रमण, क्षयादिक का विधान इत्यादि अनेक वर्णन है। बहुरि यहु तौ पुरुषवेद, संज्वलन क्रोध का उदय सहित श्रेणी चढ्या, ताकी अपेक्षा कथन है। बहुरि पुरुषवेद, संज्वलन मान आदि का उदय सहित ग्यारह प्रकार श्रेणी चढने वालों कैं जो-जो विशेष पाइए, ताका वर्णन है। असैं कृष्टिवेदना पूर्ण भएं।

बहुरि क्षीणकषाय का वर्णन। तहां ईर्यापथबंध का, अर स्थिति-अनुभागघात वा गुणश्रेणी आदि का, वा तहां संभवते ध्यानादिक का अर ज्ञानावरणादिक के क्षय होने के विधान का, अर इहाँ शरीर सम्बन्धी निगोद जीवनि के अभाव होने के क्रम का इत्यादि वर्णन है।

बहुरि सयोगकेवली का वर्णन है। तहां ताके महिमा का अर गुणश्रेणी का अर विहार-आहारादिक होने न होने का वर्णन करि अंतर्मुहूर्त्त मात्र आयु रहै आवर्जितकरण हो है ताका, तहां गुणश्रेणी आदि का, अर केवलसमुद्घात का, तहां दंड-कपाटादिक के विधान वा क्षेत्रप्रमाणादिक का, वा तहां संभवती स्थिति-अनुभाग घटने आदि क्रियानि का वा योगनि का इत्यादि वर्णन है। बहुरि बादर मन-वचन काय योग कौं निरोधि सूक्ष्म करने का, तहां जैसें योग हो है, ताका अर सूक्ष्म मनोयोग, वचनयोग, उच्छ्वास-निश्वास, काययोग के निरोध करने का, तहां काययोग के

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पूर्वस्पर्द्धकनि के अपूर्वस्पर्द्धक अर तिनकी सूक्ष्मकृष्टि करिए है, तिनका स्वरूप, विधान, प्रमाण, समय-समय सम्बन्धी क्रियाविशेष इत्यादिक का अर करी सूक्ष्मकृष्टि, ताकौं भोगवता सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाती ध्यान युक्त हो है, ताका वा तहां संभवते स्थिति-अनुभागघात वा गुणश्रेणी आदि विशेष का वर्णन है ।

बहुरि अयोगकेवली का वर्णन है । तहां ताकी स्थिति का, शैलेश्यपना का, ध्यान का, तहां अवशेष सर्व प्रकृति खिपवाने का वर्णन है ।

बहुरि सिद्ध भगवान का वर्णन है । तहां सुखादिक का, महिमा का, स्थान का, अन्य मतोक्त स्वरूप के निराकरण का इत्यादि वर्णन है । असें लब्धिसार क्षपणासार कथन की सूचनिका जाननी ।

बहुरि अन्त विषैं अपने किछू समाचार प्रगट करि इस सम्यग्ज्ञानचंद्रिका की समाप्तता होतें कृतकृत्य होइ आनंद दशा कौं प्राप्त होना होइगा । असें सूचनिका करि ग्रंथसमुद्र के अर्थ संक्षेपपनें प्रकट किए हैं ।

इति सूचनिका ।

—o—

परिकर्माष्टक सम्बन्धी प्रकरण

बहुरि इस करणानुयोगरूप शास्त्र के अभ्यास करने के अर्थि गणित का ज्ञान अवश्य चाहिये, जातैं अलंकारादिक जानैं प्रथमानुयोग का, गणितादिक जानैं करणानुयोग का, सुभाषितादिक जानें चरणानुयोग का, न्यायादि जानैं द्रव्यानुयोग का विशिष्ट ज्ञान हो है, तातें गणित ग्रंथनि का अभ्यास करना । अर न बनें तौ परिकर्माष्टक तौ अवश्य जान्या चाहिये । जातैं याकौं जाणें अन्य गणित कर्मनि का भी विधान जानि तिनकौं जानैं अर इस शास्त्र विषैं प्रवेश पावै । तातैं इस शास्त्र का अभ्यास करने को प्रयोजनमात्र परिकर्माष्टक का वर्णन इहां करिए है–

तहां परिकर्माष्टक विषैं संकलन, व्यवकलन, गुणकार, भागहार, वर्ग, घन, वर्गमूल, घनमूल ए आठ नाम जानने । ए लौकिक गणित विषै भी संभवै हैं, अर अलौकिक गणित विषैं भी संभवै हैं । सो लौकिक गणित तौ प्रवृत्ति विषैं प्रसिद्ध ही है । अर अलौकिक गणित जघन्य संख्यातादिक वा पल्यादिक का व्याख्यान आगैं जीवसमासाधिकार पूर्ण भए पीछैं होइगा, तहां जानना । अब संकलनादिक का स्वरूप

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

कहिए है । किसी प्रमाण कौं किसी प्रमाण विषैं जोडिये तहां संकलन कहिए । जैसैं सात विषैं पांच जोडैं बारह होइ, वा पुद्गलराशि विषैं जीवादिक का प्रमाण जोडैं सर्व द्रव्यनि का प्रमाण होइ है ।

बहुरि किसी प्रमाण विषैं किसी प्रमाण कौं घटाइए, तहां व्यवकलन कहिए । जैसैं बारह विषैं पांच घटाएं सात होय, वा संसारी राशि विषैं त्रसराशि घटाएं स्थावरनि का प्रमाण होइ ।

बहुरि किसी प्रमाण कौं किसी प्रमाण करि गुणिए, तहां गुणकार कहिए । जैसैं पांच कौं च्यारि करि गुणिए वीस होइ, वा जीवराशि कौं अनन्त करि गुणैं पुद्गलराशि होइ ।

बहुरि किसी प्रमाण कौं किसी प्रमाण का जहां भाग दीजिए, तहां भागहार कहिए । जैसैं वीस कौं च्यारि करि भाग दीऐ पांच होइ, वा जगत् श्रेणी कौं सात का भाग दीए राजू होइ ।

बहुरि किसी प्रमाण कौं दोय जायगां मांडि परस्पर गुणिए, तहां तिस प्रमाण का वर्ग कहिए । जैसैं पांच कौं दोय जायगां मांडि परस्पर गुणैं पाँच का वर्ग पचीस होइ, वा सूच्यंगुल कौं दोय जायगां मांडि, परस्पर गुणैं, सूच्यंगुल का वर्ग प्रतरांगुल होइ ।

बहुरि किसी प्रमाण कौं तीन जायगां मांडि, परस्पर गुणैं, तिस प्रमाण को घन कहिए । जैसैं पांच कों तीन जायगां मांडि, परस्पर गुणैं, पांच का घन एक सौ पचीस होइ । वा जगत् श्रेणी कौं तीन जायगां मांडि परस्पर गुणैं लोक होइ ।

बहुरि जो प्रमाण जाका वर्ग कीये होइ, तिस प्रमाण का सो वर्गमूल कहिए । जैसैं पचीस पांच का वर्ग कीए होइ तातैं पचीस का वर्गमूल पांच है । वा प्रतरांगुल है सो सूच्यंगुल का वर्ग कीए हो है, तातैं प्रतरांगुल का वर्गमूल सूच्यंगुल है ।

बहुरि जो प्रमाण जाका घन कीए होइ, तिस प्रमाण का सो घनमूल कहिए । जैसैं एक सौ पचीस पांच का घन कीए होइ, तातैं एक सौ पचीस का घनमूल पांच है । वा लोक है सो जगत्श्रेणी का घन कीए हो है, तातैं लोक का घनमूल जगत्श्रेणी है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अब इहां केतेइक संज्ञाविशेष कहिए है । संकलन विषैं जोडने योग्य राशि का नाम धन है । मूलराशि कौं तिस धन करि अधिक कहिए । जैसैं पांच अधिक कोटि वा जीवराश्यादिक करि अधिक पुद्गल इत्यादिक जानने ।

बहुरि व्यवकलन विषैं घटावने योग्य राशि का नाम ऋण है । मूलराशि कौं तिस ऋण करि हीन वा न्यून वा शोधित वा स्फोटित इत्यादि कहिए । जैसैं पांच करि हीन कोटि वा त्रसराशि हीन संसारी इत्यादि जानने । कहीं मूलराशि का नाम धन भी कहिए है ।

बहुरि गुणकार विषैं जाकौं गुणिए, ताका नाम गुण्य कहिए ।

जाकरि गुणिए, ताका नाम गुणकार वा गुणक कहिए ।

गुण्यराशि कौं गुणकार करि गुणित वा हत वा अभ्यस्त वा घ्नत इत्यादि कहिए । जैसैं पंचगुणित लक्ष वा असंख्यात करि गुणित लोक कहिए । कहीं गुणकार प्रमाण गुण्य कहिए । जैसैं पांच गुणां वीस कौं पांच वीसी कहिए वा असंख्यातगुणां लोक कूं असंख्यातलोक कहिए इत्यादिक जानने । गुनने का नाम गुणन वा हनन वा घात इत्यादि कहिए है ।

बहुरि भागहार विषैं जाकौं भाग दीजिए ताका नाम भाज्य वा हार्य इत्यादि है । अर जाका भाग दीजिए ताका नाम भागहार वा हार वा भाजक इत्यादि है । भाज्य राशि कूं भागहार करि भाजित भक्त वा हत वा खंडित इत्यादि कहिए । जैसैं पांच करि भाजित कोटि वा असंख्यात करि भाजित पल्य इत्यादिक जानने । भागहार का भाग देइ एक भाग ग्रहण करना होइ, तहां तेथवां भाग वा एक भाग कहिये । जैसैं वीस का चौथा भाग, वा पल्य का असंख्यातवां भाग वा असंख्यातैक भाग इत्यादि जानना ।

बहुरि एक भाग विना अवशेष भाग ग्रहण करने होई तहां बहुभाग कहिए । जैसैं वीस के च्यारि बहुभाग वा पल्य का असंख्यात बहुभाग इत्यादि जानने ।

बहुरि वर्ग का नाम कृति भी है । बहुरि वर्गमूल का नाम कृतिमूल वा मूल वा पद वा प्रथम मूल भी है । बहुरि प्रथम मूल के मूल कौं द्वितीय मूल कहिए । द्वितीय मूल के मूल कौं तृतीय मूल कहिए । ऐसैं चतुर्थादि मूल जानने । जैसैं

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पैंसठ हजार पांच सौ छत्तीस का प्रथम मूल दोय सै छप्पन, द्वितीय मूल सोलह, तृतीय मूल च्यारि, चतुर्थ मूल दोय होइ। ऐसैं ही पल्य वा केवलज्ञानादि के प्रथमादि मूल जानने। ऐसें अन्य भी अनेक संज्ञाविशेष यथासंभव जानने।

अब इहां विधान कहिए है। सो प्रथम लौकिक गणित अपेक्षा कहिए है। तहां ऐसा जानना **'अंकानां वामतो गतिः'** अंकनि का अनुक्रम बाईं तरफ सेती है। जैसें दोय सै छप्पन (२५६) के तीन अंकनि विषैं छक्का आदि अंक, पांचा दूसरा अंक, दूवा अंत अंक कहिये। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ आदि अंकनि कौं क्रम तैं एक स्थानीय, दश स्थानीय, शत स्थानीय, सहस्र स्थानीय आदि कहिए। प्रवृत्ति विषैं इनही कौं इकवाई, दहाई, सैंकडा, हजार आदि कहिए है।

बहुरि संकलनादि होतैं प्रमाण ल्यावने कौं गणित कर्म कौं कारण जे करण-सूत्र, तिनकरि गणित शास्त्रनि विषैं अनेक प्रकार विधान कह्या है, सो तहातैं जानना वा त्रिलोकसार की भाषा टीका बनी है, तहां लौकिक गणित का प्रयोजन जानि पीठबंध विषैं किछु वर्णन किया है, सो तहांतैं जानना।

इस शास्त्र विषैं गणित का कथन की मुख्यता नाहीं वा लौकिक गणित का बहुत विशेष प्रयोजन नाहीं तातैं इहां बहुत वर्णन न करिए है। विधान का स्वरूप मात्र दिखावने कौं एक प्रकार करि किंचित् वर्णन करिए है।

तहां संकलन विषैं जिनका संकलन करना होइ, तिनके एक स्थानीय आदि अंकनि कौं क्रम तैं यथास्थान जोडैं जो-जो अंक आवै, सो-सो अंक जोड विषैं क्रम तैं यथास्थान लिखना। सो प्रवृत्ति विषैं जैसें जोड देने का विधान है, तैसैं ही यहु जानना। बहुरि जो एक स्थानीय आदि अंक जोडैं दोय, तीन आदि अंक आवैं तौ प्रथम अंक कौं जोड विषैं पहिले लिखिए। द्वितीय आदि अंकनि कौं दश स्थानीय आदि अंकनि विषैं जोडिए। याकौं प्रवृत्ति विषैं हाथिलागा कहिए है। ऐसैं करतैं जो अंक होइ, सो जोड्या हुवा प्रमाण जानना।

इहां उदाहरण – जैसै दोय सै छप्पन अर चौरासी (२५६+८४) जोडिए, तहां एक स्थानीय छह अर च्यारि जोडैं दश भए। तहां जोड विषैं एक स्थानीय बिंदी लिखी, अर रह्या एक, ताकौं अर दश स्थानीय पांचा, आठा इन कौं जोडैं;

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

चौदह भए। तहां जोड विषैं दश स्थानीय चौका लिख्या अर रह्या एका, ताकौं अर शत स्थानीय दूवा कौं जोडैं, तीन भया, सो जोड विषैं शत स्थानीय लिख्या। असैं जोडैं तीन सै चालीस भये। असैं ही अन्यत्र जानना।

बहुरि व्यवकलन विषैं मूलराशि के एक स्थानीय आदि अंकनि विषैं ऋण राशि के एक स्थानीय आदि अंकनि कौं यथाक्रम घटाइए। जो मूलराशि के एक स्थानीय आदि अंक तें ऋणराशि के एक स्थानीय आदि अंक अधिक प्रमाण लीए होइ तौ धनराशि के दश स्थानीय आदि अंक विषैं एक घटाइ धनराशि के एक स्थानीय आदि अंक विषैं दश जोडि, तामैं ऋणराशि का अंक घटावना। सो प्रवृत्ति विषैं जैसैं बाकी काढने का विधान है, तैसैं ही यहु जानना। असैं करतैं जो होइ, सो अवशेष प्रमाण जानना।

इहां उदाहरण – जैसैं छह सै पिचहत्तरि मूलराशि विषैं बाणवै (६७५–९२) ऋण घटावना होइ, तहां एक स्थानीय पांच में दूवा घटाए तीन रहे अर दश स्थानीय सात विषैं नव घटै नाहीं तातैं शतस्थानीय छक्का मैं एक घटाइ ताके दश सात विषैं जोडैं सतरह भए, तामैं नौ घटाइ आठ रहे शत स्थानीय छक्का में एक घटायें पांच रहे, तामैं ऋण का अंक कोऊ घटावने कौं है नाहीं तातैं, पांच ही रहे। असैं अवशेष पांच सै तियासी प्रमाण आया। असैं ही अन्यत्र जानना।

बहुरि गुणकार विषैं गुण्य के अंत अंक तें लगाय आदि अंक पर्यंत एक-एक अंक कौं क्रम तें गुणकार के अंकनि करि गुणि यथास्थान लिखिए वा जोडिए, तब गुणित राशि का प्रमाण आवै।

इहां उदाहरण – जैसैं गुण्य दोय सै छप्पन अर गुणकार सोलह (२५६×१६)। तहां गुण्य का अंत अंक दूवा कौं सोलह करि गुणना। तहां छक्का तौ दूवा ऊपरि अर एका ताके पीछै $\begin{matrix}१६\\२५६\end{matrix}$ असैं स्थापन करि एक करि दूवा कौ गुणैं, दोय पाये, सो तो एक के नीचै लिखना। अर छह करि दूवा कौ गुणै बारह पाए, तिसविषैं दूवा तौ गुण्य की जायगां लिखना एका पहिलै दोय लिख्या था तामै जोडना तब असा भया [३२ ५६]। बहुरि असैं ही गुण्य का उपांत अंक पांचा, ताकौ सोलह करि गुणना तहां असैं $\begin{matrix}१६\\३२,५६\end{matrix}$ स्थापना करि एका करि पांचा कौं गुणैं, पांच भये, सो तौ एका के नीचै दूवा, तामैं जोडिए अर छक्का करि पांचा कौ गुणै तीस भए, तहां बिंदी पांचा की जायगां मांडि तीन पीछले अंकनि विषैं जोडिए असैं कीए

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ऐसा ४००६ भया। बहुरि गुण्य का आदि अंक छक्का कौं सोलह करि गुणना तहां ऐसें $\overset{१६}{४००६}$ स्थापि एक करि छह कों गुणें छह भये सो तौ एका के नीचै बिंदी तामैं जोडिए अर छ कों छ करि गुणै छत्तीस भया, तहां छक्का तौ गुण्य का छक्का की जायगां स्थापना, तीया पीछला अंक छक्का तामै जोडना, ऐसैं कीए ऐसा ४०९६ भया। या प्रकार गुणित राशि च्यारि हजार छिनवै आया। ऐसैं ही अन्यत्र विधान जानना।

बहुरि भागहार विषैं भाज्य के जेते अंकनि विषैं भागहार का भाग देना संभवै, तितने अंकनि कौं ताका भाग देइ पाया अंक कौं जुदा लिखि तिस पाया अंक करि भागहार कौं गुणै जो प्रमाण होइ, तितना जाका भाग दीया था, तामैं घटाय अवशेष तहां लिखना। बहुरि तैसैं ही भाग दीए जो अंक पावै, ताकौं पूर्वें लिख्या था अंक, ताके आगै लिखि ताकरि भागहार कौं गुणि तैसैं ही घटावना। असैं यावत् भाज्यराशि निःशेष होइ तावत् कीए जुदे लिखे अंक प्रमाण एक भाग आवैं है।

इहां उदाहरण-जैसैं भाज्य च्यारि हजार छिनवै, भागहार सोलह। तहां भाज्य का अन्त अंक च्यारि कौं तौ सोलह का भाग संभवै नाहीं तातैं दोय अंके चालीस तिनकौं भाग देना, तहां ऐसैं $\frac{४०९६}{१६}$ लिखि। इहां तीन आदि अंकनि करि सोलह कौं गुणै, तौ चालीस तैं अधिक होइ जाय तातैं दोइ पाये सो दूवा जुदा लिखि, ताकरि सोलह कौं गुणि चालीस मै घटाए असा ८९६ भया।

बहुरि इहां निवासी कौं सोलह का भाग दोए $\frac{८९६}{१६}$ पांच पाए, सो दूवा के आगैं लिखि, ताकरि सोलह कौं गुनि निवासी में घटाए ऐसा ९६ रह्या। याकौं सोलह का भाग दीएं छह पाय, सो पांचा के आगैं लिखि, ताकरि सोलह कौं गुणि छिनवै भए, सो घटाए भाज्यराशि निःशेष भया। ऐसैं जुदे लिखे अंक तिनकरि एक भाग का प्रमाण दोय सै छप्पन आवै है। बहुरि '**भागो नास्ति लब्धं शून्यं**' इस वचन तैं जहां भाग टूटि जाय तहां बिंदी पावै। जैसैं भाज्य तीन हजार छत्तीस (३०३६) भागहार छह (६) तहां तीस कौं छह का भाग दीए, पांच पाए, तिनकरि छह कौं गुणि, घटाए तीस निःशेष होय गया, सो इहां भाग टूट्या, तातैं पांच के आगैं बिंदी लिखिए। बहुरि अवशेष छत्तीस कौं छह का भाग दीए छह पाए, सो बिंदी के आगै लिखि, ताकरि छह कौं गुणि घटाएं सर्व भाज्य निःशेष भया। ऐसैं लब्ध प्रमाण पांच सै छै पाया। ऐसैं ही अन्यत्र जानना।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि वर्ग विषैं गुणकारवत् विधान जानना। जातैं दोय जायगां समान राशि लिखि एक कौं गुण्य, एक कौं गुणकार स्थापि परस्पर गुणैं वर्ग हो है। जैसें सोलह कौं सोलह करि गुणैं, सोलह का वर्ग दोय सै छप्पन हो है।

बहुरि घन विषैं भी गुणकारवत् ही विधान है। जातैं तीन जायगां समान राशि मांडि परस्पर गुणन करना। तहां पहिला राशिरूप गुण्य कौं दूसरा राशिरूप गुणकार करि गुणैं जो (प्रमाण) होइ ताकौं गुण्य स्थापि, ताकौं तीसरा राशिरूप गुणकार करि गुणैं जो प्रमाण आवै, सोइ तिस राशि का घन जानना।

जैसें सोलह कौं सोलह करि गुणैं, दोय सै छप्पन, बहुरि ताकों सोलह करि गुणैं च्यार हजार छिनवे होइ, सोई सोलह का घन है। ऐसें ही अन्यत्र जानना।

बहुरि वर्गमूल विषैं वर्गरूप राशि के प्रथम अंक उपरि विषम की दूसरे अंक उपरि सम की तीसरे (अंक) उपरि विषम की चौथे (अंक) उपरि सम की ऐसें क्रम तें अन्त अंक पर्यंत उभी आडी लीक करि सहनानी करनी। जो अन्त का अंक सम होय तो तहां उपांत का अर अन्त का दोऊ अंकनि कौं विषम संज्ञा जाननी। तहां अन्त का एक वा दोय जो विषम अंक, ताका प्रमाण विषैं जिस अंक का वर्ग संभवै, ताका वर्ग करि अन्त का विषम प्रमाण मैं घटावना। अवशेष रहै सो तहां लिखना। बहुरि जाका वर्ग कीया था, तिस मूल अंक कौं जुदा लिखना। बहुरि अवशेष रहे अंकनि करि सहित जो तिस विषम के आगैं सम अंक, ताके प्रमाण कौं जुदा स्थाप्या जो अंक, तातैं दूणा प्रमाण रूप भागहार का भाग दीए जो अंक पावैं, ताकौं तिस जुदा स्थाप्या, अंक के आगैं लिखना। अर तिस अंक करि गुण्या हुवा भागहार का प्रमाण को तिस भाज्य में घटाइ अवशेष तहां लिखि देना। बहुरि इस अवशेष सहित जो तिस सम के आगैं विषम अंक, तामैं जो अंक पाया था, ताका वर्ग कीए जो प्रमाण होइ, सो घटावना अवशेष तहां लिखना। बहुरि इस अवशेष सहित जो तिस विषम के आगैं सम अंक, ताकौं तिन जुदे लिखे हुए सर्व अंकरूप प्रमाण तैं दूणा प्रमाण रूप भागहारा का भाग देइ पाया अंक कौं तिन जुदे लिखे हुए अंकनि के आगैं लिखना। अर इस पाया अंक करि भागहार कौं गुणि भाज्य में घटाइ, अवशेष तहां लिखना। बहुरि इस अवशेष सहित जो सम अंक के आगैं विषम अंक ताविषैं पाया अंक का वर्ग घटावना। ऐसें ही क्रमतैं यावत् वर्गित राशि निःशेष होय, तावत् कीए वर्गमूल का प्रमाण आवै है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

इहां उदाहरण – जैसें वर्गित राशि पैंसठ हजार पांच सौ छत्तीस (६५५३६) इहां विषम-सम की सहनानी ऐसी |−|−| ६५५३६ करि अन्त का विषम छक्का तामें तीन का वर्ग तौ बहुत होइ जाइ, तातैं संभवता दोय का वर्ग च्यारि घटाइ अवशेष दोइ तहां लिखना। अर मूल अंक दूवा जुदा पंक्ति विषैं लिखना। बहुरि तिस अवशेष सहित आगिला सब अंक ऐसा २५। ताकौं जुदा लिख्या जो दूवा तातैं दूणा च्यारि का भाग दीए, छह पावैं; परंतु आगैं वर्ग घटावने का निर्वाह नाहीं; तातैं पांच पाया, सो जुदा लिख्या हुआ दूवा के आगैं लिखना। अर पाया अंक पांच करि भागहार च्यारि कौं गुणि, भाज्य में घटाएं, पचीस की जायगां पांच रह्या, तिस सहित आगिला विषम ऐसा (५५) तामैं पाया अंक पांच का वर्ग पचीस घटाए, अवशेष ऐसा ३०, तिस सहित आगिला सम ऐसा ३०३, ताकौं जुदे लिखे अंकनि तैं दूणा प्रमाण पचास का भाग दीए छह पाया, सो जुदे लिखे अंकनि के आगैं लिखना। अर छह करि भागहार पचास कौं गुणि, भाज्य मैं घटाए अवशेष ऐसा ३ रह्या, तिस सहित आगिला विषम ऐसा ३६, यामैं पाया अंक छह का वर्ग घटाए राशि निःशेष भया। ऐसैं जुदे लिखे हूवे अंकनि करि पैंसठ हजार पांच सै छत्तीस का वर्गमूल दोए सै छप्पन आया। ऐसैं ही अन्यत्र विधान जानना।

बहुरि घनमूल विषैं घन रूप राशि के अंकनि उपरि पहिला घन, दूजा-तीजा अघन चौथा घन, पाचवाँ-छठा अघन ऐसैं क्रमतैं ऊभी आडी लीक रूप सहनानी करनी। जो अंत का घन अंक न होइ तो अन्त उपांत दोय अंकनि की घन संज्ञा जाननी। अर ते दोऊ घन न होइ तौ अन्त तैं तीन अंकनि की घन संज्ञा जाननी। तहां एक वा दोय वा तीन अंक रूप जो अन्त का घन, तामैं जाका घन संभवै ताका घन करि ताकौं अंत का घन अंकरूप प्रमाण मैं घटाइ अवशेष तहां लिखना। अर जाका घन कीया था, तिस मूल अंक कौ जुदा पंक्ति विषैं स्थापना। बहुरि तिस अवशेष सहित आगिला अंक कौं तिस मूल अंक के वर्ग तैं तिगुणा भागहार का भाग देना जो अंक पावैं, ताकौं जुदा लिख्या हुवा अंक के आगै लिखना। अर पाया अंक करि भागहार कौं गुणी, भाज्य में घटाइ अवशेष तहां लिखि देना। बहुरि इस अवशेष सहित आगिला अंक, ताविषैं पाया अंक के वर्ग कौं पूर्वे पंक्ति विषैं तिष्ठते अंकनि करि गुणैं, जो प्रमाण होइ, ताकौ तिगुणा करि घटाइ देना। अवशेष तहां लिखना। बहुरि इस अवशेष सहित आगिला अंक विषैं तिस ही पाया अंक का घन घटावना। बहुरि अवशेष सहित आगिला अंक कौं जुदा लिखि अंकनि के प्रमाण

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

का वर्ग कौं तिगुणा करि निर्वाह होइ, तैसें भाग देना। पाया अंक पंक्ति विषैं आगैं, लिखना। ऐसैं ही अनुक्रम तैं यावत् धनराशि निःशेष होइ तावत् कीए घनमूल का प्रमाण आवै है।

इहां उदाहरण – जैसें घनराशि पंद्रह हजार छह सै पच्चीस (१५६२५) इहां घनअघन की सहनानी कीए ऐसा (१५६२५) इहां अन्त अंक घन नाहीं तातैं दोय अंक रूप अन्तघन १५। इहां तीन का घन कीए बहुत होइ जाइ, तातैं दोय का घन आठ घटाइ, तहां अवशेष सात लिखना। अर घनमूल दूवा जुदी पंक्ति विषैं लिखना बहुरि तिस अवशेष सहित आगिला अंक अैसा (७६) ताकौं मूल अंक का वर्ग च्यारि, ताका तिगुणा बारह, ताका भाग दिए छह पावैं, परंतु आगै निर्वाह नाहीं तातैं पांच पाया सो दूवा के आगें पंक्ति विषें लिखना अर इस पांच करि भागहार बारह कौं गुणि, भाज्य में घटाए, अवशेष सोलह (१६) तिस सहित आगिला अंक ऐसा (१६२) तामैं पाया अंक पांच, ताका वर्ग पचीस, ताकौं पूर्वै पंक्ति विषैं तिष्ठै था दूवा, ताकरी गुणे पचास, तिनके तिगुणे ड्योढ सैं घटाएं अवशेष बारह, तिस सहित आगिला अंक ऐसा (१२५), यामैं पांच का घन घटाएं राशि निःशेष भया ऐसें पंद्रह हजार छःसै पच्चीस का घनमूल पच्चीस प्रमाण आया। ऐसैं ही अन्यत्र जानना।

ऐसैं वर्णन करि अब भिन्न परिकर्माष्टक कहिए है। तहां हार अर अंशनि का संकलनादिक जानना। हार अर अंश कहा कहिए। जैसैं जहां छह पंचास कहे, तहां एक के पंचास अंश कीए तिह समान छह अंश जानने। वा छह का पांचवां भाग जानना। तहां छह कौं तो हार वा हर वा छेद कहिए। अर पांच कौं अंश वा लव इत्यादिक कहिए। तहां हार कौं ऊपरि लिखिए, अंश कौं नीचै लिखिए। जैसें छह पंचास कौं अैसा ६/५० लिखिए। ऐसें ही अन्यत्र जानना। तहाँ भिन्न संकलन-व्यवकलन के अर्थि भागजाति, प्रभागजाति, भागानुबंध, भागापवाह ए च्यारि जाति हैं। तिन-विषैं इहां विशेष प्रयोजनभूत समच्छेद विधान लीए भागजाति कहिए है। जुदे-जुदे हार अर तिनके अंश लिखि एक-एक हार कौं अन्य हारनि के अंशनि करि गुणिए अर सर्व अंशनि कौं परस्पर गुणिए। ऐसें करि जो संकलन करना होइ तौ परस्पर हारनि कौं जोड दीजिए अर व्यवकलन करना होइ तो मूलराशि के हारनि विषैं ऋणराशि के हार घटाइ दीजिए। अर अंश सबनि के समान भए। तातैं अंश परस्पर गुणे जेते भए तेते ही राखिए। ऐसैं समान अंश होने तें याका नाम समच्छेद विधान है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

इहां उदाहरण – तहां संकलन विषैं पांच छट्ठा अंश दोय तिहाइ तीन पाव (चौथाई) इनकौं जोडना होइ तहां | ५/६ | २/३ | ३/४ | ऐसा लिखि तहां पांच हार कौं अन्य के तीन च्यारि-अंशनि करि अर दोय हार कौं अन्य के छह-च्यारि अंशनि करि अर तीन हार कौं अन्य के छह-तीन अंशनि करि गुणे साठि अडतालीस चौवन हार भए। अर अंशनि कौं परस्पर गुणे सर्वत्र बहत्तर अंश | ६०/७२ | ४८/७२ | ५४/७२ | ऐसैं भए। इहां हारनि कौं जोडे एक सो बासठ हार अर बहत्तर अंश भए तहां हार कौं अंश का भाग दीए दोय पाये अर अवशेष अठारह का बहत्तरिवां भाग रह्या। ताका अठारह करि अपवर्त्तन कीए एक का चौथा भाग भया। ऐसैं तिनका जोड सवा दोय आया। कोई संभवता प्रमाण का भाग देइ भाज्य वा भाजक राशि का महत् प्रमाण कौं थोरा कीजिए (वा निःशेष कीजिए) तहां अपवर्त्तन संज्ञा जाननी सो इहां अठारह का भाग दीए भाज्य अठारह था, तहां एक भया अर भागहार बहत्तर था, तहां च्यारि भया, तातैं अठारह करि अपवर्त्तन भया कह्या। ऐसैं ही अन्यत्र अपवर्त्तन का स्वरूप जानना।

बहुरि व्यवकलन विषैं जैसैं तीन विषैं पांच चौथा अंश घटावना। तहां **'कल्प्यो हरो रूपमहारराशेः'** इस वचन तैं जाकैं अंश न होइ, तहां एक अंश कल्पना, सो इहां तीनका अंश नाहीं, तातैं एक अंश कल्पि | ३/१ | ५/४ | ऐसैं लिखना इहां तीन हारनि कौं अन्य के च्यारि अंश करि, अर पांच हारनि कौं अन्य के एक अंश करि गुणे अर अंशनि कौं परस्पर गुणे | १२/४ | ५/४ | ऐसा भया। इहां बारह हारनि विषैं पांच घटाएं सात हार भए। अर अंश च्यारि भए। तहां हार कौं अंश का भाग दीए एक अर तीन का चौथा भाग पौण इतना फल आया।

बहुरी भिन्न गुणाकार विषैं गुण्य अर गुणाकार के हार कौं हार करि अंश कौं अंश करि गुणन करना। जैसैं दश की चोथाइ कौ च्यारि की तिहाइ करि गुणना होइ, तहां ऐसा | १०/४ | ४/३ | लिखि गुण्य-गुणकार के हार अर अंशनि कौं गुणें चालीस हार अर बारह अंश | ४०/१२ | भए तहां हार कौं अंश का भाग दीए तीन पाया। अब शेष च्यारि का बारहवां भाग ताकौं च्यारि करि अपवर्त्तन कीए एक का तीसरा भाग भया। ऐसैं ही अन्यत्र जानना।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि भिन्न भागहार विषैं भाजक के हारनि कौं अंश कीजिए अर अंशनि कौं हार कीजिए । ऐसैं पलटि भाज्य-भाजक का गुण्य-गुणकारवत् विधान करना । जैसैं संतीस के आधा कौं तेरह की चौथाई का भाग देना होइ तहां ऐसैं $\left|\frac{३७}{२}\right|\frac{१३}{४}\right|$ लिखिए बहुरि भाजक के हार अर अंश पलटै ऐसैं $\left|\frac{३७}{२}\right|\frac{४}{१३}\right|$ लिखिना । बहुरि गुणनविधि कीए एक सौ अडतालीस हार अर छब्बीस अंश $\frac{१४८}{२६}$ भए । तहां अंश का हार कौं भाग दीए पांच पाए । अर अवशेष अठारह छब्वीसवां भाग, ताका दोय करि अपवर्त्तन कीए नव तेरहवां भागमात्र भया । ऐसैं ही अन्यत्र जानना ।

बहुरि भिन्न वर्ग अर घन का विधान गुणकारवत् ही जानना । जातैं समान राशि दोय कौं परस्पर गुणें वर्ग हो है । तीन कौं परस्पर गुणें घन हो है । जैसैं तेरह का चौथा भाग कौं दोय जायगा मांडि $\left|\frac{१३}{४}\right|\frac{१३}{४}\right|$ परस्पर गुणें ताका वर्ग एक सौ गुणहत्तर का सोलहवां भागमात्र $\frac{१६९}{१६}$ हो है । अर तीन जायगा मांडि $\left|\frac{१३}{४}\right|\frac{१३}{४}\right|\frac{१३}{४}\right|$ परस्पर गुणें इकईस सै सत्याणवै का चौसठवां भाग मात्र $\frac{२१९७}{६४}$ घन हो है । बहुरि भिन्न वर्गमूल, घनमूल विषैं हारनि का अर अंशनि का पूर्वोक्त विधान करि जुदा-जुदा मूल ग्रहण करिए । जैसैं वर्गित राशि एक सौ गुणहत्तरि का सोलहवां भाग $\frac{१६९}{१६}$ । तहां पूर्वोक्त विधान तैं एक सौ गुणहत्तरि का वर्गमूल तेरह, अर सोलह का च्यारि ऐसैं तेरह का चौथा भागमात्र $\frac{१३}{४}$ वर्गमूल आया । बहुरि घनराशि इकईस सै सत्याणवै का चौसठवां भाग $\frac{२१९७}{६४}$ । तहां पूर्वोक्त विधान करि इकईस सै सत्याणवे का घनमूल तेरह, चौसठि का च्यारि ऐसैं तेरह का चौथा भागमात्र $\frac{१३}{४}$ घनमूल आया । ऐसैं ही अन्यत्र जानना ।

बहुरि अब शून्यपरिकर्माष्ट लिखिए है । शून्य नाम बिंदी का है, ताके संकलनादिक कहिए है । तहां बिंदी विषैं अंक जोडैं अंक ही होय । जैसैं पचास विषैं पांच जोडिए । तहां एकस्थानीय बिंदी विषैं पांच जौडैं पांच भए । दशस्थानीय पांच है ही, ऐसैं पचावन भए । बहुरि अंक विषै बिंदी घटाए अंक ही रहै । जैसैं पचावन में दश

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

घटाए एक स्थानीय पांच में बिंदी घटाए पांच ही रहे, दशस्थानीय पांच में एक घटाए च्यारि रहे अैसें पैंतालीस भए। बहुरि गुणकार विषै अंक को बिंदीकरि गुणें बिंदी होय। जैसें वीस कौं पांच करि गुणिए, तहां गुण्य के दूवा कौ पांच करि गुणे दश भए। बहुरि बिंदी कौं पांच करि गुणे, बिंदी ही भई अैसें सौ भए।

बहुरि अंक कौ बिंदी का भाग दीए खहर कहिए। जातैं जैसें-जैसें भागहार घटता होइ, तैसें-तैसें लब्धराशि बधती होइ। जैसें दश कौं एक का छठ्ठा भाग का भाग दिए साठि होइ, एक का वीसवां भाग का भाग दीए दोय से होय, सो बिंदी शून्यरूप, ताका भाग दीए फल का प्रमाण अवक्तव्य है। याका हार बिंदी है, इतना ही कह्या जाए। बहुरी बिंदी का वर्गघन, वर्गमूल, घनमूल विषैं गुणकारादिवत् बिंदी ही हो है। अैसें लौकिक गणित अपेक्षा परिकर्माष्टक का विधान कह्या।

बहुरि अलौकिक गणित अपेक्षा विधान है, सो सातिशय ज्ञानगम्य है। जातैं तहां अंकादिक का अनुक्रम व्यक्तरूप [१] नाहीं है। तहां कहीं तौ संकलनादि होतैं जो प्रमाण भया ताका नाम कहिए है। जैसें उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात विषैं एक जोड़ै जघन्य परीतानंत होइ, (जघन्य परीतानंत में एक घटाएं उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात होइ) [२] अर जघन्य परीतासंख्यात विषैं एक घटाएं उत्कृष्ट संख्यात होइ। पल्य कौं दशकोडाकोडि करि गुणें सागर होइ जगत् श्रेणी कूं सात का भाग दीए राजू होइ। जघन्य युक्तासंख्यात का वर्ग कीए जघन्य असंख्यातासंख्यात होइ। सूच्यंगुल का घन कीये घनांगुल होइ। प्रतरांगुल का वर्गमूल ग्रहे सूच्यंगुल होइ। लोक का घनमूल ग्रहे जगत् श्रेणी होइ, इत्यादि जानना।

बहुरि कहीं संकलनादि होतैं जो प्रमाण भया, ताका नाम न कहिए है, संकलनादिरूप ही कथन कहिए है। जातैं सर्व संख्यात, असंख्यात, अनंतनि के भेदनि का नाम वक्तव्यरूप नाहीं है। जैसें जीवराशि करि अधिक पुद्गलराशि कहिए वा सिद्ध राशि करि हीन जीवराशि कहिए, वा असंख्यात गुणा लोक कहिए वा संख्यात प्रतरांगुल करि भाजित जगत्प्रतर कहिए, वा पल्य का वर्ग कहिए, वा पल्य का घन कहिए, वा केवलज्ञान का वर्गमूल कहिए, वा आकाश प्रदेशराशि का घनमूल कहिए, इत्यादि

---

१. घ प्रति 'वक्तव्यरूप' ऐसा पाठ है।

२. यह वाक्य सिर्फ छपी प्रति में है, हस्तलिखित छह प्रतियों में नहीं है

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

जानना । बहुरि अलौकिक मान की सहनानी स्थापि, तिनके लिखने का वा तहां संकलनादि होतैं लिखने का जो विधान है, सो आगै संदृष्टि अधिकार विषैं वर्णन करेंगे, तहां तैं जानना । बहुरि तहां ही लौकिक मान का भी लिखने का वा तहां संकलनादि होतैं लिखने का जो विधान है, सो वर्णन करेंगे । इहां लिखैं ग्रन्थ विषैं प्रवेश करते ही शिष्यनि कौं कठिनता भासती, तहां अरुचि होती, तातैं इहां न लिखिए है । उदाहरण मात्र इतना ही इहां भी जानना, जो संकलन विषैं तौ अधिक राशि कौं ऊपरि लिखना जैसैं पंच अधिक सहस्र "$\overset{५}{१०००}$" असैं लिखने । व्यवकलन विषै हीन राशि कौं ऊपरि लिखि तहां पूंछडीकासा आकार करि बिंदी दीजिए जैसैं पंच हीन सहस्र $\overset{५\sim}{१०००}$ असैं लिखिए । गुणकार विषैं गुण्य के आगै गुणक कौं लिखिए । जैसैं पंचगुणा सहस्र १०००×५ असैं लिखिए । भागहार विषै भाज्य के नीचै भाजक कौं लिखिए । जैसैं पांच करि भाजित सहस्र $\frac{१०००}{५}$ असैं लिखिए । वर्ग विषै राशि कौं दोय बार बराबर मांडिए । जैसैं पांच का वर्ग कौं ५×५ असैं लिखिए । घन विषै राशि कौं तीन बार बराबरि मांडिए । जैसैं पांच का घन कौं ५×५×५ असैं लिखिए । वर्गमूल-घनमूल विषैं वर्गरूप-घनरूप राशि के आगै मूल की सहनानी करनी । जैसैं पचीस का वर्गमूल कौं "२५ व० मू०" असैं लिखिए । एक सौ पचीस का घनमूल कौ "१२५ घ० मू०" असैं लिखिए । असैं अनेक प्रकार लिखने का विधान है । असैं परिकर्माष्टक का व्याख्यान कीया सो जानना ।

बहुरि त्रैराशिक का जहां-तहां प्रयोजन जानि स्वरूप मात्र कहिए है । तहां तीन राशि हो हैं – प्रमाण फल, इच्छा । तहां जिस विवक्षित प्रमाण करि जो फल प्राप्त होइ, सो प्रमाणराशि अर फलराशि जाननी । बहुरि अपना इच्छित प्रमाण होइ, सो इच्छा राशि जाननी । तहां फल कौं इच्छा करि गुणि, प्रमाण का भाग दीए अपना इच्छित प्रमाण करि प्राप्त जो फल, ताका प्रमाण आवै है, इसका नाम लब्ध है । इहां प्रमाण अर इच्छा [1] की एकजाति जाननी । बहुरि फल अर लब्ध की एक जाति जाननी । इहां उदाहरण जैसैं पांच रुपैया का सात मण अन्न आवैं तौ सात रुपैया का केता अन्न आवै असैं त्रैराशिक कीया । इहां प्रमाण राशि पांच, फल राशि सात, इच्छा राशि सात, तहां फलकरि इच्छा कौं गुणि प्रमाण का भाग दीए गुणचास

[1] छपी प्रति 'इच्छा' शब्द और अन्य हस्तलिखित प्रतियों में 'फल' शब्द है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

का पांचवां भाग मात्र लब्ध प्रमाण आया। ताका नव मण अर च्यारि मण का पांचवां भाग मात्र लब्धराशि भया।

अैसें ही छह सै आठ (६०८) सिद्ध छह महीना आठ समय विषैं होइ, तौ सर्व सिद्ध केते काल में होइ, अैसें त्रैराशिक करिए, तहां प्रमाण राशि छह सै आठ, अर फलराशि छह मास आठ समयनि की संख्यात आवली, इच्छा राशि सिद्धराशि। तहां फल करि इच्छा कौं गुणि, प्रमाण का भाग दीए लब्धराशि संख्यात आवली करि गुणित सिद्ध राशि मात्र अतीत काल का प्रमाण आवै है। अैसें ही अन्यत्र जानना।

बहुरि केतेइक गणितनि का कथन आगें इस शास्त्र विषैं जहां प्रयोजन आवैगा तहां कहिएगा। जैसें श्रेणी व्यवहार का कथन गुणस्थानाधिकार विषैं करणनि का कथन करते कहिएगा। बहुरि एक बार, दोय बार आदि संकलन का कथन ज्ञाना-धिकार विषैं पर्यायसमासज्ञान का कथन करते कहिएगा। बहुरि गोल आदि क्षेत्र व्यवहार का कथन जीवसमासादिक अधिकारनि विषैं कहिएगा। अैसें ही और भी गणितनि का जहां प्रयोजन होइगा तहां ही कथन करिएगा सो जानना। बहुरि अज्ञात राशि ल्यावने का विधान वा सुवर्णगणित आदि गणितनि का इहां प्रयोजन नाही, तातैं तिनका इहां कथन न करिए है। अैसें गणित का कथन किया। ताकौं यादि राखि जहां प्रयोजन होइ, तहां यथार्थरूप जानना। बहुरि अैसें ही इस शास्त्र विषैं करणसूत्रनि का, वा केई संज्ञानि का वा केई अर्थनि का स्वरूप एक बार जहां कह्या होइ, तहांतैं यादि राखि, तिनका जहां प्रयोजन आवै, तहां तैसा ही स्वरूप जानना।

या प्रकार श्रीगोम्मटसार शास्त्र की सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामा भाषाटीका विषैं पीठिका समाप्त भई।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

गोम्मटसार कर्मकांड

सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका

भाषाटीका सहित

परम भए सब खंडिकैं, करमकांड समुदाय ।
सहज अखंडित ज्ञानमय, जयवंते जिनराय ॥१॥

विघनहरन मंगलकरन, नमौं सिद्ध सुखकार ।
नेमिचंद जिन जगतपति साधुवचन गुनधार ॥२॥

अथ श्रीमत् गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसंग्रह विषैं कर्मकांड महाअधिकार की रचना करने को उद्यम करिए है, तहां प्रथम ही आचार्य अपने इष्ट कौं नमस्कार-पूर्वक प्रतिज्ञा करै हैं —

पणमिय सिरसा णेमिं, गुणरयणविभूसणं महावीरं ।
सम्मत्तरयणणिलयं, पयडिसमुक्कित्तणं वोच्छं ॥१॥

प्रणम्य शिरसा नेमिं, गुणरत्नविभूषणं महावीरम् ।
सम्यक्त्वरत्ननिलयं, प्रकृतिसमुत्कीर्तनं वक्ष्यामि ॥१॥

टीका — श्री नेमिनाथ तीर्थंकर परमदेव ताहि मस्तक नमाय नमस्कार करि ज्ञानावरणादिक कर्मनि की मूल-प्रकृति वा उत्तर-प्रकृति का है **समुत्कीर्तन** कहिए व्याख्यान जाविषैं ऐसा प्रकृतिसमुत्कीर्तन नामा ग्रन्थ ताहि मैं कहोंगा । कैसा है नेमि तीर्थंकर ? **'गुणरत्नविभूषणं'** कहिए गुण ज्ञानादिक तेई भए रत्न, तेई हैं आभूषण जाके ऐसा है । बहुरि कैसा है ? **'महावीरं'** कहिए विशिष्ट जो **'ई'** कहिए लक्ष्मी, ताहि **'राति'** कहिए देवै सो वीर महान् जो वीर सो महावीर कहिए सो ऐसा है । बहुरि कैसा है ? **'सम्यक्त्वरत्ननिलयं'** कहिए आत्मस्वरूप की उपलब्धिरूप जो सम्यक्स्वरूप भाव सो सम्यक्त्व अथवा क्षायिकसम्यक्त्व सोई भया रत्न, ताका

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आश्रय-स्थान है। ऐसें अपने विशेषरूप इष्टदेव कौं नमस्कार पूर्वक प्रकृति-समुत्कीर्तन कथन करने की आचार्य की प्रतिज्ञा जाननी ॥१॥

प्रकृति कहा ? सो कहैं हैं —

पयडी सील सहावो, जीवंगाणं अणाइसंबंधो ।
कणयोवले मलं वा, ताणत्थित्तं सयं सिद्धं ॥२॥

प्रकृतिः शीलं स्वभावः, जीवाङ्गयोरनादिसम्बन्धः ।
कनकोपले मलं वा, तयोरस्तित्वं स्वयं सिद्धम् ॥२॥

टीका – जो अन्य कारण बिना वस्तु का सहज स्वभाव होइ – **जैसें अग्नि** का ऊर्ध्वगमन, पवन का तिर्यग्गमन, जल का अधोगमन स्वभाव है, ताकौं **प्रकृति** कहिए वा शील कहिए वा स्वभाव कहिए ए सब एकार्थ हैं। सो स्वभाव स्वभाववान् वस्तु की अपेक्षा लीए हैं; तातैं यहु स्वभाव कौन का है, सो कहैं हैं – **'जीवांगयोः'** कहिए जीव अर कर्म इनिका स्वभाव है। तहां रागादिरूप परिणमना आत्मा का स्वभाव है। रागादिक कौं उपजावना कर्म का स्वभाव है।

इहां और द्रव्य और द्रव्य के आश्रय भया, सो इस दोष के दूरि करने कौं कहै हैं —

जीव का और कर्म का अनादिसंबंध है। जैसें कनकोपल कहिए सुवर्ण सहित पाषाण तिस विषैं मल पाइए है। सुवर्ण पाषाण यद्यपि भिन्न-भिन्न वस्तु हैं, तथापि तिनका अनादिसंबंध है, नए मिले नाहीं, तैसें जीव-कर्म का अनादिसंबंध है, नए मिले नाहीं।

ऐसा भी कोऊ कहै है कि अमूर्तिक जीवसहित मूर्तिक कर्म का संबंध कैसें भया ?

तहां भी यही समाधान है, जो नवीन संबंध भया नाहीं, अनादि ही तें संबंध है, तहां तर्क कहा ?

बहुरि तिनिका अस्तित्व स्वयं-सिद्ध है, जातैं **'अहं'**, इत्यादिक मानना जीव बिना नाहीं संभवै है। दरिद्री, लक्ष्मीवान इत्यादिक विचित्रता कर्म बिना नाहीं संभवै है, तातैं जीव भी है अर कर्म भी है ऐसैं अस्तित्व स्वयंसिद्ध है ॥२॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

संसारी जीवनि कैं कर्म, नोकर्म का ग्रहण कैसें हो है ? सो कहैं हैं —

देहोदयेण सहिओ जीवो आहरदि कम्म णोकम्मं ।
पडिसमयं सव्वंगं,[1] तत्तायसपिंडओव्व जलं ।।३।।

देहोदयेन सहितो जीव आहरति कर्म नोकर्म ।
प्रतिसमयं सर्वाङ्गं, तप्तायःपिंडमिव जलम् ।।३।।

टीका – देह जे औदारिक, वैक्रियिक, आहारक, तैजस, कार्मणरूप शरीर नामा नामकर्म तहां कार्मण नामकर्म कै उदय तें योग सहित जीव ज्ञानावरणादिक आठ प्रकार कर्म कौं ग्रहै है । अवशेष शरीरनि के उदय तें औदारिकादिक नोकर्म को ग्रहै है सो तिनके उदय काल विषैं समय-समय प्रति वर्गणानि कौं ग्रहण करै है । कैसें ? '**सर्वांगं**' कहिए सर्व ही आत्मा के प्रदेशनि करि ग्रहण करै है । कौंन दृष्टांत ? '**तप्तायसपिंडं' जलमिव**' कहिए जैसें अग्नि तें बहुत तप्तायमान भया लोह का पिंड सो जल में तिष्ठ्या जल कौं सर्वांगपनें शोषै है तैसें शरीर नामकर्म के उदयसंयुक्त जीव समय-समय कर्म वा नोकर्म कौं ग्रहै है ।।३।।

कितने परमाणूनि कौं ग्रहै है, सो कहिए है —

सिद्धाणंतिमभागं, अभव्वसिद्धादणंतगुणमेव ।
समयपबद्धं बंधदि, जोगवसादो[2] दु विसरित्थं ।।४।।

सिद्धानन्तिमभागं, अभव्यसिद्धादनन्तगुणमेव ।
समयप्रबद्धं बध्नाति योगवशात्तु विसदृशम् ।।४।।

टीका – सिद्धराशि के अनंतवें भागि अभव्यराशि तैं अनंतगुणा जो समय-प्रबद्ध ताकौं बांधे है । समय-समय प्रति बांधिए ताको समयप्रबद्ध कहिए, सो अभव्य-राशि तैं अनंतगुणा अैसा जो सिद्धराशि का अनंतवां भाग तीहि प्रमाण परमाणूनि का समूहरूप जो वर्गणा तितनी ही वर्गणानि का समूहरूप जो समयप्रबद्ध ताकौं समय-समय प्रति बांधै है । बहुरि योगनि के वश तैं विसदृश बंध हो है कबहूं बहुत

---

१ नामप्रत्यया सर्वतोयोगविशेषात्सूक्ष्मैकक्षेत्रावगाहस्थिताः सर्वात्मप्रदेशेष्वनंतानंतप्रदेशाः ।।मोक्षशास्त्र–८-२४।।
२ नामप्रत्यया सर्वतोयोगविशेषात्सूक्ष्मैकक्षेत्रावगाहस्थिताः सर्वात्मप्रदेशेष्वनंतानंतप्रदेशाः ।।मोक्षशास्त्र–८-२४।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

परमाणूनि का बंध हो है, कबहूं थोरे परमाणूनि का बंध हो है; सामान्यपनैं पूर्वोक्त प्रमाण ही कहिए है ।।४।।

आगें समय-समय प्रति बंध का प्रमाण करि उदय का वा सत्त्व का परिमाण कहै हैं —

जीरदि समयपबद्धं, पओगदो णेगसमयबद्धं वा ।
गुणहाणीण दिवड्ढं, समयपबद्धं हवे सत्तं ।।५।।

जीर्यते समयप्रबद्धं, प्रयोगतः अनेकसमयबद्धं वा ।
गुणहानीनां द्व्यर्द्धं, समयप्रबद्धं भवेत् सत्त्वम् ।।५।।

टीका – समय-समय प्रति एक-एक कार्मण का समयप्रबद्ध निर्जरै है । उदय-रूप हो है । अथवा सातिशय क्रियासंयुक्त जो आत्मा ताकैं सम्यक्त्वादिक की प्रकृति-रूप योग तीहिकरि ग्यारह स्थान निर्जरा के गुणस्थानाधिकार में कहै हैं । तिनकी विवक्षा करि एक समय विषैं अनेक समयप्रबद्ध निर्जरैं हैं । बहुरि ड्योढ-गुणहानि का प्रमाण करि समयप्रबद्ध कौं गुणैं जो प्रमाण होइ तितना परमाणू समय-समय प्रति सत्तारूप रहै हैं ।

इहां प्रश्न – जो समय-समय प्रति एक समयप्रबद्ध का बंध कह्या, एक समय-प्रबद्ध की निर्जरा कही, तौ सत्व ड्योढ-गुणहानि करि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण कैसे कहो हो ?

ताका समाधान – जो योगमार्गणा विषैं पूर्वैं व्याख्यान कीया था, आगै भी कथन दिखाइयेगा तहां त्रिकोण-रचना विषैं बंध, निर्जरा, सत्व का प्रमाण जो इहां कह्या है तितना ही व्यक्तपनैं संभवै है ।।५।।

आगैं कर्मनि के सामान्यादिक भेद वा भेदनि के भेद दोय गाथानि करि कहैं हैं —

कम्मत्तणेण एक्कं, दव्वं भावोत्ति होदि दुविहं तु ।
पोग्गलपिंडो दव्वं, तस्सत्ती भावकम्मं तु ।।६।।

कर्मत्वेन एकं, द्रव्यं भाव इति भवति द्विविधं तु ।
पुद्गलपिण्डो द्रव्यं, तच्छक्तिः भावकर्म तु ।।६।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – सो कर्म सामान्यभावरूप कर्मत्व करि एक प्रकार है । बहुरि सोई कर्म द्रव्यभाव के भेद तैं दोय प्रकार है । तहां ज्ञानावरणादिकरूप पुद्गलद्रव्य का पिंड सो द्रव्यकर्म है । बहुरि तिस पिंड विषैं फल देने की शक्ति है, सो भावकर्म है । अथवा कार्य विषैं कारण के उपचार तैं तिस शक्ति तैं उत्पन्न भए अज्ञानादिक वा क्रोधादिक सो भी भावकर्म है ।।६।।

सो कहिए हैं —

तं पुण अट्ठविहं वा, अडदालसयं असंखलोगं वा ।
ताणं पुण घादित्ति अ–घादित्ति य होंति सण्णाओ ।।७।।

तत् पुनरष्टविधं वा, अष्टचत्वारिंशच्छतमसंख्यलोकं वा ।
तेषां पुनः घातीति, अघातीति च भवतः संज्ञे ।।७।।

टीका – बहुरि सो सामान्यकर्म आठ प्रकार है, वा एक सौ अडतालीस प्रकार है, वा असंख्यात-लोक प्रमाण प्रकार है, तिनकी पृथक्-पृथक् घातिया वा अघातिया असी संज्ञा है ।।७।।

सो जैसैं नाम कहना तैसैं ही विशेष कहना; यातैं प्रथम आठ प्रकार कर्म के घातिया-अघातिया भेद दोय गाथानि करि दिखावे हैं —

णाणस्स दंसणस्स य, आवरणं वेयणीयमोहणियं ।
आउगणामं गोदं,तरायमिदि अट्ठ पयडीओ ।।८।।

ज्ञानस्य दर्शनस्य च, आवरणं वेदनीयमोहनीयम् ।
आयुष्कनाम गोत्रान्तरायमिति अष्ट प्रकृतयः ।।८।।

टीका – ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र, अंतराय[1] ए आठ कर्मनि की मूलप्रकृति हैं ।।८।।

आवरणमोहविग्घं, घादी जीवगुणघादणत्तादो ।
आउगणामं गोदं, वेयणियं तह अघादित्ति ।।९।।

१–आद्यो ज्ञानदर्शनावरणवेदनीयमोहनीयायुर्नामगोत्रान्तरायाः । मोक्षशास्त्र अध्याय ८ सूत्र ४

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आवरणमोहविघ्नं, घाति जीवगुणघातनत्वात् ।
आयुष्कनाम गोत्रं, वेदनीयं तथा अघातीति ॥९॥

टीका – ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, अंतराय ए च्यारि घातिया हैं, जातैं ए जीव के गुणनि कौं घातैं हैं । बहुरि आयु, नाम, गोत्र, वेदनीय – ए तैसें जीवनि के गुणनि कौं नाहीं घातैं हैं; तातैं ए अघातिया हैं ॥९॥

तिन जीवनि के गुणनि कौ कहैं हैं —

केवलणाणं दंसण,मणंतविरियं च खयियसम्मं च ।
खयियगुणे मदियादी, खयोवसमिए य घादी दु ॥१०॥

केवलज्ञानं दर्शन,मनन्तवीर्यं च क्षायिकसम्यक्त्वं च ।
क्षायिकगुणान् मत्यादीन्, क्षायोपशमिकांश्च घातीनि तु ॥१०॥

टीका – केवलज्ञान, केवलदर्शन, अनंतवीर्य, क्षायिकसम्यक्त्व, चकार तैं क्षायिक-चारित्र दूसरे चकार तैं क्षायिक दानादिक ५ – ए तौ क्षायिकभाव, बहुरि मति, श्रुत, अवधि, मन:पर्यय ज्ञानादिक क्षायोपशमिक – ए जीव के गुण हैं । इनिकौं ज्ञानावरणादिक घातैं हैं; तातैं तिनकौं घातिया कहिए ॥१०॥

आयुकर्म का कार्य कहैं हैं —

कम्मकयमोहवड्ढिय,संसारम्हि य अणादिजुत्तम्हि ।
जीवस्स अवट्ठाणं, करेदि आऊ हलिव्व णरं ॥११॥

कर्मकृतमोहवर्धित,संसारे च अनादियुक्ते ।
जीवस्यावस्थानं करोति आयुः हलीव नरं ॥११॥

टीका – आयुकर्म का उदय है सो कर्म करि कीया अर अज्ञान, असंयम, मिथ्यात्व करि वृद्धि को प्राप्त भया असा अनादि संसार, ताके विषैं च्यारि गतिनि में जीव का अवस्थान कौं करै है । जैसें काष्ठ का खोडा अपने छिद्र में जाका पग आया होय, ताकी तहां ही स्थिति करावै, तैसें आयुकर्म जिस गतिसंबंधी उदयरूप होइ, तिस ही गतिविषैं जीव की स्थिति करावै है ॥११॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगैं नामकर्म का कार्य कहै हैं —

गदिआदि जीवभेदं, देहादी पोग्गलाण भेदं च ।
गदियंतरपरिणमनं, करेदि णामं अणेयविहं ॥१२॥

गत्यादिजीवभेदं, देहादि पुद्गलानां भेदं च ।
गत्यंतरपरिणमनं, करोति नाम अनेकविधं ॥१२॥

टीका – गति आदि अनेक प्रकार नामकर्म सो नारकादिक जीव के पर्यायनि के भेद कौं वा औदारिक-शरीर आदिरूप पुद्गल के भेद कौं वा गति तैं अन्यगति-रूप परिणमने को अनेक प्रकार करै है, तातैं सो नाम–कर्म जीवविपाकी वा पुद्गल-विपाकी वा क्षेत्रविपाकी 'चकार' तैं भवविपाकी जानना ॥१२॥

आगैं गोत्रकर्म के कार्य कौं कहैं हैं —

संताणकमेणागय, जीवायरणस्स गोदमिदि सण्णा ।
उच्चं णीचं चरणं, उच्चं णीचं हवे गोदं ॥१३॥

संतानक्रमेणागत, जीवाचरणस्य गोत्रमिति संज्ञा ।
उच्चं नीचं चरणं, उच्चं नीचं भवेत् गोत्रं ॥१३॥

टीका – अनुक्रम परिपाटी तैं चल्या आया जो आचरण ताकौं 'गोत्र' ऐसी संज्ञा कहिए सो जहां ऊँचा उत्कृष्ट आचरण होइ सो उच्चगोत्र है । जहां नीचा निकृष्ट आचरण होइ सो नीच गोत्र है ॥१३॥

आगैं वेदनीय कर्म के कार्य कौं कहैं हैं —

अक्खाणं अणुभवणं, वेयणियं सुहसरूवयं सादं ।
दुक्खसरूवमसादं, तं वेदयदीदि वेदणियं ॥१४॥

अक्षाणामनुभवनं, वेदनीयं सुखस्वरूपं सातं ।
दुःखस्वरूपमसातं, तद्वेदयतीति वेदनीयं ॥१४॥

टीका – इन्द्रियनि कैं अपने विषयनि का अनुभवन जानना सो वेदनीय है । तहां सुखस्वरूप साता है, दुःखस्वरूप असाता है । तिन सुख-दुःखनि कौं **'वेदयति'** कहिए अनुभवन करावै जनावैं सो वेदनीय कर्म है ॥१४॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अत्थं देक्खिय जाणदि, पच्छा सद्दहदि सत्तभंगीहिं ।
इदि दंसणं च णाणं, सम्मत्तं होंति जीवगुणा ॥१५॥

अर्थं दृष्ट्वा जानाति, पश्चात् श्रद्दधाति सप्तभंगीभिः ।
इति दर्शनं च ज्ञानं, सम्यक्त्वं भवंति जीवगुणाः ॥१५॥

टीका – संसारी जीव पहिलैं पदार्थ कौं देख करि पीछैं जाने । बहुरि तिस पदार्थ कौं अस्ति, नास्ति इत्यादिक सप्तभंगीनि करि निश्चय करि पीछैं श्रद्धान करै है । सो इसप्रकार देखना सो दर्शन, जानना सो ज्ञान, श्रद्धान करना सो सम्यक्त्व – ए जीव के गुण हो हैं ॥१५॥

आगैं तिन गुणनि के आवरण को शास्त्र विषैं अनुक्रम कैसे कह्या है, सो कहैं हैं —

अब्भरहिदादु पुव्वं, णाणं तत्तो हि दंसणं होदि ।
सम्मत्तमदो विरियं, जीवाजीवगदमिदि चरिमे ॥१६॥

अभ्यर्हितात् पूर्वं, ज्ञानं ततो हि दर्शनं भवति ।
सम्यक्त्वमतो वीर्यं, जीवाजीवगतमिति चरमे ॥१६॥

टीका – आत्मा के सर्वगुणनि विषैं ज्ञान अभ्यर्हित है, पूज्य है, प्रधान है, तातैं पहिलैं कह्या है । व्याकरण विषैं भी कह्या है – **'अल्पादचर्चं'** थोरे अक्षर जाकैं होइ; तातैं भी प्रधान कौं पहिलैं कहिए । बहुरि ताके पीछै दर्शन कह्या । ताकैं पीछैं सम्यक्त्व कह्या । बहुरि वीर्य है सो ज्ञानादिक की शक्तिरूप जीव विषैं पाइए है अर शरीरादिक की शक्तिरूप पुद्गल विषैं पाइए है; तातैं सर्व के पीछैं अंत विषैं कह्या है । असैं इनके आवरण ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, अंतराय इनका अनुक्रम जानना ॥१६॥

घादीवि अघादिं वा, णिस्सेसं घादणे असक्कादो ।
णामतियणिमित्तादो, विग्घं पडिदं अघादिचरिमम्हि ॥१७॥

घात्यपि अघातीव, निःशेषं घातने अशक्यात् ।
नामत्रयनिमित्ताद्, विघ्नं पठितमघातिचरमे ॥१७॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

टीका – अंतराय नामा कर्म घातिया है, तथापि अघातिया कर्मवत् है। समस्त जीव के गुण घातने को समर्थ नाहीं है। नाम, गोत्र, वेदनीय इनि तीन कर्मनि के निमित्त तें यहु है; तातैं अघातियानि के पीछैं अंत विषैं अंतराय-कर्म कह्या है ॥१७॥

आउबलेण अवट्ठिदि, भवस्स इदि णाममाउपुव्वं तु।
भवमस्सिय णीचुच्चं, इदि गोदं णामपुव्वं तु ॥१८॥

आयुर्बलेन अवस्थितिः, भवस्य इति नाम आयुःपूर्वं तु।
भवमाश्रित्य नीचोच्च,मिति गोत्रं नामपूर्व्वं तु ॥१८॥

टीका – बहुरि आयु नामा कर्म का बल करि नामकर्म का कार्यभूत जो चतुर्गति रूप भव, ताकी अवस्थिति है, तातैं आयु-कर्म पहिलैं कहि नाम कर्म कह्या। बहुरि चतुर्गतिरूप भव ही का आश्रय करि नीचपणा वा उच्चपणा है, तातैं पहिलैं नामकर्म कहि गोत्रकर्म कह्या है ॥१८॥

घादिंव वेयणीयं, मोहस्स बलेण घाददे जीवं।
इदि घादीणं मज्झे, मोहस्सादिम्हि पढिदं तु ॥१९॥

घातिवत् वेदनीयं, मोहस्य बलेन घातयति जीवं।
इति घातीनां मध्ये, मोहस्यादौ पठितं तु ॥१९॥

टीका – वेदनीय नामा कर्म सो घातिया कर्मवत् मोहनीय कर्म का भेद जो रति-अरति तिनके उदय का बल करि ही जीव कौं घातै है। सुख-दुःखस्वरूप साता-असाता कौं कारण इन्द्रियनि का विषय तिनका अनुभवन करवाइ घात करै है, तातैं घातिया-कर्मनि के बीचि मोहनीय-कर्म के पहिलैं वेदनीय-कर्म कह्या है ॥१९॥

णाणस्स दंसणस्स य, आवरणं वेयणीयमोहणियं।
आउगणामं गोदं,तरायमिदि पढिदमिदि सिद्धं ॥२०॥

ज्ञानस्य दर्शनस्य, चावरणं वेदनीयमोहनीयम्।
आयुष्कनाम गोत्रां,तरायमिति पठितमिति सिद्धं ॥२०॥

टीका – ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र, अंतराय ऐसें जो अनुक्रम तें पाठ कह्या सो पूर्वोक्त प्रकार सिद्ध भया। **अब इनिकी** निरुक्ति कहिए है —

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

'ज्ञानं आवृणोति' कहिए ज्ञान कौं आवरैं – आच्छादै सो ज्ञानावरणीय है। याको यहु प्रकृति है – जो जैसें देवता का मुख के ऊपरि वस्त्र देवता के विशेष ज्ञान कौं होने दे नाही; तैसें ज्ञानावरण ज्ञान कौं आच्छादै है। बहुरि **'दर्शनं आवृणोति'** कहिए दर्शन को आवरै सो दर्शनावरणीय है। याकी यहु प्रकृति है – जैसें राजद्वार विषैं तिष्ठता द्वारपाल सो राजा कौं देखने दे नाही; तैसें दर्शनावरण दर्शन कौं आच्छादै है। बहुरि **'वेदयति'** कहिए सुख-दुःख का अनुभव करावै सो वेदनीय है। याको यहु प्रकृति है – जैसें शहद तें लपेटी खड्ग की धारा सुख-दुःख कौं कारण है तैसें वेदनीय सुख-दुःख कौं उपजावै है। बहुरि **'मोहयति'** कहिए मोह-असावधान करै सो मोहनीय है। याकी यहु प्रकृति है – जैसें मदिरा वा धत्तूरा वा मादक कोदौं – ए भक्षण कीए हूए असावधान करैं है, तैसें मोह आत्मा को मोहित करै है। बहुरि **'एति'** कहिए पर्याय धारने के निमित्ति प्राप्त होइ सो आयु है। याकी प्रकृति यहु है – जो जैसें सांकल वा खोडा पुरुष कौं स्थान विषैं स्थित राखै तैसें आयु पर्याय विषैं स्थित राखै है। बहुरि **'नाना मिनोति'** कहिए नाना प्रकार कार्य निष्पादन करै सो नाम है। याकी यहु प्रकृति है – जैसे चतेरा अनेक चित्राम बनावै तैसें नाम नर-नारकादिक अनेक रूप करै है। बहुरि **'गमयति'** कहिए उच्च-नीचपणां को प्राप्त करै सो गोत्र है। याकी यहु प्रकृति है – जैसै कुम्हार मृतिका का ऊँचा-नीचा वासण करै, तैसै गोत्र आत्मा कौं ऊच्च-नीच दशा कौं प्राप्त करै है। बहुरि **'अंतरं एति'** कहिए दाता, पात्र इत्यादिक विषैं परस्पर अंतर कौ प्राप्त करै सो अंतराय है। याको यहु प्रकृति है – जैसें भंडारी देने विषैं विघन करै तैसें अंतराय दानादिक विषैं विघन करै है ॥२०॥

अब जे दृष्टांत कहे तिनहीं कौं कहै हैं —

पडपडिहारसिमज्जा,हलिचित्तकुलालभंडयारीणं।
जह एदेसिं भावा, तहवि य कम्मा मुणेयव्वा ॥२१॥

पटप्रतीहारासिमद्य,हलिचित्रकुलालभांडागारिकाणां।
यथा एतेषां भावा, तथैव च कर्माणि मंतव्यानि ॥२१॥

टीका – देवता का मुख ऊपरि वस्त्र, राज-द्वार विषैं तिष्ठता द्वारपाल, शहद लपेटी खड्ग की धारा, मदिरा, खोडा, चतेरा, कुम्हार, भंडारी, जैसे इनिके भाव हैं, तैसें कर्मनि के स्वभाव जानने ॥२१॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगैं उत्तर-प्रकृतिनि की उत्पत्ति का अनुक्रम कहैं हैं —

पंच णव दोण्णि अट्ठावीसं चउरो कमेण तेणउदी ।
तेउत्तरं सयं वा, दुगपणगं उत्तरा होंति ॥२२॥

पंच नव द्वौ अष्टा,विंशतिः चत्वारः क्रमेण त्रिनवतिः ।
त्र्युत्तरं शतं वा, द्विकपंचकमुत्तरा भवंति ॥२२॥

टीका — [१]ज्ञानावरणादिक कर्मनि की उत्तर-प्रकृति अनुक्रम तैं पांच ५, नव ६, दोय २, अट्ठाईस २८, च्यारि ४, त्रेणवै ६३, अथवा एकसौ तीन १०३, दोय २, पांच ५ जाननी सोई कहै हैं —

ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, वेदनीय, मोहनीय, आयु, नाम, गोत्र, अंतराय – ए आठ मूल-प्रकृति हैं । तहां ज्ञानावरणीय पांच प्रकार है – मतिज्ञानावरणीय, श्रुतज्ञानावरणीय, अवधिज्ञानावरणीय, मनःपर्ययज्ञानावरणीय – च्यारि ए; अर एक केवलज्ञानावरणीय – असैं पांच भेद हैं । बहुरि दर्शनावरणीय नव प्रकार है – स्त्यानगृद्धि, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, निद्रा, प्रचला – ए पंच निद्रा, अर चक्षुदर्शनावरणीय, अचक्षुदर्शनावरणीय, अवधिदर्शनावरणीय – ए तीन; अर केवलदर्शनावरणीय – असैं नव भेद जानने ॥२२॥

थीणुदयेणुट्ठविदे, सोवदि कम्मं करेदि जप्पदि य ।
णिद्दाणिद्दुदयेण य, ण दिट्ठिमुग्घादिदुं सक्को ॥२३॥

स्त्यानगृद्ध्युदयेन, उत्थापिते स्वपिते कर्म करोति जल्पति च ।
निद्रानिद्रोदयेन च, न दृष्टिमुद्घाटयितुं शक्यः ॥२३॥

टीका – स्त्यानगृद्धि दर्शनावरणीय के उदय करि उठाया हुवा भी सूता रहैं, उस निद्रा ही विषैं अनेक कार्य करै, बोलै, किछू सावधानी न होइ । बहुरि निद्रानिद्रा के उदय करि बहुत प्रकार सावधानी करै; परन्तु नेत्र उघाड़ने कौं समर्थ न होइ ॥२३॥

पयलापयलुदयेण य, वहेदि लाला चलंति अंगाइं ।
णिद्दुदये गच्छंतो, ठाइ पुणो वइसइ पडेई ॥२४॥

१–पंचनवद्व्यष्टाविंशतिचतुर्द्विचत्वारिंशद्द्विपंचभेदा यथाक्रमं । मोक्षशास्त्र ८-५ ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रचलाप्रचलोदयेन च, वहति लाला चलन्ति अङ्गानि ।
निद्रोदये गच्छन्, तिष्ठति पुनः विशति पतति ।।२४।।

टीका – प्रचलाप्रचला के उदय करि मुखतैं लाल वहै, हस्त-पादादिक अंग चलरूप होंइ । बहुरि निद्रा के उदय करि चालता थका खड़ा रहि जाय, खड़ा बैठि जाइ, गिर पड़ै असैं होइ ।।२४।।

पयलुदयेण य जीवो, ईसुम्मीलिय सुवेइ सुत्तोवि ।
ईसं ईसं जाणदि, मुहुं मुहुं सोवदे मंदं ।।२५।।

प्रचलोदयेन च जीव, ईषदुन्मील्य स्वपिति सुप्तोऽपि ।
ईषदीषज्जानाति, मुहुर्मुहुः स्वपिति मन्दम् ।।२५।।

टीका – प्रचला के उदय करि जीव किछू एक नेत्र कौं उघारि करि सोवै । सूता हुवा भी **'ईषत्-ईषत्'** किछू-किछू जान्या करै । **'मुहुर्मुहुः'** बारंबार मंद सोवै । सूता अर जाग्या असैं बारंबार सोवै ।

बहुरि वेदनीय दोय प्रकार – साता वेदनीय, असाता वेदनीय । तहां – रति मोहनीयकर्म का उदय के बल करि जीव कौं सुख का कारण जो इन्द्रियनि का विषय ताका अनुभवन कौं करावैं सो साता-वेदनीय है । बहुरि अरति मोहनीय के उदय के बल करि दुःख का कारण जो इन्द्रियनि का विषय ताका अनुभवन करावै सो असाता-वेदनीय है । बहुरि मोहनीय दोय प्रकार है – दर्शन मोहनीय, चारित्र मोहनीय । तहां – दर्शन मोहनीय बंध की अपेक्षा मिथ्यात्वरूप एक प्रकार है । उदय व सत्व की अपेक्षा मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व-प्रकृति – असे तीन प्रकार है ।।२५।।

सो ए तीन भेद कैसे हो हैं ? सो कहैं हैं —

जंतेण कोद्दवं वा, पढमुवसमसम्मभावजंतेण ।
मिच्छं दव्वं तु तिधा, असंखगुणहीणदव्वकमा ।।२६।।

यन्त्रेण कोद्रवं वा, प्रथमोपशमसम्यक्त्वभावयन्त्रेण ।
मिथ्यात्व द्रव्यं तु त्रिधा, असंख्यगुणहीनद्रव्यक्रमात् ।।२६।।

टीका – यंत्र कहिए घरटी ताकरि दले हूए कोदौं – जैसे तुष, तंदुल, कणी – इनि तीनि अवस्था को प्राप्त हो हैं; तैसैं प्रथमोपशम-सम्यक्त्व रूप भाव-यंत्र करि

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

एक मिथ्यात्व-प्रकृति का द्रव्य जो परमाणूनि का समूह सो मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व-प्रकृति – इनि तीन प्रकृतिरूप होइ असंख्यात-२ गुणां घाटि द्रव्य का अनुक्रम करि तीन प्रकार हो है, सोई कहिए हैं —

आयु बिना सात कर्मनि की परमाणूनि का प्रमाण किंचित् ऊन ड्योढ-गुण-हानि करि समय-प्रबद्ध कौ गुणैं, जो प्रमाण होइ, तितना है; ताकौं सात का भाग दीएं जो प्रमाण आवै तितने मोहनीय के परमाणू हैं। याकौं अनंत का भाग दीजिए तहां एक भाग प्रमाण सर्वघाति-प्रकृतिनि के परमाणू हैं। अवशेष देशघातिया-प्रकृतिनि के परमाणू हैं। बहुरि तिस एक भाग कौं एक मिथ्यात्व अर सोलह कषाय, इनिका भाग करने कौं सत्तरह का भाग दीए जो प्रमाण आवैं तितने मिथ्यात्व-प्रकृति के परमाणू हैं।

सो इहां प्रथमोपशमसम्यक्त्व का अंतर्मुहूर्त काल ताके प्रथम समय तैं लगाइ अंत के समय पर्यंत गुण-संक्रम-भागहार करि, तिस मिथ्यात्व के परमाणूनि के प्रमाण कौं अपकर्षण करि-करि – ताके तीन पुंज करै। तहां मिथ्यात्व के जितने परमाणू हैं, इनतैं असंख्यात गुणे घाटि सम्यग्मिथ्यात्व के परमाणू हैं। इनितैं असंख्यात-गुणे घाटि सम्यक्त्व प्रकृति के परमाणू हैं। अैसै होतैं ताके अंत के समय विषैं भी अैसे ही तिष्ठैं है। अैसै एक मिथ्यात्व के परमाणू तीन पुंजरूप भए।

इहां मिथ्यात्व तो था ही; ताकौं मिथ्यात्व रूप कहा कीया ?

ताका समाधान – पूर्वैं जो स्थिति थी तामैंस्यों अतिस्थापनावली प्रमाण घटाइ दीया अैसैं विधान मन में धारि आचार्य कह्या, जो असंख्यात गुणां घाटि द्रव्य का अनुक्रम करि मिथ्यात्व द्रव्य तीन प्रकार है।

बहुरि चारित्र-मोहनीय दोय प्रकार – कषायवेदनीय, नोकषायवेदनीय। तहां – कषायवेदनीय सोलह प्रकार सो इनिका क्षय होने का अनुक्रम करि कहिए, तो अनुक्रम तैं अैसै कहिए – अनंतानुबंधी – क्रोध, मान, माया, लोभ; अप्रत्याख्यान – क्रोध, मान, माया, लोभ; प्रत्याख्यान – क्रोध, मान, माया, लोभ; क्रोध-संज्वलन, मान-संज्वलन, माया-संज्वलन, लोभ-संज्वलन – ए सोलह भेद जानने।

बहुरि प्रदेश-बंध विषैं परमाणूनि का बटवारा है ताकी अपेक्षा कहिए तौ इस अनुक्रम तैं कहिए अनंतानुबंधी – लोभ, माया, क्रोध, मान; संज्वलन – लोभ,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

माया, क्रोध, मान; प्रत्याख्यान – लोभ, माया, क्रोध, मान; अप्रत्याख्यान – लोभ, माया, क्रोध, मान – अैसे अनुक्रम तैं कहिए – सो ए सोलह भेद तौ कषायवेदनीय के हैं। बहुरि नोकषायवेदनीय नवप्रकार पुरुष स्त्री नपुंसक वेद, रति, अरति, हास्य, शोक, भय, जुगुप्सा – ए नव जानने।

बहुरि आयुकर्म च्यारि प्रकार है – १ नरकायु, २ तिर्यंच, ३ मनुष्य, ४ देव आयु।

बहुरि नामकर्म बियालीस प्रकार पिंड-अपिंड भेद करि है – १ गति, २ जाति, ३ शरीर, ४ बंधन, ५ संघात, ६ संस्थान, ७ अंगोपांग, ८ संहनन, ९ वर्ण, १० गंध, ११ रस, १२ स्पर्श, १३ आनुपूर्वी, १४ अगुरु-लघुक, १५ उपघात, १६ परघात, १७ उश्वास, १८ आतप, १९ उद्योत, २० विहायो-गति, २१ त्रस, २२ स्थावर, २३ बादर, २४ सूक्ष्म, २५ पर्याप्त, २६ अपर्याप्त, २७ प्रत्येक शरीर, २८ साधारण शरीर, २९ स्थिर, ३० अस्थिर, ३१ शुभ, ३२ अशुभ, ३३ सुभग, ३४ दुर्भग, ३५ सुस्वर, ३६ दुःस्वर, ३७ आदेय, ३८ अनादेय, ३९ यशःकीर्ति, ४० अयशःकीर्ति, ४१ निर्माण, ४२ तीर्थंकर – ए बियालीस भेद हैं। तहां चौदह पिंड प्रकृति हैं; तिनिके भेद कहिए है —

गति नाम च्यारि प्रकार – नरकगति १, तिर्यंचगति २, मनुष्यगति ३, देव-गति ४। जाति नाम पांच प्रकार – एकेंद्री, बेइंद्री, तेइंद्री, चौइंद्री, पचेंद्री ५ जाति। शरीर नाम पांच प्रकार – औदारिक शरीर १, वैक्रियिक शरीर २, आहारक शरीर ३, तैजस शरीर ४, कार्माण शरीर ५ ॥२६॥

इनि पंच शरीरनि के भंग कहैं हैं —

तेजाकम्मेहिं तिए, तेजा कम्मेण कम्मणा कम्मं।
कयसंजोगे चदुचदु,चदुदुग एक्कं च पयडीओ ॥२७॥

तैजसकार्म्मणाभ्यां, त्रये तैजसं कार्म्मणेन कार्म्मणेन कार्म्मणं।
कृतसंयोगे चतुश्चतु,श्चतुर्द्विकमेकं च प्रकृतयः ॥२७॥

टीका – औदारिक, वैक्रियिक, आहारक – इनि तीनों विषैं तैजस-कार्माण सहित संयोग कीए च्यारि-च्यारि भंग भए ते कहिए है। औदारिक-औदारिक,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

औदारिक-तैजस, औदारिक-कार्माण, औदारिक-तैजस-कार्माण – ए च्यारि भए। बहुरि वैक्रियिक-वैक्रियिक, वैक्रियिक-तैजस, वैक्रियिक-कार्माण, वैक्रियिक-तैजस-कार्माण – ए च्यारि भए। बहुरि आहारक-आहारक, आहारक-तैजस, आहारक-कार्माण, आहारक-तैजस-कार्माण – ए च्यारि भए। बहुरि तैजस-कार्माण के संयोग तें दोय भंग हो हैं – तैजस-तैजस, तैजस-कार्माण – ए दोय भये। बहुरि कार्माण-कार्माण के संयोग तें एक भंग हो है – कार्माण-कार्माण – यहु एक भया। ऐसें सब मिले हुवे पंद्रह भेद[1] भये।

इहां शरीरनि कैं परस्पर संयोग तें भेद कहे हैं। जैसें – चक्रवर्त्यादिक के औदारिक शरीर था; उससे और औदारिक भए, तहां औदारिक-औदारिक कहिए, ऐसें ही यथासंभव और भी भेद जानने। इनि विषैं औदारिक-औदारिक, वैक्रियिक-वैक्रियिक, आहारक-आहारक, तैजस-तैजस, कार्माण-कार्माण – ए पंच भेद, ऊपरि औदारिकादिक शरीर कहे थे; तहां गर्भित भए। जैसै – औदारिक तें औदारिक का संयोग कह्या, तहां दोऊ सदृश हैं; तातैं ऊपरि शरीर-प्रकृति के भेदनि विषैं औदारिक-शरीर कह्या; तहां गर्भित भया। ऐसै ही और च्यारि का गर्भितपनां जानना। तातैं पंद्रह मैंस्यों पांच घटाए, दश रहे; सो नाम कर्म की त्रैणवै प्रकृतिनि विषैं ए दश प्रकृति मिलाइए; तब नामकर्म की एकसौ तीन (१०३) प्रकृति हो हैं।

बहुरि शरीर-बंधन नाम पांच प्रकार – औदारिक-शरीर बंधन, वैक्रियिक-शरीर-बंधन, आहारक-शरीर-बंधन, तैजस-शरीर-बंधन, कार्माण-शरीर-बंधन। बहुरि

१. गाथा २७ के आधार पर शरीरबन्धन नामकर्म के १५ भंग —

क्रम	प्रधान शरीर	मिश्रित शरीर				योग
१	औदारिक	औ०औ०	औ० तै०	औ०का०	औ०तै०का०	४
२	वैक्रियिक	वै०वै०	वै०तै०	वै०का०	वै०तै०का०	४
३	आहारक	आ०आ०	आ०तै०	आ०का०	आ०तै०का०	४
४	तैजस	तैजस तैजस	तै०का०			२
५	कार्मण	कार्मण कार्मण				१
कुल योग—						१५

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

शरीरसंघात नाम पांच प्रकार – औदारिक-शरीर-संघात, वैक्रियिक-शरीर संघात, आहारक-शरीर-संघात, तैजस-शरीर-संघात, कार्माण-शरीर-संघात। बहुरि शरीर संस्थान नाम छह प्रकार – समचतुरस्र संस्थान, न्यग्रोधपरिमंडल, स्वाति, कुब्ज, वामन, हुंडसंस्थान। बहुरि शरीर अंगोपांग नाम तीन प्रकार – औदारिकशरीर-अंगोपांग, वैक्रियिकशरीरअंगोपांग, आहारकशरीरअंगोपांग, तैजस-कार्माण के अंगोपांग का अभाव है ॥२७॥

णलया बाहू य तहा, णियंबपुट्ठी उरो य सीसो य।
अट्ठेव दु अंगाइं, देहे सेसा उवंगाइं ॥२८॥

नलकौ बाहू च तथा, नितम्बपृष्ठे उरश्च शीर्षं च।
अष्टैव तु अङ्गानि, देहे शेषाणि उपाङ्गानि ॥२८॥

टीका – '**नलकौ**' कहिए दोय पग, अर '**बाहू**' कहिए दोय हाथ, अर '**नितंब**' कहिए एक ढूँगो, परभाग कहिए एक पीठ, '**उरः**' कहिए एक हृदय, '**शीर्षं**' कहिए एक मस्तक – ए शरीर विषैं आठ अंग हैं। इनि बिना और सर्व उपांग जानने।

बहुरि संहनन नाम छह प्रकार – वज्रवृषभ नाराच शरीर संहनन, वज्र नाराच, नाराच, अर्धनाराच, कीलित, असंप्राप्तासृपाटिका शरीर संहनन ॥२८॥

सेवट्टेण य गम्मइ, आदीदो चदुसु कप्पजुगलोत्ति।
तत्तो दुजुगलजुगले, खीलियणारायणद्धोति ॥२९॥

सृपाटेन च गम्यते, आदितः चतुर्षु कल्पयुगल इति।
ततः द्वियुगलयुगले, कीलितनाराचार्द्ध इति ॥२९॥

टीका – सृपाटिका संहनन करि संयुक्त जीव स्वर्ग विषैं उपजैं तो – सौधर्म युगल तैं लांतव युगलपर्यंत – च्यारि युगलनि विषैं उपजैं। बहुरि ताके ऊपरि दोय युगलनि विषैं शतार-युगलपर्यंत-कीलितसंहनन युक्त जीव उपजैं। बहुरि ताके ऊपरि दोय युगलनि विषैं आरण-अच्युत पर्यंत – अर्धनाराच संहननयुक्त जीव उपजै हैं ॥२९॥

णवगेविज्जाणुद्दिस,णुत्तरवासीसु जांति ते णियमा।
तिदुगेगे संघडणे, णारायणमादिगे कमसो ॥३०॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

नवग्रैवेयिकानुदिशा,नुत्तरवासिषु यान्ति ते नियमात् ।
त्रिद्विकैकेन संहननेन नाराचादिकेन क्रमशः ॥३०॥

टीका – नाराच, वज्रनाराच, वज्रवृषभनाराच – इन तीन संहनन वाले जीव नवग्रैवेयक पर्यंत उपजैं । बहुरि वज्रनाराच, वज्रवृषभनाराच – इन दोऊ संहनन वाले जीव नव अनुदिशविमान पर्यंत उपजैं । बहुरि वज्रवृषभनाराच – एक संहनन वाला जीव पंच-अनुत्तरवासी देवनि पर्यंत उपजै, नियम करि असैं जानना ॥३०॥

सण्णी छस्संहडणो, वज्जदि मेघं तदो परं चापि ।
सेवट्टादीरहिदो, पण पणचदुरेगसंहडणो ॥३१॥

संज्ञी षट्संहननो, व्रजति मेघां ततः परं चापि ।
सृपाटाविरहितः, पञ्चमीं पञ्चचतुरेकसंहननः ॥३१॥

टीका – छह संहनन युक्त सैनी-जीव नरक विषैं उपजै तो मेघा नाम तीसरी पृथ्वी पर्यंत उपजे । सृपाटिका बिना पंच संहनन वाले जीव अरिष्टा नामा पांचमी पृथ्वी पर्यंत उपजै । सृपाटिका-कीलित बिना च्यारि संहनन वाले जीव मघवी नाम छठी पृथ्वी पर्यंत उपजै । एक वज्रवृषभनाराच वाले जीव माघवी नामा सातवी पृथ्वी पर्यंत उपजै हैं ॥३१॥

अंतिमतियसंहडणस्सुदओ पुण कम्मभूमिमहिलाणं ।
आदिमतिगसंहडणं, णत्थित्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं ॥३२॥

अन्तिमत्रयसंहननस्योदयः पुनः कर्मभूमिमहिलानां ।
आदिमत्रिकसंहननं, नास्तीति जिनैर्निर्दिष्टम् ॥३२॥

टीका – कर्मभूमि विषैं महिला जे स्त्री तिनके अर्धनाराच, कीलित, सृपाटिका– इनि तीन संहनन ही का उदय है । आदि के वज्रवृषभनाराचादिक तीन संहनन न होइ हैं, अैसा जिनदेव ने कह्या है ॥३२॥

बहुरि वर्ण नाम पांच प्रकार – कृष्ण, नील, रक्त, पीत, श्वेत । बहुरि गंध नाम दोय प्रकार – सुगंध, दुर्गंध । बहुरि रस नाम पांच प्रकार – तिक्त, कटुक, कषाय, आम्ल, मधुर । बहुरि स्पर्श नाम आठ प्रकार – कठोर, कोमल, गुरु, लघु, रूखा, चिकना, शीत, उष्ण । बहुरि आनुपूर्वी नाम च्यारि प्रकार – नरक-तिर्यंच गति-

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रायोग्य-आनुपूर्वी, मनुष्य-देवगति प्रायोग्य-आनुपूर्वी । बहुरि अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास, आपत, उद्योत – ए एक-एक । बहुरि विहायोगति दोय प्रकार – प्रशस्त विहायोगति, अप्रशस्त विहायोगति । बहुरि त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक शरीर स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, यशस्कीर्ति, निर्माण, तीर्थंकर – ए एक-एक । बहुरि स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण शरीर, अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, अयशस्कीर्ति – ए एक-एक, ऐसैं सर्व मिली हुई नामकर्म की उत्तर प्रकृति त्रेणवै (९३) वा एकसौ तीन (१०३) हैं ।

मूलुण्हपहा अग्गी, आदावो होदि उण्हसहियपहा ।
आइच्चे तेरिच्छे, उण्हूणपहा हु उज्जोओ ।।३३।।

मूलोष्णप्रभा अग्निः, आतापो भवति उष्णसहितप्रभा ।
आदित्ये तिरश्चि, उष्णोनप्रभा हि उद्योतः ।।३३।।

टीका – इहां कोऊ भ्रम करेगा कि आताप प्रकृति का उदय अग्निकाय विषैं होगा; तातैं कहैं हैं–अग्नि है सो मूल ही उष्ण-प्रभा सहित है, तातैं वाके स्पर्श का भेद उष्णता का उदय जानना । बहुरि जाकी प्रभा ही उष्ण होइ ताकैं आताप प्रकृति का उदय जानना । सो सूर्य का बिंब विषैं उपजैं ऐसै बादर पर्याप्त पृथ्वीकाय के तिर्यंच जीव तिन ही कैं आताप-प्रकृति का उदय है । बहुरि उष्ण रहित जो प्रभा होइ तहां उद्योत जानना ।

बहुरि गोत्र-कर्म दोय प्रकार–ऊच्च गोत्र, नीच गोत्र ।

बहुरि अंतरायकर्म पांच प्रकार–दानांतराय, लाभांतराय, भोगांतराय, उपभोगांतराय, वीर्यांतराय ।

ऐसैं उत्तर-प्रकृति कहीं, सो आत्मा के प्रदेशनि विषैं एक क्षेत्रावगाही तिष्ठते जे कर्मरूप होने योग्य कार्माण वर्गणा तिनिका अविभाग एकत्वपनैं करि युक्त होना, सो बंध कहिए । जैसैं यथायोग्य भाजन विषैं धरया हूवा नाना प्रकार रस, बीज, फूल, फल ते मदिरा भाव कौं प्राप्त हों है, तैसे कार्मण-वर्गणारूप पुद्गल योग-कषाय के निमित्त तैं कर्मभाव कौं प्राप्त हो हैं । बहुरि जैसैं एक बार ही भक्षण कीया, हुवा एक अन्न सो रस, रुधिर, मांसादिक अनेकरूप होइ परिणमैं हैं, तैसैं एक ही आत्मा के परिणाम करि ग्रहे, हुवे पुद्गल ज्ञानावरणादिक अनेक भेदरूप होइ परिणमैं हैं।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अब जे उत्तर-प्रकृति कहीं तिनकी निरुक्ति कहिए है—

मतिज्ञान कौं आवरैं वा मतिज्ञान याकरि आवरिये, सो मतिज्ञानावरण है। बहुरि श्रुतज्ञान कौं आवरै वा श्रुतज्ञान याकरि आवरिये, सो श्रुतज्ञानावरण है। बहुरि अवधिज्ञान कौ आवरै वा अवधिज्ञान याकरि आवरिये, सो अवधिज्ञानावरण है। बहुरि मनःपर्ययज्ञान कौं आवरै वा मनःपर्ययज्ञान याकरि आवरिये, सो मनःपर्यय-ज्ञानावरण है। बहुरि केवलज्ञान को **'आवृणोति'** कहिए आवरै वा केवलज्ञान याकरि **आव्रियते** कहिए आवरिए, सो केवलज्ञानावरण है।

इहां प्रश्न—जो अभव्य के मनःपर्यय, केवलज्ञान की शक्ति है कि नाहीं है, जो है, तौ भव्य, अभव्य का भेद न होइ। जो न है तो वाके दोऊ ज्ञान के आवरण कहना निरर्थक है ?

ताका समाधान — जो द्रव्यार्थिकनय करि वाके तिनि दोऊ ज्ञाननि की शक्ति पाइए है, पर्यायार्थिकनय करि सो शक्ति व्यक्तरूप होइ कबहूं प्रगट न परिणमै; तातैं दोष कहे, ते लगते नाहीं। जैसे—अंध-पाषाण विषैं सोने (स्वर्ण) की शक्ति कहिए तैसे जानना।

बहुरि **'आवृणोति आव्रियते अनेन इति आवरणं'** जो आवरै वा याकरि आवरिये सो आवरण कहिए, सो चक्षुदर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण, अवधिदर्शनावरण, केवलदर्शनावरण ए च्यारि प्रकार दर्शन के आवरणरूप च्यारि दर्शनावरण जानने। बहुरि पांच-निद्रा—तहां जाकरि सोवने विषैं वीर्य विशेष प्रगट होइ, सो स्त्यानगृद्धि है। **'स्त्यायति'** इस धातु के अनेक अर्थ हैं। इहां सोवने का अर्थ लीजिये। बहुरि **'गृधि'** धातु का इहां दीप्ति अर्थ लीजिए। सो **'स्त्यान'** कहिए सोवना, तिसविषैं **'गृध्यते'** कहिए दिपे, जाके उदय विषैं आर्त, रौद्र लीए उठना-बैठना, उठावना-धरना इत्यादि अनेक कार्य करै, सो स्त्यानगृद्धि है। सो स्त्यानगृद्ध्यादिक करि दर्शनावरण का सामान्याधिकरण जानना। स्त्यानगृद्धि सो दर्शनावरण, निद्रा-निद्रा सो दर्शना-वरण इत्यादिक जानना।

भावार्थ — चक्षुदर्शनावरणादिक विषैं तौ षष्ठी-तत्पुरुष-समास है, स्त्यानगृद्धि दर्शनावरणादिक विषैं कर्मधारय-समास जानना।

बहुरि जाकै उदय तैं निद्रा के ऊपरी-ऊपरी प्रवृत्ति होइ, सो निद्रा-निद्रा-दर्शनावरण है। बहुरि जाकै उदय तैं क्रिया आतमा को बारम्बार चलावै। सो प्रचला-

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रचला-दर्शनावरण है, सो शोक वा खेद वा मदादिक तैं उपजै तिष्ठता हुआ भी नेत्र शरीरादिक का हलावना-चलावना इत्यादि विक्रिया करै, सो बारम्बार असैं जहां होइ, सो प्रचलाप्रचला है। बहुरि जाके उदय तैं मद, खेदादिक मिटावने के निमित्ति सोइए, सो निद्रा-दर्शनावरण है। बहुरि जाके उदय तैं क्रिया आत्मा को चलावै, किछू सावधानी रहै, सो प्रचला-दर्शनावरण है।

बहुरि जाके उदय तै देवादिक गतिनि विषैं शारीरिक, मानसिक सुख की प्राप्ति सो साता, तिसकौं विदवावै भोगवावै, बहुरि याकरि साता वेदिए भोगिए, सो सातावेदनीय है। बहुरि जाके उदय का फल अनेक प्रकार दुःख सो असाता, ताकौं विदवावै वा भोगवावै याकरि असाता भोगिए, सो असातावेदनीय है।

बहुरि दर्शन मोहनीय, चारित्र मोहनीय, कषाय वेदनीय, नो-कषायवेदनीय असैं मोहनीयकर्म च्यारि प्रकार हैं। तहां दर्शन-मोहनीय तीन प्रकार–मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्वप्रकृति, सो बंध की अपेक्षा एक प्रकार है। उदय वा सत्ता की अपेक्षा तीन प्रकार है। तहां जाके उदय तैं सर्वज्ञ प्रणीत मार्गस्सों परांमुख होइ, तत्त्वार्थश्रद्धान का उद्यमी न होइ, हिताहित विचार करने कौं समर्थ न होइ–असैं मिथ्यादृष्टि होइ, सो मिथ्यात्व है। बहुरि सोई मिथ्यात्व शुभपरिणामनि करि अनुभाग रस के रुकने तैं उदासीन रूप तिष्ठता आत्मा के श्रद्धान कौं रोकै नाहीं, जिस के उदय कौं भोगवता जीव सम्यग्दृष्टि ही कहिए, सो सम्यक्त्व-प्रकृति जानना। बहुरि जैसै–मादक कोदौं विषैं पाखालने के विशेष करि किछू मद-शक्ति रहे, किछू क्षीण होइ, तैसें किछू अनुभाग क्षीण भया होइ, किछू रह्या होइ, असा सोई मिथ्यात्व भया ताकौं सम्यग्मिथ्यात्व कहिए। याके उदय तें जैसें शुद्ध मादक कोदौं खाने तें किछू मदवान होइ किछू स्याना रहै, तैसें सम्यक् रूप वा मिथ्यारूप मिश्रपरिणाम आत्मा के हो हैं।

बहुरि चारित्र-मोहनीय दोय प्रकार है। आचारै वा याकरि आचरिये वा आचरण मात्र होइ, सो चारित्र कहिए, तिसकरि मोहै वा चारित्र याकरि मोहिए, सो चारित्रमोहनीय है। सो दोय प्रकार है – एक कषायवेदनीय, एक नो-कषायवेदनीय। तहां **कषंति** कहिए आत्मा के चारित्र को हिंसै – घातै ते कषाय कहिए। बहुरि **'नो'** कहिए **ईषत्**-किंचिन्मात्र जे कषाय, तिनिकौं नोकषाय कहिए।

तहां कषायवेदनीय सोलह प्रकार है। सो कहिए है – कषाय – क्रोध, मान, माया, लोभ; सो इनिकी च्यारि अवस्था हैं – अनंतानुबंधी-क्रोध, मान, माया, लोभ;

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अप्रत्याख्यानावरण – क्रोध, मान, माया, लोभ; प्रत्याख्यानावरण – क्रोध, मान, माया, लोभ; क्रोधसंज्वलन, मानसंज्वलन, मायासंज्वलन, लोभसंज्वलन। तहां **'अनंत'** कहिए अनंत संसार कौं कारण मिथ्यात्व, ताहि **'अनुबध्नंति'** कहिए संबंध रूप करैं ते अनंतानुबंधी जानने। बहुरि **'अ'** कहिए ईषत्-किंचिन्मात्र **'प्रत्याख्यान'** कहिए संयम, सो तिस देशसंयम कौं आवरै – अल्पमात्र भी न होने दे, ते अप्रत्याख्यानावरण है। बहुरि **'प्रत्याख्यान'** कहिए सकल-संयम, ताहि **'आवृणंति'** कहिए आवरै, न होने दे, ते प्रत्याख्यानावरण है। बहुरि **'सं'** कहिए एकीभूत होइ **'ज्वलंति'** कहिए संयम-सहित अपने प्रकाश कौं करै अथवा इनिकौ होत संतै भी संयम है, सो **'ज्वलति'** कहिए प्रकाशरूप रहै, ते संज्वलन कहिए – सो ए सब मिले हुए सोलह कषाय भए।

बहुरि **'नो'** कहिए ईषत् किंचिन्मात्र, क्रोधादिक सारिखे प्रबल नाहीं असे जु कषाय हैं ते नो-कषाय हैं तिनिकौ वेदै वा इनिकरि वेदिए, नो-कषायरूप अनुभवन कीजिए ते नोकषायवेदनीय है। ते नव प्रकार हैं – तहां जाके उदय तैं हास्य प्रकट होइ, सो हास्य है। बहुरि जाके उदय तैं क्षेत्रादिक विषैं उत्सुकता-प्रीति होइ, सो रति है। बहुरि जाके उदय तैं क्षेत्रादिक विषैं निरुत्सुकता-अप्रीति होइ, सो अरति है। बहुरि जाके उदय तैं इष्टवियोग होतैं क्लेश होइ, सो शोक है। बहुरि जाके उदय तैं उद्वेग-उच्चाटन होइ, सो भय है। बहुरि जाके उदय तैं अपने दोष कौं संवरै, अन्यवस्तु के दोष को धारै, सो जुगुप्सा है। बहुरि जाके उदय तैं स्त्रीसंबंधी भावनि कौं प्राप्त होइ, सो स्त्रीवेद है। बहुरि जाके उदय तैं पुरुष संबंधी भावनि कौं प्राप्त होइ, सो पुरुष-वेद है। बहुरि जाके उदय तैं नपुंसक संबंधी भावनि कौं प्राप्त होइ, सो नपुंसकवेद है।

बहुरि पर्याय धारने के निमित्ति **'एति'** कहिए प्राप्त होइ, सो आयु है, सो नारकादिक पर्यायनि विषैं प्राप्त होने का सम्बन्ध करि आयु के भेद करिए है। तहां जो नरक विषैं प्राप्त, सो नरकायु है। तिर्यग्योनि विषैं प्राप्त, सो तिर्यग्योनि-आयु है। मनुष्य विषैं प्राप्त, सो मनुष्यआयु है। देव विषैं प्राप्त, सो देवआयु है। सो तीव्र-शीत-उष्ण वेदनासहित नरकनि विषै बहुत काल जीवना सो नारक-आयु है, असैं ही और तीनौं का स्वरूप जानना।

बहुरि नामकर्म – पिंड-अपिंड प्रकृति के भेद करि बियालीस प्रकार हैं, तहां जाके उदय तैं आत्मा पर्याय तैं पर्यायांतर को **गच्छति** कहिए प्राप्त होइ, सो गति कहिए। सो गति च्यारि प्रकार – तहां जाके उदय निमित्त तैं आत्मा कैं नारक-

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पर्याय होइ, सो नरकगति नाम है। जाके उदय तैं आत्मा कैं तिर्यक्-पर्याय होइ, सो तिर्यंगगति नाम है। जाके उदय तैं आत्मा कैं मनुष्य पर्याय होइ, सो मनुष्यगति नाम है। जाके उदय तैं आत्मा के देव-पर्याय होइ, सो देवगति नामकर्म है।

बहुरि तिन गतिनि विषैं अव्यभिचारी सादृश्यभाव तीहि करि एकठे कीए जीव, सो जाति है। जैसैं एकेंद्री, बेइंद्रियादिक परस्पर समान रूप होंइ, मिलैं नाहि, तातैं अव्यभिचारी हैं अर एकेंद्री जेते जीव हैं, तिनकैं एकेंद्रिय अस्तित्व की अपेक्षा समानता है सो यह सादृश्य-भाव है। सो याकरि जिस एक अव्यभिचारी सादृश्य-भाव विषैं जीव एकठे करिए सो जाति है। सो जाति नाम पांच प्रकार है। तहां जाके उदय तैं आत्मा एकेंद्रिय अैसा कहिए, सो एकेंद्रिय-जाति नाम है। जाके उदय तैं आत्मा बेंद्री है अैसा कहिए, सो बेंद्री जाति नाम है। जाके उदय तैं आत्मा तेंद्री अैसा कहिए, सो तेंद्री जाति नाम है। जाके उदय तैं आत्मा चौंद्री अैसा कहिए, सो चौंद्री जाति नाम है। जाके उदय तैं आत्मा पंचेंद्री अैसा कहिए सो पंचेंद्री-जाति नाम है।

बहुरि जाके उदय तैं शरीर निपजै, सो शरीर नाम है, सो पंच प्रकार है। तहां जाके उदय तैं औदारिक शरीर निपजैं, सो औदारिक शरीर नाम है। जाके उदय तैं वैक्रियिक शरीर निपजैं, सो वैक्रियिक-शरीर नाम है। जाके उदय तैं आहारक शरीर निपजै, सो आहारक-शरीर नाम है। जाके उदय तैं तैजस शरीर निपजै, सो तैजस-शरीर नाम है। जाके उदय तैं आत्मा कैं कार्माण शरीर निपजै, सो कार्माण शरीर नाम है।

बहुरि शरीर नामकर्म के उदय के वश तैं जे आहारवर्गणारूप पुद्गलस्कंध ग्रहण कीए, तिनकैं परस्पर प्रदेशनि का संश्लेष सम्बन्ध जाके उदय तैं होइ, सो बंधन नाम है। सो औदारिकादि शरीरनि की अपेक्षा पंच प्रकार है। बहुरि जाके उदय तैं औदारिकादि शरीर छिद्र करि रहित तिनिका परस्पर प्रदेशनि का एक क्षेत्रावगाह करि एकत्वपना कौं प्राप्त होना होइ, सो संघातनाम है। सो औदारिकादि-शरीरनि की अपेक्षा पंच प्रकार है।

बहुरि जाके उदय तैं औदारिकादिक-शरीरनि का आकार निपजै, सो संस्थान नाम है, सो छह प्रकार है। तहां जातैं समान चौकोर आकार होइ, सो समचतुरस्र, संस्थान नाम है। न्यग्रोध जो बड, तीहिं सारिखा ऊपरि तैं मोटा नीचै तैं पतला अैसा आकार जातैं होइ, सो न्यग्रोध परिमंडल संस्थान नाम है। स्वाति जो बंवइ तीहि

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सारिखा ऊपरि तैं पतला नीचै तैं मोटा ऐसा आकार जातैं होइ, सो स्वाति-संस्थान नाम है । कूबरा आकार जातैं होइ, सो कुब्ज-संस्थान है । ठींगना आकार जातैं होइ, सो वामन-संस्थान नाम है । अनेक अवक्तव्य आकार जातैं होइ, सो हुंडक-संस्थान नाम है ।

बहुरि जाके उदय तैं अंगोपांग का भेद होइ, सो अंगोपांग नाम है । सो तीन प्रकार है – औदारिक अंगोपांग, वैक्रियिक अंगोपांग, आहारक अंगोपांग ।

बहुरि जाके उदय तैं हाडनि के बंधन का विशेष होइ, सो संहनन नाम है । सो छह प्रकार है – वज्रवृषभनाराच संहनन, वज्रनाराच, नाराच, अर्धनाराच, कीलित, असंप्राप्तासृपाटिका । तहां 'संहनन' नाम तो हाडनि का समूह का है । 'ऋषभ' नाम जाकरि वेठिए बांधिए, जैसैं – जेवरे करि बठ दीजिए है ताका जानना । अर 'नाराच' नाम कीले का है; जैसैं – लोहे का कीला काष्ठादिक विषैं ठोकिए है । बहुरि जो वज्रवत् भेद्या न जाय ऐसा होइ ताकौं वज्र कहिये । सो जिस वज्रसंहनन युक्त शरीर विषैं वज्र का ऋषभ, वज्र का नाराच – ए दोऊ जहां होइ ऐसा शरीर जाके उदय तैं होइ, सो वज्रवृषभनाराच शरीरसंहनन नाम है । बहुरि जहां वज्र के ऋषभ नाही, सामान्य ऋषभ करि बेढ्या होइ, ऐसा शरीर जाके उदय तैं होइ, सो वज्रनाराच शरीरसंहनन नाम है । बहुरि वज्र विशेषण रहित, साधारण नाराच करि कीलित हाडनि की संधि होइ, ऐसा शरीर जाके उदय तैं होइ, सो नाराचशरीर संहनन नाम है । बहुरि जहां हाडनि की संधि नाराच करि अर्धकीलित होइ ऐसा शरीर जाके उदय तैं होइ, सो अर्धनाराच शरीर संहनन नाम है । बहुरि जहां वज्र के हाड नाही, ते परस्पर कीलित हो ऐसा शरीर जाके उदय तैं होइ, सो कीलित-शरीरसंहनन नाम है । बहुरि जहां परस्पर प्राप्त नाही, जुदे-जुदे सरीसृप के हाड़ की ज्यों नसकरि बंध्या हुवा हाड होइ ऐसा शरीर जाके उदय तैं होइ सो असंप्राप्ता-सृपाटिका शरीर संहनन नाम है ।

बहुरि जाके निमित्त तैं शरीर का वर्ण होइ, सो वर्णनाम है । सो पांच प्रकार – कृष्णवर्ण नाम, नीलवर्ण नाम, रक्तवर्ण नाम, पीतवर्ण नाम, श्वेतवर्ण नाम ।

बहुरि जाके उदय तैं शरीर विषैं गंध होइ, सो गंध नाम है । सो दोय प्रकार है – सुरभि गंध नाम, दुरभि गंध नाम ।

बहुरि जाके उदय तैं शरीर विषैं रस होइ, सो रस नाम है । सो पांच प्रकार – तिक्त नाम, कटुक नाम, कषाय नाम, अम्ल नाम, मधुर नाम ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जाके उदय तैं शरीर विषैं स्पर्श होइ, सो स्पर्श नाम है। सो आठ प्रकार – कर्कश नाम, मृदु नाम, गुरु नाम, लघु नाम, शीत नाम, उष्ण नाम, स्निग्ध नाम, रुक्ष नाम।

बहुरि जाके उदय तैं पूर्व जो शरीर था, ताके आकार का नाश न होइ, सो आनुपूर्व्य नाम है। सो च्यारि प्रकार है – नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य नाम, देवगति प्रायोग्यानुपूर्व्य नाम, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य नाम, तिर्यंचगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य नाम। नरकगति प्राप्त होने कौं योग्य असा पंचेंद्री पर्याप्त जीव कैं विग्रहगति विषैं पंचेंद्री पर्याप्त शरीर का आकार जाके उदय तैं रहे, सो नरकगति प्रायोग्यानुपूर्व्य नाम है – असैं ही सब जानने।

बहुरि जाके उदय तैं भार्‌या न होइ, तातैं लोह का पिंड की ज्यों नीचे कौं न पडै, हलका न होइ, तातैं आक का फूंफदा की ज्यों ऊचे को न उडे असा शरीर होइ सो अगुरुलघु नाम है।

बहुरि **'उपेत्य घातः उपघातः'** अपने घात का नाम है, सो जाके उदय तैं अपने अंगनि तैं अपना घात होइ बडे सींग वा लम्बे स्तन वा मोटा उदर असैं अंग होंइ, सो उपघात नाम है।

बहुरि जाके उदय तैं औरनि का घात करै असे तीखे सींग वा नख वा सांप आदिक कै डाढ इत्यादिक अवयव होंहि, सो परघात नाम है।

बहुरि जाके उदय तैं आतापरूप शरीर निपजै, सो आतप नाम है। सो याका उदय सूर्य बिम्ब के विषैं उपजै बादरपर्याप्त पृथ्वीकायिक जीव तिनही के पाइए है। बहुरि जाके उदय तैं उद्योतरूप शरीर निपजै, सो उद्योत नाम है, याका उदय चंद्रमा का बिंब वा आग्या जीव इत्यादिक कैं है। बहुरि विहाय कहिये आकाश, तिस विषैं गमन करने को कारण, सो विहायोगति नाम है। सो मनोज्ञ-अमनोज्ञरूप प्रशस्त-अप्रशस्त के भेद तैं दोय प्रकार है। बहुरि जाके उदय तैं बेइंद्रियादिक विषैं जन्म होइ, सो त्रस नाम है। बहुरि जाके उदय तैं और कौं रोकै, आप औरनि करि रुकै असा शरीर निपजै, सो बादर नाम है।

बहुरि जाके उदय तैं आहार आदि पर्याप्ति निपजै, सो पर्याप्ति नाम है। सो पर्याति छह प्रकार हैं–आहार, शरीर, इंद्रिय, श्वासोसास, भाषा, मन।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि शरीर नामकर्म के उदय तै निपज्या शरीर, सो जाके उदय तैं एक शरीर एक आत्मा के उपभोग का कारण होइ, एक शरीर विषैं एक ही आत्मा हो, सो प्रत्येक नाम है ।

बहुरि जाके उदय तैं रसादिक धातु अर उपधातु अपने-अपने ठिकाने स्थिर रहैं, सो स्थिर नाम है । उक्तं च—

रसाद्रक्तं ततो मासं, मासान्मेदः प्रवर्तते ।
मेदतोऽस्थि ततो मज्जं, मज्जाच्छुक्रं ततः प्रजाः ।।१।।
वातः पित्तं तथा श्लेष्मा, सिरा स्नायुश्च चर्म च ।
जठराग्निरिति प्राज्ञैः, प्रोक्ताः सप्तोपधातवः ।।२।।

अर्थ – रस तैं तौ लोही हो है । लोही तैं मांस हो है । मांस तैं मेद हो है । मेद तैं हाड़ हो है । हाड तैं मीजी हो है । मीजी तैं शुक्र हो है । शुक्र तैं प्रसूतिरूप प्रजा की प्रवृत्ति हो है । ए सात धातु असैं अनुक्रम तैं परिणवैं हैं । ए सात धातु तीस दिन में होइ, तौ एक धातु च्यारि दिन अर दोय दिन का सातवां भाग विषैं होइ, असैं जानना । बहुरि वात, पित्त, श्लेष्म, सिरा, स्नायु, चर्म, उदराग्नि—ए सात उपधातु हैं । सो इनिका शरीर विषै जहां ठिकाना है तहां ही स्थिर रहैं सो स्थिर-प्रकृति के उदय तैं रहै हैं ।

बहुरि जाके उदय तैं मनोज्ञ-रमणीय-प्रशस्त मस्तकादिक-शरीर के अवयव होइ, सो शुभ नाम है । बहुरि जाके उदय तैं अन्यजीव आप तैं प्रीति करैं, सो सुभग नाम है । बहुरि जाके उदय तैं मनोज्ञ-सुहावना स्वर शब्द निपजै, सो सुस्वर नाम है । बहुरि जाके उदय तैं प्रभा-कांति-सहित-शरीर निपजै, सो आदेय नाम है । बहुरि जाके उदय तैं अपना पुण्यरूप पवित्र गुण जगत विषैं प्रकट होइ, जस होइ, सो यशस्कीर्ति नाम है ।

बहुरि जाके उदय तैं यथायोग्य निपजै सो निर्माण नाम है । सो दोय प्रकार है—स्थान निर्माण, प्रमाणनिर्माण । तहां जाति नामकर्म के उदय की सापेक्ष कौं लीएं नेत्रादिक जिस ठिकाने चाहिए तिस ही ठिकाने निपजावै, सो स्थान-निर्माण है । जो नेत्रादिक का प्रमाण चाहिऐ तितने ही निपजावै, सो प्रमाणनिर्माण है । बहुरि श्रीमत-अर्हंत-पद को कारण सो तीर्थंकर नाम है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जाके उदय तैं एकेंद्रिय विषैं उपजै, सो स्थावर नाम है। बहुरि जाके उदय तैं काहू करि रुकै नाहीं, काहू कौं रोकै नाहीं; असा सूक्ष्म शरीर होइ, सो सूक्ष्म नाम है। बहुरि छह पर्याप्ति का अभाव कौं कारण असा अपर्याप्ति नाम है। पर्याप्ति नाम पूर्ण होने का है, सो पूर्ण होने न देवे। बहुरि एक शरीर विषैं बहुत अनंत आत्मा पाइए सो एक शरीर अनंत जीवनि के उपभोग कौं कारण, सो साधारण नाम है। याका उदय निगोद जीवनि ही कैं है। बहुरि धातु वा उपधातु अपने अपने ठिकाने स्थिर न रहै, चलायमान जाके उदय तैं होइ, सो अस्थिर नाम है। बहुरि जाके उदय तैं अमनोज्ञ-अप्रशस्त-बुरे-मस्तकादि अवयव निपजै, सो अशुभ नाम है। बहुरि जाके उदय तैं रूपादिक गुण संयुक्त होत संतैं भी अन्य जन अप्रीति करैं, प्रीति न करैं, सो दुर्भग नाम। बहुरि जाके उदय तैं अमनोज्ञ-असुहावना स्वर शब्द निपजै, सो दुःस्वर नाम है। बहुरि जाके उदय तैं प्रभा कांति करि रहित शरीर निपजै, सो अनादेय नाम है। बहुरि जाके उदय तैं पुण्य गुण तैं उलटा अपजस जगत विषैं प्रगट होइ सो अयशस्कीर्ति नाम है।

बहुरि जाके उदय तैं लोकपूजित कुल विषैं जन्म होइ, सो उच्च-गोत्र है। बहुरि जाके उदय तैं लोक-निंदित कुल विषैं जन्म होइ, सो नीच-गोत्र है।

बहुरि जाके उदय तैं दीया चाहैं परि देवे नाहीं, सो दानांतराय है। बहुरि जाके उदय तैं लाभ को चाहैं परन्तु लाभ होइ नाहीं, सो लाभांतराय है। बहुरि जाके उदय तैं पुष्पादिक के भोगने को चाहैं परन्तु भोगवै नाहीं, सो भोगांतराय है। बहुरि जाके उदय तैं स्त्र्यादिक को बारम्बार भोगने को चाहैं परन्तु उपभोग होइ नाही, सो उपभोगांतराय है। बहुरि जाके उदय तैं अपनी शक्ति प्रकट करने को चाहैं, परन्तु शक्ति प्रकट न होइ, सो वीर्यांतराय है। सो '**दानस्य अंतरायः**' इत्यादिक विषैं षष्ठी-तत्पुरुष-समास जानना। जातैं दानादिक परिणमन का विघ्न कौं कारण अंतराय कर्म है, असैं उत्तर प्रकृतिनि की निरुक्ति कही ॥३३॥

आगैं नामकर्म की उत्तर-प्रकृतिनि विषैं अभेद-विवक्षा करि जे प्रकृति गर्भित हो है, तिनकौं दिखावै हैं—

देहे अविणाभावी, बंधणसंघाद इदि अबंधुदया।
वण्णचउक्केऽभिण्णे, गहिदे चत्तारि बंधुदये ॥३४॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

देहे अविनाभाविनो, बंधनसंघातौ इति अबंधोदयौ ।
वर्णचतुष्केऽभिन्ने, गृहीते चतस्रः बंधोदययोः ।।३४।।

टीका – देह जो पंच प्रकार शरीर नामा नामकर्म, तिसविषैं अपना-अपना बंधन अर अपना-अपना संघात अविनाभाव है । उस बिना वह न होइ, सो अविनाभावी कहिए । इस कारण तैं पंच बंधन अर पंच संघात – ए दश प्रकृति बंधरूप वा उदयरूप नाहीं हैं ।

भावार्थ – बंध और उदय विषैं ए दशौ जुदे न कहे शरीर प्रकृति विषैं ही गर्भित कीए हैं । बहुरि वर्णादिक च्यारि वर्ण, गंध, रस, स्पर्श इन विषैं अभेदविवक्षा करि इनके बीस भेद ग्रहण कीए, ए मूल च्यारि ही प्रकृति बंध अर उदय विषैं कहिए । तिनके बीस भेद, मूल च्यारि भेद विषैं गर्भित कीए; तातैं सोलह प्रकृति बंध अर उदय में जुदी न कही ।।३४।।

असें होते ते बंधरूप वा उदयरूप वा सत्तारूप प्रकृति केती-केती है ? सो च्यारि गाथानि करि कहैं हैं—

पंच णव दोण्णि छव्वीसमवि य चउरो कमेण सत्तट्ठी ।
दोण्णि य पंच य भणिया, एदाओ बंधपयडीओ ।।३५।।

पंच नव द्वौ षड्विंशतिरपि, च चतस्रः क्रमेण सप्तषष्टिः ।
द्वौ च पंच च भणिता, एता बंधप्रकृतयः ।।३५।।

टीका – पांच ज्ञानावरण, नव दर्शनावरण, दोय वेदनीय, छव्वीस मोहनीय– जातैं मिश्र प्रकृति अर सम्यक्त्व प्रकृति ए दोऊ बंध विषैं नाहीं है उदय अर सत्त्व ही विषैं पाइए हैं । च्यारि आयु, सतसठि नाम-जातै तरेणवैं मेंस्यो दश बंधन-संघात अर सोलह वर्णादिक ए छव्वीस गर्भित करि घटाई । दोय-गोत्र, पांच-अंतराय ए सर्व एक सौ बीस प्रकृति बंध योग्य सर्वज्ञदेव कही है ।।३५।।

आगैं उदय-प्रकृतिनि कौं कहै हैं—

पंच णव दोण्णि अट्ठा, वीसं चउरो कमेण सत्तट्ठी ।
दोण्णि य पंच य भणिया, एदाओ उदयपयडीओ ।।३६।।

पंच नव द्वौ अष्टाविंशतिः चतस्रः क्रमेण सप्तषष्टिः ।
द्वौ च पंच च भणिता, एता उदयप्रकृतयः ।।३६।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – ज्ञानावरणादिक कर्मनि की अनुक्रम तैं पांच, नव, दोय, अठाईस, च्यारि, सतसठि, दोय, पांच प्रकृति मिलि करि एकसौ बाईस उदय होने योग्य प्रकृति कही है ॥३६॥

आगें ते बंधरूप वा उदयरूप प्रकृतिनि की भेदविवक्षा करि वा अभेदविवक्षा करि संख्या कहैं हैं—

भेदे छादालसयं, इदरे बंधे हवंति वीससयं ।
भेदे सव्वे उदये, बावीससयं अभेदम्हि ॥३७॥

भेदे षट्चत्वारिंशच्छतमितरे बंधे भवंति विंशशतं ।
भेदे सर्वे उदये, द्वाविंशशतमभेदे ॥३७॥

टीका – बंध विषैं भेदविवक्षा करि गर्भित न कीजिए तो मिश्र अर सम्यक्त्व प्रकृति बिना एक सौ छियालीस प्रकृति हैं । अभेदविवक्षा करि, गर्भित कीजिए तौ एक सौ बीस प्रकृति हैं । बहुरि उदय विषैं भेदविवक्षा करि सर्व एक सौ अठतालीस प्रकृति हैं । अभेदविवक्षा करि एक सौ बाईस प्रकृति हैं ॥३७॥

आगें सत्त्व प्रकृतिनि कौं कहैं हैं—

पंच णव दोण्णि अट्ठावीसं चउरो कमेण तेणउदी ।
दोण्णि य पंच य भणिदा, एदाओ सत्तपयडीओ ॥३८॥

पंच नव द्वौ अष्टाविंशतिः चत्वारः क्रमेण त्रिनवतिः ।
द्वौ च पंच च भणिताः, एताः सत्त्वप्रकृतयः ॥३८॥

टीका – ज्ञानावरणादिक कर्मनि की अनुक्रम तैं पांच, नव, दोय, अठाईस, च्यारि, तरेणवै, दोय, पांच–ए सर्व प्रकृति मिलि करि एक सौ अठतालीस सत्त्वरूप प्रकृति सर्वज्ञ देवनि करि कही हैं ॥३८॥

पूर्वे जे घातिकर्म कहे थे—तिनके दोय भेद–सर्वघाति अर देशघाति तहां सर्वघाति-प्रकृतनि कौं कहैं हैं—

केवलणाणावरणं, दंसणछक्कं कसायबारसयं ।
मिच्छं च सव्वघादी, समामिच्छं अबंधह्मि ॥३९॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

केवलज्ञानावरणं, दर्शनषट्कं कषायद्वादशकं ।
मिथ्यात्वं च सर्वघातीनि, सम्यग्मिथ्यात्वमबंधे ।।३९।।

टीका – केवलज्ञानावरण, केवलदर्शनावरण, स्त्यानगृद्धि कौं आदि देकरि पांच निद्रा, अनंतानुबंधी-अप्रत्याख्यान-प्रत्याख्यान-क्रोध, मान, माया, लोभ (१२), मिथ्यात्व ए सर्व बीस प्रकृति सर्वघाति हैं । बहुरि सम्यग्मिथ्यात्व बंध विषै नाहीं हैं । उदय अर सत्व विषैं ही जुदी ही जाति की सर्वघाति है, तातैं बंध विषैं बीस प्रकृति सर्वघाति हैं । उदय सत्व विषैं इकईस प्रकृति सर्वघाति हैं । जिनके उदय होतैं जीव का गुण सर्वथा प्रगट न होइ । जैसैं केवलज्ञानावरण का उदय होतैं केवलज्ञान प्रगट न होइ, सो असी सर्वघाति-प्रकृति जाननी ।।३९।।

आगैं देशघाति-प्रकृतिनि कौं कहैं हैं—

णाणावरणचउक्कं, तिदंसणं सम्मगं च संजलणं ।
णव णोकसाय विग्घं छव्वीसा देसघादीओ[१] ।।४०।।

ज्ञानावरणचतुष्कं, त्रिदर्शनं सम्यक्त्वं च संज्वलनं ।
नव नोकषाया विघ्नं, षड्विंशतिः देशघातीनि ।।४०।।

टीका – मति-श्रुत-अवधि-मनःपर्यय ज्ञानावरण च्यारि, चक्षु-अचक्षु-अवधि-दर्शनावरण, सम्यक्त्वप्रकृति, संज्वलन क्रोध-मान-माया-लोभ, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेद ए नव, दान-लाभ-भोग-उपभोग-वीर्य अंतराय पांच – ए छव्बीस देशघाति-प्रकृति हैं । जिनके उदय होत संतैं भी जीव का गुण प्रगट होइ । जैसैं बारहवां गुणस्थान पर्यंत मतिज्ञानावरणादिक का उदय भी पाइए अर मतिज्ञानादिक भी पाइए सो देशघाति जाननी ।।४०।।

१–इसकी टिप्पणी ९८ पृष्ठ पर है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अैसैं घाति-कर्मनि का देशघाति अर सर्वघाति भेद कहि करि आगैं अघाति-कर्मनि के प्रशस्त-अप्रशस्त दोय भेद हैं, तिनिविषैं प्रशस्त-प्रकृतनि कौं दोय गाथानि करि कहैं हैं—

सादं तिण्णेवाऊ, उच्चं णरसुरदुगं च पंचिंदी ।
देहा बंधणसंघा, दंगोवंगाइं वण्णचओ ॥४१॥

समचउरवज्जरिसहं, उवघादूणगुरुछक्क सग्गमणं ।
तसबारसट्ठसट्ठी, बादालमभेददो सत्था ॥४२॥

सातं त्रीण्येवायूंषि, उच्चं नरसुरद्विकं च पंचेंद्रिय ।
देहा बंधनसंघातांगोपांगानि वर्णचतुष्कं ॥४१॥

समचतुरस्रवज्रर्षभ, मुपघातोनागुरुषट्कं सद्गमनं ।
त्रसद्वादशाष्टषष्टिः, द्वाचत्वारिंशदभेदतः शस्ताः ॥४२॥

टीका – साता वेदनीय, तिर्यंच-मनुष्य-देव-आयु, उच्चगोत्र, मनुष्यगति-मनुष्य-गत्यानुपूर्वी, देवगति-देवगत्यानुपूर्वी, पंचेंद्री जाति, पंच शरीर, पंच बंधन, पंच संघात,

गाथा ३९–४० के आधार पर देशघाति एवं सर्वघाति प्रकृतियाँ

क्रम	मूल-कर्म	देशघाति प्रकृतियाँ	सर्वघाती प्रकृतियाँ
१	ज्ञानावरण	मति, श्रुत, अवधि, मनः पर्यय ज्ञानावरण	केवलज्ञानावरण
२	दर्शनावरण	चक्षु, अचक्षु, अवधि दर्शनावरण	केवलज्ञाना, निद्रा, निद्रा-निद्रा, प्रचला, प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृद्धि
३	मोहनीय	सम्यक्त्व, ४ संज्वलन कषाय, ९ नो कषाय	अनंतानुबंधी ४, अप्रत्याख्यानावरण ४, प्रत्याख्यानावरण ४ मिथ्यात्व १, सम्यग्मिथ्यात्व १
४	अंतराय	दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्यान्तराय	
योग	४	२६	२१

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तीन अंगोपांग, शुभवर्ण-गंध रस-स्पर्श बीस, समचतुरस्र संस्थान, वज्रवृषभ नाराच संहनन, अगुरुलघु, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, प्रशस्तविहायोगति, त्रस, बादर पर्याप्त, प्रत्येक शरीर, स्थिर, शुभ, सुभग सुस्वर, आदेय, यशस्कीर्ति, निर्माण, तीर्थंकर ए अडसठि (६८) प्रकृति भेद अपेक्षा करि प्रशस्त-पुण्यरूप हैं। अभेदविवक्षा करि पांच-बंधन, पांच-संघात, सोला वर्णादिक घटाए बियालीस प्रकृति प्रशस्त हैं। सूत्र विषैं भी कह्या है–'**सद्वेद्य शुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यं**'[1] ।।४१-४२।।

आगैं अप्रशस्त-प्रकृतिनि कौ दोय गाथानि करि कहैं हैं–

घादी णीचमसादं, णिरयाऊ णिरयतिरियदुग जादी।
संठाणसंहदीणं, चदुपणपणगं च वण्णचओ ।।४३।।

उवघादमसग्गमणं, थावरदसयं च अप्पसत्था[2] हु।
बंधुदयं पडि भेदे, अडणउदि सयं दुचदुरसीदिदरे[3] ।।४४।।

घातीनि नीचमसातं, निरयायुः निरयतिर्यग्द्विकं जाति।
संस्थानसंहतानां, चतुःपंचपंचक च वर्णचतुष्कं ।।४३।।

उपघातमसद्गमनं, स्थावरदशकं च अप्रशस्ता हि।
बंधोदयं प्रति भेदे, अष्टनवतिः शतं द्विचतुरशीतिरितरे ।।४४।।

टीका – घातिकर्म सर्व अप्रशस्त ही हैं, सो तिनकी सैंतालीस प्रकृति, अर नीच गोत्र, असातावेदनीय, नरक-आयु, नरक-गति-नरकगत्यानुपूर्वी, तिर्यंचगति-तिर्यंचगत्यानुपूर्वी, एकेंद्रियादिक च्यारि जाति, न्यग्रोध परिमंडलादिक पांच संस्थान, वज्रनाराचादिक पंच संहनन, अशुभ वर्ण-गंध-रस-स्पर्श बीस अथवा च्यारि उपघात, अप्रशस्त विहायोगति, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, अयशस्कीर्ति ए अप्रशस्त प्रकृति हैं। ते भेदविवक्षा करि बंधरूप अठ्याणवै (९८) प्रकृति हैं। उदयरूप एकशत (१००) प्रकृति हैं। अभेदविवक्षा करि वर्णादि विषैं सोलह घटाए बंधरूप बियासी (८२) प्रकृति हैं। उदयरूप चौरासी (८४) प्रकृति हैं। बहुरि सत्तारूप सौ (१००) प्रकृति हैं ।।४४।।

१–मोक्षशास्त्र : अध्याय ८, सूत्र २५।
२–'अतोऽन्यत्पापं' मोक्षशास्त्र : अध्याय ८, सूत्र २६।
३–टिप्पणी १०० पृष्ठ पर है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगैं कषायनि का कार्य कहैं हैं—

पढमादिया कसाया, सम्मत्तं देससयलचारित्तं ।
जहखादं घादंति य, गुणणामा होंति सेसा वि ॥४५॥

प्रथमादिकाः कषायाः, सम्यक्त्वं देशसकलचारित्रं ।
यथाख्यातं घातयंति च, गुणनामानो भवंति शेषा अपि ॥४५॥

टीका – अनंतानुबंधी-कषाय सम्यक्त्व कौं घातै है । अप्रत्याख्यान-कषाय देशचारित्र कौं घातै है । प्रत्याख्यानकषाय सकल-चारित्र कौं घातै हैं । संज्वलन-कषाय यथाख्यात-चारित्र कौं घातै हैं । तातैं ए सार्थक गुणसहित नाम के धारक हैं । सोई कहिए है—

अनंत संसार कौं कारण है तातैं **'अनंत'** कहिए मिथ्यात्व, ताहि **'अनुबध्नंति'** कहिए संबन्धरूप करैं ते अनंतानुबंधी है । बहुरि **'अप्रत्याख्यान'** कहिए ईषत् देश-चारित्र, ताहि **'कषंति'** कहिए घातैं, ते अप्रत्याख्यान कषाय हैं । बहुरि **'प्रत्याख्यान'** कहिए सकल-संयम, ताहि **'कषंति'** कहिए घातैं, ते प्रत्याख्यान कषाय हैं । **'सं'** कहिए

गाथा ४१, ४२, ४३, ४४ के आधार पर प्रशस्त तथा अप्रशस्त प्रकृतियां

प्रशस्त प्रकृतियां		अप्रशस्त प्रकृतियां	
भेद	**अभेद**	**भेद**	**अभेद**
सातावे०, मनुष्य-तिर्यंच-देवायु, उच्चगोत्र, मनुष्य-देवगति-गत्यानुपूर्वी, पंचेन्द्रिय, ५ शरीर, ५ बंधन, ५ संघात, ३ अंगोपांग, शुभ स्पर्श रस गंध वर्ण सम्बंधी २०, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रवृषभ नाराज संहनन, अगुरुलघु, परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, प्रशस्त-विहायोगति, त्रसादि १२ ।	५ शरीर, ५ बंधन, ५ संघात में से ५, २० स्पर्श-रस-गंध वर्ण में से ४ । इस प्रकार १० और १६ =२६ कम करने से शेष ४२ ।	ज्ञाना० ५, दर्शना० ९, मोह २८, अंतराय ५, नीचगोत्र, असातावे०, नरकायु, नरक तिर्यंच गति और गत्यानु-पूर्वी, इन्द्रिय चतुष्क, शेष ५ संस्थान, शेष ५ संहनन, अशुभ वर्ण-गंध-रस-स्पर्श सम्बंधी २०, उपघात, अप्र-शस्त विहायो०, स्थावरादि १० ।	अशुभ स्पर्शादि २० में से ४ ग्रहण करने पर १६ कम हो जाने से शेष ८२ ।
योग– ६८	४२	९८	८२

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

एकीभूत होइ संयम की साथ **'ज्वलंति'** कहिए प्रकाशरूप रहै, अथवा जिनकौं होतसंते भी संयम **'ज्वलंति'** कहिए प्रगट रहै, ते संज्वलन-कषाय हैं। असैं ही अवशेष रही नोकषाय वा ज्ञानावरणादिक, ते भी सार्थक नाम के धारक हैं। सो पूर्व निरुक्ति करि कहे ही हैं ।।४५।।

आगैं संज्वलनादिक च्यारि कषायनि का वासनाकाल कहैं हैं—

अंतोमुहुत्त पक्खं, छम्मासं संखऽसंखणंतभवं ।
संजलणमादियाणं, वासणकालो दु णियमेण ।।४६।।

अंतर्मुहूर्तः पक्षः, षण्मासाः संख्यासंख्यानंतभवाः ।
संज्वलनाद्यानां, वासनाकालः तु नियमेन ।।४६।।

टीका – उदय का अभाव होत संतै भी जो कषायनि का संस्कार जितनैं काल रहै, ताका नाम वासनाकाल है। सो संज्वलन-कषायनि का वासनाकाल अंतर्मुहूर्तमात्र है। प्रत्याख्यान कषायनि का एक पक्ष है। अप्रत्याख्यान कषायनि का छह महिना है। अनंतानुबंधी कषायनि का संख्यातभव, असंख्यातभव, अनंतभव पर्यंत वासनाकाल है। जैसैं काहू पुरुष ने क्रोध कीया, पीछे क्रोध मिटि और कार्य विषैं लग्या, तहां क्रोध का उदय तौ नाहीं, परन्तु वासनाकाल रहै। तेतैं जीहस्यों क्रोध कीया था, तीहस्यों क्षमारूप भी न प्रवर्तै, सो असैं वासनाकाल पूर्वोक्त प्रमाण सब कषायनि का नियमकरि जानना ।।४६।।

आगैं पुद्गलविपाकी प्रकृतिनि कौं कहैं हैं—

देहादी फासंता, पण्णासा णिमिणतावजुगलं च ।
थिरसुहपत्तेयदुगं, अगुरुतियं पोग्गलविवाई ।।४७।।

देहादयः स्पर्शांताः, पंचाशत् निर्माणातापयुगलं च ।
स्थिरशुभप्रत्येकद्विक, मगुरुत्रयं पुद्गलविपाकिन्यः ।।४७।।

टीका – पांच शरीर, पांच बंधन, पांच संघात, छह संस्थान, तीन अंगोपांग, छह संहनन, पंच वर्ण, दोय गंध, पांच रस, आठ स्पर्श-ए पचास अर निर्माण, आतप, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, प्रत्येक, साधारण, अगुरुलघु, उपघात, परघात, ए बारह–असैं सर्व बासठि प्रकृति पुद्गलविपाकी हैं । पुद्गल ही विषैं इनिका उदय है। जैसैं–शरीर-प्रकृति के उदय तैं पुद्गल ही शरीर रूप होइ परिणवै असैं सब प्रकृतिनि का स्वरूप जानना ।।४७।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगैं भवविपाकी, क्षेत्रविपाकी, जीवविपाकी प्रकृतिनि कौं कहैं हैं—

आऊणि भवविवाई, खेत्तविवाई य आणुपुव्वीओ ।
अट्ठत्तरि अवसेसा, जीवविवाई[1] मुणेयव्वा ।।४८।।

आयूंषि भवविपाकीनि, क्षेत्रविपाकीनि च आनुपूर्व्याणि ।
अष्टसप्ततिरवशिष्टा, जीवविपाकिन्यः मंतव्याः ।।४८।।

टीका – च्यारि आयु कर्म की प्रकृति भवविपाकी हैं; जातैं मनुष्यादिक पर्याय ही विषैं इनिका उदय है । बहुरि च्यारि आनुपूर्वी क्षेत्रविपाकी हैं, जातैं जीव कौं परलोक कौं गमन करतैं क्षेत्र ही विषैं इनिका उदय है । बहुरि अवशेष रहीं अठहत्तर प्रकृति ते जीव-विपाकी हैं; जातैं नरकादिक जीव के पर्याय तिनकौं उपजावने कौं कारण हैं; तातैं जीवविपाकी कहिए ।।४८।।

ते जीव-विपाकी कौन प्रकृति हैं ? सो कहिए—

वेदणियगोदघादी, णेकावण्णं तु णामपयडीणं ।
सत्तावीसं चेदे, अट्ठत्तरि जीवविवाई (ओ) ।।४९।।

वेदनीयगोत्रघाति, नामेकपंचाशत्तु नामप्रकृतीनां ।
सप्तविंशतिश्चैता अष्टसप्ततिः जीवविपाकिन्यः ।।४९।।

टीका – वेदनीय दोय, गोत्र दोय, घाति कर्मनि की प्रकृति सैतालीस (४७) – इक्यावन तौ ए भई, सत्ताईस नाम की प्रकृति ए सर्व अठहत्तर प्रकृति जीव-विपाकी हैं ।।४९।।

ते सत्ताईस नामकर्म की प्रकृति कौन ? सो कहैं हैं—

तित्थयरं उस्सासं, बादरपज्जत्तसुस्सरादेज्जं ।
जसतसविहायसुभगदु, चउगइ पणजाइ सगवीसं ।।५०।।

तीर्थंकरमुच्छ्वासं, बादरपर्याप्तसुस्वरादेयं ।
यशस्त्रसविहायस्सुभगद्वयं, चतुर्गतयः पंचजातयः सप्तविंशतिः ।।५०।।

१–टिप्पणी १०५ पृष्ठ पर है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – तीर्थंकर, उच्छ्वास, बादर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, सुस्वर, दुःस्वर, आदेय, अनादेय, यशस्कीर्ति, अयशस्कीर्ति, त्रस, स्थावर, प्रशस्त विहायोगति, अप्रशस्त विहायोगति, सुभग, दुर्भग, च्यारि गति, पंच जाति ए नामकर्म की सत्ताईस प्रकृति जीवविपाकी हैं ।।५०।।

इनही कौं और अनुक्रम तैं कहैं हैं –

गदि जादी उस्सासं, विहायगदि तसतियाण जुगलं च ।
सुभगादिचउज्जुगलं, तित्थयरं चेदि सगवीसं ।।५१।।

गतिः जातिरुच्छ्वासं, विहायोगतिस्त्रसत्रयाणां युगलं च ।
सुभगादिचतुर्युगलं, तीर्थंकरं चेति सप्तविंशतिः ।।५१।।

टीका – च्यारि गति, पांच जाति, उच्छ्वास, विहायोगति-त्रस-बादर-पर्याप्त इनिका युगल तिनकी आठ प्रकृति, सुभग-सुस्वर-आदेय यशस्कीर्ति इनके युगल तिनकी प्रकृति आठ, तीर्थंकर असैं नामकर्म की सत्ताईस प्रकृति जीवविपाकी जाननी ।

इहां सुननेवाले श्रोता तीन प्रकार हैं–अव्युत्पन्न, अवगताशेषविवक्षितपदार्थ, एकदेशतोऽवगतविवक्षितपदार्थ ।

तहां पहिला अव्युत्पन्न है, सो तौ मूर्खपनै तैं विवक्षित-पदार्थ कौं विचारै ही नाहीं–'यहु असैं ही है' असी यथार्थ-प्रतीति की वाकै अप्राप्ति है । जैसैं गमन करता पुरुष कैं तृणौं का स्पर्श भया, तहां किछू वाकैं तृणों का विचार नाही, तैसैं अव्युत्पन्न श्रोता सुनै है, पर वाकैं विचार नाही । सो वाकैं तो अनध्यवसाय पाइए है ।

बहुरि जीहिं अपनी बुद्धि तैं सर्व कह्या अर्थ जान्या, असा दूसरा श्रोता, सो संशय उपजावै है । जैसैं काहू नै खेत विषैं दूरि तैं पुरुषाकार देखि संदेह कीया, जो यहु माटी का स्थाणु है, कि पुरुष है, तैसैं जो यहु अर्थ सुने है, तहां याकै सामान्य भाव तौ प्रत्यक्ष है । विशेष भाव अतिशय-ज्ञान के अभाव तैं प्रत्यक्ष नाहीं है, अर यहु दोऊ का विचार करै, तहां 'असैं है कि असैं है' असा संशय कौं उपजावै ही उपजावै ।

अथवा कह्या अर्थ और ही, ताकौ और प्रकार ग्रहण करि विपर्यय रूप प्रवर्तै है । जैसैं 'सीप का खंड विषैं रूपा है' असा मानना; तैसैं याके सामान्य तौ प्रत्यक्ष है, विशेष प्रत्यक्ष नाहीं, अर याकैं विपरीत विचार हो है; तातैं कहे अर्थ कौं और प्रकार निश्चय करै है । असैं इस दूसरा श्रोता के संशय अर विपर्यय ए दोऊ पाइए हैं ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जीहिं एकोदेशपनैं कह्या अर्थ कौं जान्या अैसा तीसरा श्रोता सो भी दूसरे की ज्यौं संशय अर विपर्यय रूप प्रवर्तै हैं, तातैं अयथार्थ निवारनैं के निमित्ति, यथार्थ प्ररूपणा के निमित्ति, संशय के नाश होने निमित्त, तत्त्व के अवधारने के निमित्त, सामान्यादिक भेद वा भेदनि के भेदरूप कर्म कहे तिनिकौं नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव निक्षेपनि करि कहिए है। जो न कहिए तौ तिनिका मन संशयादिक रहित न होइ, तातैं कहिए है।

सो प्रथम ही नामादि निक्षेपनि का स्वरूप कहिए है—

अतद्गुणेषु भावेषु व्यवहारप्रसिद्धये।
यत्संज्ञाकर्म तन्नाम नरेच्छावशवर्तनात् ॥१॥

साकारे वा निराकारे काष्ठादौ यन्निवेशनं।
सोऽयमित्यवधानेन स्थापना सा निगद्यते ॥२॥

आगामि गुणयोग्योऽर्थो द्रव्यं न्यासस्य गोचरः।
तत्कालपर्ययाक्रांतं वस्तुभावोऽभिधीयते ॥३॥

जामैं तद्गुण नाहीं अैसा जो पदार्थ, ता विषैं जो व्यवहार की सिद्धि के निमित्त मनुष्य अपनी इच्छा के वश तैं संज्ञा करै तहां नाम निक्षेप है। बहुरि तदाकार वा अतदाकार काष्ठादिक विषैं सो पदार्थ यहु है, अैसा अपना परिणाम करि स्थापना करै, तहां स्थापनानिक्षेप है। बहुरि जामैं आगामी काल विषैं गुण प्रगट होइगा, अैसा पदार्थ द्रव्य निक्षेप के गोचर है। बहुरि जाके विषैं वर्तमान काल विषैं तद्गुणरूप पर्याय पाइए सो वस्तु भाव अैसा कहिए।

इहां उदाहरण कहिए हैं—जैसें—जहां पृथ्वी का स्वामी राजा सो विवक्षित है। तहां मनुष्यों ने अपनी इच्छा के वश तैं व्यवहार की सिद्धि के निमित्त किसी पुरुष का नाम राजा धरचा सो तिसकौं जो राजा कहिए, सो नाम निक्षेप है।

बहुरि काष्ठ-चित्रादि का तदाकार वा अतदाकार विषैं यहु राजा है—अैसा स्थापि चित्र, काष्ठादि का बन्या आकार कौं राजा कहिए, तहां स्थापना निक्षेप है। तहां तदाकार-स्थापना राजा का-सा आकार होइ तहां जाननी। अतदाकार-स्थापना जहां राजा का-सा आकार नाहीं अर राजा स्थापिए तहां जाननी।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जो अगामी काल विषैं राजा होइगा ताकौ राजा कहिए, तहां द्रव्य निक्षेप है ।

बहुरि वर्तमान में जो पृथ्वी का स्वामी है, ताकौं राजा कहिए, तहां भाव-निक्षेप है ।

अैसैं ही जो विवक्षित होइ ताके नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव निक्षेप जानने । सो इहां कर्म विवक्षित है, सो याके चौंतीस गाथानि करि च्यारि-निक्षेप कहिए है ।

सो प्रथम ही सर्व ज्ञानावरणादिक समुदाय रूप सामान्य कर्म ताका नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव कहिए है—

णामट्ठवणा दवियं, भावो त्ति चउव्विहं हवे कम्मं ।
पयडी पावं कम्मं, मलंति सण्णा हु णाममलं ॥५२॥

नाम स्थापना द्रव्यं, भाव इति चतुर्विधं भवेत्कर्म ।
प्रकृतिः पापं कर्म मलमिति संज्ञा हि नाममलं ॥५२॥

टीका – सामान्य कर्म सो नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव भेद तैं च्यारि प्रकार है । तहां प्रकृति वा पाप, वा कर्म, वा मल अैसा जो नाम सो '**नाममलं**' कहिए नाम निक्षेप रूप कर्म जानना ।

गाथा ४७, ४८, ४९, ५०, ५१ के आधार पर विपाककृत कर्मप्रकृति भेद

पुद्गल-विपाकी	भाव-विपाकी	क्षेत्र-विपाकी	जीव-विपाकी
५ शरीरों से लेकर स्पर्श नामकर्म तक ५०, निर्माण, आतप, उद्योत, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, प्रत्येक, साधारण, अगुरुलघु, उपघात, परघात	नरकायु, तिर्यंचायु, मनुष्यायु, देवायु	नरकगत्यानु० तिर्यंचगत्यानु० मनुष्यगत्यानु० देवगत्यानु०	वेदनीय २, गोत्र २, ज्ञाना० ५, दर्श० ९, मोहनीय २८, अंतराय ५, नामकर्म की २७ (तीर्थंकर, उच्छ्वास, बादर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, सुस्वर, दुस्वर, आदेय, अनादेय, यशस्कीर्ति, अयशस्कीर्ति, त्रस, स्थावर, प्रशस्त, अप्रशस्त, विहायोगति, सुभग, दुर्भग, गति ४, जाति५)
कुल योग—६२	४	४	७८

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सरिसासरिसे दव्वे, मदिणा जीवट्ठियं खु जं कम्मं ।
तं एदत्ति पदिट्ठा, ठवणा तं ठावणाकम्मं ।।५३।।

सदृशासदृशे द्रव्ये, मतिना जीवस्थितं खलु यत्कर्म ।
तदेतदिति प्रतिष्ठा, स्थापना तत्स्थापनाकर्म ।।५३।।

टीका – बहुरि सदृश कहिए कर्म सारीखा, असदृश कहिए कर्म सारीखा नाही असा कोई द्रव्य ताके विषैं बुद्धि करि असी प्रतिष्ठा-स्थापना कीजिए, जो जीव के समस्त प्रदेशनि का समूह विषैं तिष्ठै है जो सामान्यकर्म सो यहु है । तहां स्थापना-निक्षेप रूप कर्म कहिए है ।।५३।।

दव्वे कम्मं दुविहं, आगमणोआगमंति तप्पढमं ।
कम्मागमपरिजाणुगजीवो उवजोगपरिहीणो ।।५४।।

द्रव्ये कर्म द्विविध, मागमनोआगममिति तत्प्रथमं ।
कर्मागमपरिज्ञायक, जीव उपयोगपरिहीनः ।।५४।।

टीका – बहुरि द्रव्य-निक्षेप रूप कर्म दोय प्रकार है–एक आगम-द्रव्यकर्म, एक नोआगम-द्रव्यकर्म । तहां कर्म का स्वरूप जिस आगम शास्त्र विषैं प्रतिपादन किया होय ऐसे आगम का अर्थ – शब्द का संबंध करि वा ज्ञाता-ज्ञेय का संबंध करि जाननहारा जो जीव होइ अर वर्तमान काल विषैं तिस आगम का अर्थ का अवधारण वा चिंतवन इत्यादि परिणमन रूप उपयोग करि रहित होइ अन्यत्र उपयोग युक्त होइ तहां सो जीव आगम-द्रव्यकर्म है ।।५४।।

जाणगसरीर भवियं, तव्वदिरित्तं तु होदि जं विदियं ।
तत्थ सरीरं तिविहं, तियकालगयंति दो सुगमा ।।५५।।

ज्ञायकशरीरं भावि, तद्व्यतिरिक्तं तु भवति यद्द्वितीयं ।।
तत्र शरीरं त्रिविधं, त्रयकालागतमिति द्वे सुगमे ।।५५।।

टीका — बहुरि दूसरा नोआगम-द्रव्यकर्म है सो तीन प्रकार है — ज्ञायक शरीर, भावि, तद्व्यतिरिक्त, – ए तीन भेद रूप है । तहां ज्ञायक जो कर्मस्वरूप का — जाननहारा जीव ताका जो शरीर, ताकौं ज्ञायकशरीर-नोआगम-द्रव्यकर्म कहिए । तहां ज्ञायकशरीर तीन प्रकार है — भूत, वर्तमान, भावि — असैं

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

त्रिकालगत है। तहां जिस शरीर सहित जीव कर्म-स्वरूप का जाननहारा है, सो वर्तमान-शरीर है। याके पहिलो शरीर – छोडि आयो, सो भूत-शरीर है। आगामी जो शरीर धरेगा, सो भावि-शरीर है। तहां वर्तमान शरीर अर भावि शरीर ए दोऊ सुगम हैं। वर्तमान-शरीर कौं धारैं हो है। भावि-शरीर आगामी-काल विषैं धरैगा ही ।।५५।।

भूत-शरीर छोडकर आया सो कौंन-कौंन प्रकार शरीर का त्यजन हो है, सो इस अपेक्षा करि भूत-शरीर के विशेष कहैं हैं —

भूदं तु चुदं चइदं, चंदति तेधा चुदं सपाकेण ।
पडिदं कदलीघादपरिच्चागेणूणयं होदि ।।५६।।

भूतं तु च्युतं च्यावितं, त्यक्तमिति त्रेधा च्युतं स्वपाकेन ।
पतितं कदलीघातपरित्यागेनोनं भवति ।। ५६ ।।

टीका — ज्ञायक का जो भूत-शरीर है सो तीन प्रकार है च्युत, च्यावित, त्यक्त। तहां अन्य कारण बिना अपने उदय ही तैं जो शरीर पड़ै-विनशै सो च्युत कहिए, सो यहु शरीर कदलीघात वा संन्यास इनकरि 'ऊनः' कहिए रहित जानना ।।५६।।

तहां कदलीघात का लक्षण कहैं हैं —

विसवेयणरत्तक्खय, भयसत्थग्गहणसंकिलेसेहिं ।
उस्सासाहाराणं, णिरोहदो छिज्जदे आऊ ।।५७।।

विषवेदनारक्तक्षय, भयशस्त्रघात संक्लेशैः ।
उच्छ्वासाहारयो, निरोधतः छिद्यते आयुः ।।५७।।

टीका – विष वा तीव्र-वेदना, वा लोही का क्षय, वा तीव्र भय, वा शस्त्र का घात, वा क्रोधादिक-रूप तीव्र-संक्लेश वा उस्वास का रुकना, वा आहार का रुकना इन कारणनि करि जो आयु छिदै-विनशै सो कदलीघात कहिए ।।५७।।

कदलीघादसमेदं, चागविहीणं तु चइदमिदि होदि ।
घादेण अघादेण व, पडिदं चागेण चत्तमिदि ।।५८।।

कदलीघातसमेतं, त्यागविहीनं तु त्यक्तमिति भवति ।
घातेन अघातेन वा, पतितं त्यागेन त्यक्तमिति ।।५८।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – बहुरि ज्ञायक का जो भूत-शरीर सो कदली-घात करि संयुक्त पड्या होइ, नष्ट भया होइ, संन्यास करि रहित होइ, तहां सो शरीर अन्य कारण तैं छूट्या, तातैं च्यावित कहिए। बहुरि कदली-घात करि, वा कदली-घात बिना जो संन्यास करि सहित शरीर नष्ट होइ, सो त्यक्त कहिए। अपने परिणामनि तै संन्यास धारि शरीर छोडा, तातैं त्यक्त कहिए ॥५८॥

सो संन्यास-मरण का तीन विधान कहैं हैं —

भत्तपइण्णाइंगिणि, पाउग्गविधीहिं चत्तमिदि तिविहं।
भत्तपइण्णा तिविहा, जहण्णमज्झिमवरा य तहा ॥५९॥

भक्तप्रतिज्ञेंगिनी प्रायोग्यविधिभिः त्यक्तमिति त्रिविधं।
भक्तप्रतिज्ञा त्रिविधा, जघन्यमध्यमवरा च तथा ॥५९॥

टीका – सो त्यक्त शरीर तीन प्रकार है। जातैं भक्तप्रतिज्ञा, इंगिनी, प्रायोपगमन – ए तीन संन्यास-मरण के विधान हैं। तहां जैसें ज्ञायक का भूत त्यक्त शरीर तीन प्रकार कह्या, तैसें भक्तप्रतिज्ञा के तीन भेद जानने जघन्य, मध्यम, उत्कृष्ट ॥५९॥

तहां इनिके काल का प्रमाण कहैं हैं –

भत्तपइण्णाइविही, जहण्णमंतोमुहुत्तयं होदि।
बारसवरिसा जेट्ठा, तम्मज्झे होदि मज्झिमया ॥६०॥

भक्तप्रतिज्ञादिविधिः, जघन्योऽन्तर्मुहूर्तको भवति।
द्वादशवर्षा ज्येष्ठः, तन्मध्ये भवति मध्यमकः ॥६०॥

टीका – भक्त जो भोजन ताकी प्रतिज्ञा करि संन्यास-मरण होइ, सो भक्त-प्रतिज्ञा कहिए। जिसके काल का प्रमाण जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त मात्र है, उत्कृष्ट बारह वर्ष प्रमाण है। तिनके मध्यवर्ती एक-एक समय बधता सर्व मध्यकाल का प्रमाण जानना – असैं काल के भेद तै तीन भेद कहैं हैं ॥६०॥

इंगिनी प्रायोपगमन-मरण के लक्षण कहैं हैं —

अप्पोवयारवेक्खं, परोवयारूणमिंगिणीमरणं।
सपरोवयाररहीणं, मरणं पाओवगमणमिदि ॥६१॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आत्मोपकारापेक्षं, परोपकारोनमिंगिनीमरणं ।
स्वपरोपकारहीनं, मरणं प्रायोपगमनमिति ।।६१।।

टीका – अपने शरीर का अपने अंगनि तैं उपचार करैं, अन्य किसी जीव करि उपचार-वैयावृत्य न करावै, इस विधान करि संन्यास धारि मरै, सो इंगिनी-मरण है । भक्त प्रतिज्ञावाला अन्य करि भी उपचार करावै था, यहु न करावैं है । बहुरि अन्य जीव करि भी उपचार न करावै अर आप भी अपने हस्तादिक अंगनितैं उपचार न करैं, इस विधान करि संन्यास धारि मरै, सो प्रायोपगमन मरण है । असैं ज्ञायक-शरीर के तीन भेद कहे ।।६१।।

आगैं नोआगम द्रव्य-कर्म का दूसरा भेद भावि ताकौं कहैं हैं —

भवियंति भवियकाले, कम्मागमजाणगो स जो जीवो ।
जाणगसरीरभवियं, एवं होदि त्ति णिद्दिट्ठं ।।६२।।

भविष्यति भाविकाले, कर्मागमज्ञायकः स यो जीवः ।
ज्ञायकशरीरभावि, एवं भवतीति निर्दिष्टं ।।६२।।

टीका – जो कर्मस्वरूप का प्रतिपादक आगम ताका जाननहारा भावि – जो अनागत काल, तींहि विषैं होइगा – अनागत काल विषैं कर्म स्वरूप का प्रतिपादक आगम कौं जानैगा, सो जीव ज्ञायकभावि-शरीर है । असै भावि असा कह्या हुवा ज्ञायक-शरीर जिनदेवनि करि कह्या है ।।६३।।

आगैं नोआगम-द्रव्यकर्म का तीसरा भेद तद्व्यतिरिक्त ताकौं कहैं हैं –

तव्वदिरित्तं दुविहं, कम्मं णोकम्ममिदि तहिं कम्मं ।
कम्मसरूवेणागय, कम्मं दव्वं हवे णियमा ।।६३।।

तद्व्यतिरिक्तं द्विविधं कर्म नोकर्मेति तस्मिन् कर्म ।
कर्मस्वरूपेणागतं, कर्म द्रव्यं भवेन्नियमात् ।।६३।।

टीका – तद्व्यतिरिक्त नो-आगम-द्रव्यकर्म दोय प्रकार है – एक कर्म, एक नोकर्म । तहां ज्ञानावरणादिक मूल-प्रकृति वा तिनकी उत्तर-प्रकृति रूप होइ परिणया जो पुद्गल-द्रव्य, सो कर्मतद्व्यतिरिक्त नो-आगम-द्रव्य-कर्म जानना नियम करि ।।६३।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

कम्मद्दव्वादण्णं दव्वं, णोकम्मदव्वमिदि होदि ।
भावे कम्मं दुविहं, आगमणोआगमंति हवे ॥६४॥

कर्मद्रव्यादन्यद्द्रव्यं नोकर्मद्रव्यमिति भवति ।
भावे कर्म द्विविधमागमनोआगममिति भवेत् ॥६४॥

टीका – कर्मस्वरूप तैं अन्य जो कर्म करि कार्य होइ तिस कार्य को बाह्य कारण-भूत असा जो वस्तु, सो नोकर्मरूप तद्व्यतिरिक्त नो-आगम-द्रव्यकर्म जानना । 'नो' कहिए किंचिन्मात्र कर्म का ज्यों कारण होइ, तातैं नो-कर्म कहिए । बहुरि भाव-निक्षेप रूप कर्म दोय प्रकार है– एक आगम-भावकर्म, एक नो-आगम-भावकर्म ॥६४॥

कम्मागमपरिजाणग, जीवो कम्मागमम्हि उवजुत्तो ।
भावागमकम्मोत्ति य, तस्स य सण्णा हवे णियमा ॥६५॥

कर्मागमपरिज्ञायक, जीवः कर्मागमे उपयुक्तः ।
भावागमकर्मेति च, तस्य च संज्ञा भवेन्नियमात् ॥६५॥

टीका – तहां जो कर्मस्वरूप का प्रतिपादक आगम शास्त्र, ताका जानन-हारा होइ, बहुरि वर्तमान-काल विषैं तिस आगम ही का विचाररूप चिंतवनरूप उपयोग करि संयुक्त होइ, सो जीव आगम-भाव-कर्म – असा संज्ञा का धारक नियम करि जानना ॥६५॥

णोआगमभावो पुण, कम्मफलं भुञ्जमाणगो जीवो ।
इदि सामण्णं कम्मं, चउव्विहं होदि णियमेण[1] ॥६६॥

नो आगमभावः पुनः कर्मफलं भुंजमानको जीवः ।
इति सामान्यं कर्म, चतुर्विधं भवति नियमेन ॥६६॥

टीका – बहुरि कर्म का जो उदय फल, ताकौं जो भोगवै है असा जो जीव, सो नोआगम-भावकर्म जानना । असे अभेद रूप सामान्य-कर्म, सो च्यारि प्रकार है नियम करि ॥६६॥

---

१. इसकी टिप्पणी पृष्ठ १११ पर है ।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगै मूल-प्रकृति वा उत्तर-प्रकृति, तिनके नामादिक भेदनि कौं कहैं हैं –

मूलुत्तरपयडीणं, णामादी एवमेव णवरिं तु ।
सगणामेण य णामं, ठवणा दवियं हवे भावो ॥६७॥

मूलोत्तरप्रकृतीनां, नामादय एवमेव नवरिं तु ।
स्वकनाम्ना च नाम, स्थापना द्रव्यं भवेत् भावः ॥६७॥

टीका – मूल-प्रकृति आठ, उत्तर-प्रकृति एक सौ अठतालीस । इनिका नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव, जैसे सामान्य कर्म का वर्णन कीया तैसें ही जानना ।

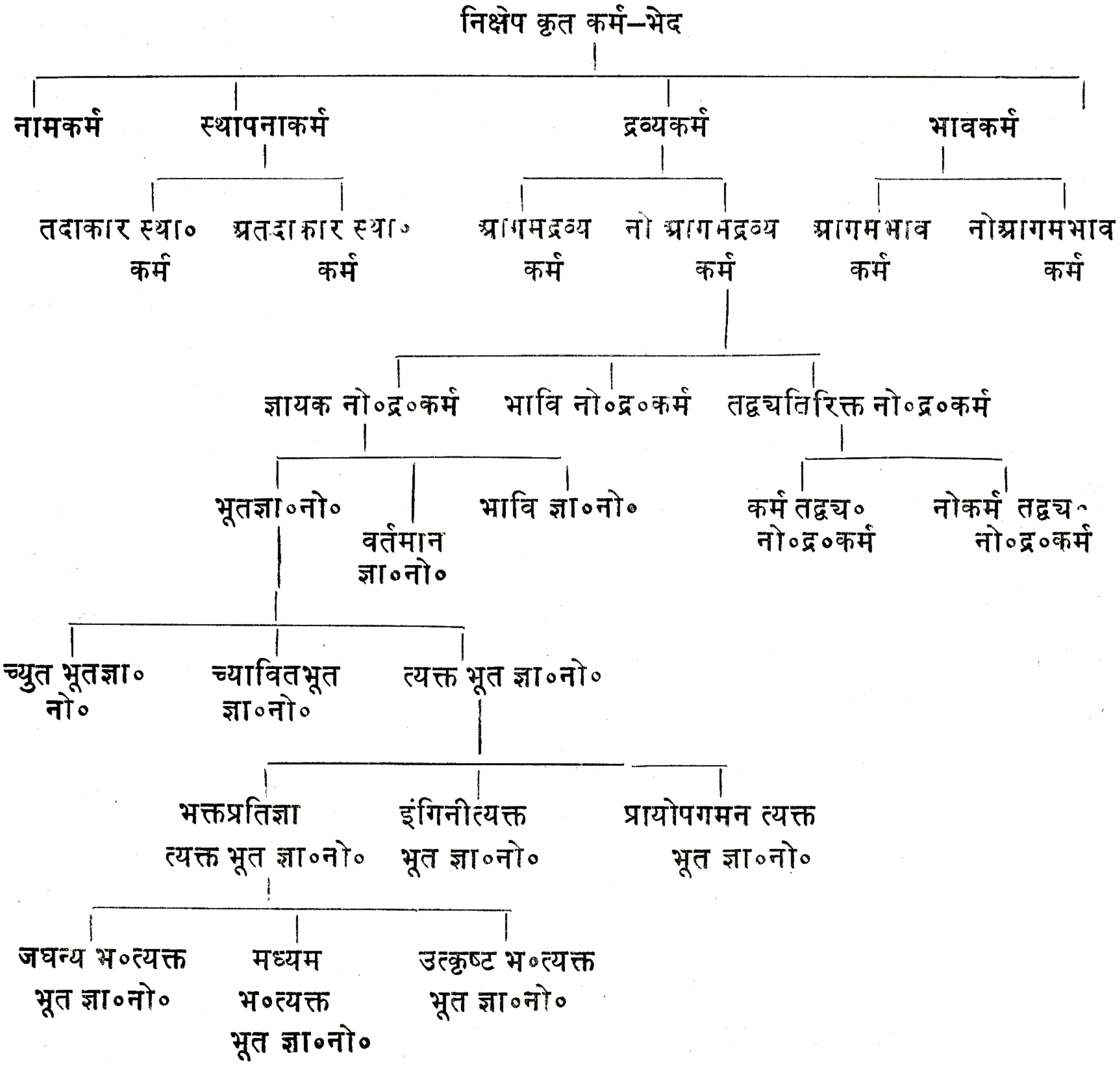

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि विशेष इतना है – तहां सामान्य-कर्म की अपेक्षा कहे थे, इहां जिस-जिस प्रकृति का जो-जो नामादिक होइ तिस-तिस प्रकृति का तिस-तिस अपने नामादिक की अपेक्षा नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव जानने ।।६७।।

बहुरि और भी विशेष कहैं हैं –

मूलुत्तरपयडीणं, णामादि चउव्विहं हवे सुगमं ।
वज्जित्ता णोकम्मं, णोआगमभावकम्मं च ।।६८।।

मूलोत्तरप्रकृतीनां, नामादि चतुर्विधं भवेत्सुगमं ।
वर्जयित्वा नोकर्म, नोआगमभावकर्म च ।।६८।।

टीका – मूल-प्रकृति वा उत्तर-प्रकृति, तिनके नामादिक च्यारि प्रकार निक्षेप सुगम हैं, परन्तु नोकर्म तद्व्यतिरिक्त नो आगम-द्रव्यकर्म अर नोआगम-भावकर्म इनि दोऊनि विषैं विशेष है, तातैं इनि बिना और सर्व निक्षेपनि का व्याख्यान जैसा सामान्य कर्म का कीया, तैसा ही अपने नाम के अनुसारि मूलप्रकृति वा उत्तर प्रकृतिनि का जानना ।

आगैं नोकर्म द्रव्यकर्म अर नोआगम भावकर्म इनि दोऊनि कौं मूल-प्रकृति वा उत्तर-प्रकृतिनि विषैं जोड़ें हैं । तहां प्रथम ही नोकर्म द्रव्यकर्म कौं जोड़ें हैं । तहां इतना अर्थ जानना–पूर्वैं द्रव्य निक्षेप के दोय भेद कीए – आगम, नोआगम । तहां नोआगम द्रव्य के तीन भेद कहे – ज्ञायक शरीर, भावि, तद्व्यतिरिक्त । तहां तद्व्यतिरिक्त के दोय भेद कीए कर्म, नोकर्म । सो इहां नोकर्म-तद्व्यतिरिक्त-नोआगम-द्रव्य-कर्म, तिसका वर्णन सर्व प्रकृतिनि विषैं कीजिए है । सो नोकर्म-द्रव्यकर्म ऐसैं शब्द करि नोकर्म-तद्व्यतिरिक्त-नोआगम-द्रव्यकर्म जानना । बहुरि जिस-जिस प्रकृति का जो-जो उदय-फलरूप कार्य है तिस-तिस कार्य को जो-जो बाह्यवस्तु कारणभूत होइ सो-सो वस्तु तिस-तिस प्रकृति का नोकर्म-द्रव्यकर्म जानना ।।६८।।

तहां प्रथम ही मूल-प्रकृतिनि विषै कहैं हैं –

पडपडिहारसिमज्जा, आहारं देह उच्चणीचंगं ।
भंडारी मूलाणं, णोकम्मं दवियकम्मं तु ।।६९।।

पटप्रतीहारासिमद्यानि, आहारं देह उच्चनीचांगं ।
भांडारी मूलानां, नोकर्म द्रव्यकर्म तु ।।६९।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – तहां ज्ञानावरण का नोकर्म-द्रव्यकर्म सपीठवस्त्र है । जातैं जैसैं ज्ञानावरण विशेष ग्रहण रूप ज्ञान कौं रोकै है, तैसैं आडा सपीठवस्त्र वस्तु के विशेष ग्रहण को रोकै है । बहुरि दर्शनावरण का नोकर्म-द्रव्यकर्म द्वार विषै तिष्ठता द्वारपाल जानना । यहु दर्शनावरणवत् राजादिक के सामान्य अवलोकन कौं रोकै हैं । बहुरि वेदनीय-कर्म का नोकर्म-द्रव्यकर्म मधु करि लपेटी खड्ग की धारा जाननी, जातैं वेदनीयवत् सुख-दुःख कौं कारण है । बहुरि मोहनीयकर्म का नोकर्म-द्रव्यकर्म मदिरा है, जातैं मोहनीय की ज्यों सम्यग्दर्शनादिक जीव के गुणनि कौं घातैं हैं ।

बहुरि आयुकर्म का नोकर्म-द्रव्यकर्म च्यारि प्रकार आहार है, जातैं आयुवत् शरीर के बल कौं कारण होने करि शरीर की स्थिति कौं कारण है । बहुरि नामकर्म का नोकर्म-द्रव्यकर्म औदारिकादिक शरीर है, जातैं औदारिकादिक-शरीर योगनि के उपजावनहारे है । योग नामकर्म की ज्यों औदारिक आदि शरीरनि के निपजावन-हारे हैं । बहुरि गोत्रकर्म का नोकर्म-द्रव्यकर्म ऊंचा-नीचा शरीर है, जातै गोत्र कर्म की ज्यों ऊंचा-नीचा कुल नैं प्रकट करैं है । बहुरि अंतरायकर्म का नोकर्म-द्रव्यकर्म भंडारी है, जातै अंतरायवत् भोग-उपभोग रूप वस्तु के विघन करने कौं कारण है । इहां एक-एक वस्तु कहने तैं तैसैं ही अन्य वस्तु जानि लेने । उदाहरण मात्र एक-एक वस्तु का कथन कीया है ।।६९।।

आगैं उत्तर-प्रकृतिनि विषैं कहैं हैं —

पडविसयपहुदि दव्वं, मदिसुदवाघादकरणसंजुत्तं ।
मतिसुदबोहाणं पुण, णोकम्मं दवियकम्मं तु ।।७०।।

पटविषयप्रभृतिद्रव्यं, मतिश्रुतव्याघातकरणसंयुक्तं ।
मतिश्रुतबोधयोः पुनः, नोकर्म द्रव्यकर्म तु ।। ७० ।।

टीका – पट जो वस्त्र तीने आदि दैकरि मतिज्ञान के रोकने कौं कारणभूत वस्तु, सो मतिज्ञानावरण का नोकर्म-द्रव्यकर्म है । बहुरि इंद्रिय-विषयनैं आदि दैकरि श्रुतज्ञान के रोकने कौं कारणभूत वस्तु, सो श्रुतज्ञानावरण का नोकर्म-द्रव्यकर्म है ।।७०।।

ओहिमणपज्जवाणं, पडिघादणिमित्तसंकिलेसयरं ।
जं बज्झट्ठं तं खलु, णोकम्मं केवले णत्थि ।।७१।।

अवधिमनःपर्ययो, प्रतिघातिनिमित्तसंक्लेशकरः ।
यो बाह्यार्थः स खलु, नोकर्म केवले नास्ति ।।७१।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – अवधिज्ञान अर मन:पर्ययज्ञान इनिके घात करनै कौं कारण संक्लेश परिणाम सो संक्लेश परिणाम जातैं होइ, ऐसा जो बाह्य पदार्थ सो अवधिज्ञानावरण वा मन:पर्ययज्ञानावरण का नोकर्म-द्रव्यकर्म जानना । बहुरि केवलज्ञानावरण का नोकर्म द्रव्यकर्म नाही है जातैं केवलज्ञान क्षायिक है, तातैं वाके घात करने कौं कारण संक्लेश-परिणामनि कौं उपजावनहारी वस्तु कोऊ नाही । अवधिज्ञान, मन:पर्ययज्ञान क्षायोपशमिक हैं । तातैं तहां संभवै है ।।७१।।

पंचण्हं णिद्दाणं, माहिसदहिपहुदि होदि णोकम्मं ।
वाघादकरपडादी, चक्खुअचक्खूण णोकम्मं ।।७२।।

पंचानां निद्राणां, माहिषदधिप्रभृति भवति नोकर्म ।
व्याघातकरपटादि, चक्षुरचक्षुषोर्नोकर्म ।।७२।।

टीका – पंच निद्रारूप दर्शनावरण, तिनका **'माहिषदधि'** कहिए भैंसि का दही नैं आदि दे करि लशुन, खलि इत्यादि वस्तु सो नोकर्म-द्रव्यकर्म है । जातैं ए वस्तु निद्रा कौं कारण हैं । बहुरि चक्षु-अचक्षु दर्शन कै रोकनेवाले वस्त्रादिक वस्तु सो चक्षु-अचक्षु दर्शननावरण का नोकर्म-द्रव्यकर्म है ।।७२।।

ओहीकेवलदंसण, णोकम्मं ताण णाणभंगो व ।
सादेदरणोकम्मं, इट्ठाणिट्ठण्णपाणादी ।।७३।।

अवधिकेवलदर्शन, नोकर्म तयोर्ज्ञानभंगो वा ।
सातेतरनोकर्म, इष्टानिष्टान्नपानादि ।।७३।।

टीका – अवधिदर्शनावरण अर केवलदर्शनावरण का नोकर्म-द्रव्यकर्म अवधिज्ञान वा केवलज्ञानवत् जानना । बहुरि सातावेदनीय का इष्ट– सुहावते अन्न-पानादिक वस्तु अर असाता-वेदनीय का अनिष्ट– न सुहावते अन्न-पानादिक वस्तु नोकर्म-द्रव्यकर्म जानने ।।७३।।

आयदणाणायदणं, सम्मे मिच्छे य होदि णोकम्मं ।
उभयं सम्मामिच्छे, णोकम्मं होदि णियमेण ।।७४।।

आयतनानायतनं, सम्यक्त्वे मिथ्यात्वे च भवति नोकर्म ।
उभयं सम्यग्मिथ्यात्वे, नोकर्म भवति नियमेन ।।७४।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – आयतन कहिए जिन, जिनमंदिर, जिनागम, जिनागम के धारक, तप, तप के धारक ए सम्यक्त्व-प्रकृति के नोकर्म-द्रव्यकर्म हैं। जातैं ए सम्यक्त्व के चल, मलिन, अगाढपनें कौं कारण हैं। इनहीं विषैं अनेक विकल्प करि वेदक-सम्यक्त्वी, चल, मलिन, अगाढ हो है। बहुरि अनायतन कुदेव, कुदेव का मंदिर, कुशास्त्र, कुशास्त्र के धारक, कुतप, कुतप के धारक ए मिथ्यात्व प्रकृति के नोकर्म-द्रव्यकर्म हैं, जातैं ए सम्यक्त्व के घातक हैं। बहुरि आयतन अर अनायतन दोऊनि का मिश्रपनां सो सम्यग्मिथ्यात्व-प्रकृति के नोकर्म-द्रव्यकर्म हैं, असा नियम करि अवधारन करना ॥७४॥

अणणोकम्मं मिच्छत्तायदणादी हु होदि सेसाणं।
सगसगजोग्गं सत्थं, सहायपहुदी हवे णियमा ॥७५॥

अननोकर्म मिथ्यात्वायतनादि हि भवति शेषाणां।
स्वकस्वकयोग्यं शास्त्रं, सहायप्रभृति भवेन्नियमात् ॥७५॥

टीका – अनंतानुबंधी-कषायनि का मिथ्यात्व-आयतन जे कुदेवादिक ते नोकर्म-द्रव्यकर्म हैं। बहुरि अवशेष बारह-कषायनि का नोकर्म-द्रव्यकर्म अनुक्रम तैं देश-चारित्र, सकल-चारित्र, यथाख्यात-चारित्र के घातक काव्य-ग्रन्थ, नाटक-ग्रन्थ, कोकादि-ग्रंथ वा पापी पुरुषनि का सहाय इत्यादिक नोकर्म-द्रव्यकर्म नियम करि जानना ॥७५॥

थीपुंसंढसरीरं, ताणं णोकम्म दव्वकम्मं तु।
वेलंबको सुपुत्तो, हस्सरदीणं च णोकम्मं ॥७६॥

स्त्रीपुंषंढशरीरं, तेषां नोकर्मद्रव्यकर्म तु।
विडंबकः सुपुत्रः, हास्यरत्योश्च नोकर्म ॥७६॥

टीका – स्त्रीवेद वा पुरुषवेद का नोकर्म द्रव्यकर्म स्त्री वा पुरुष का शरीर है। बहुरि नपुंसक वेद का नोकर्म द्रव्यकर्म स्त्री-पुरुष का शरीर वा नपुंसक शरीर है। बहुरि हास्य का नोकर्म-द्रव्यकर्म विटंबरूप भूत वा बहुरूपिया वा हंसने के पात्र इत्यादिक हैं। बहुरि रति का भले पुत्रादिक नोकर्म-द्रव्यकर्म जानना ॥७६॥

इट्ठाणिट्ठविजोगं, जोगं अरदिस्स मुदसुपुत्तादी।
सोगस्स य सिंहादी, णिंदिददव्वं च भयजुगले ॥७७॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

इष्टानिष्टवियोगयोगः अरतेर्मृतसुपुत्रादयः ।
शोकस्य च सिंहादयः, निंदितद्रव्यं च भययुगले ।।७७।।

टीका – बहुरि इष्टवियोग-अनिष्ट संयोग अरति का नोकर्म-द्रव्यकर्म है । बहुरि सुपुत्रादिक का मरना इत्यदिक शोककर्म का नोकर्म-द्रव्यकर्म है । बहुरि सिंहादिक भयकारी वस्तु भय का नोकर्म-द्रव्यकर्म है । बहुरि निंदित वस्तु इत्यादिक जगुप्सा का नोकर्म-द्रव्यकर्म है ।।७७।।

णिरयायुस्स अणिट्ठाहारो सेसाणमिट्ठमण्णादी ।
गदिणोकम्मं दव्वं, चउग्गदीणं हवे खेत्तं ।।७८।।

नरकायुषोऽनिष्टाहारः शेषाणामिष्टमन्नादयः ।
गतिनोकर्म द्रव्यं, चतुर्गतीनां भवेत् क्षेत्रं ।।७८।।

टीका – नरकायु का अनिष्ट-आहार नरक की विषरूप माटी, सोई द्रव्यकर्म-नोकर्म है । अवशेष तीन आयु का इष्ट अन्नादिक वस्तु, सोई द्रव्यकर्म-नोकर्म है । आहार शरीर की स्थिति कौं कारण है, तातैं आयु का नोकर्म-द्रव्य कर्म आहार कह्या । बहुरि सामान्यपनैं गति नामकर्म का नोकर्म-द्रव्यकर्म चतुर्गति का क्षेत्र जानना ।।७८।।

णिरयादीण गदीणं, णिरयादी खेतयं हवे णियमा ।
जाईए णोकम्मं, दव्विंदियपोग्गलं होदि ।।७९।।
निरयादीनां गतीनां, निरयादिक्षेत्रकं भवेन्नियमात् ।
जातेर्नोकर्म द्रव्येंद्रियपुद्गलो भवति ।।७९।।

टीका – नरकादि गतिनि का नोकर्म-द्रव्यकर्म नियम करि अपनी-अपनी गति का क्षेत्र जानना । गति के उदय तैं भए नारकादिक पर्याय, तिनिका तिस क्षेत्र बिना अन्यत्र अभाव है, तातैं क्षेत्र को नोकर्म-द्रव्यकर्म कह्या । बहुरि जाति नाम कर्म का नोकर्म द्रव्यकर्म द्रव्येंद्रियरूप पद्गल है ।।७९।।

एइंदियमादीणं, सगसगदव्विंदियाणि णोकम्मं ।
देहस्स य णोकम्मं, देहुदयजदेहखंधाणि ।।८०।।
एकेंद्रियादीनां, स्वकस्वकद्रव्येंद्रियाणि नोकर्म ।
देहस्य च नोकर्म, देहोदयजदेहस्कंधाः ।।८०।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – एकेंद्रियादिक जाति तिनिका नोकर्म-द्रव्यकर्म अपना-अपना द्रव्येंद्रिय जानने । बहुरि शरीर नाम-कर्म का नोकर्म-द्रव्यकर्म अपना-अपना उदय तैं भया शरीर-स्कंधरूप पुद्गल, सो जानना ।।८०।।

ओरालियवेगुव्विय, आहारयतेजकम्मणोकम्मं ।
ताणुदयजचउदेहा, कम्मे विस्संचयं णियमा ।।८१।।

औदारिकवैर्गुविका, ऽऽहारकतेजःकर्मनोकर्म ।
तेषामुदयजचतुर्देहाः, कर्मणि विस्रसोपचयो नियमात् ।।८१।।

टीका – औदारिक, वैक्रियिक, आहारक, तैजस शरीर नामकर्म इनिका अपने-अपनें उदय तैं प्राप्त भई शरीर-वर्गणा सोई नोकर्म-द्रव्यकर्म है, जातैं वर्गणा शरीर कौं कारण है । बहुरि कार्माण का नोकर्म-द्रव्यकर्म विस्रसोपचय है, जातैं विस्रसोप-चयरूप परमाणु कर्म कौं कारण हैं ।।८१।।

बंधणपहुदिसमण्णिय, सेसाणं देहमेव णोकम्मं ।
णवरि विसेसं जाणे, सगखेत्तं आणुपुव्वीणं ।।८२।।

बंधनप्रभृतिसमन्वित, शेषाणां देहमेव नोकर्म ।
नवरि विशेषं जानीहि, स्वकक्षेत्रमानुपूर्वीणां ।।८२।।

टीका – बंधन ने आदि देकरि पुद्गलविपाकी तिनिकरि संयुक्त पूर्वोक्त तैं अवशेष रहीं जे जीव-विपाकी नाम-कर्म की प्रकृति, तिनिका नोकर्म-द्रव्यकर्म शरीर है, जातैं तिनि प्रकृतिनि करि कीया जीव का वा पुद्गल का भाव सुखादिरूप कार्य, तिनिकौं उपादान कारण शरीर संबंधी वर्गणा ही है । बहुरि क्षेत्र-विपाकी आनुपूर्वी प्रकृति, तिनिका नोकर्म-द्रव्यकर्म अपना-अपना क्षेत्र ही है । इतना नवीन विशेष जानि ।।८२।।

थिरजुम्मस्स थिराथिर, रसरुहिरादीणि सुहजुगस्स सुहं ।
असुहं देहावयवं, सरपरिणदपोग्गलाणि सरे ।।८३।।

स्थिरयुग्मस्य स्थिरास्थिर, रसरुधिरादयः शुभयुगस्य शुभः ।
अशुभो देहावयवः, स्वरपरिणतपुद्गलाः स्वरे ।।८३।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – बहुरि स्थिर का स्थिर-रस-रुधिरादिक, बहुरि अस्थिर का अस्थिर-रस-रुधिरादिक, शुभ प्रकृति का शुभ शरीर का अवयव, अशुभ का अशुभ शरीर का अवयव, स्वर प्रकृति का सुस्वर दुःस्वर रूप परिणए पुद्गल-स्कंध द्रव्यकर्म-नोकर्म जानने ।।८३।।

उच्चस्सुच्चं देहं, णीचं णीचस्स होदि णोकम्मं ।
दाणादिचउक्काणं, विग्घगणगपुरिसपहुदी हु ।।८४।।

उच्चस्योच्चं देहं, नीचं नीचस्य भवति नोकर्म ।
दानादिचतुर्णां, विघ्नकनगपुरुषप्रभृतयो हि ।।८४।।

टीका – उच्चगोत्र का नोकर्म-द्रव्यकर्म ऊँचो लोकपूजित कुलविषैं उपज्या शरीर सो जानना । नीचगोत्र का नीचकुल विषैं उपज्या शरीर नोकर्म-द्रव्यकर्म है । बहुरि दानादिक च्यारि अंतराय तिनके नोकर्म-द्रव्यकर्म दानादिक के विघन करने वाले पर्वत, नदी, पुरुष, स्त्री इत्यादिक जानने ।।८४।।

विरियस्स य णोकम्मं, रुक्खाहारादि बलहरं दव्वं ।
इदि उत्तरपयडीणं, णोकम्मं दव्वकम्मं तु ।।८५।।

वीर्यस्य च नोकर्म, रूक्षाहारादिबलहरं द्रव्यं ।
इत्युत्तरप्रकृतीनां, नोकर्म द्रव्यकर्म तु ।।८५।।

टीका – बहुरि वीर्यांतराय का नोकर्म-द्रव्यकर्म रूखा-आहार नें आदि दे करि बल का नाश करनेवाली वस्तु सो जाननी । ऐसैं उत्तर-प्रकृतिनि का नोकर्म-तद्व्यतिरिक्त-नोआगम-द्रव्यकर्म कह्या है ।।८५।।

आगैं नो आगम-भावकर्म कहैं हैं—

णोआगमभावो पुण, सगसगकम्मफलसंजुदो जीवो ।
पोग्गलविवाइयाणं, णत्थि खु णोआगमो भावो ।।८६।।

नोआगमभावः पुनः, स्वकस्वककर्मफलसंयुतो जीवः ।
पुद्गलविपाकिनां, नास्ति खलु नोआगमो भावः ।।८६।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – बहुरि जिस-जिस प्रकृति का जो-जो फल है, तिस-तिस अपने-अपने फल कौं भोगवता जीव, सो तिस-तिस प्रकृति का नोआगम-भावकर्म जानना। बहुरि जे पुद्गलविपाकी प्रकृति हैं, तिनिका नो आगम भाव-कर्म नाहीं है. जातैं तिनिके उदय होत संतैं जीवविपाकी प्रकृतिनि का सहाय बिना साक्षात् सुखादिक की उत्पत्ति न हो है।

ऐसैं सामान्य-कर्म, मूल-प्रकृति उत्तर-प्रकृति तिनिविषैं नाम, स्थापना, द्रव्य, भाव, च्यारि निक्षेप कहि यथार्थ स्वरूप दिखाया है ।।८६।।

इति आचार्य श्रीनेमिचन्द्र सिद्धांत चक्रवर्ति विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसंग्रह ग्रन्थ की जीवतत्त्व प्रदीपिका नामा संस्कृत टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञान-चन्द्रिका नामा भाषा टीका विषैं कर्मकाण्ड विषै प्रकृति-समुत्कीर्तन नामा पहिला अधिकार संपूर्ण भया।

करणानुयोग का प्रयोजन

करणानुयोग में जीवों के व कर्मों के विशेष तथा त्रिलोकादिक की रचना निरूपित करके जीवों को धर्म में लगाया है। जो जीव धर्म में उपयोग लगाना चाहते हैं, वे जीवों के गुणस्थान-मार्गणा आदि विशेष तथा कर्मों के कारण-अवस्था-फल किस-किस के कैसे-कैसे पाये जाते हैं–इत्यादि विशेष तथा त्रिलोक में नरक-स्वर्गादि के ठिकाने पहचान कर पाप से विमुख होकर धर्म में लगते हैं। तथा ऐसे विचार में उपयोग रम जाये तब पाप-प्रवृत्ति छूटकर स्वयमेव तत्काल धर्म उत्पन्न होता है।

– पं० टोडरमलजी, मोक्षमार्ग प्रकाशक, पृष्ठ २६९

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

अथ बंधोदयसत्त्वाधिकारः ।

॥ दोहा ॥

बंध उदय सत्ता सहित, अहित-कर्म करि नाश ।
भए ज्ञान परकाशमय, नमौं तासु हुइ दास ॥

णमिऊण णेमिचंदं, असहायपरक्कमं महावीरं ।
बंधुदयसत्तजुत्तं, ओघादेसे थवं वोच्छं ॥८७॥

नत्वा नेमिचंद्रमसहायपराक्रमं महावीरं ।
बंधोदयसत्त्वयुक्तमोघादेशे स्तवं वक्ष्यामि ॥८७॥

टीका – **'अहं'** कहिए मैं ग्रंथकर्ता सो **नेमिचन्द्र** कहिए नेमिनाथ नामा तीर्थंकर परम देव सोई भया चंद्रमा, ताहि **'नत्वा'** कहिए नमस्कार करि, **'ओघादेशेषु'** कहिए गुणस्थान वा मार्गणा-स्थाननि विषैं, **'बंधोदयसत्त्वयुक्तं'** कहिए कर्मनि का बंध, उदय, सत्त्व का प्रतिपादक जो **'स्तवं'** कहिए सकल-अंग संबंधी अर्थ जामैं पाइए असा स्तव रूप ग्रंथ ताहि **'वदिष्ये'** कहिए कहोंगा वा करौंगा । कैसा है नेमिचंद्र ? **'महावीरं'** कहिए वंदनेवालों का जो समूह ताकौं मनवांछित अर्थ का दाता है । बहुरि कैसा है ? **'असहायपराक्रमं'** कहिए नाही है कर्मवैरी के जीतने विषैं अन्य कोऊ सहाय जाकैं असा जो अभेद रत्नत्रय स्वरूप निजभावना की सामर्थ्यरूप पराक्रम सो असा असहाय पराक्रम जाकैं पाइए है असा नेमिनाथ तीर्थंकर परमदेव, ताकौं नमस्कार करि बंध, उदय, सत्ता का प्रतिपादक स्तव ताहि मैं कहोंगा, असी आचार्य प्रतिज्ञा करी है ॥८७॥

स्तव कहा ? सो कहै हैं –

सयलंगेक्कंगेक्कंगहियार सवित्थरं ससंखेवं ।
वण्णणसत्थं थयथुइ, धम्मकहा होइ णियमेण ॥८८॥

सकलांगैकांगैकांगमधिकारं सविस्तरं ससंक्षेपं ।
वर्णनशास्त्रं स्तवस्तुति, धर्मकथा भवति नियमेन ॥८८॥

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – सकल अंग संबन्धी अर्थ विस्तार लीए वा संक्षेपता लीए जामैं पाइए असा जु शास्त्र, सो स्तव कहिए। बहुरि एक-अंग संबंधी अर्थ विस्तार लीए वा संक्षेपता लीए जामैं पाइए असा जु शास्त्र, सो स्तुति कहिए। बहुरि एक अंग का अधिकार संबंधी अर्थ विस्तार लीए वा संक्षेपता लीए जामैं पाइए असा जु शास्त्र, सो वस्तु कहिए। बहुरि प्रथमानुयोगादिक रूप शास्त्र, सो धर्मकथा कहिए है नियम करि। सो इहां बंध, उदय, सत्तारूप कर्म का कथन विषै सकल अंगसंबंधी अर्थ विस्तार लीए वा संक्षेपता लीए कहिएगा, तातैं स्तव कहिए है ॥८८॥

तहां प्रथम ही बंध का कथन करै हैं। तहां बंध के भेदनि कौं कहैं हैं—

पयडिट्ठिदिअणुभाग, प्पदेसबंधोत्ति चदुविहो बंधो[1]।
उक्कस्समणुक्कस्सं, जहण्णमजहण्णगंत्ति पुधं ॥८९॥

प्रकृतिस्थित्यनुभाग, प्रदेशबंध इति चतुर्विधो बंधः।
उत्कृष्टोऽनुत्कृष्टः, जघन्योऽजघन्यक इति पृथक् ॥८९॥

टीका – बंध च्यारि प्रकार है प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभागबंध, प्रदेशबंध। तहां मूल-प्रकृति वा उत्तर-प्रकृतिनि का यथायोग्य जीव सहित संबंध होना, सो प्रकृतिबंध है। तिन प्रकृतिनि का जीवसहित संबंध रूप रहने का काल प्रमाण, सो स्थिति-बंध है। तिन प्रकृतिनि विषैं फल देने की शक्ति, सो अनुभाग-बंध है। तिन प्रकृतिनिरूप परिणए पद्गल तिनका प्रमाण, सो प्रदेश-बंध है[2]। बहुरि पृथक् कहिए एक-एक बंध च्यारि प्रकार है – उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, अजघन्य, जघन्य। तहां सर्व तैं बहुत होई सो उत्कृष्ट कहिए। बहुरि तिस उत्कृष्ट तैं हीन होइ सो अनुत्कृष्ट कहिए। बहुरि जघन्य तैं अधिक होइ सो अजघन्य कहिए। बहुरि सर्व तैं थोरा होइ सो जघन्य कहिए ॥८९॥

१–प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशास्तद्विधयः। **मोक्षशास्त्र ८–३।**

२. प्रकृतिः स्वभावः। तदेवं (स्व स्व) लक्षण कार्यं प्रक्रियते प्रभवत्यस्या इति प्रकृतिः। तत्स्वभावादप्रच्युतिः स्थितिः। ज्ञानावरणादीनामर्थावगमादि स्वभावादप्रच्यतिः स्थितिः। तद्रसविशेषोऽनुभवः। कर्मपुद्गलानां स्वगतसामर्थ्यविशेषोऽनुभवः। इयत्तावधारणं प्रदेशः। कर्मभावपरिणत पुद्गलस्कन्धानां परमाणु परिच्छेदेनावधारणं प्रदेशः। **सर्वार्थसिद्धि ८-३ वृत्ति।**

जघन्यमध्यमोत्कृष्ट द्रव्य कर्मस्थिति बंधस्थानानि। ज्ञानावरणाद्यष्टविधकर्मणां तत्तद्योग्यपुद्गलद्रव्यस्वाकारः प्रकृतिबंधः। अशुद्धान्तस्तत्त्वकर्मपुद्गलयोः परस्पर प्रदेशानुप्रवेशः प्रदेशबंध। शुभाशुभकर्मणां निर्जरासमये सुखदुःखफलप्रदान शक्तियुक्तो ह्यनुभागबंधः। **नियमसार:गाथा ४० की टीका।**

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगें उत्कृष्टादिक के भी भेद करें हैं–

सादिअणादी धुव अद् धुवो य बंधो दु जेट्ठमादीसु ।
णाणेगं जीवं पडि, ओघादेसे जहाजोग्गं ॥९०॥

साद्यनादी ध्रुवोऽध्रुवश्च बंधस्तु ज्येष्ठादिषु ।
नानैकं जीवं प्रति, ओघादेशे यथायोग्यं ॥९०॥

टीका – बहुरि तिनि उत्कृष्टादि कर्म विषैं च्यारि प्रकार हैं–सादिबंध, अनादिबंध, ध्रुवबंध, अध्रुवबंध । तहां विवक्षित बंध का बीचि में अभाव होइ, बहुरि जो बंध होइ, सो सादिबंध है । बहुरि कदाचित् अनादि तैं बंध का अभाव न हुवा होइ, तहां अनादिबंध है । बहुरि निरंतर-बंध हूवा करै, सो ध्रुवबंध है । बहुरि अंतर सहित बंध होइ, सो अध्रुवबंध है । सो असा बंध सर्व नाना-जीवनि की अपेक्षा वा एक जीव की अपेक्षा गुणस्थान अर मार्गणास्थाननि विषैं यथायोग्य जानना ॥९०॥

ठिदिअणुभागपदेसा, गुणपडिवण्णेसु जेसिमुक्कस्सा ।
तेसिमणुक्कस्सो चउव्विहोऽजहण्णेवि एमेव ॥९१॥

स्थित्यनुभागप्रदेशा, गुणप्रतिपन्नेषु येषामुत्कृष्टाः ।
तेषामनुत्कृष्टश्चतुर्विधोऽजघन्येषु एवमेव ॥९१॥

टीका – 'गुणप्रतिपन्नेषु' कहिए मिथ्यादृष्टि सासादनादिक ऊपरि-ऊपरि के गुणस्थानवर्ती जीव तिनविषैं जिन कर्मनि का उत्कृष्ट स्थिति-अनुभाग-प्रदेश बंध पाइए है, तिनही कर्मनि का अनुत्कृष्ट स्थिति-अनुभाग-प्रदेशबंध सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव भेद तैं च्यारि प्रकार हो है । बहुरि अजघन्य भी असैं ही अनुत्कृष्टवत् च्यारि प्रकार हो है । जिनि कर्म-प्रकृतिनि का स्थिति-अनुभाग-प्रदेश बंध ऊपरि के गुणस्थाननि विषैं जघन्य पाइए है, तिनिका ही अजघन्य-बंध च्यारि प्रकार हो है ।

सो इनिका लक्षण आगै कहैंगे, तथापि इहाँ भी उदाहरण मात्र किंचित् कहिए है – उपशम श्रेणी चढनेवाला जीव सूक्ष्म-सांपराय-गुणस्थानवर्ती भया तहां उत्कृष्ट उच्च-गोत्र का अनुभाग-बंध करि पीछैं उपशांत-कषाय-गुणस्थानवर्ती भया । बहुरि तहां तै उतरि करि सूक्ष्मसांपराय-गुणस्थानवर्ती भया, तहां अनुत्कृष्ट-उच्चगोत्र का अनुभाग बंध कीया, तहां इस अनुत्कृष्ट-ऊच्चगोत्र के अनुभाग कौं सादि कहिए है, जातैं अनुत्कृष्ट उच्चगोत्र अनुभागबंध का अभाव होइ । बहुरि सद्भाव भया, तातैं

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सादि कहिए है । बहुरि सूक्ष्मसांपराय-गुणस्थान तैं नीचे के गुणस्थानवर्ती जीव हैं, तिनकैं सो बंध अनादि है । बहुरि अभव्य-जीव विषैं सो बंध ध्रुव है । बहुरि उपशम श्रेणीवाले के जहां अनुत्कृष्ट को छोडि उत्कृष्ट-बंध हो है, तहां सो बंध अध्रुव है । असै अनुत्कृष्ट-उच्चगोत्र के अनुभाग बंध विषै सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव च्यारि प्रकार कहे ।

असैं ही अजघन्य भी च्यारि प्रकार है । सो कहिए है

सप्तम-नरक पृथ्वी विषैं प्रथमोपशमसम्यक्त्व कौं सन्मुख भया मिथ्यादृष्टि जीव तहां मिथ्यादृष्टि गुणस्थान का अंतसमय विषैं जघन्य नीचगोत्र के अनुभाग कौं बांधैं है । बहुरि सो जीव सम्यग्दृष्टि होइ पीछे मिथ्यात्व के उदय करि मिथ्यादृष्टि भया तहां अजघन्य नीचगोत्र के अनुभाग कौं बांधैं है, तहां इस अजघन्य नीचगोत्र के अनुभाग को सादि कहिए। बहुरि तिस मिथ्यादृष्टि कैं तिस अंतसमय तैं पहिले सो बंध अनादि है । अभव्य जीव कैं सो बंध ध्रुव है । जहां अजघन्य कौं छोडि जघन्य प्राप्त भया, तहां सो बंध अध्रुव है । असैं अजघन्य नीचगोत्र के अनुभाग बंध विषैं सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव च्यारि प्रकार कहे । असैं ही यथासंभव और भी बंध विषैं सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव च्यारि प्रकार जानने । बहुरि प्रकृतिबंध विषैं उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, अजघन्य, जघन्य असै भेद नाहीं है । स्थिति, अनुभाग, प्रदेश बंधनि विषैं ते भेद यथा-योग्य जानने ॥९१॥

आगैं गुणस्थाननि विषैं प्रकृति-बंध का नियम कहैं हैं–

सम्मेव तित्थबंधो, आहारदुगं पमादरहिदेसु ।
मिस्सूणे आउस्स य, मिच्छादिसु सेसबंधो दु ॥९२॥

सम्यक्त्वे एव तीर्थबंध, आहारद्विकं प्रमादरहितेषु ।
मिश्रोने आयुषश्च, मिथ्यात्वादिषु शेषबंधस्तु ॥९२॥

टीका – तीर्थंकर-प्रकृति का बंध असंयत तैं लगाय अपूर्वकरण का छठा भाग पर्यन्त सम्यग्दृष्टि विषैं ही हो है । बहुरि आहारक, आहारक-अंगोपांग का बंध अप्रमत्त तैं लगाय अपूर्वकरण का छठा भाग पर्यंत प्रमाद रहित गुणस्थाननि विषैं ही हो है । बहुरि आयुकर्म का बंध मिश्र गुणस्थान अर निवृत्ति-अपर्याप्त अवस्था कौं प्राप्त मिश्रकाययोग इनकरि रहित अवशेष मिथ्यादृष्टि तैं लगाय अप्रमत्त पर्यंत गुणस्थाननि विषैं हो है, अपूर्वकरणादिक विषैं आयु का बंध नाहीं है । बहुरि इनि बिना अवशेष

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रकृतिनि का बंध मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थाननि विषैं अपनी-अपनी बंध की व्युच्छित्ति पर्यंत जानना ।।६२।।

तहां तीर्थंकर-प्रकृति के बंध का विशेष नियम कहैं हैं—

पढमुवसमिये सम्मे, सेसतिये अविरदादिचत्तारि ।
तित्थयरबंधपारंभया णरा केवलिदुगंते ।।६३।।

प्रथमोपशमे सम्यक्त्वे, शेषत्रये अविरतादिचत्वारः ।
तीर्थंकरबंधप्रारंभका नराः केवलिद्विकांते ।।९३।।

टीका – प्रथमोपशम-सम्यक्त्व विषैं वा अवशेष-द्वितीयोपशम, क्षायोपशमिक, क्षायिक सम्यक्त्वनि विषैं असंयत तें लगाई अप्रमत्त गुणस्थान पर्यंत मनुष्य ही तीर्थंकर प्रकृति के बंध कौं प्रारंभ करै हैं । ते पणि प्रत्यक्ष केवली वा श्रुतकेवली के चरणाँ के निकटि ही करैं हैं ।

इहां प्रथमोपशम-सम्यक्त्व को जुदा कहने का अभिप्राय असा है–जो कोई आचार्यनि का असा मत है जो प्रथमोपशम-सम्यक्त्व का काल थोरा-अंतर्मुहूर्त मात्र है, तातैं तहां षोडश-भावना भाई जाय नाहीं, तातैं प्रथमोपशम-सम्यक्त्व विषैं तीर्थंकर प्रकृति के बंध का प्रारंभ नाहीं है, इस अभिप्राय कौं विचारि जुदा कह्या है । बहुरि मनुष्य कहने का अभिप्राय यहु है जो और गति वाले जीव तीर्थंकर-बंध का प्रारंभ करैं, तातैं और गतिवाले जीवनि कैं विशिष्ट-विचार क्षयोपशमादि सामग्री का अभाव है सो प्रारंभ तौ मनुष्य विषैं ही है । अर तीर्थंकर का बंध तिर्यंच बिना तीन गति विषैं पाइए है, जातैं पहिले तीर्थंकर-प्रकृति का बंध होइ ताकौं **'प्रारंभ'** कहिए तिस समय तें लगाइ समय-समय विषैं समय-प्रबद्धरूप बंध विषैं तीर्थंकर-प्रकृति का भी बंध हूवा करै सो उत्कृष्टपनैं अंतर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष घाटि दोय कोडि पूर्व अधिक तेतीस सागर प्रमाण काल पर्यंत बंध हो है, तातैं तिर्यंचगति बिना तीनों गति विषैं तीर्थंकर का बंध है । बहुरि केवली का निकट कहने का अभिप्राय यह है, जो और ठिकानैं असी विशुद्धता होइ नाहीं, जिसतैं तीर्थंकर-बंध का प्रारंभ होइ ।

आगैं गुणस्थानादिकनि विषैं बंध की व्युच्छित्ति वा बंध वा अबंध कहै हैं ।

तहां जिस गुणस्थान विषैं जेती प्रकृतिनि की व्युच्छित्ति कही होइ तिनि प्रकृतिनि का तिस गुणस्थान का अंत समय पर्यन्त बंध जानना । बहुरि ताके ऊपरिवर्ती

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

जे गुणस्थान हैं तिनविषैं तिन प्रकृतिनि का बंध न जानना । बहुरि जिस गुणस्थान विषैं जेती प्रकृतिनि का बंध कह्या होइ, तेती प्रकृतिनि का तहां बंध जानना । सो पहिले-पहिले गुणस्थान विषैं जेता बंध कह्या होइ तिनमें स्यों तहां ही जितनी व्युच्छित्ति कही होइ सो घटाइए, तब अगले-अगले गुणस्थाननि विषैं बंध का प्रमाण होइ ।

तहां विशेष जो कोइ प्रकृति अगले गुणस्थाननि विषैं बंधयोग्य होइगी तिनि प्रकृतिनि कौं पहिले गुणस्थाननि का बंध विषैं घटाइ दीजिए । अर पीछैं जहां आनि मिलैं तहां बंध विषैं बधाइ दीजिए । बहुरि जेती प्रकृति बंध होनेयोग्य होंइ, तितनी प्रकृतिनि में जेती प्रकृतिनि का बंध कह्या होइ, तितनी प्रकृति घटाएं अवशेष जितनी प्रकृति रहैं, तितनी प्रकृति अबंधरूप जाननी ।।९३।।

सो इहां प्रथम ही गुणास्थाननि विषैं व्युच्छित्ति कहिए हैं—

सोलस पणवीस णभं, दस चउ छक्केक्क बंधवोछिण्णा ।
दुग तीस चदुरपुव्वे, पण सोलस जोगिणो एक्को ।।९४।।

षोडश पंचविंशतिः नभः, दश चतस्रः षडेकैकं बंधव्युच्छिन्नाः ।
द्विके त्रिंशत् चतस्रः अपूर्वे, पंच षोडश योगिन एका ।।९४।।

टीका – मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं सोलह प्रकृति बंध तैं व्युच्छित्ति रूप भई । मिथ्यादृष्टि विषैं तो इनिका बंध है, सासादनादिक ऊपरि के गुणस्थान तिनि विषैं इनिका बंध नाहीं, ऐसैं ही व्युच्छित्ति का स्वरूप सर्वत्र जानना । सासादन विषैं पचीस प्रकृति व्युच्छित्ति रूप भई, मिश्र विषैं 'शून्य' कहिए व्युच्छित्ति का अभाव है । असंयत विषैं दश, देशसंयत विषैं च्यारि, प्रमत्त विषैं छह, अप्रमत्त विषैं एक, अपूर्वकरण के सात भाग, तिनविषैं पहिले भाग में दोय, द्वितीयादि पंचम भाग पर्यंत विषैं शून्य, छठा भाग विषैं तीस, सातवां भाग विषैं च्यारि, बहुरि अनिवृत्तिकरण विषैं पंच, सूक्ष्मसांपराय विषैं सोलह, उपशांतकषाय-क्षीणकषाय विषैं शून्य-नास्ति, सयोगकेवली विषैं एक, अयोगकेवली विषैं बंध भी नाहीं अर व्युच्छित्ति भी नाहीं ।

तहां व्युच्छित्ति के कथन विषैं दोय नय हैं – एक उत्पादानुच्छेद, एक अनुत्पादानुच्छेद ।

तहां उत्पादानुच्छेद नाम द्रव्यार्थिकनय का है, सो इस नय का अभिप्राय करि तौ जहां अस्तित्व पाइए तहां ही विनाश कहिए, जातैं जहां अस्तित्व ही नाहीं,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तहां बुद्धि विषैं कैसें आवै ? जब बुद्धि विषैं न आवै तब वचनस्यों अगोचर भए अभाव है, असा व्यवहार कैसे कीया जाइ ? अभाव कोई पदार्थ नाही, जातैं अभाव का जाननहारा सम्यग्ज्ञान-प्रमाण नाहीं है। प्रमाण हैं ते अस्तित्व रूप वस्तु ही कौं जानैं तिनकैं नास्तित्वरूप वस्तु विषैं कैसें प्रवृत्ति होइ ? अर जो नास्तित्व रूप वस्तु विषैं भी प्रवृत्ति होइ तौ गर्दभ का सींग नास्तित्व रूप है, तिस विषैं भी सम्यग्ज्ञान की प्रवृत्ति होइ, सो बनै नाही, तातैं जहां अस्तित्व पाइए, तहां ही नास्तित्व कहना योग्य है।

बहुरि 'अनुत्पादानुच्छेद' नाम पर्यायार्थिकनय का है। सो इस नय के अभिप्राय करि जहां सत्त्व न होइ तहां ही अभाव कहिए, जातैं सद्भाव कौं होत संतैं अभाव का विरोध है। बहुरि सद्भाव का निषेध बिना अभाव होइ नाही। बहुरि ऐसा भी नाही जो कर्मनि का नाश नाही है, जातैं घातिया-अघातिया कर्म सर्वत्र न पाइए हैं। बहुरि सद्भाव है सो अभाव रूप नाहीं है, जातैं सद्भाव कैं अर अभाव कैं परस्पर विरोध है, तातैं जहां नास्तित्व पाइए तहां ही नास्तित्व कहना योग्य है। स्याद्वादमत विषैं दोऊ नय अविरोधी हैं, सो इहां व्युच्छित्ति कथन विषैं द्रव्यार्थिक-नय रूप उत्पादानुच्छेद की अपेक्षा कथन है। 'उत्पाद' कहिए विद्यमान अस्तित्व ताका 'अनुच्छेद' कहिए दूरि होना सो जाके विषैं नाहीं असा द्रव्यार्थिक नय है, सो इस नय की अपेक्षा अपने-अपने गुणस्थान के अंत के समय व्युच्छित्ति कही। बहुरि जो पर्या-यार्थिकनय करि कहिए तो उस अंत के समय पीछे जो अनंतर समय होइ तहां तिन प्रकृतिनि का नाश कहिए।

जैसे लोक विषैं भी कोऊ दोय पुरुष एक नगरि विषैं थे। तिनमें स्यो एक पुरुष और नगरि गया, तहां ताकौं बूझा (पूछा) जो तुम कहां बिछुरे थे, तब वानें कह्या मैं अमुक नगरि विषैं बिछुर्या था, सो जहां उनका संयोग था तहां ही बिछुरना कह्या, तैसें इहां भी व्युच्छित्ति का स्वरूप जानना। सो यहु तौ द्रव्यार्थिकनय का अभिप्राय है बहुरि तिसही पुरुष नै बूझा (पूछा) थका असा कह्या कि हम अमुके नगरि कौं छोडि अमुके नगरि ठिकानें आए तब वासौं बिछुरे, सो इहां जहां उसके संयोग का अभाव भया तहां ही बिछुरना कह्या तैसें अबंध विषैं बंध का अभाव जानना, इहां पर्याया-र्थिकनय का अभिप्राय है ॥९४॥

आगैं तिनि व्युच्छित्ति रूप प्रकृतिनि के नाम आठ गाथानि करि कहैं हैं—

मिच्छत्तहुंडसंढा, ऽसंपत्तेयक्खथावरादावं।
सुहुमतियं वियलिंदी, णिरयदुणिरयाउगं मिच्छे ॥९५॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

मिथ्यात्वहुंडषंढा, संप्राप्तैकाक्षस्थावरातपः ।
सूक्ष्मत्रयं विकलेंद्रियं, निरयद्विनिरयायुष्कं मिथ्यात्वे ॥९५॥

टीका – मिथ्यात्व, हुंडक संस्थान, नपुंसकवेद, असंप्राप्तासृपाटिका संहनन, (क्रोधादि चार) एकेंद्रिय, स्थावर, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्ति, साधारण, विकलत्रय तीन – बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री, नरक गति, नरकगत्यानुपूर्वी ए नरक द्विक, अर नरक आयु – ए सोलह प्रकृति तिनके बंध का कारण मिथ्यात्व ही का उदय है, तातैं ए प्रकृति मिथ्यात्व का अंत समय विषैं व्युच्छित्ति रूप भई ॥९५॥

विदियगुणे अणथीणति, दुभगतिसंठाणसंहदिचउक्कं ।
दुग्गमणित्थीणीचं, तिरियदुगुज्जोवतिरियाऊ ॥९६॥

द्वितीयगुणे अनस्त्यानत्रयदुर्भगत्रयसंस्थानसंहतिचतुष्कं ।
दुर्गमनस्त्रीनीचं, तिर्यग्द्विकोद्योततिर्यगायुः ॥९६॥

टीका – दूसरा सासादन-गुणस्थान का अंत का समय विषैं अनंतानुबंधी च्यारि, स्त्यानगृद्धि-निद्रानिद्रा-प्रचलाप्रचला ए तीन, दुर्भग-दुःस्वर-अनादेय – ए तीन, न्यग्रोध परिमंडल-स्वाति-कुब्ज-वामन – ए च्यारि संस्थान, वज्रनाराच-नाराच-अर्धनाराच-कीलित – ए च्यारि संहनन, अप्रशस्तविहायोगति, स्त्रीवेद, नीचगोत्र, तिर्यंचगति वा आनुपूर्वी – तिर्यंच-द्विक, उद्योत, तिर्यंच-आयु – ए पचीस प्रकृति व्युच्छित्ति रूप भई सो ए अनंतानुबंधी के उदय बिना मिथ्यादृष्टि विषैं केवल मिथ्यात्व तैं भी बंधै अर मिथ्यात्व के उदय बिना सासादन विषैं केवल अनंतानुबंधी तैं भी बंधै, तातैं इनका कारण मिथ्यात्व अर अनंतानुबंधी दोऊ जानने । मिश्र-गुणस्थान विषैं बंध की व्युच्छित्ति शून्य है, किसी ही प्रकृति की व्युच्छित्ति नहीं ॥९६॥

अयदे बिदियकसाया, वज्जं ओरालमणुदुमणुवाऊ ।
देसे तदियकसाया, णियमेणिह बंधवोच्छिण्णा ॥९७॥

अयते द्वितीयकषाया, वज्रमोरालमनुष्यद्विमानवायुः ।
देशे तृतीयकषाया, नियमेनेह बंधव्युच्छिन्नाः ॥९७॥

टीका – असंयत-गुणस्थान का अंत समय विषैं दूसरा अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि, वज्रवृषभनाराच-संहनन, औदारिक-शरीर, औदारिक-अंगोपांग – ए दोय,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

मनुष्यगति-मनुष्यगत्यानुपूर्वी – ए दोय, मनुष्यायु – ए दश प्रकृति बंधतैं व्युच्छित्ति रूप भई, जातैं – ए अप्रत्याख्यान-कषाय के उदय के निमित्त तैं बंधैं हैं । बहुरि देश-व्रत गुणस्थान का चरम-समय विषैं प्रत्याख्यान कषाय च्यारि, व्युच्छित्ति भई नियम करि, जातैं ए अपने उदय के निमित्त तैं बंधै हैं ॥९७॥

छट्ठे अथिरं असुहं, असादमजसं च अरदिसोगं च ।
अपमत्ते देवाऊ, णिट्ठवणं चेव अत्थित्ति ॥९८॥

षष्ठे अस्थिरमशुभमसातमयशश्च अरतिशोकं च ।
अप्रमत्ते देवायुर्निष्ठापनं चैव अस्तीति ॥९८॥

टीका – छठा-प्रमत्तगुणस्थान का अंत समय विषैं अस्थिर, अशुभ, असाता-वेदनीय, अयशस्कीर्ति, अरति, शोक – ए छह व्युच्छित्ति रूप भई, जातैं ए प्रमाद के निमित्त तैं बंधैं हैं । बहुरि श्रेणी चढने कौं अधःकरणादिकरूप न भया ऐसा स्वस्थान-अप्रमत्त का अंत समय विषैं देवायु व्युच्छित्ति रूप भई, जातैं अधःकरणादि रूप भया ऐसा सातिशय अप्रमत्तादिक विषैं देवायु के बंध कौं कारण मध्यमविशुद्धता रूप संज्वलन के परिणाम न संभवै है ॥९८॥

आगैं अपूर्वकरण के सप्त भागनि विषैं तीन भागनि का अंगीकार करि बंध की व्युच्छित्ति कहै हैं —

मरणूणम्हि णियट्टी,पढमे णिद्दा तहेव पयला य ।
छट्ठे भागे तित्थं, णिमिणं सग्गमणपंचिंदी ॥९९॥

तेजदुहारदुसमचउ, सुरवण्णागुरुचउक्कतसणवयं ।
चरमे हस्सं च रदी, भयं जुगुच्छा य बंधवोच्छिण्णा ॥१००॥

मरणोने निवृत्तिप्रथमे निद्रा तथैव प्रचला च ।
षष्ठे भागे तीर्थं, निर्माणं सद्गमनपंचेंद्रियं ॥९९॥

तेजोद्विकाहारद्विसमचतुरस्रसुरवर्णागुरुचतुष्कत्रसनवकं ।
चरमे हास्यं च रतिः भयं जुगुप्सा च बंधव्युच्छिन्ना ॥१००॥

टीका – 'निवृत्ति' कहिए अपूर्वकरण गुणस्थान ताका चढ़नैं के अवसर विषैं मरण करि रहित ऐसा प्रथम भाग ताके विषैं निद्रा अर प्रचला – ए दोय व्युच्छित्ति

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

भई । तैसै ही छठा भाग का अंत समय विषैं तीर्थंकर, निर्माण, शुभविहायोगति, पंचेंद्रिय, तैजस, कार्माण – ए दोय, आहारक, आहारक-अंगोपांग–ए दोय, समचतुरस्र (संस्थान), देवगति देवगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिक, वैक्रियिक-अंगोपांग – ए च्यारि, वर्ण, गंध, रस, स्पर्श – ए च्यारि, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास – ए च्यारि, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय – ए नव; असै तीस प्रकृति व्युच्छित्ति भई । बहुरि सातवां भाग विषैं हास्य, रति, भय, जुगुप्सा – ए च्यारि, प्रकृति बंध विषैं व्युच्छित्ति रूप भई हैं ।।९९–१००।।

पुरिसं चदुसंजलणं, कमेण अणियट्टिपंचभागेसु ।
पढमं विग्घं दंसण, चउजसउच्चं च सुहुमंते ।।१०१।।

पुरुषः चतुःसंज्वलनः, क्रमेण अनिवृत्तिपंचभागेषु ।
प्रथमं विघ्नं दर्शनचतुर्यशउच्चं च सूक्ष्मांते ।।१०१।।

टीका – अनिवृत्ति करण के पंच भाग, तिनि विषैं पहिले भाग में पुरुष वेद, द्वितीय भाग में संज्वलन क्रोध, तीसरा भाग में संज्वलन मान, चौथा भाग में संज्वलन माया, पांचवां भाग विषैं संज्वलन लोभ, असैं क्रम तैं व्युच्छित्ति भई है । बहुरि सूक्ष्म सांपराय का अंत समय विषैं मति आवरणादि पंच ज्ञानावरण, दानांतरायादि पंच अंतराय, चक्षुर्दर्शनावरणादिक च्यारि दर्शन, यशस्कीर्ति, उच्चगोत्र – ए सोलह प्रकृति बंध विषैं व्युच्छित्ति भई ।।१०१।।

यहां गाथा विषैं अंत असा कह्या है, सो अंत के विषैं धरचा हूवा दीपक जैसैं मांही सर्वत्र प्रकाश करैं, तैसैं यहु जेती व्युच्छित्ति कही तेती अंत के समय विषैं जाननी; असा दिखावैं हैं —

उवसंतखीणमोहे, जोगिम्हि य समयियट्ठिदी सादं ।
णायव्वो पयडीणं, बंधस्संतो अणंतो य ।।१०२।।

उपशांतक्षीणमोहे, योगिनि च समयिकस्थितिः सातं ।
ज्ञातव्यः प्रकृतीनां, बंधस्यांतः अनंतश्च ।।१०२।।

टीका – उपशांत मोह, क्षीणमोह, सयोगी – इनिविषैं एक समय की स्थिति लीएं एक सातावेदनीय ही का बंध है, सो योगनि के निमित्त तैं है, जातैं कषायनि का तहां अभाव है । बहुरि अयोगी विषैं योग भी नाही, बंध भी नाही, असैं प्रकृतिनि की 'बंधस्यांतः' कहिए बंध की व्युच्छित्ति कही है, सो जाननी ।।१०२।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगै 'बंधस्य अनंतः' कहिए बंध अर चकार तैं अबंध दोय गाथानि करि कहिए हैं, ते जानने —

सत्तरसेक्कग्गसयं, चउसत्तत्तरि सगट्ठि तेवट्ठी ।
बंधा णवट्ठवण्णा, दुवीस सत्तारसेकोघे ॥१०३॥

सप्तदशैकाग्रशतं, चतुः सप्तसप्ततिः सप्तषष्ठिः त्रिषष्ठिः ।
बंधा नवाष्टपंचाशत्, द्वाविंशतिः सप्तदश एकोघे ॥१०३॥

टीका – अभेद विवक्षाकरि बंधरूप एकसौ बीस प्रकृति हैं, तहां मिथ्यादृष्टि विषैं एकसौ सतरा प्रकृति का बंध है, जातैं **'सम्मेव तित्थबंधो आहार दुगं पमादरहिदेसु'** ऐसा कह्या है, तातैं इहां तीर्थंकर प्रकृति, आहारक-द्विक – इन तीन का बंध नाही । इनमेंस्यों मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति भई सोलह घटाइए तब सासादन विषैं एकसौ एक का बंध है । बहुरि इनमेंस्यों इहां पचीस तौ व्युच्छित्ति भई अर देवायु, मनुष्यायु का मिश्र विषैं बंध नाही, ऐसैं सत्ताईस घटाएं मिश्र विषैं चौहत्तरि का बंध है । बहुरि मिश्र विषैं व्युच्छित्ति का तौ अभाव है, बंध विषैं देवायु, मनुष्यायु, तीर्थंकर ए तीन मिली तातैं असंयत विषैं सतहत्तरि का बंध है । बहुरि इहां दश व्युच्छित्ति भई तिनकौ घटाए देशसंयत विषैं सतसठि का बंध है । बहुरि इहां चारि व्युच्छित्ति भई तिनकौं घटाए प्रमत्त विषैं त्रेसठि का बंध है । बहुरि इहां छह व्युच्छित्ति भई, तिनकौं घटाएं अर आहारकद्विक कौं मिलाएं अप्रमत्त विषैं गुणसठि का बंध है । बहुरि इहां देवायु की व्युच्छित्ति भई, ताकौं घटाएं अपूर्वकरण विषैं अठावन का बंध है । बहुरि इहां तीन भागनि करि छत्तीस की व्युच्छित्ति भई तिनकौं घटाये अनिवृत्तिकरण विषैं बाईस का बंध है । बहुरि इहां पंच भागनि करि पांच की व्युच्छित्ति भई, तिनकौं घटाएं सूक्ष्मसांपराय विषैं सत्तरह का बंध है । बहुरि इहां सोलह की व्युच्छित्ति भई, तिनकौं घटाएं एक साता-वेदनीय रही, तिसका बंध उपशांतकषाय, क्षीणकषाय, सयोगी विषैं जानना । अयोगी विषैं बंध का अभाव है ॥१०३॥

तिय उणवीसं छत्तिय, तालं तेवण्ण सत्तवण्णं च ।
इगिदुगसट्ठी बिरहिय, सय तियउणवीससहिय वीससयं[1] ॥१०४॥

---

[1] – बंध-त्रिभंगी अर्थसंदृष्टि अधिकार में देखें ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

त्रयमेकोनविंशतिः षट्त्रिक, चत्वारिंशत् त्रिपंचाशत् सप्तपंचाशच्च ।
एकद्वाषष्टिः द्विरहितं, शतं त्र्येकोनविंशतिसहितं विंशतिशतं ॥१०४॥

टीका – मिथ्यादृष्टि विषैं तीर्थंकर, आहारक द्विक – ए तीन प्रकृति अबंध हैं। तिनि विषैं सोलह मिलाएं सासादन विषैं उगणीस अबंध है। तिनि विषैं पच्चीस व्युच्छित्ति अर मनुष्य आयु, देवायु मिलाएं मिश्र विषैं छियालीस अबंध हैं। इनि विषैं मनुष्यायु, देवायु, तीर्थंकर घटाएं, असंयत विषैं तियालीस अबंध हैं। इनि विषैं दश मिलाएं, देशसंयत विषैं तरेपन अबंध हैं। इनि विषैं च्यारि मिलाए, प्रमत्त विषैं सत्तावन अबंध हैं। इनि विषैं छह व्युच्छित्ति मिलाएं अर आहारक-द्विक घटाएं, अप्रमत्त विषैं इकसठि अबंध हैं। यामैं देवायु मिलैं अपूर्वकरण विषैं बासठि अबंध हैं। इनि विषैं छत्तीस मिलाएं, अनिवृत्तिकरण विषैं अठ्याणवै अबंध हैं। इनि विषैं पांच मिलाएं, सूक्ष्मसांपराय विषैं इकसौ तीन अबंध हैं। इनि विषैं सोलह मिलाएं, उपशांतमोह, क्षीणमोह, सयोगी विषैं एकसौ उगणीस अबंध हैं। इनि विषैं सातावेदनीय मिलाएं अयोगी विषैं एक सौ बीस प्रकृति अबंध हैं।

गुणस्थान विषैं अनुक्रम तें व्युच्छित्ति – १६।२५।०।१०।४।६।१।३६।५।१६।०।०।१।०।

बंध – ११७।१०१।७४।७७।६७।६३।५९।५८।२२।१७।१।१।१।०।

अबंध – ३।१९।४६।४३।५३।५७।६१।६२।९८।१०३।११९।११९।११९।१२० – **ऐसैं** जानना ॥१०४॥

आगें मार्गणानि विषैं व्युच्छित्ति, बंध, अबंध कहैं हैं। तहां प्रथम ही नरक-गति विषैं तीन गाथानि करि कहै हैं —

ओघे वा आदेसे, णारयमिच्छम्हि चारि वोच्छिण्णा।
उवरिम बारस सुरचउ, सुराउ आहारयमबंधा ॥१०५॥

ओघ इव आदेशे, नारकमिथ्यात्वे चतस्रो व्युच्छिन्नाः।
उपरितना द्वादश सुरचतुष्कं, सुरायुराहारकमबंधाः ॥१०५॥

टीका – मार्गणानि विषैं व्युच्छित्ति, बंध, अबंध गुणस्थानवत् जानना। विशेष है सो कहै हैं – नरकगति विषैं मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं मिथ्यात्वादि आदि की च्यारि प्रकृतिनि ही की व्युच्छित्ति है। मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं सोलह

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रकृतिनि की व्युच्छित्ति वही थी, तिनविषै आदि की च्यारि बिना ऊपरि की बारह, तिनिका बंध नरकगति विषैं नाहीं है। एकेंद्री, स्थावर, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री, नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, नरक आयु – ए बारह जाननी। बहुरि देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिक, वैक्रियिक-अंगोपांग – ए च्यारि, देवायु, आहारक द्विक, इन उगणीस प्रकृति का बंध नरकगति विषैं नाहीं, तातैं धर्मादिक तीन पृथ्वी विषै बंध योग्य एकसौ एक प्रकृति हैं। अंजनादिक तीन पृथ्वी विषैं तीर्थंकर बिना सौ प्रकृति बंधयोग्य हैं। माघवी-सातवी पृथ्वी विषैं मनुष्यायु बिना निन्यानवैं प्रकृति बंधयोग्य हैं। बहुरि अपर्याप्त-काल विषैं धर्मा-पहिली पृथ्वी विषैं तौ एकसौ एक विषैं मनुष्यायु, तिर्यंचायु बिना निन्यानवैं प्रकृति बंधयोग्य हैं, जातैं मिश्रयोग विषैं आयु का बंध होइ नाहीं। वंशादिक पंच पृथ्वीनि विषैं सम्यग्दृष्टि नाहीं उपजैं, तातैं तीर्थंकर बिना अठ्याणवै प्रकृति बंधयोग्य हैं। माघवी-सातवीं पृथ्वी विषैं मनुष्यगति-मनुष्यगत्यानुपूर्वी, ऊच्चगोत्र – इन तीन बिना पिच्याणवैं प्रकृति बंधयोग्य हैं। असैं जानि गुणस्थाननि विषैं व्युच्छित्यादिक कहैं ॥१०५॥

घम्मे तित्थं बंधदि, वंसामेघाण पुण्णगो चेव।
छट्ठोत्ति य मणुवाऊ, चरिमे मिच्छेव तिरियाऊ ॥१०६॥

धर्मे तीर्थं बध्नाति, वशामेघयोः पूर्णकश्चैव।
षष्ठ इति च मानवायुः, चरमे मिथ्यात्वे एव तिर्यगायुः ॥१०६॥

टीका – धर्मा पृथ्वी विषैं पर्याप्त-अपर्याप्त दोऊ काल विषैं तीर्थंकर-प्रकृति कौं बांधैं है। वंशा-मेघा विषैं पर्याप्तकाल विषैं ही तीर्थंकर-प्रकृति कौं बांधैं है, अपर्याप्त न बांधैं है। मघवी-छठी पृथ्वी पर्यंत मनुष्यायु का बंध है। माघवी विषैं नाहीं है।

अब रचना कहैं हैं –

धर्मादिक तीन पृथ्वी की रचना – बंधयोग्य प्रकृति एकसौ एक। गुणस्थान च्यारि। तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति-मिथ्यात्व, हुंडकसंस्थान, नपुंसकवेद, सृपाटिका-संहनन – ए च्यारि। अर बंध सौ (१००) तीर्थंकर बिना। अर अबंध एक। बहुरि सासादन विषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त पचीस। बंध छिनवै। अबंध पांच। बहुरि मिश्र विषैं व्युच्छित्ति शून्य। बंध मनुष्यायु बिना सत्तरि। अबंध इकतीस। बहुरि असंयत विषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त दश। बंध – मनुष्य आयु तीर्थंकर मिलैं बहत्तरि। अबंध-गुणतीस।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि नारक-अपर्याप्त तिनकी रचना —

तहां धर्मादि पृथ्वी विषैं बंधयोग्य प्रकृति निन्याणवै, गुणस्थान दोय - मिथ्यादृष्टि, असंयत। जातैं नारक अपर्याप्त, सासादन होइ नाहीं। तहां मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यादृष्टि की च्यारि अर तिर्यंच-आयु बिना सासादन विषैं कही थीं सो चौईस इनि अट्ठाईस प्रकृतिनि की व्युच्छित्ति है। बंध-तीर्थंकर बिना अठ्याणवै, अबंध एक। असंयत विषैं व्युच्छित्ति-मनुष्यायु बिना पूर्वोक्त नव। बंध-तीर्थंकर सहित इकहत्तरि। अबंध-अट्ठाईस।

बहुरि अंजनादिक तीन पृथ्वीनि विषैं तीर्थंकर बिना सर्व रचना धर्मादिवत् जाननी। बंधयोग्य प्रकृति सौ। तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति चारि, बंध सौ, अबंध नास्ति। सासादन विषैं व्युच्छित्ति पचीस, बंध छिनवै, अबंध च्यारि। मिश्र विषैं व्युच्छित्ति शून्य। बंध-मनुष्यायु बिना सत्तरि, अबंध-तीस। असंयति विषैं व्युच्छित्ति दश, बंध-मनुष्यायु सहित इकहत्तरि। अबंध गुणतीस। बहुरि बंशोनैं आदि देकरि पांच पृथ्वीनि विषैं अपर्याप्त विषैं एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान ही है। तहां अठ्याणवै प्रकृतिनि का बंध जानना ॥१०६॥

मिस्साविरदे उच्चं, मणुवदुगं सत्तमे हवे बंधो।
मिच्छा सासणसम्मा, मणुवदुगुच्चं ण बंधंति ॥१०७॥

मिश्राविरते उच्चं, मनुष्यद्वयं सप्तमे भवेद् बंधः।
मिथ्यात्विनः सासादन, सम्यक्त्वा मनुष्यद्विकोच्चं न बध्नंति ॥१०७॥

टीका – सातवीं-पृथ्वी विषैं मिश्र अर असंयत ही विषैं उच्चगोत्र अर मनुष्यद्विक का बंध है। सो सातवीं-पृथ्वी विषैं पर्याप्त-रचना बंधयोग्य-निन्याणवै, गुणस्थान च्यारि। तहां मिथ्यादृष्टि विषैं च्यारि पूर्वोक्त अर एक तिर्यंच-आयु का इहां ही बंध है। तातैं व्युच्छित्ति पांच, बंध-उच्चगोत्र, मनुष्यद्विक बिना छिनवैं। अबंध-तीन सासादन विषैं व्युच्छित्ति-तिर्यंचायु बिना पूर्वोक्त चौईस। बंध-इक्याणवैं। अबंध-आठ। मिश्र विषैं व्युच्छित्ति शून्य। बंध उच्चगोत्र। मनुष्यद्विक मिलैं सत्तरि। अबंध उनतीस असंयत विषैं व्युच्छित्ति-मनुष्यायु बिना पूर्वोक्त नव। बंध-सत्तरि। अबंध-उनतीस। मिश्रवत्। सातवीं पृथ्वी विषैं अपर्याप्त विषैं एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान है तहां पिच्याणवै प्रकृतिनि का बंध है ॥१०७॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगे तिर्यंच-गति विषैं व्युच्छित्त्यादिक कहैं हैं —

तिरिये ओघो तित्था, हारूणो अविरदे छिदी चउरो ।
उवरिमछण्हं च छिदी, सासणसम्मे हवे णियमा ।।१०८।।

तिरश्चि ओघस्तीर्थाहारो न अविरते छित्तिश्चत्वारः ।
उपरिमषण्णां च छित्तिः सासादनसम्यक्त्वे भवेन्नियमात् ।।१०८।।

टीका – तिर्यंच गति विषैं 'ओघः' कहिए गुणस्थानवत् रचना जाननी । विशेष इतनी जो-तीर्थंकर, आहारकद्विक इनि तीन प्रकृतिनि का बंध नाहीं; तातैं बंधयोग्य प्रकृति एक सौ सतरह । इनि बिना व्युच्छित्ति, बंध, अबंध गुणस्थानवत् जाननी । तहां भी इतना विशेष है – जो अविरत विषैं अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि, तिनही की व्युच्छित्ति जाननी, ऊपर वज्रवृषभनाराच आदि छह प्रकृति रही, तिनकी व्युच्छित्ति सासादन-गुणस्थान ही विषैं जाननी, जातैं इहां मिश्रादिक विषैं तिर्यंच, मनुष्यगति संबंधी प्रकृतिनि का बंध नाहीं है ।।१०८।।

सामण्णतिरियपंचिंदियपुण्णगजोणिणीसु एमेव ।
सुरणिरयाउ अपुण्णे, वेगुव्वियछक्कमवि णत्थि ।।१०९।।

सामान्यतिर्यक्पंचेंद्रियपूर्णकयोनिनीषु एवमेव ।
सुरनिरयायुरपूर्णे, वैगूर्विकषट्मपि नास्ति ।।१०९।।

टीका – सर्वभेद का समुदाय रूप सामान्य तिर्यंच, पंचेंद्री-तिर्यंच, स्त्रीवेदरूप-योनिमत्-तिर्यंच, इनि च्यारि प्रकार तिर्यंचनि विषैं असैं ही है । बहुरि लब्धि अप-र्याप्तक-तिर्यंच विषैं देवायु अर देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिक, वैक्रियिक-अंगोपांग – ए वैक्रियिकषट्क असैं आठ प्रकृति बंधयोग्य नाहीं ।

तहां सामान्यादिक च्यारि प्रकार तिर्यंचनि की रचना —

मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति-गुणस्थानोक्त सोलह, बंध एक सौ सतरह । अबंध-नास्ति (शून्य) । सासादन विषैं गुणस्थानोक्त पचीस, अर असंयत विषैं व्युच्छित्ति कही थी, वज्रवृषभनाराच औदारिक, औदारिक अंगोपांग, मनुष्यगति, मनुष्य-गत्यानुपूर्वी, मनुष्यआयु, इन छहौं की इहां ही व्युच्छित्ति भई, तातैं व्युच्छित्ति-इकतीस । बंध-एक सौ एक । अबंध-सोलह । मिश्र विषैं व्युच्छित्ति-शून्य, बंध-पूर्वोक्त

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

देवायु बिना गुणहत्तरि । अबंध-अठतालीस । असंयत विषैं व्युच्छित्ति-अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि, बंध-देवायु मिलें सत्तरि, अबंध-सैंतालीस । देशसंयत विषैं व्युच्छित्ति प्रत्याख्यान च्यारि, बंध छयासठि । अबंध-इक्यावन ।

बहुरि सामान्यादिक च्यारि प्रकार निवृत्ति-अपर्याप्त तिर्यंच तिनकी रचना—

तहां बंधयोग्य प्रकृति एक सौ ग्यारह मिश्रकाय योगी है, तातैं इहां च्यारि आयु अर नरकद्विक का बंध नाही । गुणस्थान तीन तहां मिथ्यादृष्टि विषैं सोलह में स्यों नरक-आयु, नरक-द्विक बिना व्युच्छित्ति तेरह, बंध एक सौ सात, जातैं मिथ्यादृष्टि, सासादन-अपर्याप्त विषैं देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिक, वैक्रियिकअंगोपांग – इस सुरचतुष्क का बंध नाहीं अर अबंध एई च्यारि प्रकृति । सासादन विषैं पूर्वोक्त इकतीस में स्यों तिर्यंचायु, मनुष्यायु बिना व्युच्छित्ति गुणतीस, बंध मिथ्यादृष्टि की व्युच्छित्ति कौं घटाएं चौराणवै, अबंध-सतरह । असंयत विषैं व्युच्छित्ति-अप्रत्याख्यान-कषाय च्यारि, बंध-पूर्वोक्त व्युच्छित्ति घटाएं अर सुरचतुष्क मिलाएं गुणहत्तरि, अबंध-बियालीस । बहुरि लब्धि-अपर्याप्तक-तिर्यंच विषैं गुणस्थान एक-मिथ्यादृष्टि, तहां तिर्यंचायु, मनुष्यायु का बंध हो है, तातैं तिर्यंच-गति संबंधी बंधयोग्य एक सौ सतरह में देवायु अर नरकायु अर वैक्रियिक-षट्क इनि आठ प्रकृतिनि का बंध नाहीं, तातैं बंध-योग्य एक सौ नव प्रकृति जाननी ॥१०९॥

आगैं मनुष्यगति विषैं कहै हैं —

तिरयेव णरे णवरि हु, तित्थाहारं च अत्थि एमेव ।
सामण्णपुण्णमणुसिणि, णरे अपुण्णे अपुण्णेव ॥११०॥

तिर्यगिव नरे नवरि हि, तीर्थाहारं चास्ति एवमेव ।
सामान्यपूर्णमनुष्यणी, नरे अपूर्णे अपूर्ण एव ॥११०॥

टीका – तिर्यंचगतिवत् मनुष्यगति विषैं रचना है, जातैं इहां भी अविरति विषैं व्युच्छित्ति च्यारि है, ऊपरि के वज्रवृषभनाराचादिक छह, तिनकी व्युच्छित्ति सासादन विषैं ही भई यह विशेष समान है । बहुरि इतना नवीन विशेष है तीर्थंकर अर आहारक-द्विक का बंध इहां पाइए है, सो सर्वभेद का समुदायरूप सामान्य मनुष्य अर पर्याप्त मनुष्य अर स्त्रीवेदरूप-मनुष्यणी-मनुष्य – इन तीनों की रचना तौ असैं ही जाननी । तहां बंधयोग्य प्रकृति एक सौ बीस, गुणस्थान चौदह । तिनि विषैं नीचली व्युच्छित्ति बंध विषैं घटाएं, विशेष कथन पूर्वक अबंध विषैं जोड़ैं, ऊपरि के

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

गुणस्थाननि विषैं बंध-अबंध हो है वहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति सोलह बंध तीर्थंकर, आहारकद्विक बिना एक सौ सतरह, अबंध-तीन। सासादन विषै तिर्यंचवत् व्युच्छित्ति इकतीस, बंध एक सौ एक, अबंध उगणीस। मिश्र विषैं व्युच्छित्ति शून्य, बंध देवायु बिना गुणहत्तरि, अबंध इक्यावन, असंयत विषैं अप्रत्याख्यान च्यारि व्युच्छित्ति, बंध देवायु अर तीर्थंकर के मिलन तैं इकहत्तर, अबंध उनचास। देशव्रत विषैं व्युच्छित्ति प्रत्याख्यान-कषाय च्यारि, बंध सतसठि, अबंध तरेपन, आगे प्रमत्तादिक विषैं व्युच्छित्ति, बंध, अबंध मूल-गुणस्थान रचनावत् जानने। विशेष किछू नाहीं।

बहुरि सामान्य-मनुष्य, पर्याप्त-मनुष्य, मनुष्यणी-मनुष्य इनि तीनों निर्वृत्ति-अपर्याप्तकनि कैं बंधयोग्य प्रकृति एक सौ बारह जातैं मिश्र काययोगी हैं, तातैं इहां च्यारि आयु नरकद्विक, आहारक द्विक इनि आठनि का बंध नाहीं। गुणस्थान-मिथ्यादृष्टि, सासादन, अविरत प्रमत्त, सयोगी – ए पांच। तहां मिथ्यादृष्टि विषैं सोलह में स्यों नरकद्विक, नरकायु बिना व्युच्छित्ति तेरह। बंध देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिक, वैक्रियिक-अंगोपांग, तीर्थंकर – इन पंच बिना एक सौ सात, अबंध पांच। सासादन विषैं इकतीस में स्यों मनुष्य आयु, तिर्यंच-आयु बिना व्युच्छित्ति गुणतीस, बंध चौराणवै, अबंध अठारह। असंयत विषैं अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान कषाय-आठ व्युच्छित्ति, बंध सुरचतुष्क अर तीर्थंकर के मिलने तें सत्तरि, अबंध बियालीस, प्रमत्तसंयत विषैं प्रमत्त की छह अप्रमत्त की देवायु थी सो बंध ही में नाहीं, तातैं न गिनी। अपूर्वकरण की आहारक-द्विक बिना चौंतीस, अनिवृत्तिकरण की पांच, सूक्ष्म-सांपराय की सोलह, सब मिलाएं व्युच्छित्ति प्रकृति इकसठि, बंध बासठि, अबंध पचास, सयोगी विषैं व्युच्छित्ति एक साता वेदनीय, बंध एक सातावेदनीय, अबंध एक सौ ग्यारह।

बहुरि लब्धि-अपर्याप्तक-मनुष्य की रचना लब्धि-अपर्याप्तक तिर्यंचवत् जाननी। देवायु, नरकायु, वैक्रियिक-षट्क, तीर्थंकर, आहारकद्विक – इन ग्यारह बिना बंधयोग्य प्रकृति एक सौ नव, गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि जानना ॥११०॥

आगैं देवगति विषैं कहैं हैं —

णिरयेव होदि देवे, आईसाणोत्ति सत्त वाम छिदी।
सोलस चेव अबंधा, भवणतिए णत्थि तित्थयरं ॥१११॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

निरय इव भवति देवे, आईशान इति सप्त वामे छित्तिः ।
षोडश चैव अबंधा, भवनत्रये नास्ति तीर्थकरं ।।१११।।

टीका – देवगति विषैं रचना नरकगतिवत् जाननी । इतना विशेष जो मिथ्यादृष्टि गुणस्थान संबंधी व्युच्छित्ति रूप सोलह प्रकृतिनि विषैं ईशान स्वर्ग पर्यंत मिथ्यात्व अर हुंड संस्थानादिक छह, इनि सात प्रकृतिनि की व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं है । बहुरि अवशेष नव प्रकृति इहां बंधयोग्य नाहीं, सो सूक्ष्म अपर्याप्त, साधारण – ए तीन बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री – ए तीन नरकद्विक, नरकायु – ए नव अर देवगति-देवगत्यानुपूर्वी-वैक्रियिक अंगोपांग – ए सुरचतुष्क अर देवायु अर वैक्रियिक अंगोपांग आहारक द्विक – ए सोलह प्रकृति देवगति विषै बंधयोग्य नाहीं, तातैं बंधयोग्य प्रकृति एक सौ च्यारि हैं । बहुरि भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषी – ए भवनत्रिक अर कल्पवासिनी देवांगना-इनके तीर्थंकर प्रकति का भी बंध नाहीं, तातैं इनकैं बंधयोग्य प्रकृति एकसौ तीन है ।

तहां भवनत्रिक-कल्पवासिनी की रचना —

बंधयोग्य प्रकृति एक सौ तीन । गुणस्थान च्यारि। तहां मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यात्व, हुंडसंस्थान, नपुंसक वेद, सृपाटिका-संहनन, एकेंद्री, स्थावर, आतप – ए सात प्रकृति व्युच्छित्ति हैं। बंध एक सौ तीन, अबंध शून्य । सासादन विषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानोक्त पचीस, बंध छिनवैं, अबंध सात । मिश्र विषैं व्युच्छित्ति शून्य, बंध मनुष्यायु बिना सत्तरि, अबंध तेतीस । असंयत विषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानोक्त दश, बंध मनुष्यायु के मिलने तैं इकहत्तरि, अबंध बत्तीस ।

बहुरि सौधर्म–ईशान की रचना —

बंधयोग्य प्रकृति एक सौ च्यारि, गुणस्थान च्यारि । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्वादिक पूर्वोक्त सात, बंध तीर्थंकर बिना एक सौ तीन, अबंध एक । सासादन विषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानोक्त पचीस । बंध छिनवै, अबंध आठ । मिश्र विषैं व्युच्छित्ति शून्य, बंध मनुष्यायु बिना सत्तरि, अबंध चौतीस । असंयत विषै व्युच्छित्ति गुणस्थानोक्त दश, बंध मनुष्यायु तीर्थंकर के मिलने तैं बहत्तरि, अबंध बत्तीस ।।१११।।

कप्पित्थीसु ण तित्थं, सदरसहस्सारगोत्ति तिरियदुगं ।
तिरियाऊ उज्जोवो, अत्थि तदो णत्थि सदरचऊ ।।११२।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

कल्पस्त्रीषु न तीर्थं, शतारसहस्रारक इति तिर्यग्द्विकं ।
तिर्यगायुरुद्योतः, अस्ति ततोनास्ति शतारचतुष्कं ।।११२।।

टीका – कल्पवासिनी – स्त्रीनि विषैं तीर्थंकर-प्रकृति बंधे नाहो; तातैं कल्पवासिनी की रचना भवनत्रिक की रचना विषैं ही कही, जातैं दोऊ जायगा गुणस्थान व्युच्छित्ति बंध, अबंध विषैं किछू विशेष नाहीं है ।

बहुरि सनत्कुमारादि दश स्वर्गनि विषैं नरकवत् रचना कही, तातैं बंधयोग्य प्रकृति एक सौ एक, गुणस्थान च्यारि । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्व, हुंड संस्थान, नपुंसक वेद, सृपाटिका संहनन – ए च्यारि, जातैं सात प्रकृतिनि की व्युच्छित्ति ईशान पर्यंत ही कही, तातैं इहां नरकवत् च्यारि प्रकृति ही की व्युच्छित्ति जाननी । बंध तीर्थंकर बिना सौ, अबंध एक । सासादन विषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानोक्त पचीस, बंध छिनवै, अबंध पांच । मिश्रविषैं व्युच्छित्ति शून्य, बंध मनुष्यायु बिना सत्तरि, अबंध इकतीस, असंयत विषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानोक्त दश, बंध मनुष्यायु-तीर्थंकर के मिलने तैं बहत्तरि, अबंध गुणतीस ।

बहुरि तिर्यंचगति-तिर्यंचगत्यानुपूर्वी – ए तिर्यंचद्विक अर तिर्यंच-आयु अर उद्योत – इन च्यारि प्रकृतिनि कौं **सदरचउक्क** कहिए । सो इस सदरचउक्क का बंध शतार सहस्रार पर्यंत ही है, ऊपरि नाहीं, तातैं आनतादिक च्यारि स्वर्ग अर नव ग्रैवेयक इनिविषैं बंधयोग्य प्रकृति सत्याणवै हैं । गुणस्थान च्यारि । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति च्यारि मिथ्यात्वादिक, बंध तीर्थंकर बिना छिनवै, अबंध एक । सासादन विषैं सदरचउक्क व्युच्छित्ति इकईस, बंध बाणवै, अबंध पांच । मिश्र विषैं व्युच्छित्ति शून्य, बंध मनुष्यायु बिना सत्तरि, अबंध सत्ताईस, असंयत विषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानोक्त दश, बंध तीर्थंकर मनुष्यायु के मिलने तैं बहत्तरि, अबंध पचीस ।

बहुरि अनुदिशअनुत्तर विमानवासी अहमिंद्रते सर्व सम्यग्दृष्टी ही हैं, तिनकैं बंधयोग्य पूर्वे असंयतोक्त बहत्तरि, गुणस्थान एक असंयत जानना ।

बहुरि निवृत्ति–अपर्याप्तक रचना —

तहां भवनत्रिक अर कल्पवासिनी इनिकै बंधयोग्य प्रकृति एक सौ एक, जातैं मिश्रकाय योगीपनैं तैं तिर्यंचायु, मनुष्यायु का बंध नाहीं । गुणस्थान दोय, जातैं असंयत मरि करि इनि विषैं उपजैं नाहीं । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सात। बंध एक सौ एक, अबंध शून्य। सासादन विषैं व्युच्छित्ति तिर्यंचायु बिना चौईस, बंध चौराणवै, अबंध सात।

बहुरि सौधर्म-ईशान विषैं तीर्थंकर मिलनें तैं बंधयोग्य प्रकृति एक सौ दोय, गुणस्थान तीन। तहां मिथ्यादृष्टि विषै व्युच्छित्ति पूर्वोक्त सात, बंध तीर्थंकर बिना एक सौ एक, अबंध एक। सासादन विषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त चौईस, बंध चौराणवै, अबंध ८। असंयत विषैं व्युच्छित्ति मनुष्यायु बिना नव, बंध तीर्थंकर मिलैं इकहत्तरि, अबंध इकतीस।

बहुरि सानत्कुमारादि दश स्वर्गनि विषैं पर्याप्त संबंधी एक सौ एक में स्यों तिर्यंचायु-मनुष्यायु घटाए बंधयोग्य प्रकृति निन्याणवे, गुणस्थान तीन। तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्वादिक च्यारि, बंध तीर्थंकर बिना अठ्याणवे, अबंध एक। सासादन विषैं व्युच्छित्ति चौईस, बंध चौराणवै, अबंध पांच। असंयत विषैं व्युच्छित्ति नव, बंध तीर्थंकर मिलैं इकहत्तर, अबंध अठाईस।

बहुरि आनतादिक च्यारि स्वर्ग अर नव ग्रैवेयकनि विषैं तिर्यंच-द्विक अर उद्योत बिना बंधयोग्य प्रकृति छिनवै, गुणस्थान तीन। तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति च्यारि, बंध पिच्याणवै, अबंध एक। सासादन विषैं व्युच्छित्ति सदर-चउक्क बिना इकईस, बंध इक्याणवै, अबंध पांच। असंयत विषैं व्युच्छित्ति नव, बंध इकहत्तरि, अबंध पचीस।

बहुरि अनुदिश-अनुत्तरवासी देव सर्व असंयत ही हैं। तहां बंध इकहत्तरि प्रकृतिनि का जानना ॥११२॥

पुण्णिदरं विगिविगले, तत्थुप्पण्णो हु सासणो देहे।
पज्जत्तिं णवि पावदि, इदि णरतिरियाउगं णत्थि ॥११३॥

पूर्णेतरमिवैकविकले, तत्रोत्पन्नो हि सासादनो देहे।
पर्याप्तिं नापि प्राप्नोति, इति नरतिर्यगायुष्कं नास्ति ॥११३॥

टीका – इंद्रिय-मार्गणा विषैं एकेंद्री, बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री, इनविषैं लब्धि-अपर्याप्तवत् बंधयोग्य प्रकृति एक सौ नव, जातैं तीर्थंकर, आहारकद्विक, देवायु नरकायु, वैक्रियिक-षट्क इनिका बंध नाही है। गुणस्थान दोय, तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति पंद्रह। गुणस्थान-रचना विषैं सोलह कही थी, तिनविषैं नरकद्विक

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अर नरकायु – ए तीन घटाइए अर मनुष्यायु अर तिर्यंच-आयु मिलाइए–तब पंद्रह होइ। मनुष्यायु-तिर्यंचायु की व्युच्छित्ति इहां ही कही, ताका हेतु यह है जो सासादन का तहां काल थोरा अर निवृत्ति-अपर्याप्त-अवस्था का काल बहुत, तातैं सासादन विषै शरीर-पर्याप्ति पूर्ण न करै, तातैं इहां सासादन विषैं मनुष्यायु-तिर्यंचायु का बंध नाहीं, इहां ही व्युच्छित्ति कही। बंध एक सौ नव, अबंध शून्य। सासादन विषैं व्युच्छित्ति पूर्वैं कही थी, तेई गुणतीस, बंध चौराणवैं, अबंध पंद्रह ॥११३॥

पंचेंदियेसु ओघं, एयक्खे वा वणप्फदीयंते।
मणुवदुगं मणुवाऊ, उच्चं ण हि तेउवाउम्हि ॥११४॥

पंचेंद्रियेषु ओघः, एकाक्ष इव वनस्पत्यंते।
मनुष्यद्वयं मनुष्यायु, रुच्चं नहि तेजोवायौ ॥११४॥

टीका – पंचेद्रिय विषैं 'ओघः' कहिए गुणस्थान रचनावत् रचना जानना, किछू विशेष नाहीं। बंधयोग्य प्रकृति एकसौ बीस। गुणस्थान चौदह। सोलह पचीसनै आदि दे करि व्युच्छित्ति एक सौ सतरह, एक सौ एक ने आदि देकरि बंध तीन, उगणीस ने आदि देकरि अबंध गुणस्थान रचनावत् सर्व जानना।

बहुरि निवृत्ति-अपर्याप्तक पंचेंद्री विषैं बंधयोग्य प्रकृति एक सौ बारह, गुण-स्थान पांच। तिनकी रचना सुगम है। जातैं तीर्थंकर, सुर-चतुष्क का बंध एक असंयत-गुणस्थान विषैं ही है, तातैं निवृत्ति-अपर्याप्त मनुष्य रचनावत् जानना। विशेष इतना – जो औदारिकद्विक, मनुष्यद्विक, वज्रवृषभ-नाराच इन पंच प्रकृतिनि की व्युच्छित्ति तहाँ दूसरे गुणस्थान विषैं कही थी, इहां चौथे गुणस्थान में तिनकी व्युच्छित्ति जाननी। औंर किछू विशेष नाहीं। तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति तेरह, बंध एक सौ सात, अबंध पांच। सासादन विषैं व्युच्छित्ति चौईस, बंध चौराणवै, अबंध अठारह। अविरत विषैं व्युच्छित्ति तेरह, बंध पिचहत्तरि, अबंध सैंतीस; प्रमत्त विषैं व्युच्छित्ति इकसठि, बंध बासठि, अबंध पचास। सयोगी विषैं व्युच्छित्ति एक, बंध एक, अबंध एक सौ ग्यारह।

इहां च्यारचों गतिसंबंधी निवृत्ति-अपर्याप्तनि की अपेक्षा कथन जानना।

बहुरि पंचेंद्रिय लब्धि-अपर्याप्तक विषैं बंधयोग्य प्रकृति एक सौ नव तीर्थंकर, आहारकद्विक, देवायु, नरकायु, वैक्रियिकषट्क इनि ग्यारह प्रकृतिनि का बंध नाहीं। गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि कायमार्गणा विषैं पृथिवकायादिक वनस्पति पर्यंत पंच स्थावर, तिनकी रचना एकेंद्रिय रचनावत् जाननी । तहां तीर्थंकर, आहारक द्विक, देवायु, नरकायु, वैक्रियिकषट्क इन ग्यारह बिना बंधयोग्य प्रकृति एक सौ नव, तहां पृथ्वीकाय, अप-काय, वनस्पति-कायनि विषैं उत्पन्न भया जीव कैं सासादन कौं होत संतै शरीर-पर्याप्ति पूर्ण न होइ, तातैं तिर्यंचायु का बंध मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं ही है । तातैं मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति पंद्रह, बंध एक सौ नव, अबंध शून्य । सासादन विषैं व्युच्छित्ति गुणतीस, बंध चौराणवै, अबंध पंद्रह । बहुरि तेजस्कायिक, वातकायिक, विषैं मनुष्यद्विक, मनुष्यायु, उच्चगोत्र, इन च्यारि प्रकृतिनि का भी बंध नाहीं, तातैं बंधयोग्य प्रकृति गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि ही है, सासादन नाहीं ।।११४।।

कांहेतें ? सो कहै हैं—

ण हि सासणो अपुण्णे, साहारणसुहुमगे य तेउदुगे ।
ओघं तस मणवयणे, ओराले मणुवगइभंगो ।।११५।।

नहि सासादनोऽपूर्णे, साधारणसूक्ष्मके च तेजोद्वये ।
ओघः त्रसे मनोवचने, औराले मनुष्यगतिभंगः ।।११५।।

टीका – **'हि'** कहिए जातैं लब्धि-अपर्याप्तक विषैं साधारण-शरीरयुक्त जीवनि विषैं, सर्व सूक्ष्म जीवनि विषैं, तेजस्कायिक-वातकायिक,जीवनि विषैं सासादन-गुणस्थान न पाइए है । नरक विषैं अपर्याप्त दशा में सासादन न पाइए है, तातैं तेजस्काय वात-काय विषैं एक ही गुणस्थान कह्या । बहुरि त्रसकाय विषैं रचना गुणस्थान रचनावत् जाननी, विशेष किछू नाहीं । बंधयोग्य प्रकृति एक सौ बीस, गुणस्थान चौदह, सोलह, पचीस इत्यादिक, व्युच्छित्ति; एक सौ सतरह, एक सौ एक इत्यादिक बंध; तीन, उगणीस इत्यादिक अबंध गुणस्थान रचनावत् सर्व जानना ।

बहुरि त्रस निर्वृत्ति-अपर्याप्तक की रचना पंचेंद्रियनिर्वृत्ति-अपर्याप्तक की रचनावत् जाननी, विशेष किछू नाहीं । बंधयोग्य प्रकृति एक सौ बारह, गुणस्थान पांच ।

बहुरि योगमार्गणा विषैं मनोयोग, वचनयोग की रचना **'ओघः'** कहिए गुणस्थान रचनावत् जाननी । बंधयोग्य प्रकृति एक सौ बीस; गुणस्थान सत्य-अनुभय मन वा वचन विषैं तो सयोगी पर्यंत तेरह, अर असत्य-उभय मन वा वचन विषैं क्षीणकषाय पर्यंत बारह, सो इन विषैं गुणस्थानवत् व्युच्छित्ति, बंध, अबंध जानना ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि औदारिक-काययोग की रचना मनुष्यगति रचनावत् जाननी। बंध योग्य प्रकृति एक सौ बीस। गुणस्थान तेरह तहां सोलह, इकतीस तै आदि देकरि व्युच्छित्ति एक सौ सतरह, एक सौ एक ने आदि देकरि बंध अर तीन, उगणीस ने आदि देकरि अबंध क्रमतैं गुणस्थाननि विषैं जानना ॥११५॥

ओराले वा मिस्से, ण हि सुरणिरयाउहारणिरयदुगं।
मिच्छदुगे देवचओ, तित्थं ण हि अविरदे अत्थि ॥११६॥

औराल इव मिश्रे, नहि सुरनिरयायुराहारनिरयद्वयं।
मिथ्यात्वद्वये देवचतुष्कं, तीर्थं नहि अविरतेऽस्ति ॥११६॥

टीका – औदारिक-मिश्र विषैं रचना औदारिक-काययोगवत् जाननी। विशेष कहै हैं–औदारिक मिश्रयोगी दोय प्रकार–लब्धि अपर्याप्तक, निर्वृत्ति अपर्याप्तक। तातैं निर्वृत्ति अपर्याप्तक कौं बंधयोग्य एक सौ बारह। तिनविषैं मनुष्यायु, तिर्यंचायु मिलाइए; जातैं लब्धि अपर्याप्त कैं मनुष्य आयु, तिर्यंच आयु का बंध हो है। ऐसैं औदारिक-मिश्र-योग विषैं देवायु, नरकायु, आहारद्विक, नरक बिना बंधयोग्य प्रकृति एक सौ चौदह। तहां सुर चतुष्क अर तीर्थंकर ए पंच प्रकृति मिथ्यादृष्टि सासादन विषैं बंधै नाहीं है; अविरत विषैं बंधै हैं ॥११६॥

पण्णारसमुनतीसं, मिच्छदुगे अविरदे छिदी चउरो।
उवरिमपणसट्ठीवि य, एक्कं सादं सजोगिम्हि ॥११७॥

पंचदशैकोनत्रिंशत्, मिथ्यात्वद्विके अविरते छित्तयश्चतस्रः।
उपरिमपंचषष्टिरपि च, एकं सातं सयोगिनि ॥११७॥

टीका – औदारिक-मिश्र विषैं गुणस्थान च्यारि, मिथ्यादृष्टि-द्विक विषैं पंद्रह-गुणतीस, अविरत विषैं च्यारि, ऊपरि की पैसठि – ऐसैं गुणहत्तरि। सयोगी विषैं एक साता व्युच्छित्ति प्रकृति है। मिथ्यादृष्टि विषैं सोलह में नरकायु, नरक-द्विक घटाइए; तिर्यंचायु-मनुष्यायु मिलाइए – ऐसैं व्युच्छित्ति पंद्रह। बंध सुरचतुष्क अर तीर्थंकर बिना अबंध एक सौ नव (१०९)। सासादन विषैं मिश्र-अवस्था मैं लब्धि-अपर्याप्तक बिना और कैं आयु का बंध नाही, तातैं ईकतीस में स्यो मनुष्यायु तिर्यंचायु घटाएं व्युच्छित्ति गुणतीस (२९)। बंध चौराणवै (९४)। अबंध बीस। असंयत विषैं वज्रवृषभ नाराचादिक छह प्रकृतिनि की व्युच्छित्ति सासादन ही में

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

भई; तातैं अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि अर देशसंयत संबंधी प्रत्याख्यान-कषाय च्यारि प्रमत्तसंबंधी छह, अप्रमत्त संबंधी देवायु बंधयोग्य ही नाहीं; तातैं न गिनी। अपूर्वकरण की आहारद्विक बिना चौंतीस (३४), अनिवृत्तिकरण की पांच, सूक्ष्म-सांपराय की सोलह – ए सब मिलाएं गुणहत्तरि (६९) प्रकृति व्युच्छित्ति हैं। बंध सुर-चतुष्क अर तीर्थंकर के मिलने तैं सत्तरि (७०) । अबंध चवालीस (४४)। बहुरि सयोगी विषैं व्युच्छित्ति एक साता, बंध एक साता, अबंध एक सौ तेरह (११३) ॥११७॥

देवे वा वेगुव्वे, मिस्से णरतिरियआउगं णत्थि ।
छट्ठगुणं वाहारे, तम्मिस्से णत्थि देवाऊ ॥११८॥

देव इव वैगूर्वे, मिश्रे नरतिर्यगायुष्कं नास्ति ।
षष्ठगुणमिवाहारे, तन्मिश्रे नास्ति देवायुः ॥११८॥

टीका – वैक्रियिक-काययोग की रचना सौधर्म-ईशान संबंधी देवनि की रचना समान जाननी। बंधयोग्य प्रकृति एक सौ च्यारि, गुणस्थान च्यारि। मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति सात; बंध एक सौ तीन (१०३); अबंध एक। सासादन विषैं व्युच्छित्ति पचीस (२५); बंध छिनवै (९६); अबंध आठ। मिश्र विषैं व्युच्छित्ति शून्य; बंध सत्तरि (७०); अबंध चौंतीस (३४)। असंयत विषैं व्युच्छित्ति दश; बंध बहत्तरि (७२); अबंध बत्तीस (३२)।

बहुरि वैक्रियिक-मिश्र-काययोगिनि की रचना सौधर्म-ईशान संबंधी अपर्याप्त-देवनि की रचना समान जाननी। तहां मनुष्यायु, तिर्यंचायु का भी बंध नाहीं; तातैं बंधयोग्य प्रकृति एक सौ दोय (१०२); गुणस्थान तीन। मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति सात; बंध एक सौ एक (१०१); अबंध एक। सासादन विषैं व्युच्छित्ति चौईस (२४); बंध चौराणवै (९४); अबंध आठ। असंयत विषैं व्युच्छित्ति नव; बंध इकहत्तरि (७१); अबंध इकतीस (३१)।

बहुरि आहारक-काययोगी की रचना प्रमत्तगुणस्थान रचनावत् जाननी। व्युच्छित्ति छह; बंध तरेसठि (६३); अबंध सत्तावन (५७)।

बहुरि आहारक-मिश्रकाययोगी की रचना देवायु का बंध तहां न होइ; तातैं व्युच्छित्ति छह; बंध बासठि (६२); अबंध अठावन (५८)।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

कम्मे उरालमिस्सं, वा णाउदुगंपि णव छिदी अयदे ।
वेदादाहारोत्ति य, सगुणट्ठाणाणमोघं तु ॥११६॥

कर्मणि औदारिकमिश्रं, वा नायुर्द्विकमपि नव छित्तिरयते ।
वेदादाहार इति च, स्वगुणस्थानानामोघस्तु ॥११६॥

टीका – कार्माण-काययोग की रचना औदारिक-मिश्र रचनावत् जाननी । तहां भी विशेष जो विग्रहगति विषैं आयु का बंध नाहीं, तातैं मनुष्यायु, तिर्यंचायु बिना बंधयोग्य प्रकृति एक सौ बारह; गुणस्थान च्यारि । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं सोलह में स्यों नरकद्विक, नरकायु बिना व्युच्छित्ति तेरह; बंध सुरचतुष्क, तीर्थंकर बिना एक सौ सात (१०७); अबंध पांच । सासादन विषैं व्युच्छित्ति तिर्यंचायु बिना चौईस (२४); बंध चौराणवै (९४), अबंध अठारह । असंयत विषैं मनुष्यायु बिना असंयत की नव, देशसंयत की च्यारि, प्रमत्त की छह, अप्रमत्त की देवायु गिनी नाहीं । अपूर्वकरण की आहारकद्विक बिना चौतीस, अनिवृत्तिकरण की पांच, सूक्ष्म-सांपराय की सोलह सब मिलाएं व्युच्छित्ति चहोत्तरि (७४); बंध सुरचतुष्क, तीर्थंकर के मिलनेतैं पिचहत्तरि (७५); अबंध सैंतीस (३७) । सयोगी विषैं व्युच्छित्ति एक साता; बंध एक साता; अबंध एक सौ ग्यारह (१११) ।

बहुरि आगें वेदमार्गणा कौं आदि देकरि आहारमार्गणा पर्यंत अपने-अपने गुणस्थाननि विषैं साधारण कथन जानना ।

तहां वेदमार्गणा विषैं स्त्रीवेदीनि कै बंधयोग्य प्रकृति एक सौ बीस (१२०); गुणस्थान नव, तहां आठवां अपूर्वकरण गुणस्थान पर्यंत तौ व्युच्छित्ति, बंध, अबंध गुणस्थान-रचना विषैं कह्या है, तैसैं ही जानना । बहुरि क्षपक-श्रेणीरूप अनिवृत्तिकरण का पहिला वेदसहित भाग का द्विचरम-समय विषैं व्युच्छित्ति एक पुरुषवेद; बंध बाईस; अबंध अठयाणवै (९८) । बहुरि तिस ही का चरम-अंतसमय विषैं व्युच्छित्ति शून्य; बंध इकईस (२१); अबंध निन्याणवै (९९) ।

बहुरि निवृत्ति-अपर्याप्तक स्त्रीवेदी, तिनकी रचना—

बंधयोग्य प्रकृति एक सौ सात (१०७), च्यारि आयु, तीर्थंकर, आहारकद्विक वैक्रियिकषट्क – इन तेरह प्रकृतिनि का बंध नाही । गुणस्थान दोय, तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति नरकद्विक, नरकायु बिना तेरह; बंध एक सौ सात (१०७); अबंध

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

शून्य । सासादन विषैं व्युच्छित्ति तिर्यंच-आयु बिना चौईस (२४); अबंध तेरह; बंध चौराणवै (९४) इहां असंयत न संभवै है ।

बहुरि नपुंसक वेदीनि के बंधयोग्य प्रकृति एक सौ बीस (१२०); गुणस्थान नव । रचना सर्व स्त्रीवेदीनि की रचनावत् जाननी ।

बहुरि निवृत्ति-अपर्याप्त नपुंसकवेदी – तिनकी रचना बंधयोग्य प्रकृति एक सौ आठ (१०८), पूर्वोक्त एक सौ सात में नारक-असंयत की अपेक्षा एक तीर्थंकर प्रकृति मिली । बहुरि तिर्यंच-आयु, मनुष्यायु का बंध लब्धि-अपर्याप्तक ही कै हो है; इहां कथन निवृत्ति-अपर्याप्तक का है, तातैं गिनी नाहीं । गुणस्थान तीन तातैं मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त तेरह, बंध तीर्थंकर बिना एक सौ सात (१०७); अबंध एक । सासादन विषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त चौईस (२४), बंध चौराणवै (९४), अबंध चौदह । अविरत विषैं व्युच्छित्ति मनुष्यायु बिना नव, बंध तीर्थंकर के मिलने तैं इकहत्तरि (७१), अबंध सैंतीस (३७) ।

बहुरि पुरुषवेदी – तिनकै बंधयोग्य प्रकृति एक सौ बीस (१२०), गुणस्थान नव । तहां आठवां - अपूर्वकरण गुणस्थान पर्यंत तौ रचना गुणस्थान रचनावत् जाननी । क्षपक-अनिवृत्ति-करण का प्रथम भाग का अंत-समय विषैं व्युच्छित्ति एक पुरुषवेद, तहां पर्यंत बंध बाईस (२२), अबंध अठयाणवै (९८) ।

बहुरि पुरुषवेदी निवृत्ति-अपर्याप्तक तिनकी रचना—

नरक बिना तीन गतिवाले जीव तिनकैं बंधयोग्य प्रकृति एक सौ बारह; च्यारि आयु, नरकद्विक, आहारकद्विक का बंध नाहीं । गुणस्थान तीन तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त तेरह; बंध सुरचतुष्क, तीर्थंकर बिना एक सौ सात (१०७); अबंध ५ । सासादन विषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त चौईस (२४) । बंध चौराणवै (९४) अबंध अठारह । अविरत विषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त नव; बंध सुरचतुष्क, तीर्थंकर के मिलने तैं पिचहत्तरि (७५); अबंध सैंतीस (३७) । स्त्रीवेदी अर नपुंसकवेदी कैं तीर्थंकर, आहारकद्विक का उदय तौ न होइ, पुरुषवेदी कैं होइ अर बंध होने विषैं किछू विरोध नाही, तीनों वेदवालों कैं होइ ।

बहुरि कषाय-मार्गणा विषैं च्यार्यों कषायनि विषैं बंधयोग प्रकृति एक सौ बीस (१२०); गुणस्थान – क्रोध विषैं क्षपक-अनिवृत्ति-करण का दूसरा भाग पर्यंत,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

मान विषैं तीसरा भाग पर्यंत, माया विषैं चौथा भाग पर्यंत, बादर-लोभ विषैं पाचवां भाग पर्यंत है। तिनकी रचना गुणस्थान-रचनावत् जाननी। सूक्ष्मलोभ विषैं एक सूक्ष्म-सांपराय ही गुणस्थान है, सो बाकी रचना सूक्ष्म-सांपरायवत् जाननी।

बहुरि ज्ञानमार्गणा विषैं कुमति, कुश्रुत, विभंग इनके बंधयोग्य प्रकृति एक सौ सतरह (११७); तीर्थंकर, आहारकद्विक का बंध नाही। गुणस्थान दोय। तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति सोलह, बंध एक सौ सतरह, अबंध शून्य। सासादन विषैं व्युच्छित्ति पचीस (२५), बंध एक सौ एक (१०१), अबंध सोलह (१६)।

बहुरि मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान – इनके मिथ्यादृष्टि अर सासादन विषैं व्युच्छित्ति इकतालीस, तिन बिना बंधयोग्य प्रकृति गुण्यासी (७९), गुण-स्थान नव – असंयतादिक क्षीणकषाय पर्यंत। तिनविषैं व्युच्छित्ति अर बंध तौ गुण-स्थानवत् जानने। अबंध असंयतादिक विषैं क्रम तैं दोय, बारा, सोलह, बीस, इकईस, सत्तावन, बासठि, अठहत्तरि, अठहत्तरि जानने।

बहुरि मन:पर्ययज्ञान विषैं बंध-योग्य प्रमत्त-गुणस्थान विषैं जिनिका बंध पाइए ते प्रकृति तरेसठि अर आहारकद्विक – असैं पैसठि (६५)। इहां आहारकद्विक का उदय विरुद्ध रूप है; बंध होने का अप्रमत्त, अपूर्व-करण विषैं विरुद्ध नाही। गुणस्थान प्रमत्तादि क्षीणकषाय पर्यंत सात, तिनविषैं व्युच्छित्ति अर बंध तौ गुणस्थान-रचना विषैं कह्या। सोई जानना। अबंध अनुक्रम तैं दोय, छह, सात, तियालीस (४३), अडतालीस (४८), चौसठि (६४) जानना।

बहुरि केवलज्ञान विषैं बंधयोग्य प्रकृति एक साता-वेदनीय, गुणस्थान दोय। तहां सयोगी विषैं व्युच्छित्ति एक, बंध एक, अबंध नास्ति। अयोगी विषैं व्युच्छित्ति बंध नास्ति; अबंध एक।

बहुरि संयम-मार्गणा विषैं असंयम विषैं बंधयोग्य प्रकृति एक सौ अठारह (११८) आहारकद्विक बिना। गुणस्थान च्यारि असंयत पर्यंत। तिनविषैं व्युच्छित्ति अर बंध तो गुणस्थान रचनावत् जानना। अबंध क्रम तैं एक, सतरह, चवालीस, इकतालीस जानना। देश-संयत की रचना देशसंयत-गुणस्थात रचनावत् जाननी, व्युच्छित्ति च्यारि, बंध सतसठि (६७), अबंध तरेपन (५३)।

बहुरि सामायिक, छेदोपस्थापन विषैं बंधयोग्य प्रकृति पैसठि (६५)। प्रमत्त गुणस्थान में जिनका बंध पाइए ते तरेसठि अर आहारकद्विक जानना। गुणस्थान

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रमत्तादिक च्यारि । तिनिविषैं व्युच्छित्ति अर बंध तौ गुणस्थान रचनावत् जानना । अबंध अनुक्रम तैं दोय, छह, सात, तियालीस जानना ।

बहुरि परिहारविशुद्धि विषैं बंधयोग्य प्रकृति तेई पैंसठि (६५) । इहां तीर्थंकर, आहारकद्विक का बंध विरुद्ध नाहीं । आहारक का उदय विरुद्ध रूप है । गुणस्थान दोय प्रमत्त; अप्रमत्त, व्युच्छित्ति छह, एक । बंध तरेसठि, गुणसठि (५९) अबंध दोय, छह क्रम तैं जानना ।

सूक्ष्मसांपराय की रचना सूक्ष्मसांपरायवत् जाननी । व्युच्छित्ति सोलह, बंध सतरह, अबंध एक सौ तीन (१०३) ।

बहुरि यथाख्यात-संयम विषैं बंध-योग्य एक सातावेदनीय । गुणस्थान च्यारि उपशांत-कषायादिक, तहां व्युच्छित्ति अर बंध तो गुणस्थानवत् जानना । अबंध अयोगी विषैं एक और तीन गुणस्थाननि विषैं नास्ति ।

बहुरि दर्शन-मार्गणा विषैं चक्षु-अचक्षुदर्शन विषैं बंधयोग्य प्रकृति एक सौ बीस (१२०) । गुणस्थान क्षीणकषाय पर्यंत बारह, तिनकी रचना सर्व गुणस्थान रचनावत् जाननी । अवधि-दर्शन की रचना अवधिज्ञानवत् जाननी । बंधयोग्य गुण्यासी (७९), गुणस्थान असंयत आदि नव । केवल-दर्शन की रचना केवलज्ञानवत् जाननी । बंध-योग्य एक, गुणस्थान दोय ।

बहुरि लेश्या-मार्गणा विषैं कृष्ण, नील, कपोत इन तीनों विषैं बंधयोग्य प्रकृति एकसौ अठारह (११८), आहारकद्विक बिना । गुणस्थान च्यारि असंयत पर्यंत । तिनविषैं व्युच्छित्ति अर बंध तौ गुणस्थानवत् जानने; अबंध एक, सतरह, चवालीस, इकतालीस जानने ।।११९।।

णवरि य सव्वुवसम्मे, णरसुरआऊणि णत्थि णियमेण ।
मिच्छस्संतिम णवयं, बारं णहि तेउपम्मेसु ।।१२०।।

सुक्के सदरचउक्कं, वामंतिमबारसं च ण व अत्थि ।
कम्मेव अणाहारे, बंधस्संतो अणंतो य ।।१२१।।

नवरि च सर्वोपशमे, नरसुरायुषी नास्ति नियमेन ।
मिथ्यात्वस्यांतिमं नवकं, द्वादश न हि तेजःपद्मयोः ।।१२०।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

शुक्लायां शतारचतुष्कं, वामांतिमद्वादश च न वा अस्ति ।
कर्म्म इव अनाहारे, बंधस्यांतोऽनंतश्च ।।१२१।।

टीका – तेजोलेश्या विषैं बंधयोग्य प्रकृति एक सौ ग्यारह, मिथ्यादृष्टि विषैं सोलह-प्रकृति की व्युच्छित्ति कही थी, तिनविषैं आदि की सात प्रकृति का इहां बंध है । अंत की सूक्ष्म, अपर्याप्तादिक नव प्रकृतिनि का बंध नाहीं । गुणस्थान आदि के सात । तहां प्रथम गुणस्थान विषैं व्युच्छित्ति सात, बंध एक सौ आठ, अबंध तीन । सासादनादिक अप्रमत्त पर्यंत विषैं व्युच्छित्ति अर बंध तौ गुणस्थान रचनावत् जानना । अबंध दश, सैंतीस, चौंतीस, चवालीस, अठतालीस, बावन क्रम तैं जानना ।

बहुरि पद्मलेश्या विषैं बंधयोग्य प्रकृति एक सौ आठ, मिथ्यादृष्टि की व्युच्छित्तिरूप सोलह प्रकृति, तिनविषैं एकेंद्रियादिक अंत की बारह प्रकृति इहां बंधयोग्य नाहीं । गुणस्थान सात आदि के । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति च्यारि, बंध एक सौ पांच, अबंध तीन । ऊपरि सासादनादिक अप्रमत्त पर्यंत विषैं व्युच्छित्ति अर बंध तौ गुणस्थानवत् जानना; अबंध सात, चौंतीस, इकतीस, इकतालीस, पैंतालीस, गुणचास – क्रम तैं जानना ।

बहुरि शुक्ललेश्या विषैं बंधयोग्य प्रकृति एक सौ च्यारि, पूर्वोक्त एक सौ आठ मध्ये तिर्यंच-द्विक, तिर्यंच-आयु, उद्योत इस सदर-चउक्क बिना बंध जानना । गुणस्थान तेरह आदि के, तहां मिथ्यादृष्टि-विषैं व्युच्छित्ति च्यारि, बंध एक सौ एक, अबंध तीन । सासादनविषैं सदर-चउक्क बिना व्युच्छित्ति इकईस, बंध सत्याणवै, अबंध सात । ऊपरि मिश्रादिक सयोगीपर्यंत विषैं व्युच्छित्ति अर बंध तौ गुणस्थान रचनावत् जानना । अबंध तीस, सत्ताईस, सैंतीस, इकतालीस, पैंतालीस, छियालीस, बियासी, सत्यासी, एक सौ तीन, एक सौ तीन, एक सौ तीन – अनुक्रम तैं जानना ।

बहुरि भव्य-मार्गणा विषैं–भव्य कैं बंधयोग्य प्रकृति एक सौ बीस, गुणस्थान चौदह । तिनविषैं रचना सर्वगुणस्थान रचनावत् जाननी । अभव्य विषैं आहारकद्विक, तीर्थंकर बिना बंधयोग्य प्रकृति एक सौ सतरा, गुणस्थान एक–मिथ्यादृष्टि ही है ।

बहुरि सम्यक्त्वमार्गणा विषैं प्रथमोपशम-सम्यक्त्व विषैं बंधयोग्य प्रकृति सतहत्तरि, मिथ्यादृष्टि, सासादन विषैं व्युच्छित्ति इकतालीस अर **णवरिय सव्वुव सम्मे णरसुरआऊण णत्थि णियमेण**, इस वचन तै दोय आयु तौ पहिले व्युच्छित्ति भई थी अर सम्यग्दृष्टि कैं तिर्यंच, मनुष्यगति विषैं तौ देवायु का बंध होइ अर नरक देवगति

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

विषैं मनुष्य का बंध होइ सो प्रथम वा द्वितीय-उपशम-सम्यग्दृष्टि कैं इन दोऊ आयु का भी बंध नाहीं तातैं बंधयोग्य सतहत्तरि ही कही। ताकी रचना-असंयत विषै व्युच्छित्ति नव, मनुष्यायु बिना बंध पचहत्तरि, आहारकद्विक बिना अबंध दोय। देश-संयत विषैं व्युच्छित्ति च्यारि, बंध छयासठि, अबंध ग्यारह। प्रमत्त विषैं व्युच्छित्ति छह, बंध बासठि, अबंध पन्द्रह। अप्रमत्त विषैं व्युच्छित्ति शून्य, बंध आहारकद्विक मिलैं अट्ठावन, अबंध उगणीस। इस रचना विषैं तीर्थंकर अर आहारक बंध की विवक्षा जाननी। उपशम-सम्यक्त्वी के केई आचार्य तीर्थंकर-प्रकृति का बंध न मानैं है, सो इहां विवक्षा नाहीं अर आहारकद्विक का उदय विरुद्ध है, बंध विरुद्ध नाहीं। बहुरि द्वितीयोपशम-सम्यक्त्व – असंयत, देश-संयत, प्रमत्त विषैं श्रेणी तैं उतरि नीचैं आया ताकी अपेक्षा ही है अर अप्रमत्तादिक विषैं श्रेणी चढने की वा उतरने की अपेक्षा पाइए है; तातैं इहां गुणस्थान असंयतादिक उपशांत-कषायपर्यंत आठ जानने। बंधयोग्य इहां भी सतहत्तरि प्रकृति ही जाननी। तहां असयंत, देशसंयत, प्रमत्त, अप्रमत्त विषैं तौ रचना प्रथमोपशम-सम्यक्त्व की रचना समान जाननी। अपूर्वकरण विषैं व्युच्छित्ति छत्तीस, बंध अट्ठावन, अबंध उगणीस अनिवृत्तिकरण विषैं व्युच्छित्ति पांच, बंध बाईस, अबंध पचावन। सूक्ष्मसांपराय विषैं व्युच्छित्ति, सोलह, बंध सतरा, अबंध साठि। उपशांतकषाय विषै व्युच्छित्ति शून्य, बंध एक, अबंध छिहत्तरि।

इहां प्रश्न—जो प्रथम द्वितीय उपशम-सम्यक्त्व विषैं आयु का बंध न कह्या तो पूर्वै चढता अपूर्वकरण का प्रथम भाग विषैं मरण करि रहित ऐसा विशेषण निरर्थक कीया था?

ताका समाधान – जो पूर्वैं मिथ्यादृष्टि आदि विषैं जाकैं देवायु का बंध भया होइ ऐसा जो सातिशय-अप्रमत्त ताकैं श्रेणी चढाना संभवै है, तहां प्रथमोपशम-सम्यक्त्व विषैं अर श्रेणी चढतैं अपूर्वकरण का पहिला-भाग अंतर्मुहूर्त प्रमाण तीहि विषैं मरण न हो है, अन्यत्र उपशमश्रेणी विषैं मरण हो है। बहुरि देवायु का बंध सर्वत्र उपशमश्रेणी विषैं न हो है, ऐसा तहां भावार्थ जानना।

बहुरि क्षयोपशम-सम्यक्त्व विषैं बंधयोग्य प्रकृति गुण्यासी, जातैं इकतालीस प्रकृति मिथ्यादृष्टि, सासादन विषैं व्युच्छित्ति भई। तहां गुणस्थान असंयतादिक च्यारि, जातैं अपूर्वकरणादिक विषैं उपशम-श्रेणी विषैं उपशम सम्यक्त्व वा क्षायिक-सम्यक्त्व पाइए। क्षपकश्रेणी विषैं क्षायिक सम्यक्त्व ही पाइए। तहां तिन असंयता-

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

दिक विषैं व्युच्छित्ति अर बंध तौ गुणस्थान रचनावत् जानने। अबंध दो, बारह, सोलह, बीस – अनुक्रम तैं जानने।

बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व विषैं भी बंधयोग्य प्रकृति गुण्यासी, इकतालीस प्रकृति मिथ्यादृष्टि-सासादन विषैं व्युच्छित्ति भई, तिन बिना जाननी। गुणस्थान असंयतादिक अयोगी पर्यंत ग्यारह वा सिद्ध जानने। तिनविषैं व्युच्छित्ति अर बंध तौ गुणस्थान रचनावत् जानने। अबंध अनुक्रम तैं दोय, बारह, सोलह, बीस, इकईस, सत्तावन, बासठि, अठहत्तरि, अठहत्तरि, अठहत्तरि, गुण्यासी जाननैं।

मिथ्याश्रद्धान की रचना मिथ्यादृष्टि-गुणस्थानवत्। तहां व्युच्छित्ति सोलह, बंध एक सौ सतरह, अबंध तीन। सासादन-सम्यक्त्व की रचना सासादन-गुणस्थानवत्। तहां व्युच्छित्ति पच्चीस, बंध एक सौ एक, अबंध उगणीस। मिश्र-सम्यक्त्व की रचना मिश्र-गुणस्थानवत्। तहां व्युच्छित्ति शून्य, बंध चहोत्तरि, अबंध छियालीस।

बहुरि संज्ञीमार्गणा विषैं – संज्ञी विषैं तौ बंधयोग्य प्रकृति एक सौ बीस गुणस्थान बारह आदि के तहां सर्व रचना गुणस्थान रचनावत् जानना। बहुरि असंज्ञी विषैं बंधयोग्य प्रकृति आहारक-द्विक, तीर्थंकर बिना एक सौ सतरह, गुणस्थान दोय। तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति उगणीस। सासादन विषै असंज्ञी-मिश्रयोगी ही होइ तातैं तहां च्यारि आयु का बंध नाही, सो नरक आयु तौ सोलह में आई गई; तातैं तीन और बंधी। बहुरि बंध एक सौ सतरह, अबंध शून्य। सासादन विषैं व्युच्छित्ति गुणतीस विकलेंद्रियवत्, बंध अठ्याणवै, अबंध उगणीस।

बहुरि आहारमार्गणा विषैं आहार विषैं बंधयोग्य प्रकृति एक सौ बीस, गुणस्थान तेरह सयोगी पर्यंत। तहां व्युच्छित्ति, बंध, अबंध गुणस्थान रचनावत् जानना। अनाहार विषैं बंधयोग्य प्रकृति एक सौ बारह कार्माणयोग विषैं बंधयोग्य कही थी, तेई इहां जानना। गुणस्थान पांच – मिथ्यादृष्टि, सासादन, अविरत, सयोगी – इन च्यारि विषैं तो रचना कार्माणयोग की रचना समान जानना किछू विशेष नाहीं। अयोगी विषैं व्युच्छित्ति अर बंध तो शून्य अर अबंध एक सौ बारह।

ऐसैं वेदमार्गणा तैं आहारमार्गणा पर्यंत बंध का 'अंत' कहिए व्युच्छित्ति, 'अनंत' कहिए बंध, 'च' कहिए बहुरि अबंध कहे ते जानने।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगैं मूल-प्रकृतिनि के सादि-अनादि बंध के विशेष कहैं हैं—

सादि अणादी धुव अद्धुवो य बंधो[१] दु कम्मछक्कस्स ।
तदियो सादियसेसो, अणादिधुवसेसगो आऊ ॥१२२॥

सादिरनादिः ध्रुवोऽध्रुवश्च बंधस्तु कर्मषट्कस्य ।
तृतीयः सादिकशेषोऽनादिध्रुवशेषक आयुः ॥१२२॥

टीका – सादिबंध, अनादि-बंध, ध्रुव-बंध, अध्रुव-बंध – ग्रैसें प्रकृति-बंध च्यारि प्रकार है । तहां ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, नाम, गोत्र, अंतराय – इनकैं तौ च्यारि-च्यारि प्रकार बंध है । वेदनीयकर्म के सादिबंध नाहीं, और तीन प्रकार बंध हैं, जातैं उपशम-श्रेणी का चढने-उतरने विषैं साता की अपेक्षा निरन्तर वेदनीय का बंध है, तातैं सादिपणा संभवै नाही । आयुकर्म का अनादि अर ध्रुवबंध नाही, सादि अर अध्रुव बंध ही है, जातैं एक पर्याय विषैं एक बार वा दोय बार उत्कृष्ट आठ बार बंधै, तातैं सादि है । अंतर्मुहूर्त पर्यंत ही बंधै; तातैं अध्रुव है ।

आगै इनि बंधनि के लक्षण कहैं हैं—

सादी अबंधबंधे, सेढिअणारुढगे अणादी हु ।
अभव्वसिद्धम्हि धुवो, भवसिद्धे अद्धुवो बंधो ॥१२३॥

---

१. मूल-प्रकृतियों में सादि आदि ४ बंधकृत भेद – गाथा १२२ के आधार से—

बंध भेद	ज्ञानावरण	दर्शनावरण	वेदनीय	मोहनीय	आयु	नाम	गोत्र	अन्तराय
सादि बंध	है	है	नहीं	है	है	है	है	है
अनादि बंध	है	है	है	है	नहीं	है	है	है
ध्रुव बंध	है	है	है	है	नहीं	है	है	है
अध्रुव बंध	है	है	है	है	है	है	है	है

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सादिरबंधबंधे, श्रेण्यनारोहके अनादिर्हि ।
अभव्यसिद्धे ध्रुवो, भव्यसिद्धेऽध्रुवो बंधः ।।१२३।।

टीका – जिस कर्म के बंध का अभाव होइ करि बहुरि बंध होइ तहां तिस कर्म के बंध कौं सादि कहिए। जैसें ज्ञानावरण की पांच प्रकृति तिनका बंध सूक्ष्म-सांपराय-गुणस्थान पर्यंत जीव कैं था, पीछैं सोई जीव जब उपशांतकषाय-गुणस्थान कौं प्राप्त भया, तब ज्ञानावरण के बंध का अभाव भया, पीछैं सोई जीव उतरि करि सूक्ष्म-सांपराय कौं प्राप्त भया तहां बहुरि वाकैं ज्ञानावरण का बंध भया – तहां तिस बंध कौं सादि कहिए। ऐसैं ही और प्रकृतिनि का जानना।

बहुरि जिस गुणस्थान विषैं जिस कर्म की व्युच्छित्ति होइ, तिस गुणस्थान के अनंतरि ऊपरि जो गुणस्थान ताकौं श्रेणी कहिए, सो तहां अनारूढ़ कहिए अप्राप्त भया ऐसा जो जीव, ताके तिस कर्म का अनादि-बंध जानना। जैसें ज्ञानावरण की व्युच्छित्ति सूक्ष्मसांपराय का अंत-समय विषैं है, ताके अनंतरि ऊपरि उपशांत-कषाय-गुणस्थान ताकौं जो जीव प्राप्त न भया, ताकैं ज्ञानावरण का अनादि-बंध है। ऐसैं ही और प्रकृतिनि का जानना।

बहुरि अभव्यसिद्ध जो अभव्यजीव तीहि विषैं ध्रुवबंध जानना, जातैं निःप्रति-पक्ष जे निरन्तर बंधी कर्मप्रकृति, तिनिका बंध अभव्य जीव कैं अनादि-अनंत पाइए है।

बहुरि भव्यसिद्ध विषैं अध्रुव-बंध है, जातैं भव्य-जीव कैं बंध का अभाव भी पाइए वा बंध पाइए। जैसें ज्ञानावरण पंचक की सूक्ष्मसांपराय विषैं बंध की व्युच्छित्ति भई, ऐसैं इनका स्वरूप जानना।

आगैं उत्तर-प्रकृतिनि विषैं कहैं हैं—

घादितिमिच्छकसाया, भयतेजगुरुदुगणिमिणवण्णचओ।
सत्तेत्तालधुवाणं, चदुधा सेसाणयं तु दुधा[1] ।।१२४।।

घातित्रिमिथ्यात्वकषाया, तेजोऽगुरुद्विकनिर्माणवर्णचतुष्कं।
सप्तचत्वारिंशदध्रुवाणां, चतुर्धा शेषाणां तु द्विधा ।।१२४।।

१–टिप्पणी १५३ पृष्ठ पर देखें।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय इनकी प्रकृति उगणीस, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय अर जुगुप्सा, तैजस अर कार्माण, अगुरुलघु अर उपघात, निर्माण वर्णादिक च्यारि – ए सैंतालिस प्रकृति ध्रुव हैं । सो इनका तौ च्यारि प्रकार बंध पाइए है, यावत् बंध विषैं व्युच्छित्ति न होइ तावत् इन प्रकृतिनि का समयप्रबद्ध विषैं समय-समय प्रति बंध होइ ही होइ, यातैं इन प्रकृतिनि कौं ध्रुव कहिए है ।

बहुरि इन बिना अवशेष रही जे प्रकृति – वेदनीय दोय, मोहनीय की सात, च्यारि-आयु, च्यारि गति, पांच जाति, औदारिक-वैक्रियिक-आहारक की शरीर अर अंगोपांग करि दोय, दोय-दोय, छह संस्थान, छह संहनन, च्यारि आनुपूर्वी, परघात-आतप-उद्योत-उच्छ्वास – ए च्यारि, विहायोगति दोय, त्रस-स्थावर दोय, बादर-सूक्ष्म दोय, पर्याप्त-अपर्याप्त दोय, प्रत्येक-साधारण दोय, स्थिर-अस्थिर दोय, सुभग-दुर्भग दोय, शुभ-अशुभ दोय, सुस्वर-दुःस्वर दोय, आदेय-अनादेय दोय, यशःकीर्ति-अयशःकीर्ति दोय, तीर्थंकर, गोत्रकर्म की दोय – ए तेहत्तरि अध्रुव हैं । इन प्रकृतिनि के सादि-बंध अर अध्रुव-बंध दोय ही पाइए हैं । इनि प्रकृतिनि का किसी समय विषैं बंध होइ किसी समय विषैं बंध न होइ तातैं इनकौं अध्रुव कहिए ।

आगैं इनिविषैं अप्रतिपक्ष वा सप्रतिपक्ष भेद कहैं है–

सेसे तित्थाहारं, परघादचउक्क सव्वआऊणि ।
अप्पडिवक्खा[1] सेसा, सप्पडिवक्खा हु बासट्ठी ॥१२५॥

पृष्ठ १५२ की टिप्पणी—

उत्तरप्रकृतियों में सादि आदि बंधकृत भेद – गाथा १२४ के आधार से—

सादि बंध	अनादि बंध	ध्रुव बंध	अध्रुव बंध
ज्ञानावरण ५, दर्शनावरण ९, अन्तराय ५, मिथ्यात्व, १६ कषाय, भय, जुगुप्सा, तेजस, कार्मण, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण, वर्णादिक ४ । कुल ४७	यही ४७	यही ४७	यही ४७ तथा वेदनीय २, मोहनीय ७, आयु ४, गोत्र २, नाम ५५ । कुल ७३

१–टिप्पणी १५४ पृष्ठ पर देखें ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

शेषासु तीर्थाहारं, परघातचतुष्कं सर्वायूंषि ।
अप्रतिपक्षाः शेषाः, प्रतिपक्षा हि द्वाषष्टिः ॥१२५॥

टीका – सैंतालिस ध्रुवप्रकृति बिना अवशेष रही तिहत्तरि प्रकृति – तिनविषैं तीर्थंकर, आहारक-द्विक, परघातादिक च्यारि, आयु च्यारि – ए ग्यारह प्रकृति अप्रतिपक्ष हैं – इनिकैं कोई प्रतिपक्ष नाहीं; तातैं इन प्रकृतिनि का जिस काल विषैं बंध होइ तिस काल विषैं अपना-अपना बंध होइ। जिस काल विषैं न होइ तिस काल विषैं न होइ। जैसैं तीर्थंकर का बंध जिस काल विषैं होइ तिस काल विषैं तीर्थंकर का बंध होइ, न होइ तब न होइ।

बहुरि अवशेष रही बासठि प्रकृति ते सब सप्रतिपक्ष हैं – इनके प्रतिपक्षी पाइए हैं; तातैं परस्पर प्रतिपक्षीनि विषैं एक समय विषैं एक ही का बंध होइ। जैसैं – सातावेदनीय-असातावेदनीय परस्पर प्रतिपक्षी हैं, तहां एक समय विषैं कै तौ साता का बंध होइ कै असाता का बंध होइ, दोऊनि का न होइ। मोहनीय विषैं रति-अरति प्रतिपक्षी हैं, हास्य-शोक प्रतिपक्षी हैं, तीन वेद परस्पर प्रतिपक्षी हैं, इन विषैं एक-एक ही का बंध होइ। नाम विषैं च्यारि गति परस्पर प्रतिपक्षी हैं, पांच जाति परस्पर प्रतिपक्षी हैं, इत्यादि त्रस-स्थावर परस्पर प्रतिपक्षी हैं, इत्यादिक विषैं एक-एक ही का बंध जानना। दोय गोत्र विषैं एक ही का बंध एक समय विषैं जानना ऐसैं सप्रतिपक्षनि का बंध जानना।

प्रकृतिबंध, प्रदेशबंध कौं कारण योग स्थान, तिनकी चतुःस्थानपतित वृद्धि-हानि करि अर स्थिति-अनुभाग बंध कौं कारण अध्यवसाय स्थान, तिनकी षट्

पृष्ठ १५३ की टिप्पणी—

अप्रतिपक्षादि कृत भेद – गाथा १२५ आधार से –

अप्रतिपक्ष प्र०	सप्रतिपक्ष प्र०	अनुभय प्र०
तीर्थंकर, आहारकद्विक, परघातादि ४, आयु ४	वेदनीय २, नाम ५८, गोत्र २	ज्ञानावरण ५ दर्शनावरण ९ मोहनीय २८ अन्तराय ५
कुल ११	६२	४७

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

स्थानपतित वृद्धि हानि करि पलटनि हो है; तातैं साता-असाता की ज्यों तीन वेद इत्यादि विषैं भी सप्रतिपक्षपना जानना । कदाचित् किसी प्रकृति का बंध होइ कदाचित् किसी का बंध होइ ।।१२५।।

आगैं इन अध्रुव प्रकृति के सादि अर अध्रुव बंध ही कह्या सो कौन कारण ? सो कहै हैं —

अवरो भिण्णमुहुत्तो, तित्थाहाराण सव्वआऊणं ।
समओ छावट्ठीणं, बंधो तम्हा दुधा सेसा ।।१२६।।

अवरो भिन्नमुहूर्तः, तीर्थाहाराणां सर्वायुषां ।
समयः षट्षष्टीनां, बंधः तस्मात् द्विधा शेषाः ।।१२६।।

टीका – तीर्थंकर, आहारकद्विक, च्यारि आयु – इन सात प्रकृतिनि का निरंतर-बंध काल जघन्यपनैं अंतर्मुहूर्त प्रमाण है । समय-समय कर्मनि का बंध है, सो इन सात प्रकृति का बंध जब होने लगै तब जघन्यपनैं निरंतर अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत बंध होइ । बहुरि अवशेष रही छ्यासठि प्रकृति, तिनका निरंतर-बंध का काल एक समय है, जिसका किसी एक समय विषैं बंध भया, द्वितीयादिक समय विषैं तिस प्रकृति का बंध होइ वा न होइ, इस कारण तैं तेहत्तरि अध्रुव प्रकृतिनि कैं सादि-बंध अर अध्रुव बंध सिद्ध भया ।।१२६।।

असैं प्रकृति-बंध का स्वरूप जानना । इति प्रकृतिबंधः समाप्तः ।

—❀—

आगैं स्थिति बंध कौं कहैं हैं, तहां प्रथम ही मूल-प्रकृतिनि की उत्कृष्ट स्थिति कहै हैं —

तीसं कोडाकोडी, तिघादितदियेसु वीस णामदुगे ।
सत्तरि मोहे सुद्धं, उवही आउस्स तेतीसं[१] ।।१२७।।

त्रिंशत् कोटिकोटयः, त्रिघातितृतीयेषु विंशतिर्नामद्वये ।
सप्ततिर्मोहे शुद्धं, उदधिः आयुषः त्रयस्त्रिंशत् ।।१२७।।

---

१. आदितस्तिसृणामंतरायस्य च त्रिंशत्सागरोपमकोटीकोटयः परा स्थिति । मोक्ष० ८-१४। सप्ततिर्मोहनीयस्य ।।८-१५।। विंशतिर्नामगोत्रयोः ।।८-१६।। त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमण्यायुःषः ।।८-१६।। इनका चार्ट अर्थसंदृष्टि अधिकार में देखिये ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – उत्कृष्ट स्थितिबंध – ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय, वेदनीय इन विषैं तीस कोडा-कोडी सागर प्रमाण है। नामगोत्र विषैं बीस कोड़ा-कोड़ी सागर प्रमाण है। मोहनोय विषैं सत्तरि कोड़ा-कोड़ी सागर प्रमाण है। आयु विषैं शुद्ध कोडा-कोडी विशेषण रहित, केवल तेतीस सागर प्रमाण है ।।१२७।।

आगैं उत्तर-प्रकृतिनि विषैं छह गाथानि करि कहैं हैं –

दुक्खतिघादीणोघं, सादिच्छीमणुदुगे तदद्धं तु ।
सत्तरि दंसणमोहे, चरित्तमोहे य चत्तालं ।।१२८।।

संठाणसंहदीणं, चरिमस्सोघं दुहीणमादित्ति ।
अट्ठरसकोडकोडी, वियलाणं सुहुमतिण्हं च ।।१२९।।

अरदीसोगे संढे, तिरिक्खभयणिरयतेजुरालदुगे ।
वेगुव्वादावदुगे, णीचे तसवण्णअगुरुति चउक्के ।।१३०।।

इगिपंचेंदियथावर, णिमिणासग्गमणअथिरछक्काणं ।
वीसं कोडाकोडी, सागर णामणमुक्कस्सं ।।१३१।।

हस्सरदिउच्चपुरिसे, थिरछक्के सत्थगमणदेवदुगे ।
तस्सद्धमंतकोडा, कोडी आहारतित्थयरे ।।१३२।।

सुरणिरयाऊणोघं, णरतिरियाऊण तिण्णि पल्लाणि ।
उक्कस्सट्ठिदिबंधो, सण्णीपज्जत्तगे जोगे ।।१३३।।

दुःखत्रिघातिनामोघः, सातस्त्रीमनुष्यद्विके तदर्धं तु ।
सप्ततिः दर्शनमोहे, चारित्रमोहे च चत्वारिंशत् ।।१२८।।

संस्थानसंहतीनां, चरमस्यौघः द्विहीनमादीति ।
अष्टादशकोटीकोटिः, विकलानां सूक्ष्मत्रयाणां च ।।१२९।।

अरतिशोके षण्ढे, तिर्यग्भयनिरयतेजऔरालद्वये ।
वैगूर्विकातपद्विके, त्रसवर्णागुर्विति चतुष्के ।।१३०।।

एकपंचेंद्रियस्थावर, निर्माणासद्गमनास्थिरषट्कानां ।
विंशं कोटीकोटी, सागरः नाम्नामुत्कृष्टं ।।१३१।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

हास्यरत्युच्चपुरुषे, स्थिरषट्के शस्तगमनदेवद्विके ।
तस्यार्धमंतःकोटी कोटिः, आहारतीर्थकरे ॥१३२॥

सुरनिरयायुषोरोघः, नरतिर्यगायुषोः त्रीणि पल्यानि ।
उत्कृष्टस्थितिबंधः, संज्ञिपर्याप्तके योग्ये ॥१३३॥

टीका – उत्कृष्ट स्थिति बंध कहैं हैं – सो असातावेदनीय अर ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय इनकी उगणीस प्रकृति – इनि बीस प्रकृतिनि का **'ओघं'** कहिए मूल-प्रकृतिवत्, तीस कोडाकोडी सागर प्रमाण है । सातावेदनीय, स्त्री-वेद, मनुष्य-गति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी – इन च्यारिनि का, **तदर्धं** कहिए पंद्रह कोडाकोडी सागर प्रमाण है । दर्शन-मोह-बंध विषैं एक प्रकार हो है मिथ्यात्व । तिस मिथ्यात्व का सत्तरि कोडाकोडी सागर प्रमाण है । चारित्र-मोहनीय रूप सोलह कषायनि का चालीस कोडाकोडी सागर प्रमाण है ।

संस्थान, संहनन तिनविषैं अंत का हुंडक संस्थान, सृपाटिका संहनन, इनिका मूल प्रकृतिवत् बीस कोडा कोडी सागर प्रमाण है । अवशेष विषैं दोय-दोय घाटि है । तहां वामन संस्थान, कीलित संहनन का अठारह । कुब्ज संस्थान, अर्धनाराच संहनन का सोलह । स्वातिसंस्थान-नाराचसंहनन का चौदह । न्यग्रोध परिमंडल संस्थान, वज्रनाराचसंहनन का बारा । समचतुरस्रसंस्थान, वज्रवृषभनाराचसंहनन का दश कोडाकोडी सागर प्रमाण है ।

बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री, सूक्ष्म, साधारण, अपर्याप्त – इन छह का अठारह कोडा-कोडी सागर प्रमाण है । बहुरि अरति, शोक, नपुंसक वेद, तिर्यंच गति वा आनुपूर्वी, भय अर जुगुप्सा, नरकगति वा आनुपूर्वी, तैजस अर कार्माण, औदारिक शरीर वा अंगोपांग, वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग, आतप अर उद्योत, नीचगोत्र, त्रस-बादर-पर्याप्त-प्रत्येक – ए च्यारि, वर्णादिक च्यारि, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास – ए च्यारि, एकेंद्री, पंचेंद्री, स्थावर, निर्माण, अप्रशस्त विहायोगति, अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, अयशःकीर्ति – ए छह इन इकतालीस प्रकृतिनि का बीस कोडाकोडी सागर प्रमाण है ।

बहुरि हास्य, रति, उच्चगोत्र; पुरुष वेद, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर-आदेय-यश-स्कीर्ति – ए छह, प्रशस्तविहायोगति, देवगति वा आनुपूर्वी – इन तेरह का **तदर्धं** कहिए दश कोडाकोडी सागर प्रमाण है । आहारक शरीर वा अंगोपांग अर तीर्थंकर

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

इन तीनों का अंत:कोटाकोटी कहिए कोडि के ऊपर कोडाकोडी के नीचै इतनै सागर प्रमाण है। देवायु नरकायु का 'ओघ:' कहिए मूलप्रकृतिवत् तेतीस सागर प्रमाण है। तिर्यंचायु, मनुष्यायु का तीन पल्य प्रमाण है।

अैसें इनि प्रकृतिनि का उत्कृष्ट-स्थिति-बंध कह्या सो अैसा उत्कृष्ट स्थिति-बंध संज्ञी-पंचेंद्री-पर्याप्त-जीव ही कैं हो है। असंज्ञी वा अपर्याप्त के संभवता उत्कृष्ट-स्थिति-बंध आगें वर्णन करेंगे सो भी योग्य जीव कैं होइ। **योग्य कहने करि सर्व ही कर्म संसार कौ कारण हैं; तातैं शुभाशुभ कर्मनि की उत्कृष्ट स्थिति च्यारि गति-वाले उत्कृष्ट-संक्लेशपरिणाम के धारक जीवनि करि ही बांधिए है ऐसा भावार्थ जानना ॥१२८–१३३॥**

इहां विशेष कहे हैं –

सव्वट्ठिदीणमुक्कस्सओ दु उक्कस्ससंकिलेसण।
विवरीदेण जहण्णो, आउगतियवज्जियाणं तु ॥१३४॥

सर्वस्थितीनामुत्कृष्टकस्तु उत्कृष्टसंक्लेशेन।
विपरीतेन जघन्य, आयुष्कत्रयवर्जितानां तु ॥१३४॥

टीका – बहुरि तिर्यंचायु, मनुष्यायु, देवायु बिना और सर्व एक सौ सतरह प्रकृति तिनका उत्कृष्ट स्थिति बंध यथासंभव उत्कृष्ट संक्लेश परिणाम करि हो है। बहुरि जघन्य स्थिति बंध उत्कृष्ट विशुद्ध परिणाम करि हो है। बहुरि तिन तीनों आयुनि का उत्कृष्ट स्थिति बंध उत्कृष्ट विशुद्ध परिणाम करि हो है, जघन्य स्थिति-बंध तींहि सो विपरीत रूप परिणाम करि हो है ॥१३४॥

उत्कृष्ट स्थिति बंध कौन कै हो है? सो कहैं है —

सव्वुक्कस्सठिदीणं, मिच्छाइट्ठी दु बंधगो भणिदो।
आहारं तित्थयरं, देवाउं वा विमोत्तूणं ॥१३५॥

सर्वोत्कृष्टस्थितीनां, मिथ्यादृष्टिस्तु बंधको भणित:।
आहारं तीर्थंकरं, देवायुषं वा विमुच्य ॥१३५॥

टीका – आहारक द्विक, तीर्थंकर, देवायु – इन च्यारि प्रकृतिनि बिना अवशेष एक सौ सोलह प्रकृतिनि की उत्कृष्ट स्थिति कौं मिथ्यादृष्टि जीव ही बांधै है। बहुरि तिन च्यारि प्रकृतिनि की उत्कृष्ट स्थिति कौं सम्यग्दृष्टि ही बांधै है ॥१३५॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तहां भी विशेष कहै हैं —

देवाउगं पमत्तो, आहारयमप्पमत्तविरदो दु।
तित्थयरं च मणुस्सो, अविरदसम्मो समज्जेइ ॥१३६॥

देवायुषं प्रमत्त, आहारकमप्रमत्तविरतस्तु ।
तीर्थकरं च मनुष्यः, अविरतसम्यक् समर्जयति ॥१३६॥

टीका – देवायु की उत्कृष्ट-स्थिति कौं अप्रमत्त गुणस्थान चढने कौं सन्मुख भया असा प्रमत्त गुणस्थानवर्ती जीव बांधै है। यद्यपि अप्रमत्त गुणस्थान विषैं भी देवायु का बंध है, तथापि तहां सातिशय अप्रमत्त विषैं तौ तीव्र विशुद्ध परिणाम पाइए है; तातैं तहां तो देवायु का बंध हो नाहीं अर निरतिशय अप्रमत्त विषैं बंध है, तथापि उत्कृष्ट स्थिति बंध होइ नाहीं; तातैं तहां न कह्या। बहुरि आहारकद्विक उत्कृष्ट स्थिति सहित ताकौं प्रमत्त गुणस्थान कौं सन्मुख भया असा अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती संक्लेशपरिणामी जीव बांधै है; जातैं तीन आयु बिना और प्रकृतिनि की उत्कृष्ट स्थिति, उत्कृष्ट संक्लेशकरि बंधै है सो आहारकद्विक का बंध करने वाले जीवनि विषैं जो प्रमत्त कौं सन्मुख भया अप्रमत्त ताही कैं उत्कृष्ट संक्लेश है, तातैं तिस ही कै उत्कृष्ट स्थितिसहित आहारकद्विक का बंध कह्या। बहुरि उत्कृष्ट स्थिति सहित तीर्थंकर-प्रकृति कौं नरकगति जाने कौं सन्मुख भया असा असंयत-सम्यग्दृष्टि-मनुष्य सोई बांधै है। जातैं तीर्थंकर प्रकृति बंध करने वाले जीवनि विषैं वाकैं तीव्र-संक्लेश पाइए है ॥१३६॥

अवशेष एक सौ सोलह प्रकृति, तिनिकौं उत्कृष्ट स्थिति सहित मिथ्यादृष्टि ही बांधै हैं, तिनिका कथन दोय गाथानि करि कहैं हैं —

णरतिरिया सेसाउं, वेगुव्वियछक्कवियलसुहुमतियं ।
सुरणिरया ओरालिय, तिरियदुगुज्जोवसंपत्तं ॥१३७॥

देवा पुण एइंदिय, आदावं थावरं च सेसाणं ।
उक्कस्ससंकिलिट्ठा, चदुगदिया ईसिमज्झिमया ॥१३८॥

नरतिर्यंचः शेषायुषं, वैगूर्विकषट्कविकलसूक्ष्मत्रयं ।
सुरनिरयाः औदारिक, तिर्यग्द्वयोद्योतासंप्राप्तं ॥१३७॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

देवाः पुनरेकेंद्रियातपं स्थावरं च शेषाणां ।
उत्कृष्ट संक्लिष्टाः, चातुर्गतिका ईषन्मध्यमकाः ।।१३८।।

टीका – नरकायु, मनुष्यायु, तिर्यंचायु अर नरकगति वा आनुपूर्वी, देवगति वा आनुपूर्वी, वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग यह वैक्रियिक षटक, अर बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री यह विकलत्रय अर सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण यह सूक्ष्मत्रय इन पंद्रह प्रकृतिनि कौं उत्कृष्ट स्थिति सहित मनुष्य वा तिर्यंच मिथ्यादृष्टि बांधै है। बहुरि औदारिक शरीर वा अंगोपाग, तिर्यंच गति वा आनुपूर्वी, उद्योत, सृपाटिका संहनन, इनकौं उत्कृष्ट स्थिति सहित मिथ्यादृष्टि देव वा नारक जीव बांधै है। बहुरि एकेंद्रिय आतप, स्थावर इन तीनों कौं उत्कृष्ट स्थिति सहित मिथ्यादृष्टि देव बांधे है। अवशेष रही बाणवै प्रकृति तिनकौ उत्कृष्ट संक्लेशी वा ईषत् मध्यम संक्लेशी च्यार्‍यों गति के जीव बांधै हैं। इहां उत्कृष्ट, ईषत् मध्यम संक्लेशी परिणामनि का स्वरूप कहैं हैं—

'उक्कस्ससंकिलिट्ठस्य ईसिमज्झिमपरिणामस्स वा उक्कस्सट्ठिदिबंधो होदि ।'

उत्कृष्ट संक्लेश परिणामनि का धारक वा ईषत् मध्यम परिणामनि का धारक मिथ्यादृष्टि जीव ताकें उत्कृष्ट स्थितिबंध हो है।

उक्कस्सट्ठिदिबंधपाउग्गअसंखेज्जलोगपरिणामाणं पलिदोवमस्स असंखेज्जभागमेत्ताणि खंडाणि कादूण तत्थ चरमखंडस्स उक्कस्ससंकिलेसो णाम, पढमखंडस्स ईसिसंकिलेसो णाम दोण्हं विच्चालखंडाणं मज्झिमसंकिलेसो णामेत्ति उच्चदि ।

स्थितिबंध कौं कारण तीव्रमंदादिक रूप स्थिति बंधाध्यवसाय स्थान, तिन विषैं उत्कृष्ट स्थिति बंध कौं कारण असंख्यात लोक प्रमाण परिणाम हैं। तिनके पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण खंड कीजिए, तिन विषैं जो अंत के खंड विषैं जेते परिणाम पाइए, बहुत कषाय रूप तिनकौं उत्कृष्ट संक्लेश असा नाम कहिए। बहुरि प्रथम खंड विषैं जेते परिणाम पाइए थोरे कषायरूप, तिनकौं ईषत् संक्लेश असा नाम कहिए। दोऊ खंडनि के बीचि जे खंड हैं, तिन विषैं जे परिणाम पाइए यथासंभव कषायरूप तिनका मध्यम संक्लेश असा नाम कहिए है।

'एवं सेससव्वट्ठिदिवियप्पेसु वत्तव्वं ।

असें ही उत्कृष्ट तें लगाइ एक-एक समय घटता जघन्य स्थिति पर्यंत जेते स्थिति के भेद हैं, तिन सबनि विषैं असें ही कहना।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

'एत्थ सव्वपयडीसु सगसगट्ठिदिवियप्पो उड्ढगच्छो होदि तिरियगच्छो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो होदि । गुणहाणी आयामो पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागो होदि । एत्थ अणुकट्ठिरयणाविहाणं अधापवत्तकरणं व वत्तव्वं ।

इन सर्व प्रकृतिनि विषैं अपनी-अपनी स्थिति के भेदनि का प्रमाण सो ऊर्ध्व गच्छ हो है । तिर्यक् गच्छ पल्योपम के असंख्यातवें भाग प्रमाण हो है । गुणहानि का आयाम पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण हो है । इहां अनुकृष्टि रचना का विधान अधःप्रवृत्तकरणवत् कहना । सो कहिए है—

जैसें जीवकांड विषैं गुणस्थान प्ररूपणा विषैं सातिशय अप्रमत्त कैं अधःप्रवृत्त-करण का स्वरूप कह्या है । तहां अंकसंदृष्टि करि कथन दिखाया है; तैसें ही इहां अंकसंदृष्टि करि कथन का स्वरूप जानना । जैसें अंकसंदृष्टि विषैं सर्व धन का प्रमाण तीन हजार बहत्तरि (३०७२) है; तैसें इहां सर्व स्थितिबंधाध्यवसाय स्थाननि का जितना प्रमाण असंख्यात लोक प्रमाण है, तितना सर्व धन का प्रमाण जानना ।

बहुरि जैसें ऊर्ध्वगच्छ का प्रमाण सोलह कहे, तैसें इहां विवक्षित कर्म की जघन्य स्थितिस्यों लगाई एक-एक समय बधता उत्कृष्ट स्थिति पर्यंत जेते स्थिति के भेद होंहि तितना ऊर्ध्वगच्छ जानना । बहुरि जैसें गच्छ का वर्ग दोय सौ छप्पन अर संख्यात की सहनानी तीन, इनका सर्व धन कौं भाग दीए च्यारि पाए सो चय का प्रमाण च्यारि है । तैसें इहां जो ऊर्ध्वगच्छ का प्रमाण कह्या, ताका वर्गकरि, ताकौं संख्यात गुणा कीजै, पीछै वाका भाग सर्व धन कौं दीए जो प्रमाण होई, तितना चय जानना । एक-एक ऊर्ध्व रचना विषैं इतना-इतना बधता जानना ।

बहुरि जैसें एक घाटि गच्छ पंद्रह का आधा करि ताकौं चय का प्रमाण च्यारि करि गुणिए जो प्रमाण तीस होइ, ताकौं गच्छ सोला करि गुणैं च्यारि सौ असी होइ, सो चयधन का प्रमाण जानना । याकौं सर्व धन मेंस्यों घटाए दोय हजार पांच सै बाणवै (२५९२) रहै, इनकौं गच्छ सोलह का भाग दीए एक सौ बासठि (१६२) पाए, सो आदि विषैं जानना । तैसें इहां जो गच्छ का प्रमाण कह्या, तामैं एक घटाय वाके आधे करि, ताकौं जो चय का प्रमाण कह्या, ताकरि गुणैं जो प्रमाण होइ, ताकौं गच्छ करि गुणैं, जो प्रमाण होय, सो चयधन जानना । इस चयधन कौं सर्व धन मेंस्यों घटाए, जो प्रमाण रहे ताकौं, गच्छ के प्रमाण का

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

भाग दीए, जो प्रमाण आवै, तितने अध्यवसाय स्थान जघन्य स्थिति बंध कौं कारण हैं ।

बहुरि जैसें आदि विषै एक चय च्यारि मिलाएं दूसरे स्थानक एक सौ छ्यासठि होंई, तैसें इहां जघन्य स्थितिबंध कौं कारण अध्यवसाय स्थाननि का जो प्रमाण कह्या, तामैं पूर्वोक्त चय का प्रमाण मिलाए जो प्रमाण होइ, तितने अध्यवसाय स्थान जघन्य स्थितिस्यों एक समय बधती दूसरी स्थिति, ताका बंध के कारण जानने । यामैं एक चय मिलें जघन्य तैं दोय समय बधती तीसरी स्थिति के बंध कौं कारण अध्यवसाय स्थान जानने । असैं उत्कृष्ट स्थिति पर्यंत एक-एक चय बधावना ।। अंक-संदृष्टि विषैं जैसें १६२, १६६, १७०, १७४, १७८, १८२, १८६, १९०, १९४, १९८, २०२, २०६, २१०, २१४, २१८, २२२ रचना हैं, तैसें इहां भी जानने ।

बहुरि जैसें अंकसंदृष्टि विषैं तिर्यक् गच्छ का प्रमाण च्यारि है, तैसें इहां तिर्यक् गच्छ का प्रमाण पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण जानने । इस तिर्यक् गच्छ कौं अनुकृष्टि गच्छ भी कहिए है । सो जैसें अनुकृष्टि गच्छ जो च्यारि, ताका भाग ऊर्ध्व रचना विषैं चय का प्रमाण च्यारि कह्या था, ताकौं दीजिए, तब एक पाया, सो एक अनुकृष्टि विषैं चय जानना । तैसें इहां तिर्यग्गच्छ का पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण कह्या, ताका भाग पूर्वोक्त चय के प्रमाण कों दीए जो प्रमाण आवै, तितना अनुकृष्टि विषैं चय जानना ।

बहुरि जैसें अनुकृष्टि का गच्छ च्यारि मेंस्यों एक घटाय, ताकौं आधा करि, चय करि अर गच्छ करि गुणैं, छह होइ, सो अनुकृष्टि विषैं चयधन जानना । याकौं अनुकृष्टि का सर्वधन एक सौ बासठ मेंस्यों घटाय एक सौ छप्पन रहे, ताकौं अनुकृष्टि गच्छ जो च्यारि, ताका भाग दीए गुणतालीस पाए, सो तिस प्रथम स्थानक का प्रथम खंड जानना; तैसै इहां अनुकृष्टि गच्छ मेंस्यों एक घटाय आधा करि, ताकौं अनुकृष्टि गच्छ का चय करि वा गच्छ करि गुणैं जो प्रमाण होइ, सो अनुकृष्टि बिषैं चयधन जानना । याकौं जघन्य स्थितिबंध कौं कारण अध्यवसायस्थाननि का प्रमाण तिनमैंस्यों घटाए जो प्रमाण रहे, ताकौं अनुकृष्टि गच्छ का भाग दीए जो प्रमाण होइ, सो जघन्य स्थिति बंधकौं कारण अध्यवसाय स्थान, तिनका प्रथम खंड जानना सो इनकौं ईषत् संज्ञा है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जैसें गुणतालीस विषैं अनुकृष्टि का एक चय मिलाए चालीस भया, सो दूसरा खंड; यामें एक चय मिलाए इकतालीस भए, सो तीसरा खंड; तैसें ही प्रथम खंड विषैं अनुकृष्टि का चय मिलाए दूसरा खंड होइ; यामैं एक चय मिलाए तीसरा खंड होइ; असैं एक घाटि अंत का खंड पर्यंत जेते खंड होइ, तिनकौं **मध्यम** संज्ञा है। बहुरि जैसें अंक के खंड विषैं बियालीस हो है, तैसें जो प्रमाण होइ, ताकौं उत्कृष्ट संज्ञा है। असैं जघन्य स्थिति संबंधी परिणामनि विषैं खंड कहे।

बहुरि जैसें दूसरे स्थानकी एक सौ छयासठि, ताके च्यारि खंडनि विषैं चालीस, इकतालीस, बियालीस, असा प्रमाण है; तैसें इहां भी जघन्यस्यों एकसमय बधती दूसरी स्थिति कौं कारण अध्यवसाय तिनके खंडनि विषैं पूर्वोक्त विधान करि प्रमाण जानना।

असैं ही विधान करते, जैसें अंत के स्थान विषैं दोय सौ बाईस प्रमाण होइ, तिसके खंडनि का चौवन, पचावन, छप्पन, सत्तावन (५४, ५५, ५६, ५७) प्रमाण होइ। तैसें इहां एक-एक ऊर्ध्वचय कौं बधावता उत्कृष्ट स्थितिबंध कौं कारण, अध्यवसाय स्थानकनि का जो प्रमाण होइ, ताके पूर्वोक्त विधान करि प्रथम खंड कौ ईषत् संक्लेश संज्ञा है, मध्य के खंडनि कौं **मध्यम संक्लेश संज्ञा** है। अंत के खंड कौं **उत्कृष्ट संक्लेश संज्ञा** है। सो अधःकरणवत् इहां भी नीचली स्थिति कौं कारण अध्यवसाय, तिनकैं ऊपरली स्थिति कौं कारण अध्यवसायनि सहित संख्या करि वा संक्लेश विशुद्धता करि समानपना जानना। इस समानपने ही कौं **अनुकृष्टि** कहिए है। सो यंत्र वा विशेष कथन, जैसें अधःकरण विषैं कीया है, तैसें इहां भी अर्थ का निश्चय करना ॥ १३७-१३८ ॥

आगें मूलप्रकृतिनि का जघन्य स्थितिबंध कौं कहैं है—

बारस य वेयणीये, णामागोदे य अट्ठ य मुहुत्ता ।
भिण्णमुहुत्तं तु ठिदी, जहण्णयं सेसपंचण्हं[1] ॥१३९॥

द्वादश च वेदनीये, नामगोत्रे अष्ट च मुहूर्ताः ।
भिन्नमुहूर्तस्तु स्थितिः, जघन्या शेषपंचानां ॥१३९॥

---

१. अपरा द्वादशमुहूर्ता वेदनीयस्य । नामगोत्रयोरष्टौ । शेषाणामन्तर्मुहूर्ता । तत्त्वार्थसूत्र अधिकार ८, सूत्र–१८-१९-२० । इनका चार्ट अर्थसंदृष्टि अधिकार में देखिये ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

टीका – जघन्य स्थितिबंध वेदनीय विषैं बारह मुहूर्त, नाम अर गोत्र विषैं आठ मुहूर्त है, अवशेष पंच कर्मनि का जघन्य स्थितिबंध एक-एक अंतर्मुहूर्त प्रमाण है ॥१३९॥

आगैं उत्तरप्रकृतिनि का जघन्य स्थितिबंध च्यारि गाथानि करि कहैं हैं—

लोहस्स सुहुमसत्तरसाणं ओघं दुगेकदलमासं ।
कोहतिये पुरिसस्स य, अट्ठ य वस्सा जहण्णठिदी ॥१४०॥

लोभस्य सूक्ष्मसप्तदशानामोघः द्विकैकदलमासः ।
क्रोधत्रये पुरुषस्य च, अष्ट च वर्षाणि जघन्यस्थितिः ॥१४०॥

टीका – लोभ अर सूक्ष्म सांपराय गुणस्थान विषैं जिनिका बंध पाइए, ऐसी सतरह प्रकृति, तिनका जघन्य स्थितिबंध मूलप्रकृतिवत् जानना । तहां यशस्कीर्ति अर उच्चगोत्र का तौ आठ-आठ मुहूर्त, साता वेदनीय का बारह मुहूर्त, अवशेष पंच ज्ञानावरण, च्यारि दर्शनावरण, पंच अंतराय, सूक्ष्म लोभ इनिका एक-एक अंतर्मुहूर्त प्रमाण जघन्य स्थितिबंध जानना । बहुरि क्रोध का दोय मास, मान का एक मास, माया का आधा मास, पुरुष वेद का आठ वर्ष प्रमाण जघन्य स्थितिबंध है ॥१४०॥

तित्थाहाराणंतो, कोडाकोडी जहण्णठिदिबंधो ।
खवगे सगसगबंधच्छेदणकाले हवे णियमा ॥१४१॥

तीर्थाहाराणामंतः, कोटीकोटिः जघन्यस्थितिबंधः ।
क्षपके स्वकस्वकबंध, च्छेदनकाले भवेन्नियमात् ॥१४१॥

टीका – तीर्थंकर, आहारक द्विक इन तीन प्रकृतिनि का जघन्य स्थितिबन्ध अंतः कोटाकोटी प्रमाण है । अंतः कोटाकोटी के भेद घने हैं; तातैं जघन्य भी इतना ही कह्या । बहुरि यहु कह्या जो जघन्य स्थितिबन्ध सो सर्व क्षपकश्रेणीवाले कैं अपनी-अपनी बन्ध की व्युच्छित्ति का जो समय, तिस विषैं हो है नियम करि ॥१४१॥

भिण्णमुहुत्तो णरतिरियाऊणं वासदससहस्साणि ।
सुरणिरयआउगाणं, जहण्णओ होदि ठिदिबंधो ॥१४२॥

भिन्नमुहूर्तो नरतिर्यगायुषोर्वर्षदशसहस्राणि ।
सुरनिरयायुषोः जघन्यको भवति स्थितिबंधः ॥ १४२॥

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – मनुष्यायु, तिर्यंचायु का जघन्य स्थितिबंध अंतर्मुहूर्त प्रमाण है। देवायु नरकायु का दश हजार वर्ष प्रमाण है ॥१४२॥

सेसाणं पज्जत्तो, बादरएइंदियो विसुद्धो य।
बंधदि सव्वजहण्णं, सगसगउक्कस्सपडिभागे ॥१४३॥

शेषाणां पर्याप्तो, बादरेकेंद्रियो विशुद्धश्च।
बध्नाति सर्वजघन्यं, स्वकस्वकोत्कृष्ट प्रतिभागे ॥१४३॥

टीका – गुणतीस प्रकृतिनि का तो जघन्य स्थितिबंध ऊपर कह्या, अवशेष इक्याणवै का रह्या, तिनविषैं वैक्रियिक षट्क अर एक मिथ्यात्व – इन सात बिना चउरासी प्रकृतिनि का जघन्य स्थितिबंध बादर एकेंद्री पर्याप्तक यथायोग्य विशुद्धता का धारक जीव करै है, सो अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थिति का प्रतिभाग करि त्रैराशिक विधानतैं जो-जो प्रमाण होइ सो-सो जघन्यस्थिति का प्रमाण जानना ॥१४३॥

सोई कहिए है —

एयं पणकदि पण्णं, सयं सहस्सं च मिच्छवरबंधो।
इगिविगलाणं अवरं, पल्लासंखूणसंखूणं ॥१४४॥

एकं पंचकृतिः पंचाशत्, शतं सहस्रं च मिथ्यात्ववरबंधः।
एकविकलानामवरः, पल्यासंख्योनसंख्योनं ॥१४४॥

टीका – मिथ्यात्व प्रकृति की उत्कृष्ट स्थिति एकेंद्री जीव एक सागर प्रमाण बांधै है। बेंद्री जीव 'पंचकृति' कहिए पचीस सागर प्रमाण बांधै है। तेंद्री जीव पचास सागर प्रमाण बांधै है। चौंद्री जीव सौ सागर प्रमाण बांधै है। असंज्ञी पंचेंद्री जीव एक हजार सागर प्रमाण बांधै है। बहुरि संज्ञी पंचेंद्री पर्याप्त जीव ही सत्तर कोडाकोडी सागर प्रमाण बांधै है।

बहुरि मिथ्यात्व की जघन्य स्थिति एकेंद्री जीव तौ अपनी उत्कृष्ट स्थिति तैं पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण घाटि बांधै है। अर बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री, असंज्ञी पंचेंद्री अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थिति तैं पल्य के संख्यातवें भाग प्रमाण घाटि बांधै है ॥१४४॥

सो संज्ञी पंचेंद्री कैं उत्कृष्ट स्थितिबंध है, तीहि की अपेक्षा करि एकेंद्रियादिक जीवनि कैं उत्कृष्ट वा जघन्य स्थितिबंध का प्रमाण कहैं हैं —

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

जदि सत्तरिस्स एत्तियमेत्तं किं होदि तीसियादीणं ।
इदि संपाते सेसाणं इगिविगलेसु उभयठिदी ।।१४५।।

यदि सप्ततेः एतावन्मात्रं किं भवति त्रिंशदादीनां ।
इति संपाते शेषाणामेकविकलेषूभयस्थितिः ।।१४५।।

टीका – सत्तर कोडाकोडी सागर उत्कृष्ट स्थिति का धारी मिथ्यात्व नामा कर्म जो एकेंद्री जीव कैं एक सागर प्रमाण स्थिति लीए बंधै तौ तीस इत्यादिक कोडाकोडी सागर की स्थिति के धारी कर्म, एकेंद्री-जीव कैं कितने प्रमाण स्थिति लीए बंधै, असैं त्रैराशिक करना । इहां प्रमाणराशि सत्तरि कोडाकोडी सागर, फलराशि एक सागर, इच्छाराशि विवक्षित कर्म की चालीस वा तीस वा बीस इत्यादि कोडाकोडी सागर प्रमाण जितनी उत्कृष्ट स्थिति होइ सो जानना । तहां फलराशि कौं इच्छाराशि करि गुणैं प्रमाण का भाग दिए जो-जो प्रमाण आवै, तितनी-तितनी उत्कृष्ट स्थिति एकेंद्री जीव कैं बंधै है । तहां सोलह कषायनि की उत्कृष्ट स्थिति चालीस कोडाकोडी सागर की है, सो याकौं इच्छाराशि करि पूर्वोक्त प्रकार कीजिए, तब सोलह कषायनि की एकेंद्री जीव कैं एक सागर का सात भाग कीजिए, तिनमें च्यारि भाग प्रमाण उत्कृष्ट स्थिति बंधै है ।

बहुरि तैसैं ही तीस कोडाकोडी सागर उत्कृष्ट स्थिति के धारक आसातावेदनीय वा ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय की उगणीस प्रकृति इनकी एकेंद्री जीव कैं उत्कृष्ट स्थिति एक सागर का सात भाग कीजिए, तिनमें तीन भाग प्रमाण बंधै है । बहुरि असैं ही जिनकी संज्ञी पंचेंद्री के बीस कोडाकोडी सागर प्रमाण उत्कृष्ट स्थिति कही थी, तिनकी एक सागर का सात भाग में दोय भाग प्रमाण बंधै है । बहुरि पंद्रह कोडाकोडी सागर प्रमाण जिनकी उत्कृष्ट स्थिति कही थी, तिनकी एक सागर का सत्तरि भाग में पंद्रह भाग प्रमाण बंधै है । जिनकी अठारह कोडाकोडी प्रमाण उत्कृष्ट स्थिति कही थी, तिनकी एक सागर का सत्तरि भाग में अठारह भाग प्रमाण बंधै है ।

असैं ही सोलह, चौदह, बारह, दस, कोडाकोडी सागर प्रमाण जिनकी स्थिति कही थी, तिनकी एकेंद्री जीव कै एक सागर के सत्तरि भाग में सोलह, चौदह, बारह, दस भाग प्रमाण क्रम तैं उत्कृष्ट स्थितिबंध जानना ।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि बेंद्री जीव कैं सत्तरि कोडाकोडी सागर उत्कृष्ट स्थिति का धारी मिथ्यात्व की पचीस सागर उत्कृष्ट स्थितिबंध भया, तौ तीस इत्यादिक कोडाकोडी सागर स्थिति के धारी कर्म तैं बेंद्री जीव कैं कितने प्रमाण स्थिति बंध लीए बंधैं, असैं त्रैराशिक करिए तहां प्रमाणराशि सत्तरि कोडाकोडी सागर, फलराशि पचीस सागर प्रमाण, इच्छाराशि विवक्षित कर्म की उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण, सो फल करि इच्छा कौं गुणैं प्रमाण का भाग दीएं जो-जो प्रमाण आवै, तितनी-तितनी उत्कृष्ट स्थिति बेंद्री जीव कैं बंधै है । सो जिनकी चालीस कोडाकोडी सागर की स्थिति थी, तिनकौं सौ सागर का सातवां भाग प्रमाण उत्कृष्ट स्थिति बंधै है । तिनकी तीस कोडाकोडी सागर की स्थिति थी, तिनकी पिचहत्तरि सागर का सातवां भाग प्रमाण बंधै है । असे ही सर्व कर्मनि की एकेंद्री तैं पचीस गुणी स्थिति बेंद्री की जाननी ।

बहुरि तेंद्री कैं तैसैं ही प्रमाणराशि अर इच्छाराशि तौ पूर्वोक्त प्रकार अर याकै मिथ्यात्व की स्थिति पचास सागर की उत्कृष्ट बंधै है, तातैं फलराशि पचास सागर प्रमाण कीएं जो-जो प्रमाण आवै, तितनी-तितनी उत्कृष्ट स्थिति बंधै है । सो फलराशि पूर्व फलराशि तैं दूणी है, तातैं बेंद्री कैं स्थितिबंध तैं तेंद्री के स्थिति-बंध सर्व कर्मनि का दूणा-दूणा जानना ।

बहुरि चौंद्री कैं प्रमाणराशि अर इच्छाराशि तौ पूर्वोक्त प्रकार अर याकैं मिथ्यात्व की स्थिति सौ सागर प्रमाण बंधै है; तातैं फलराशि सौ सागर प्रमाण सो इहां फलराशि पूर्वोक्त फलराशि तैं दूणी है; तातैं तेंद्री के स्थितिबंध सर्व कर्मनि का दूणा-दूणा जानना ।

बहुरि असंज्ञी पंचेंद्री के प्रमाणराशि अर इच्छाराशि तौ पूर्वोक्त प्रमाण ही अर याकैं मिथ्यात्व की स्थिति हजार सागर प्रमाण बंधै है; तातैं फलराशि हजार सागर । सो इहां फलराशि पूर्व फलराशि तैं दश गुणी है; तातैं चौंद्री कैं स्थितिबंध तैं असंज्ञी पंचेंद्री कैं स्थितिबंध सर्व कर्मनि का दश-दश गुणा जानना । असैं ही जघन्य स्थितिबंध भी एकेंद्रियादिक जीवनि कैं त्रैराशिक-विधान करि साधना ।।१४५।।

तहां जघन्य स्थितिबंध विषैं किछू विशेष संभवै है, सो कहैं हैं —

सण्णि असण्णिचउक्के, एगे अंतोमुहुत्तमाबाहा ।
जेट्ठे संखेज्जगुणा, आवलिसंखं असंखभागहियं ।।१४६।।

संज्ञिनि असंज्ञिचतुष्के, एके अंतर्मुहूर्त आबाधा ।
ज्येष्ठे संख्येयगुणा, आवलिसंख्यमसंख्यभागाधिकं ।।१४६।।

टीका – संज्ञी-पंचेंद्री जीवनि विषैं जघन्य आबाधा अंतर्मुहूर्त प्रमाण है । जातैं संज्ञी-पंचेंद्री जीव कैं जघन्य स्थितिबंध कर्मनि का अंत.कोटाकोटी सागर प्रमाण है । सो इतनी स्थिति की आबाधा अंतर्मुहूर्त प्रमाण ही आगैं कहैंगे । **कर्मबंध भए पीछैं यावत् काल उदयरूप वा उदीरणारूप न प्रवर्तै, ताकौं आबाधा कहिए ।**

बहुरि एकेंद्रियादिक की स्थिति तैं बेंद्रियादिक की स्थिति संख्यात गुणी है; तातैं इस संज्ञी पंचेंद्री जीव की आबाधा तैं असंज्ञी पंचेंद्री, चौंद्री, तेंद्री, बेंद्री, एकेंद्री जीवनि कैं आबाधा संख्यात गुणी घाटि संख्यात गुणी घाटि अनुक्रम तैं जाननी । परंतु सब का प्रमाण अंतर्मुहूर्त ही कहिए, जातैं अंतर्मुहूर्त के भेद घने हैं । जातैं एकेंद्री की जघन्य आबाधा तैं बेंद्रियादिक की जघन्य आबाधा क्रम तैं पचीस, पचास, सौ, हजार गुणी है – तातैं उलटा क्रम लीए संख्यात गुणी घाटि जाननी ।

बहुरि उत्कृष्ट आबाधा, जघन्य आबाधा के प्रमाण तैं संज्ञी जीव विषैं तौ संख्यात गुणी है । असंज्ञी पंचेंद्री, चौंद्री, तेंद्री, बेंद्री विषैं अपनी-अपनी जघन्य आबाधा तैं आवली का संख्यातवां भाग प्रमाण अधिक उत्कृष्ट आबाधा है । सो यहु उत्कृष्ट आबाधा भी क्रम तैं संख्यात गुणी घाटि संख्यात गुणी घाटि जाननी ।

बहुरि एकेंद्रिय जीव विषैं अपनी जघन्य आबाधा तैं आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण अधिक उत्कृष्ट आबाधा जाननी । तहां एकेंद्रिय जीव कैं उत्कृष्ट आबाधा का प्रमाण मैंस्यों जघन्य आबाधा का प्रमाण घटाए, जो प्रमाण रहै, तामैं एक और मिलाए जो प्रमाण होइ, तितने आबाधा के भेद एकेंद्री जीव के जानने ।

ऐसैं ही बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री, असंज्ञी, संज्ञी कैं अपनी-अपनी उत्कृष्ट आबाधा के प्रमाण मैंस्यों अपनी-अपनी जघन्य आबाधा का प्रमाण घटाए, तामैं एक और मिलाए आबाधा के भेदनि का प्रमाण हो है । इहां करणसूत्र —

'आदी अंते सुद्धे वड्ढिहिदे रूवसंजदे ठाणा' आदि कौं अंत मैंस्यों घटाइ, वृद्धि का भाग देइ, एक और मिलाए, स्थानकौं का प्रमाण होइ । सो इहां आदि जघन्य आबाधा, ताकौं अंत जो उत्कृष्ट आबाधा, तामैंस्यों घटाइ । बहुरि इहां जघन्य

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तैं एक-एक समय बधतैं उत्कृष्ट भेद हो है; तातैं वृद्धि का प्रमाण एक, ताका भाग दीएं तितने ही रहैं, तिनमैं एक मिलाएं, आबाधा के भेदरूप स्थाननि का प्रमाण हो है ।।१४६।।

ऐसै सर्व मन में धारि जघन्य स्थितिबंध का साधनभूत करणसूत्र कहैं हैं —

जेट्ठाबाहोवट्टियजेट्ठं आवाहकंडयं तेण ।
आबाहवियप्पहदेणेगुणेणूणजेट्ठमवरठिदी ।।१४७।।

ज्येष्ठाबाधोद्वर्तितज्येष्ठमाबाधाकांडकं तेन ।
आबाधाविकल्पहतेन, एकोनेन ऊनज्येष्ठमवरस्थितिः ।।१४७।।

टीका – एकेंद्रियादिक जीव तिनकैं अपनी-अपनी उत्कृष्ट आबाधा का जो प्रमाण कह्या, ताका भाग अपनी-अपनी कर्मनि की उत्कृष्ट स्थिति कौं दीए जो-जो प्रमाण आवैं, सो-सो आबाधाकांडक का प्रमाण जानना । इतने-इतने स्थिति भेदनि विषैं एकरूप आबाधा का प्रमाण पाइए है । तिस अपने-अपने आबाधाकांडक के प्रमाण करि, पूर्वैं कह्या जो अपना-अपना आबाधा के भेदनि का प्रमाण, ताकौं गुणैं जो-जो प्रमाण होइ, तामेंस्यों एक-एक घटाए जो-जो प्रमाण रहै, तितना-तितना अपनी-अपनी उत्कृष्ट स्थिति मेंस्यों घटाएं जो-जो प्रमाण रहै, तितना-तितना जघन्य स्थितिबंध का प्रमाण जानना । सोई दिखाइए है –

एकेंद्री जीव कैं मिथ्यात्व की उत्कृष्ट आबाधा का प्रमाण आवली का असंख्यातवां भाग करि अधिक अंतर्मुहूर्त प्रमाण कह्या, ताका भाग मिथ्यात्व की उत्कृष्ट स्थिति एक सागर प्रमाण, ताकौं दीजिए जो प्रमाण आवै, तितना आबाधाकांडक का प्रमाण जानना । इस आबाधाकांडक के प्रमाण कौं पूर्वैं जो एकेंद्रिय के आबाधा के भेदनि का प्रमाण कह्या था, तींहिकरि गुणिए जो प्रमाण होइ, तामेंस्यों एक घटाएं जो प्रमाण रहै, तितनी मिथ्यात्व की उत्कृष्ट स्थिति एक सागर प्रमाण, तामेंस्यों घटाएं जो प्रमाण रहै, सो एकेंद्री जीव कैं मिथ्यात्व की जघन्य स्थिति का प्रमाण जानना । सो एक सागर प्रमाण उत्कृष्ट स्थिति मेंस्यों इस जघन्य स्थिति का प्रमाण घटाय अवशेष रहै, ताकौं एक का भाग दीए तेता ही रह्या । याकौं एक अधिक कीए एकेंद्री जीव कैं मिथ्यात्व की स्थिति के भेदनि का प्रमाण हो है । जघन्य तें लगाइ एक-एक समय बधता उत्कृष्ट पर्यंत एकेंद्री के मिथ्यात्व की स्थिति के भेद इतने जानने ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि ऐसैं ही बेंद्री जीव कैं मिथ्यात्व को उत्कृष्ट आबाधा का प्रमाण, च्यारि बार संख्यात का भाग जाकौं दीजिये ऐसी आवली मात्रकरि अधिक पचीस अंतर्मुहूर्त प्रमाण है। यद्यपि यहु आबाधा एक अंतर्मुहूर्त प्रमाण ही है, तथापि एकेंद्री जीव कैं आबाधा का जैसा अंतर्मुहूर्त है, तैसा पचीस अंतर्मुहूर्त जानना। जातैं एकेंद्री तैं बेंद्री कें पचीस गुणा कर्मनि का स्थितिबंध है। सो इहां एकेंद्री के कथन की अपेक्षा पचीस अंतर्मुहूर्त कहे हैं, ऐसैं ही आगैं भी जानना। सो इस आबाधा काल का भाग बेंद्री कैं उत्कृष्ट मिथ्यात्व की स्थिति पचीस सागर प्रमाण है, ताकौं दीए आबाधाकांडक का प्रमाण होइ। याकरि बेंद्री संबंधी आबाधा के भेदनि का प्रमाण कौं गुणें जो प्रमाण होइ, तामैं एक घटाइ अवशेष रहे तिनकौं उत्कृष्ट पचीस सागर प्रमाण स्थिति मेंस्यों घटाए जो अवशेष रहै, तितना बेंद्री कैं मिथ्यात्व का जघन्य स्थितिबंध जानना। इस जघन्य कौं उत्कृष्ट मेंस्यों घटाइ अवशेष कौं एक एक अधिक कीए, बेंद्री संबंधी मिथ्यात्व की सर्व स्थिति के भेदनि का प्रमाण हो है।

बहुरि तेंद्री जीव कैं मिथ्यात्व की उत्कृष्ट आबाधा तीन बार संख्यात का भाग जाकौं दीजिए अैसी आवली करि अधिक पचास अंतर्मुहूर्त प्रमाण है, ताका उत्कृष्ट मिथ्यात्व की पचास सागर स्थिति कौं भाग दीए जो प्रमाण होइ, सो आबाधा कांडक का प्रमाण है। याकरि तेंद्री संबन्धी आबाधा के भेदनि का प्रमाण कौं गुणैं जो प्रमाण होइ, तामैं एक घटाएं अवशेष रहै, तिनकौं उत्कृष्ट पचास सागर मिथ्यात्व की स्थिति, तामैं घटाइ जो प्रमाण रहे, सो तेंद्री के मिथ्यात्व की जघन्य स्थिति का प्रमाण जानना। इस जघन्य स्थिति कौं उत्कृष्ट स्थिति मेंस्यों घटाए अवशेष कौं एक अधिक कीए, तेंद्री कैं मिथ्यात्व की स्थिति के सर्व भेदनि का प्रमाण हो है।

बहुरि चौंद्री जीव कैं दोय बार संख्यात का भाग जाकौं दीजिए अैसी आवली करि अधिक सौ अंतर्मुहूर्त प्रमाण मिथ्यात्व की उत्कष्ट आबाधा है, याका मिथ्यात्व उत्कृष्ट स्थिति सौ सागर प्रमाण ताकौं भाग दीए जो प्रमाण होइ, सो आबाधा-कांडक का प्रमाण है। याकरि चौंद्री संबन्धी आबाधा के भेदनि का प्रमाण कौं गुणैं जो प्रमाण होइ तामैं एक घटाए अवशेष रहै, तिनकौं उत्कृष्ट सौ सागर की स्थिति मेंस्यों घटाए जो प्रमाण रहै, सो चौंद्री कैं जघन्य स्थिति का प्रमाण जानना। इस जघन्य स्थिति कौं उत्कष्ट स्थिति मेंस्यों घटाए अवशेष को एक अधिक कीए चौंद्री कैं मिथ्यात्व की सर्व स्थिति के भेदनि का प्रमाण हो है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि असंज्ञी पंचेंद्री कैं मिथ्यात्व की उत्कृष्ट आबाधा आवली का संख्यातवां भाग करि अधिक हजार अंतर्मुहूर्त प्रमाण है। याका मिथ्यात्व की उत्कृष्ट स्थिति हजार सागर प्रमाण, ताकौं भाग दिए जो प्रमाण होइ, सो आबाधाकांडक का प्रमाण जानना। याकरि असंज्ञी संबन्धी आबाधा के भेदनि का प्रमाण कौं गुणें जो प्रमाण होइ, तामें एक घटाए अवशेष रहे तिनकौं उत्कृष्ट सागर की स्थिति मेंस्यों घटाए अवशेष प्रमाण रहै, सो असंज्ञी कैं मिथ्यात्व की जघन्य स्थिति का प्रमाण जानना। इस जघन्य स्थिति कौं उत्कृष्ट स्थिति मैंस्यों घटाए अवशेष रहे, तिनमें एक मिलाए असंज्ञी कै मिथ्यात्व की स्थिति के सर्व भेदनि का प्रमाण हो है।

असैं यहु अर्थ प्रगट जानने में आवै है, तथापि बहुरि अंकसंदृष्टि करि दिखाइये है —

उत्कृष्ट स्थिति का प्रमाण चौसठि समय, अर तरेसठि समयस्यों लगाइ छियालीस समय पर्यंत मध्य स्थिति का प्रमाण, अर जघन्य स्थिति का प्रमाण पैंतालीस समय अर उत्कृष्ट आबाधा का प्रमाण सोलह समय। सो इस आबाधा का भाग उत्कृष्ट स्थिति कौं दीजिए, तब च्यारि पाए, सो च्यारि आबाधाकांडक का प्रमाण जानना।

आबाधाकांडक कहा कहिए ? — जितने स्थिति के भेदनि विषैं एक प्रमाण कौं लीएं आबाधा होई, सोई आबाधाकांडक का प्रमाण जानना।

सोई दिखाइए है – चौसठि, तरेसठि, बासठि, एकसठि समय की स्थितिरूप च्यारि स्थिति के भेद, तिनविषैं तो सोलह-सोलह समय प्रमाण आबाधा पाइए। बहुरि साठि सौं सतावन पर्यंत च्यारि स्थिति कैं भेदनि विषैं पंद्रह-पंद्रह समय प्रमाण आबाधा पाइए। बहुरि छप्पन तैं तरेपन पर्यंत च्यारि स्थिति के भेदनि विषैं चौदह-चौदह समय प्रमाण आबाधा पाइए। बहुरि बावन तैं गुणचास पर्यंत च्यारि स्थिति के भेदन विषैं तेरह-तेरह समय प्रमाण आबाधा पाइए। बहुरि अठतालीस तैं पैंतालीस पर्यंत च्यारि स्थिति के भेदनि विषैं बारह-बारह समय प्रमाण आबाधा पाइए। असैं आबाधाकांडक का प्रमाण च्यारि जानना।

बहुरि आबाधा के भेदनि का प्रमाण कहिए है —

जघन्य आबाधा बारह समय प्रमाण, उत्कृष्ट आबाधा सोलह समय प्रमाण तहां **'आदी अंते सुद्धे वड्ढिहिदे रूवसंजुदे ठाणा'** इस सूत्र करि तहां आदि जघन्य

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

आबाधा, सो अंत उत्कृष्ट आबाधा में घटाए अवशेष च्यारि रहे, ताकौं भेदनि विषैं वृद्धि का प्रमाण एक समय, सो एक का भाग दिए तितने ही रहे, यामैं एक मिलाय पंच भये, सो पंच आबाधा के भेदनि का प्रमाण जानना। याकरि आबाधाकांडक कौं गुणैं सर्व स्थिति के भेदनि का प्रमाण बीस भया। सो प्रथम भेद में किछू हानि-वृद्धि है नाहीं; तातैं एक घटाए अवशेष उगणीस रहे, सो उगणीस उत्कृष्ट स्थिति चौंसठि मेंस्यों घटाए अवशेष पैंतालीस रहे, सोई जघन्य स्थिति का प्रमाण जानना।

अथवा जघन्य स्थिति विषैं उगणीस मिलाएं चौंसठि भए, सोई उत्कृष्ट स्थिति का प्रमाण जानना। सो जैसें अंकनि की सहनानी करि कथन दिखाया है, तैसें ही पूर्वोक्त कथन का अर्थ नीके जानना। स्थिति का प्रमाण वा आबाधाकांडक का प्रमाण, तहां कह्या है, सो जानना। स्वरूप अैसा ही जानना। जितने स्थिति के भेदनि विषैं एक प्रमाण को लीएं आबाधा होइ, सोई आबाधाकांडक का प्रमाण जानना, आबाधा के भेद जघन्य तैं लगाइ उत्कृष्ट पर्यंत जितने होंहि, तितने ही जानने, और सर्वप्रकार जैसें कह्या तैसें जानना।

या प्रकार एकेंद्रियादिक जीवनि कैं सर्व प्रकृतिनि का स्थितिबंध जानना।

अब त्रैराशिक करि अन्य प्रकृतिनि का जघन्य स्थितिबन्ध दिखाइए है –

सत्तर कोडाकोडी सागर प्रमाण स्थिति का धारक मिथ्यात्व नामा कर्म की एकेंद्री जीव एक घाटि पल्य का असंख्यातवां भाग जामैं घटाइए, अैसा एक सागर प्रमाण जघन्य स्थिति कौं जो बांधै, तो चालीस, तीस, बीस, अठारह, सोलह, पंद्रह, चौदह, बारह, दश कोडाकोडी सागर प्रमाण स्थिति के धारक कर्मनि की जघन्य स्थिति कौं एकेंद्री जीव कितनी बांधै ? सो प्रमाणराशि तौ सत्तरि कोडाकोडी सागर, फलराशि एकेंद्री संबन्धी मिथ्यात्व की जघन्य स्थिति का प्रमाण, इच्छा-राशि चालीस, तीस कोडाकोडी सागर आदि देकरि जिस-जिस कर्म की जघन्य स्थिति एकेंद्री कैं जाननी होइ, तिस-तिस कर्म की संज्ञी संबंधी उत्कृष्ट स्थिति का प्रमाण।

सो अैसें फलराशि करि इच्छाराशि कौं गुणैं प्रमाणराशि का भाग दीए, जितना-जितना लब्धराशि विषैं प्रमाण आवे, तितना-तितना, तिस-तिस कर्मनि का जघन्य स्थितिबंध एकेंद्री जीव कैं जानना। तहां प्रमाणराशि सत्तरि कोडाकोडी

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सागर, फलराशि एकेंद्री संबंधी मिथ्यात्व की जघन्य स्थिति का प्रमाण, इच्छाराशि चालीस कोडाकोडी सागर प्रमाण । तहां फल कौं इच्छाराशि तैं गुणैं प्रमाण का भाग दीए जो प्रमाण लब्धराशि का भया, सो प्रमाण जिनकी चालीस कोडाकोडी की स्थिति उत्कृष्ट है । अैसें सोलह कषाय, तिनकी जघन्य स्थिति का प्रमाण एकेंद्री जीव कैं जानना ।

असैं ही तीस, बीस, अठारह, सोलह, पंद्रह, चौदह, बारह, दश कोडाकोडी सागर प्रमाण क्रम तैं इच्छाराशि का प्रमाण कीए जो-जो प्रमाण आवे, सो-सो तिस-तिस स्थिति के धारक कर्मनि की जघन्य स्थिति का प्रमाण एकेंद्री जीव कैं जानना ।

असैं ही बेंद्री, तेंद्री,चौंद्री, असंज्ञी पंचेंद्री जीव विषैं कर्मनि का जघन्य स्थिति-बंध जानना । विशेष इतना जो एकेंद्री का कथन विषैं फलराशि का प्रमाण एकेंद्री संबंधी मिथ्यात्व की जघन्य स्थिति का प्रमाण कह्या था । बेंद्री का कथन विषैं फल राशि का प्रमाण बेंद्री संबंधी मिथ्यात्व की जघन्य स्थिति का प्रमाण जानना । तेंद्री का कथन विषैं फलराशि का प्रमाण तेंद्री संबन्धी मिथ्यात्व की जघन्य स्थिति का प्रमाण जानना । चौंद्री का कथन विषैं फलराशि का प्रमाण चौंद्री संबन्धी मिथ्यात्व की जघन्य स्थिति का प्रमाण जानना । असंज्ञी पंचेंद्री का कथन विषैं फलराशि का प्रमाण असंज्ञी संबन्धी मिथ्यात्व की जघन्य स्थिति का प्रमाण जानना ।

बहुरि बेंद्रियादिक का कथन विषैं प्रमाणराशि का प्रमाण अर इच्छाराशि का प्रमाण एकेंद्रीवत् सर्व जानना ।

असैं त्रैराशिक कीए जो-जो लब्धराशि का प्रमाण आवै सो-सो बेंद्रियादिक जीवनि कैं कर्मनि की जघन्य स्थिति का प्रमाण जानना ।।१४७।।

अैसें एकेंद्रियादिक जीवनि कैं स्थिति कही, तिसके जघन्य तैं लगाइ उत्कृष्ट पर्यंत जेते-जेते भेद होंहि तिनका स्थापन करि, तिनविषैं बादर-सूक्ष्म तौ एकेंद्री अर बेंद्री अर तेंद्री अर चौंद्री अर संज्ञी-असंज्ञी पंचेंद्री, इनकैं पर्याप्त-अपर्याप्त के भेद तैं चौदह जीवसमास भए, तिनकैं जघन्य वा उत्कृष्ट स्थिति बंध कौं भाग करि दिखावै हैं –

बासूप-बासूअ-वरट्ठिदीओ, सूबाअ-सूबाप-जहण्णकालो ।
बीबीवरो बीबिजहण्णकालो, सेसाणमेवं वयणीयमेदं ।।१४८।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बासूप-बासूग्र-वरस्थितिः, सूबाग्र-सूबाप-जघन्यकालः ।
बीबीवरः बीबिजघन्यकालः, शेषाणामेवं वक्तव्यमेतत् ।।१४८।।

टीका — 'बा' कहिए बादर 'सू' कहिए सूक्ष्म 'प' कहिए ए दोऊ पर्याप्त, बहुरि 'बा' कहिए बादर 'सू' कहिए सूक्ष्म, 'ग्र' कहिए ए दोऊ अपर्याप्त – इनिकैं कर्मनि की **वरस्थिति** कहिए कर्मनि की उत्कृष्ट स्थिति। बहुरि 'सू' कहिए सूक्ष्म, 'बा' कहिए बादर 'ग्र' कहिए ए दोऊ अपर्याप्त। बहुरि 'सू' कहिए सूक्ष्म, 'बा' कहिए बादर, 'प' कहिए ए दोऊ पर्याप्त। इनकैं **'जघन्यकालः'** कहिए कर्मनि की जघन्य स्थिति। सो असैं बादर-पर्याप्त कैं उत्कृष्ट स्थिति १, सूक्ष्म पर्याप्त कैं उत्कृष्ट स्थिति २, बादर अपर्याप्त कैं उत्कृष्ट स्थिति ३, सूक्ष्म अपर्याप्त कैं उत्कृष्ट स्थिति ४, सूक्ष्म अपर्याप्त कैं जघन्यस्थिति ५, बादर अपर्याप्त कैं जघन्य स्थिति ६, सूक्ष्म पर्याप्त कैं जघन्यस्थिति ७, बादर पर्याप्त कैं जघन्य स्थिति ८ – ऐसैं एकेंद्री जीव कैं कर्मनि की स्थिति विषैं आठ भेद भए।

बहुरि 'बी' कहिए बेंद्री पर्याप्त। बहुरि 'बी' कहिए बेंद्री अपर्याप्त, इनकी **'वरः'** कहिए कर्मनि की उत्कृष्ट स्थिति। बहुरि 'बी' कहिए बेंद्री अपर्याप्त, बहुरि 'बी' कहिए बेंद्री पर्याप्त इनके **'जघन्यः'** कहिए कर्मनि की जघन्य स्थिति। असैं बेंद्री पर्याप्त कैं उत्कृष्ट स्थिति १, बेंद्री अपर्याप्त कैं उत्कृष्ट स्थिति २, बेंद्री अपर्याप्त कैं जघन्य स्थिति ३, बेंद्री पर्याप्त कैं जघन्य स्थिति ४ करि बेंद्री जीवनि कैं कर्मनि की स्थिति विषैं च्यारि भेद भए।

'शेषाणां एवं वचनीयं' कहिए अवशेष त्रींद्रियादिक जीव कैं पर्याप्तक-अपर्याप्तक जघन्य उत्कृष्ट तैं असैं च्यारि-च्यारि भेद कहने। सो कहिए है –

तेंद्री पर्याप्त कैं उत्कृष्ट स्थिति १, तेंद्री अपर्याप्त कैं उत्कृष्ट स्थिति २, तेंद्री अपर्याप्त कैं जघन्य स्थिति ३, तेंद्री पर्याप्त कैं जघन्य स्थिति ४ – असैं तेंद्री कैं कर्मनि की स्थिति विषैं च्यारि भेद भए।

बहुरि चौंद्री पर्याप्त कैं उत्कृष्ट स्थिति १, चौंद्री अपर्याप्त कैं उत्कृष्ट स्थिति २, चौंद्री अपर्याप्त कैं जघन्य स्थिति ३, चौंद्री पर्याप्त कैं जघन्य स्थिति ४ – असैं चौंद्री कैं कर्मनि की स्थिति विषैं च्यारि भेद जानने।

बहुरि असंज्ञी पर्याप्त कैं उत्कृष्ट स्थिति १, असंज्ञी अपर्याप्त कैं उत्कृष्ट स्थिति २, असंज्ञी अपर्याप्त कैं जघन्य स्थिति ३, असंज्ञी पर्याप्त कैं जघन्यस्थिति ४ – असैं असंज्ञी पंचेंद्रिय के कर्मनि की स्थिति विषैं च्यारि भेद जानने।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि संज्ञी पर्याप्त कैं उत्कृष्ट स्थिति १, संज्ञी अपर्याप्त कैं उत्कृष्ट स्थिति २, संज्ञी अपर्याप्त कैं जघन्य स्थिति ३, संज्ञी पर्याप्त कैं जघन्य स्थिति ४ – असैं संज्ञी पंचेंद्रिय कैं कर्मनि की स्थिति विषैं च्यारि भेद जानने ।

असैं ही ए सर्व स्थितिबंध विषैं अठाइस भेद भए । तिनविषैं अंत के संज्ञी पंचेंद्री संबंधी च्यारि भेदनि का तौ जुदा कथन आगैं कीजिएगा । अवशेष चौईस भेदनि की स्थिति का आयाम जानने को अंतराल के भेद तिनकौं त्रैराशिक करि विभाग रूप कहैं है –

स्थितिबंध विषैं जो समयनि का प्रमाण ताकौं **आयाम** कहिए । आयाम नाम लंबाई का है, सो समय लंबाई की ज्यों एक-एक अनुक्रमतैं होई, चौडाई की ज्यों युगपत् अनेक समय न होइ, तातैं काल का प्रमाण विषैं आयाम असैसी संज्ञा कहिए है ।

तहां एकेंद्री जीव कैं मिथ्यात्व की उत्कृष्ट स्थिति एक सागर प्रमाण है, जघन्य स्थिति एक घाटि पल्य का असंख्यातवां भाग सागर में घटाएं, जो रहै तीह प्रमाण है । सो इहां **'आदि अंते सुद्धे वाड्ढिहिदे रूवसंजुदे ठाणा'** इस सूत्र करि आदि जघन्य स्थिति कौं अंत उत्कृष्ट स्थिति मेंस्यों घटाएं जो प्रमाण रहै, ताकौ एक-एक स्थिति के भेद विषैं एक-एक समय बधता है, तातैं वृद्धि का प्रमाण एक, ताका भाग दीएं जेतैं कैं तेते रहैं, तामैं एक अधिक कीएं एकेंद्री जीव कैं मिथ्यात्व की स्थिति के भेद पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण भए, तातैं इस गाथा के अनंतर ही जो आगैं गाथा है, ताका अर्थ विषैं एकेंद्री जीव कैं स्थिति का अंतरालनि विषैं अंकनि की सहनानी की अपेक्षा एक (१), दोय (२), च्यारि (४), चौदह (१४), अठाइस (२८), अठ्यानवै (९८), एक सौ छिनवै (१९६) असैं प्रमाण कौं धरैं शलाका कहैंगे, सो तिन सर्व शलाकानि का जोड दीएं तीन सौ तियालीस शलाका भई ।

जैसैं प्रवृत्ति विषैं सीरका कार्य में विसवा कहिए है, तैसैं इहां शलाका जाननी । सो एकेंद्री जीव कैं जितने पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण स्थिति के भेद कहे, तिनकौं तीन सौ तियालीस का भाग दीएं जो प्रमाण आवै, तितना एक शलाका विषैं स्थिति के भेदनि का प्रमाण जानना । सो इसकौं अपना-अपना शलाका प्रमाण तैं गुणैं अपने-अपने ठिकानैं स्थिति के भेदनि का प्रमाण आवै है, सोई त्रैराशिक करि दिखाइए है –

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

जो तीन सौ तियालीस शलाकानि विषैं एकेंद्री जीव संबंधी मिथ्यात्व की स्थिति के सर्व भेद पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण पाइये, तो एक सौ छिनवै शलाकानि विषैं केते पाइये ? इहां प्रमाणराशि तीन सौ तियालीस (३४३), फलराशि एकेंद्री कैं मिथ्यात्व की स्थिति के भेदनि का प्रमाण पल्य के असंख्यातवां भाग मात्र, इच्छाराशि एक सौ छिनवै (१९६)। तहां फलराशि तैं इच्छाराशि कौं गुणैं प्रमाण का भाग दिएं जो लब्धराशि विषैं प्रमाण आया, तितने बादर पर्याप्त के उत्कृष्ट स्थितिबंध तैं लगाइ सूक्ष्म पर्याप्त के उत्कृष्ट स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेद जानने। बादर पर्याप्त का उत्कृष्ट स्थितिबंध अर सूक्ष्म पर्याप्त का उत्कृष्ट स्थितिबंध का अंतराल विषैं जितने स्थिति के भेद पाइए, तिनका यहु प्रमाण जानना। इस अंतराल की एक सौ छिनवै शलाका जाननी।

बहुरि जितना इहां अंतराल विषैं स्थिति के भेदनि का प्रमाण कह्या, तामैं एक घटाएं जो प्रमाण होइ, तितना समय एक सागर प्रमाण बादर पर्याप्त का उत्कृष्ट स्थितिबंध मेंस्यों घटाइए, तब अंत विषैं कह्या, जो सूक्ष्म पर्याप्त का उत्कृष्ट स्थितिबंध ताका प्रमाण हो है।

बहुरि प्रमाणराशि शलाका तीन सौ तियालीस (३४३), फलराशि एकेंद्री कैं मिथ्यात्व की स्थिति के भेदनि का प्रमाण, इच्छाराशि शलाका अठाइस। सो फल तैं इच्छा कौं गुणैं प्रमाण का भाग दीएं जो लब्धराशि का प्रमाण भया, तितने सूक्ष्म पर्याप्त कैं उत्कृष्ट तैं एक समय घाटि अनंतरवर्ती भेद तैं लगाइ बादर अपर्याप्तक का उत्कृष्ट स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेदनि का प्रमाण हो है। दोऊ के अंतराल में इतना भेद पाइये है। इस अंतराल की अठाईस शलाका जाननी। सो ए जितने भेद पाइये तितने 'समय सूक्ष्म पर्याप्त की उत्कृष्ट स्थिति मेंस्यों घटाइ दीजैं तब अंत विषैं कही जो बादर पर्याप्त की उत्कृष्ट स्थिति ताका प्रमाण हो है।

बहुरि प्रमाणराशि शलाका तीन सौ तियालीस, फलराशि एकेंद्री के मिथ्यात्व की सर्व स्थिति के भेदनि का प्रमाण, इच्छाराशि शलाका च्यारि। सो फल कौं इच्छा तैं गुणैं प्रमाण का भाग दीएं जो लब्धराशि का प्रमाण आया, तितने बादर अपर्याप्त की उत्कृष्ट स्थितिबंध तैं एक समय हीन अनंतर स्थितिबंध तैं लगाय सूक्ष्म अपर्याप्त का उत्कृष्ट स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेद जानने। इन दोऊ के अंतराल को च्यारि शलाका जाननी। सो ए जितने भेद भए तितने समय बादर अपर्याप्त

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

का उत्कृष्ट स्थितिबंध मेंस्यों घटाय दीजै, तब सूक्ष्म अपर्याप्त का उत्कृष्ट स्थितिबंध का प्रमाण हो है ।

बहुरि प्रमाणराशि शलाका तीन सौ तियालीस (३४३), फलराशि एकेंद्री के मिथ्यात्व की सर्व स्थिति के भेदनि का प्रमाण, इच्छाराशि शलाका एक । सो फल कौं इच्छा तें गुणें प्रमाण का भाग दीएं जो लब्धराशि का प्रमाण आया, तितने सूक्ष्म अपर्याप्त का उत्कृष्ट तें एक समय घाटि अनंतर स्थिति बंध तें लगाइ सूक्ष्म अपर्याप्त का जघन्य स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेद हो हैं । इन दोऊ के अंतराल की एक शलाका जाननी । सो ए जितने भेद भए, तितने समय सूक्ष्म अपर्याप्त का उत्कृष्ट स्थितिबंध मेंस्यों घटाय दीजै, तब सूक्ष्म अपर्याप्त का जघन्य स्थितिबंध का प्रमाण हो है ।

बहुरि प्रमाणराशि शलाका तीन सौ तियालीस, फलराशि एकेंद्री कें मिथ्यात्व की सर्व स्थिति के भेदनि का प्रमाण, इच्छाराशि शलाका दोय । सो फल कौं इच्छा तें गुणें प्रमाण का भाग दीएं जो लब्धराशि का प्रमाण आया, तितने सूक्ष्म अपर्याप्त के जघन्य स्थिति बंध तें एक समय हीन अनंतर स्थितिबंध लगाइ बादर अपर्याप्त के जघन्य स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेद जानने । इन दोऊ के अंतराल संबंधी दोय शलाका जाननी । सो ए जितने भेद भए, तितने समय सूक्ष्म अपर्याप्त की जघन्य स्थितिबंध मैंस्यों घटाइ दीजै, तब बादर अपर्याप्त का जघन्य स्थितिबंध का प्रमाण हो है ।

बहुरि प्रमाणराशि तीन सौ तियालीस (३४३), फलराशि एकेंद्रिय के मिथ्यात्व की सर्व स्थिति के भेदनि का प्रमाण, इच्छाराशि शलाका चौदह । सो फल कौं इच्छा तें गुणें प्रमाण का भाग दीए जो लब्धराशि का प्रमाण आया, तितने बादर अपर्याप्त के जघन्य स्थितिबंध तें एक समय घाटि अनंतर स्थितिबंध के भेद तें लगाय सूक्ष्म पर्याप्त के जघन्य स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेद हैं । इन दोऊनि के अंतराल संबंधी चौदह शलाका जाननी । सो ए जितने भेद भए तितने समय बादर अपर्याप्त का जघन्य स्थितिबंध मेंस्यों घटाइए, तब सूक्ष्म पर्याप्त का जघन्य स्थिति-बंध का प्रमाण होइ ।

बहुरि प्रमाणराशि तीन सौ तियालीस, फलराशि एकेंद्री के मिथ्यात्व की सर्व स्थिति के भेदनि का प्रमाण, इच्छाराशि शलाका अठ्याणवै । सो फल कों इच्छा तें गुणें प्रमाण का भाग दीए, जो लब्धराशि का प्रमाण होइ, तितने सूक्ष्म पर्याप्त

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

के जघन्य स्थितिबंध तें एक समय घाटि अनंतर स्थिति तें लगाय बादर पर्याप्त का जघन्य स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेद जानने। इनि दोउनि के अंतराल संबंधी अठ्याणवै शलाका जाननी। सो ए जितने भेद भए, तितने समय सूक्ष्म पर्याप्त का जघन्य स्थितिबंध मेंस्यों घटाइए, तब बादर पर्याप्त का जघन्य स्थितिबंध हो है। सो यहु जघन्य स्थितिबंध एकेंद्री जीव कैं जघन्य स्थितिबंध कह्या था, सोई जानना।

ऐसें चौदह जीवसमासनि विषैं एकेंद्री के सूक्ष्म बादर के पर्याप्त-अपर्याप्त तैं च्यारि जीवसमास हैं, तिनके जघन्य स्थितिबंध अर उत्कृष्ट स्थितिबंध के भेद तें आठ स्थानक भए, सो आठों स्थानकनि विषैं स्थितिबंध का प्रमाण कह्या। इन आठों विषैं अंतराल सात पाइए, सो अंतराल के विषैं स्थिति भेदनि के प्रमाण जानने के निमित्त सात त्रैराशिक करि कथन दिखाया, सो जानना।

अब आबाधा काल का प्रमाण दिखाइए है —

एकेंद्री जीव कैं मिथ्यात्व की उत्कृष्ट आबाधा आवली का असंख्यातवां भाग करि अधिक संख्यात आवली मात्र जो अंतर्मुहूर्त, तीह प्रमाण है। बहुरि जघन्य आबाधा तीहि अधिक बिना केवल अंतर्मुहूर्त मात्र ही है। तहां उत्कृष्ट मेंस्यों जघन्य घटाएं एक-एक भेद विषैं एक-एक समय बंधती है; तातैं एक का भाग दिएं जो प्रमाण होइ, तामैं एक मिलाएं एकेंद्री जीव के मिथ्यात्व की सर्व आबाधा का सर्व भेदनि का प्रमाण हो है। सो जैसैं स्थितिबंध का कथन विषैं आठ स्थानक कहे अर सात अंतरालनि विषैं भेदनि का प्रमाण जानने के निमित्त सात त्रैराशिक कीएं तैसैं इस आबाधा का कथन विषैं भी आठ स्थानक जानने।

सात अंतरालनि विषैं आबाधा के भेदनि का प्रमाण जानने के निमित्त सात त्रैराशिक करने। तहां प्रमाणराशि तौ पूर्वोक्त प्रकार सातों त्रैराशिक विषैं तीन सौ तियालीस शलाका प्रमाण जानना अर फलराशि तहां तौ स्थिति के भेदनि का प्रमाण कह्या था, इहां जघन्य तैं लगाय उत्कृष्ट पर्यंत जितना एकेंद्री जीव कैं मिथ्यात्व को आबाधा के भेदनि का प्रमाण होइ, तितना फलराशि का प्रमाण जानना अर इच्छाराशि एक सौ छिनवै, अठाईस, च्यारि, एक, दोय, चौदह, अठयानवै शलाका का प्रमाण अनुक्रम तैं जानना।

तहां सर्वत्र फल कौं इच्छा करि गुणैं प्रमाण का भाग दीएं जो-जो प्रमाण आवै, सो-सो तहां-तहां अंतराल विषैं आबाधा के भेदनि का प्रमाण जानना। तहां

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रथम त्रैराशिक विषैं जितने भेदनि का प्रमाण आया, तीहि मैं एक घटाएं, जितना रहै, जितना समय बादर-पर्याप्तक संबंधी उत्कृष्ट स्थिति संबंधी उत्कृष्ट आबाधा मेंस्यों घटाएं सूक्ष्म पर्याप्तक उत्कृष्ट स्थितिबंध संबंधी आबाधाकाल का प्रमाण हो है। यामेंस्यों द्वितीय त्रैराशिक विषैं जितना भेदनि का प्रमाण आया, जितना समय घटाएं, बादर अपर्याप्तक उत्कृष्ट स्थितिबंध संबंधी आबाधा का प्रमाण हो है। असैं ही तृतीयादिक त्रैराशिक विषैं जितने भेद होंहि, तितने समय घटाइ-घटाइ तहां-तहां जो स्थितिबंध का प्रमाण कह्या होइ, तिस-तिस स्थितिबंध संबंधी आबाधा का प्रमाण जानना।

असैं एकेंद्री जीव कैं स्थितिबंध का वा आबाधा के भेदनि का वा काल का प्रमाण कह्या।

अब बेंद्री जीव कैं कहैं हैं—

बेंद्री जीव कैं मिथ्यात्व की उत्कृष्ट स्थिति पचीस सागर प्रमाण है। जघन्य स्थिति च्यारि बार संख्यात का जाकौं भाग दीजिए असा एक घाटि पल्य का प्रमाण कौं उत्कृष्ट स्थिति में घटाएं जितनी अवशेष रहै,तीहि प्रमाण है। तहां उत्कृष्ट मेंस्यों जघन्य कौं घटाएं एक-एक भेद विषैं एक-एक समय बधै है; तातैं वृद्धि का प्रमाण एक, ताका भाग दीएं, बहुरि अवशेष विषैं एक मिलाएं, जितने होंहि, तितने बेंद्री जीव कैं मिथ्यात्व की सर्वस्थिति के भेद जानने।

तहां बेंद्री के च्यारि स्थाननि का तीन अंतराल, तिन संबंधी अंकनि की सहनानी करि एक, दोय, च्यारि शलाका प्रमाण है। असा अगली गाथा का अर्थ विषैं कहेंगे, सो इन सब शलाकानि का जोड दीए सात शलाका भई, तहां जो सात शलाकानि विषैं बेंद्री-जीव कैं जघन्य तैं लगाइ उत्कृष्ट पर्यंत मिथ्यात्व की स्थिति के सर्व भेद च्यारि बार संख्यात का जाकौं भाग दीजिए, असा पल्य प्रमाण पाइए, तौ च्यारि शलाकानि विषैं केते भेद पाइए ? असैं त्रैराशिक करना।

तहां प्रमाणराशि शलाका सात, फलराशि बेंद्री के मिथ्यात्व की स्थिति के भेदनि का प्रमाण, इच्छाराशि शलाका च्यारि। तहां फल करि इच्छा कौं गुणैं प्रमाण का भाग दीए जो लब्धराशि का प्रमाण आया, जितने बेंद्री पर्याप्तक का उत्कृष्ट स्थितिबंध स्यों लगाय बेंद्री अपर्याप्तक का उत्कृष्ट स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेद जानने। इस अंतराल संबंधी च्यारि शलाका जाननी। सो ए जितने भेद भए तितने

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

में एक घटाएं जो रहै, तितने समय पर्याप्तक बेंद्री की उत्कृष्ट स्थिति पचीस सागर प्रमाण, तामेंस्यों घटाएं अंत विषैं कह्या, जो बेंद्री अपर्याप्तक का उत्कृष्ट स्थितिबंध ताका प्रमाण जानना।

बहुरि प्रमाणराशि सात शलाका, फलराशि बेंद्री कैं मिथ्यात्व की स्थिति के सर्व भेदनि का प्रमाण, इच्छाराशि शलाका एक। सो फल करि इच्छा कौं गुणैं प्रमाण का भाग दीए जो लब्धराशि का प्रमाण आया, तितने बेंद्री अपर्याप्तक के उत्कृष्ट स्थितिबंध तैं एक समय हीन अनंतर भेद तैं लगाय बेंद्री अर्याप्तक के जघन्य स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेद जानने। इस अंतराल संबंधी एक शलाका जाननी। सो ए जितने भेद भए, तितने समय बेंद्री अपर्याप्तक का उत्कृष्ट स्थिति बंध मेंस्यों घटाएं बेंद्री अपर्याप्तक कैं जघन्य स्थिति का प्रमाण हो है।

बहुरि प्रमाणराशि शलाका सात, फलराशि बेंद्री के मिथ्यात्व की सर्व-स्थिति के भेदनि का प्रमाण, इच्छाराशि शलाका दोय। तहां फलराशि करि इच्छा-राशि कौं गुणैं प्रमाण का भाग दीएं जो लब्धराशि का प्रमाण आया, तितने बेंद्री अपर्याप्तक का जघन्य स्थितिबंध तैं एक समय घाटि अनंतर स्थितिबंध तैं लगाइ बेंद्री पर्याप्तक का जघन्य स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेद जानने। इस अंतराल संबंधी दोय शलाका जाननी। सो ए जितने भेद भए, तितने समय बेंद्री अपर्याप्तक का जघन्य स्थितिबंध मेंस्यों घटाइए, तब बेंद्री पर्याप्तक का जघन्य स्थितिबंध का प्रमाण होइ। सो बेंद्री के जघन्य स्थितिबंध का प्रमाण कह्या था, सो यहु जाननी।

असैं बेंद्री के स्थितिबंध के भेदनि का प्रमाण वा काल का प्रमाण कह्या।

अब आबाधा का प्रमाण कहिए हैं—

बेंद्री जीव कैं उत्कृष्ट मिथ्यात्व की स्थिति संबंधी उत्कृष्ट आबाधा च्यारि बार संख्यात का जाकौं भाग दीजिए, असैंसी आवली करि अधिक संख्यात आवली मात्र अंतर्मुहूर्त पचीस प्रमाण है। जघन्य आबाधा उस अधिक बिना केवल पचीस अंतर्मुहूर्त प्रमाण है। तहां उत्कृष्ट मेंस्यों जघन्य घटाए एक-एक भेद विषैं एक-एक समय बंधती है, तातैं एक का भाग दीए जो प्रमाण होइ, तामैं एक मिलाए सर्व आबाधा के भेदनि का प्रमाण जानना। तहां पूर्वैं स्थितिबंध का कथन विषै जैसैं तीन त्रैराशिक कीए, तैसैं ही आबाधा के कथन विषैं तीन त्रैराशिक करने।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तहां प्रमाणराशि अर इच्छाराशि तौ स्थितिबंध का कथन विषैं जैसें कहे तैसें ही जानने, अर फलराशि इहां बेंद्री कैं मिथ्यात्व की आबाधा के जितने भेद हैं सो जानना। सो तहां फलकरि इच्छा कौ गुणै प्रमाण का भाग दीए जो-जो प्रमाण आवै, तितने-तितने तहां आबाधा के भेदनि का प्रमाण जानना। सो प्रथम त्रैराशिक विषैं तौ जितना भेदनि का प्रमाण होइ, तामें एक घटाए जो प्रमाण रहै, तितने समय बेंद्री पर्याप्तक की उत्कृष्ट स्थिति संबंधी उत्कृष्ट आबाधा मेंस्यौं घटाएं, जो प्रमाण रहै, तितना बेंद्री अपर्याप्तक का उत्कृष्ट स्थितिबंध संबंधी आबाधाकाल का प्रमाण जानना। यामैं स्यो द्वितीय त्रैराशिक विषै जितने भेद भए, तितने समय घटाए, बेंद्री अपर्याप्तक का जघन्य स्थितिबंध संबंधी आबाधाकाल का प्रमाण हो है। यामैंस्यों तीसरा त्रैराशिक विषैं जितने भेद भए, तितने समय घटाएं बेंद्री पर्याप्तक का जघन्य स्थितिबंध संबंधी आबाधाकाल का प्रमाण हो है, सो यहु जघन्य आबाधा है।

ऐसें बेंद्री विषैं दोय जीवसमास, तिनके जघन्य उत्कृष्ट तैं च्यारि प्रकार, स्थितिबंध वा आबाधा का प्रमाण कह्या, अर च्यारि के तीन अंतराल, तिनिविषैं भेदनि का प्रमाण कह्या।

बहुरि जैसें बेंद्री का कथन कीया, तैसें ही तेंद्री वा चौंद्री वा असंज्ञी पंचेंद्री का कथन जानना। विशेष इतना जो इहां स्थिति के वा आबाधा के भेदनि का प्रमाण और है, तातैं फलराशि का प्रमाण और-और जानना। वा जघन्य उत्कृष्ट स्थिति का वा आबाधा का प्रमाण और-और जानना। बहुरि जहां बेंद्री कह्या है, तहां तेंद्रियादिक कहने। इतना विशेष है और सर्व कथन बेंद्रीवत् जानना।

तहां स्थिति के वा आबाधा के भेदनि का प्रमाण कहिए हैं—

तहां तेंद्री कैं मिथ्यात्व की उत्कृष्ट स्थिति पचास सागर प्रमाण है। जघन्य स्थिति यामेंस्यों तीन वार संख्यात का जाकौं भाग दीजिए, ऐसा एक घाटि पल्य का प्रमाण कौं घटाए अवशेष रहै तितना है। तहां उत्कृष्ट मेंस्यौं जघन्य कौं घटाए भेद विषैं एक-एक समय बधती है; तातैं एक का भाग दीएं जो प्रमाण होइ, तामैं एक मिलाए, तेंद्री संबंधी मिथ्यात्व की स्थिति के सर्व भेदनि का प्रमाण पल्य कौं तीन वार संख्यात का भाग दीजिए, इतना हो है। सोई तेंद्री का स्थितिबंध कथन विषैं तीनों त्रैराशिक विषैं फलराशि जानना।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि तेंद्री कै उत्कृष्ट मिथ्यात्व की स्थिति विषैं आबाधा तीन वार संख्यात का जाकौ भाग दीजिए ऐसी आवली करि अधिक संख्यात आवली प्रमाण अंतर्मुहूर्त पचास अर जघन्य-आबाधा उस अधिक बिना केवल पचास अंतर्मुहूर्त प्रमाण । सो उत्कृष्ट मेंस्यों जघन्य कौं घटाएं, एक-एक समय बधती भेदनि विषै है; तातैं एक का भाग दीए जो प्रमाण होइ, तामैं एक मिलाए आबाधा के सर्वभेदनि का प्रमाण हो है, सोई तेंद्री का आबाधा का कथन विषैं तीनों त्रैराशिक विषैं फलराशि जानना ।

बहुरि चौंद्री कैं मिथ्यात्व की उत्कृष्ट स्थिति सौ सागर प्रमाण है । जघन्य स्थिति इस उत्कृष्ट स्थिति मेंस्यों दोय वार संख्यात का भाग जाकौं दीजिए ऐसा एक घाटि पल्य का प्रमाण कौं घटाए अवशेष दोय वार संख्यात का भाग जाकौं दीजिये, ऐसा पल्य प्रमाण है । तहां उत्कृष्ट मेंस्यों जघन्य कौं घटाए भेदनि विषै एक-एक समय बधती पाइए; तातैं एक का भाग दीए जो प्रमाण होइ, तामैं एक मिलाए चौंद्री संबंधी मिथ्यात्व की स्थिति के सर्व भेदनि का प्रमाण पल्य कौं दोय वार संख्यात का भाग दीजिए इतना है । सोई चौंद्री का स्थितिबंध का कथन विषै तीनों त्रैराशिक विषैं फलराशि जानना ।

बहुरि चौंद्री कैं मिथ्यात्व की स्थिति की उत्कृष्ट आबाधा दोय वार संख्यात का जाकौं भाग दीजिए, ऐसी आवली करि अधिक संख्यात-आवलीप्रमाण अंतर्मुहूर्त सौ, अर जघन्य आबाधा उस अधिक बिना केवल सौ अंतर्मुहूर्त प्रमाण । सो उत्कृष्ट मेंस्यों जघन्य कौं घटाए एक-एक समय भेदनि विषैं बधै; तातैं एक का भाग दीए जो प्रमाण होइ, तामैं एक मिलाए आबाधा के सर्व भेदनि का प्रमाण चौंद्री कै हो है । सोई चौंद्री का आबाधा का कथन विषैं तीनों त्रैराशिक विषैं फल-राशि जानना ।

बहुरि असंज्ञी पंचेंद्री कैं मिथ्यात्व की उत्कृष्ट स्थिति एक हजार सागर प्रमाण है, यामैं एक घाटि पल्य का संख्यातवां भाग घटाएं जघन्य स्थिति हो है । सो उत्कृष्ट मेंस्यों जघन्य कौं घटाएं एक-एक भेद विषैं एक-एक समय बधै है; तातैं एक ही का भाग दीए, जो प्रमाण होइ, तामैं एक मिलाए असंज्ञी कैं मिथ्यात्व की सर्व स्थिति के भेदनि का प्रमाण एक बार संख्यात का भाग जाकौं दीजिए, ऐसा पल्य-मात्र है । सोई असैनी पंचेंद्री का स्थिति कथन विषैं तीनों त्रैराशिक विषैं फलराशि जानना ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि असैनी पंचेंद्री कैं मिथ्यात्व की उत्कृष्ट आबाधा आवली का संख्यातवां भाग करि अधिक संख्यात आवली प्रमाण अंतर्मुहूर्त हजार जानना। अर जघन्य आबाधा उस अधिक बिना केवल हजार अंतर्मुहूर्त प्रमाण जाननी। सो उत्कृष्ट मेंस्यों जघन्य कौं घटाए एक-एक भेद विषैं एक-एक समय बधती है, तातैं एक का भाग दीएं जो प्रमाण होइ, तामैं एक मिलाए असैनी पंचेंद्री कैं मिथ्यात्व की आबाधा के सर्व भेदनि का प्रमाण हो है, सोई असैनी पंचेंद्री का आबाधा का कथन विषैं तीन त्रैराशिक विषैं फलराशि जानना।

ऐसैं जो विशेष कथन कीया सो तौ विशेष जानना। अवशेष सर्व कथन बेंद्री का कथनवत् तेंद्री, चौंद्री, असंज्ञी पंचेंद्री का जानना।

सो जैसैं यहु मिथ्यात्व की उत्कृष्ट-जघन्य स्थिति वा उत्कृष्ट-जघन्य आबाधा के अनुसारि स्थितिबंध का वा आबाधा का कथन कीया, तैसैं ही सर्व प्रकृतिनि का अपनी-अपनी उत्कृष्ट-जघन्य स्थिति वा उत्कृष्ट-जघन्य आबाधा के अनुसारि स्थिति बंध का वा आबाधा का कथन जानि लेना। बहुरि इहां जो शलाकानि का प्रमाण कह्या है, सो यथायोग्य संख्यात की सहनानी दोय का अंक कल्पि करि शलाकानि का प्रमाण कह्या है। अर्थ करि जैसा संभवै तैसा जानना ॥१४८॥

ऐसैं सर्व मन में धारि शलाकानि कौं जानने के निमित्त सूत्र कहैं हैं—

मज्झे थोवसलागा, हेट्ठा उवरिं च संखगुणिदकमा।
सव्वजुदी संखगुणा, हेट्ठुवरिं संखगुणमसण्णित्ति ॥१४९॥

मध्ये स्तोकशलाका, अधस्तनमुपरि च संख्यगुणितक्रमाः।
सर्वयुतिः संख्यगुणा, अधस्तनोपरि संख्यगुणा असंज्ञी तु ॥१४९॥

टीका – जो विवक्षित विभाग करने के अर्थि किछू प्रमाण कल्पना कीजिए ताका नाम इहां **शलाका** जानना। सो मध्ये कहिए बादर पर्याप्तक की उत्कृष्ट स्थिति तैं लगाय बादर पर्याप्तक का जघन्य स्थितिबंध पर्यंत जे एकेंद्री के सर्वस्थिति के भेद हैं, तिनके विषैं जे सूक्ष्म अपर्याप्तक की उत्कृष्ट स्थिति तैं लगाय एक-एक समय घटता, सूक्ष्म अपर्याप्तक का जघन्य स्थितिबंध पर्यंत जेते स्थिति के भेद पाइए, ते आगैं जिनिका कथन कीजिए है, तिन सबनि तैं स्तोक हैं – थोरे हैं; तातैं तहां एक शलाका जाननी '△१△'। यहां त्रिकूटीरचना का अभिप्राय यह है, जो जहां ऐसी '△' त्रिकूटी सहनानी होइ, तहां स्थिति का कथन जानना।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि **हेट्ठा** कहिए याके नीचे सूक्ष्म अपर्याप्तक का जघन्य स्थितिबंध तैं अनंतर स्थितिबंध स्यों लगाय एक-एक समय घटता बादर अपर्याप्तक का जघन्य स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेद संबंधी अधस्तन शलाका। सो उन शलाकानि तैं संख्यात गुणी हैं अर ऊपरि सूक्ष्म अपर्याप्तक का उत्कृष्ट स्थिति के अनंतर स्थितिबंध तें लगाय एक-एक समय बधती बादर अपर्याप्तक के उत्कृष्ट स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेद संबंधी उपरितन शलाका तिनतैं संख्यात गुणी है। असैं संख्यात गुणा अनुक्रम कह्या, सो संख्यात का प्रमाण तो यथायोग्य है; परंतु इहां समझने के अर्थि संख्यात की सहनानी दोय का अंक जानना। सो एक तैं दूणा दोय, सो नीचैं दोय शलाका अर यातैं दुगुणा च्यारि, सो ऊपरि च्यारि शलाका जाननी '△४△१△२△'।

बहुरि **सर्वयुतिः** कहिए पूर्वै शलाका कहीं, तिनका जोड दीएं जो प्रमाण होइ, तिसतैं **हेट्ठा** कहिए नीचैं बादर अपर्याप्त का जघन्य स्थितिबंध के अनंतर भेद तैं लगाय एक-एक समय घटता सूक्ष्म पर्याप्तक के जघन्य स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेद संबंधी अधस्तन शलाका संख्यात गुणी जाननी अर ऊपरि कहिए बादर अपर्याप्तक का उत्कृष्ट स्थितिबंध के अनंतर तैं लगाय एक-एक समय बधता सूक्ष्म पर्याप्तक का उत्कृष्ट स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेद संबंधी उपरितन शलाका तिस तैं संख्यात गुणी जाननी। सो पहिले शलाका च्यारि, एक, दोय; इनिका जोड दीए सात भया, ताकौं संख्यात की सहनानी दोय करि गुणें नीचै तो चौदह शलाका भईं, इसकौं संख्यात की सहनानी दोय करि गुणें ऊपरि अठाईस शलाका भईं '△२८△४△१△-२△१४'।

बहुरि **'चकार'** तैं फेरि भी **सर्वयुतिः** कहिए पहिली शलाकानि का जोड दीए जो प्रमाण होइ तिसतैं **हेट्ठा** कहिए सूक्ष्म पर्याप्तक का जघन्य स्थिति के अनंतर स्थितिबंध तैं लगाय एक-एक समय घटता बादर पर्याप्तक के जघन्य स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेद संबंधी अधस्तन शलाका संख्यात गुणी हैं। अर ऊपरि सूक्ष्म पर्याप्तक के उत्कृष्ट के अनंतरि स्थितिबंध तैं लगाय एक-एक समय बधता बादर पर्याप्तक उत्कृष्ट स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेद संबंधी उपरितन शलाका संख्यात गुणी हैं। सो अगिली शलाका अठाईस, च्यारि, एक, दोय, चौदह; तिनका जोड दीए गुणचास भए। इनकौं संख्यात की सहनानी दोय करि गुणें अठ्याणवै अधस्तन शलाका जाननी। इनकौं संख्यात की सहनानी दोय करि गुणें एक सौ छिनवै उपरितन शलाका जाननी '△१९६△२८△४△२△१△१४△९८△'।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अैसें एकेंद्री का कथन कीया ।

बहुरि इस ही सूत्र का अर्थ बेंद्री प्रति कहिए हैं—

मध्य कहिए बेंद्री पर्याप्तक का उत्कृष्ट स्थितिबंध तैं लगाय बेंद्री पर्याप्तक का जघन्य स्थितिबंध पर्यंत भेदनि विषैं जे बेंद्री अपर्याप्तक का उत्कृष्ट स्थितिबंध तैं लगाय एक-एक समय घटता बेंद्री अपर्याप्तक का जघन्य स्थितिबंध पर्यंत जे स्थिति के भेद हैं, ते थोरे हैं; तातैं ते एक शलाका जानने '△१△' । बहुरि **'हेट्ठा'** कहिए नीचें बेंद्री अपर्याप्तक का जघन्य तै अनंतर स्थितिबंध तैं लगाय एक-एक समय घटता, बेंद्री पर्याप्तक का जघन्य स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेद संबंधी अधस्तन शलाका संख्यात गुणी हैं; अर ऊपरि बेंद्री अपर्याप्तक का उत्कृष्ट के अनंतर स्थितिबंध तैं लगाय बेंद्री पर्याप्तक का उत्कृष्ट स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेद संबंधी उपरितन शलाका, तिसतैं भी संख्यात गुणी हैं । सो एक कौं संख्यात की सहनानी दोय करि गुणै अधस्तन शलाका दोय हैं । याकौं संख्यात की सहनानी दोय करि गुणें उपरितन शलाका च्यारि हैं '△४△१△२△' ।

बहुरि जैसें ए बेंद्री कैं शलाका कहीं, तैसें ही तेंद्री के वा चौंद्री कैं वा असंज्ञी पंचेंद्री कैं शलाका जानना । विशेष इतना–जहां बेंद्री का नाम कह्या है, तहां तेंद्री वा चौंद्री वा असंज्ञी पंचेंद्री का नाम कहना और किछू विशेष नाहीं ।

अैसें शलाका अपनी-अपनी स्थिति के भेद विषैं जाननी । इनकी स्थिति के भेदनि का प्रमाण वा स्थिति का प्रमाण वा आबाधा के भेदनि का प्रमाण वा आबाधाकाल का प्रमाण यथासंभव जानना ।।१४६।।

आगें संज्ञी पंचेंद्रिय विषैं पर्याप्तक के उत्कृष्ट, अपर्याप्तक के उत्कृष्ट, अपर्याप्तक के जघन्य, पर्याप्तक के जघन्य स्थितिबंध के भेद, तिनविषैं विशेष है, सो कहै हैं—

सण्णिस्स हु हेट्ठादो, ठिदिठाणं संखगुणिदमुवरुवरिं ।
ठिदिआयामोवि तहा, सगठिदिठाणं व आबाहा ।।१५०।।

संज्ञिनो हि अधस्तनात्, स्थितिस्थानं संख्यगुणितमुपर्युपरि ।
स्थित्यायामोऽपि तथा, स्वकस्थितिस्थानं व आबाधा ।।१५०।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – संज्ञी पंचेंद्रिय कैं पूर्वोक्त च्यारि भेदनि विषैं पूर्वोक्त एकेंद्रियादिक के भेदनि तैं विशेष है; सो कहिए है – **'हेट्ठादो'** कहिए नीचै तैं संज्ञी पर्याप्तक के जघन्य स्थितिबंध तैं लगाय तिन च्यारि भेदनि का अंतरालनि विषैं स्थिति के भेदनि का प्रमाण संख्यात गुणा अनुक्रम तैं जानना। बहुरि स्थिति का आयाम कहिए समयनि का प्रमाण सो भी ऊपरि-ऊपरि संख्यात गुणा अनुक्रम तैं जानना। सोई कहिए हैं—

संज्ञी जीव कैं मिथ्यात्व की उत्कृष्ट स्थिति सत्तर कोडाकोडी सागर प्रमाण हैं। सो दोय बार संख्यात करि पल्य कौं गुणिए तीहिं प्रमाण है। बहुरि जघन्य स्थिति मिथ्यादृष्टि की अपेक्षा कोडि के ऊपरि कोडाकोडी के नीचैं असैं अंतःकोटा-कोटी सागर प्रमाण है। सो एक बार संख्यात करि पल्य कौं गुणिये तोहि प्रमाण है। सो उत्कृष्ट मेंस्यों जघन्य कौं घटाएं एक-एक समय बधै है, तातैं एक का भाग दीए जो प्रमाण होइ, तामैं एक मिलाएं संज्ञी कैं मिथ्यात्व की सर्व स्थिति के भेदनि का प्रमाण हो है। सो याकौं संख्यात का भाग दीजिये, तहां एक भाग बिना अवशेष बहु भाग मात्र संज्ञी पर्याप्तक के उत्कृष्ट स्थितिबंध तैं लगाय संज्ञी अपर्याप्तक का उत्कृष्ट स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेदनि का प्रमाण है।

सो इनमें एक घटाएं जो प्रमाण रहै, तितने संज्ञी पर्याप्तक का उत्कृष्ट स्थितिबंध सत्तरि कोडाकोडी सागर प्रमाण मेंस्यों घटाएं जो प्रमाण रहैं, सो संज्ञी अपर्याप्तक का उत्कृष्ट स्थितिबंध का प्रमाण जानना। बहुरि वह जो एक भाग रह्या था, ताकौं संख्यात का भाग दीजिये, तहां एक भाग बिना अवशेष बहुभाग मात्र संज्ञी अपर्याप्तक के उत्कृष्ट तैं एक समय घाटि स्थितिबंध तैं लगाय संज्ञी अपर्याप्तक का जघन्य स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेदनि का प्रमाण हो है। सो इतने समय संज्ञी अपर्याप्तक के उत्कृष्ट स्थितिबंध मेंस्यों घटाएं संज्ञी अपर्याप्तक का जघन्य स्थिति-बंध का प्रमाण हो है।

बहुरि जो वह एक भाग रह्या था, तीहिं प्रमाण मात्र संज्ञी अपर्याप्तक का जघन्य तैं एक समय घाटि अनंतर स्थितिबंध तैं लगाय, संज्ञी पर्याप्तक का जघन्य स्थितिबंध पर्यंत स्थिति के भेदनि का प्रमाण है। सो इस प्रमाण कौं संज्ञी अपर्याप्तक का जघन्य स्थितिबंध मैंस्यों घटाएं संज्ञी पर्याप्तक का जघन्य स्थितिबंध का प्रमाण हो है, सो यहु प्रमाण अंतःकोटाकोटी सागर प्रमाण जानना।

असैं स्थिति का कथन किया।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अब आबाधा का कथन कहिए हैं– सो स्वकस्थितिस्थानवत् आबाधा कहिए अपनी स्थिति स्थानकवत् आबाधा का कथन जानना । संज्ञी कैं मिथ्यात्व की उत्कृष्ट आबाधा सात हजार वर्ष प्रमाण । सो तीन बार संख्यात करि गुणिए इसी आवली प्रमाण अर जघन्य आबाधा एक समय घाटि एक मुहूर्त प्रमाण, दोय बार संख्यात करि गुणिए इसी आवली प्रमाण ।

सो उत्कृष्ट मैं जघन्य कौं घटाएं एक-एक भेद विषैं एक-एक समय बधै है; तातैं एक का भाग दीए जो प्रमाण होइ, तामैं एक मिलाएं आबाधा के सर्व भेदनि का प्रमाण हो है । सो तैसें स्थिति के भेदनि कौं संख्यात का भाग देय-देय, बहुभाग-बहुभाग, एक भाग प्रमाण भेद कहे, तैसें आबाधा के भेदनि कौं संख्यात का भाग देय-देय, बहुभाग-बहुभाग, एक भाग प्रमाण तीनों अंतरालनि विषैं भेदनि का प्रमाण जानना । बहुरि जैसें स्थिति के भेदनि करि समय घटाइ-घटाइ स्थिति का प्रमाण कह्या, तैसें इहां आबाधा के भेदनि करि समय घटाय-घटाय तिस-तिस स्थिति संबंधी आबाधा का प्रमाण जानना ।

असें पंचेंद्रिय संज्ञी विषैं विशेष कथन कह्या ।। १५० ।।

आगैं जघन्य स्थितिबंध कौन जीवनि कैं होइ, सो कहै हैं–

सत्तरसपंचतित्थाहाराणं सुहुमबादरापुव्वो ।
छव्वेगुव्वमसण्णी, जहण्णमाऊण सण्णी वा ।।१५१।।

सप्तदशपंचतीर्थाहाराणां सूक्ष्मबादरापूर्वः ।
षड्वैगूर्वमसंज्ञी, जघन्यमायुषां संज्ञी वा ।।१५१।।

टीका – पांच ज्ञानावरण, च्यारि दर्शनावरण, पांच अंतराय, यशस्कीर्ति, उच्चगोत्र, सातावेदनीय – इन सतरह प्रकृतिनि का जघन्य स्थितिबंध सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानवर्ती जीव करै है । बहुरि पुरुषवेद, संज्वलन कषाय च्यारि – इनि पंचनि का जघन्य स्थितिबंध अनिवृत्तिकरण गुणस्थानवर्ती जीव करै है । बहुरि तीर्थंकर, आहारकद्विक – इनका जघन्य स्थितिबंध अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती जीव करै है । बहुरि देवगति वा आनुपूर्वी, नरकगति वा आनुपूर्वी, वैक्रियिक-वैक्रियिक अंगोपांग इस वैक्रियिक षट्क का जघन्य स्थितिबंध असंज्ञी पंचेंद्री जीव करै है । आयुकर्म की प्रकृतिनि का जघन्य स्थितिबंध संज्ञी वा असंज्ञी जीव करै है ।।१५१।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगै अजघन्यादिक स्थिति के भेदनि विषैं संभवै हैं, जे साद्यादिक भेद, तिनिकौ कहैं हैं—

अजहण्णट्ठिदिबंधो, चउव्विहो सत्तमूलपयडीणं ।
सेसतिये दुवियप्पो, आउचउक्केवि दुवियप्पो ॥१५२॥

अजघन्यस्थितिबंधः, चतुर्विधः सप्तमूलप्रकृतीनां ।
शेषत्रये द्विविकल्पः, आयुश्चतुष्केऽपि द्विविकल्पः ॥१५२॥

टीका – आयु बिना सात मूल प्रकृतिनि का अजघन्य स्थितिबंध तो सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव भेद तै च्यारि प्रकार है। बहुरि आयु बिना सात मूल प्रकृतिनि का उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, जघन्य स्थितिबंध सादि, अध्रुव दोय ही प्रकार है। आयु कर्म का च्यार्यों ही प्रकार का स्थितिबंध सादि, अध्रुव दोय प्रकार ही है। सो यहु कथन किछू संदेहरूप नाही, नीकैं संभवै है; तातैं विशेष न कह्या है ॥१५२॥

इहां उत्तर प्रकृतिनि विषैं विशेष है, सो कहै हैं—

संजलणसुहुमचोदस, घादीणं चदुविधो दु अजहण्णो ।
सेसतिया पुण दुविहा, सेसाणं चदुविधावि दुधा ॥१५३॥

संज्वलनसूक्ष्मचतुर्दश, घातिनां चतुर्विधस्तु अजघन्यः ।
शेषत्रयः पुनर्द्विविधाः, शेषाणां चतुर्विधापि द्विधा ॥१५३॥

टीका – च्यारि संज्वलन, सूक्ष्मसांपराय विषैं जिनका बंध पाइए – असे पांच ज्ञानावरण, च्यारि दर्शनावरण, पांच अंतराय – ए घातिया चौदह – इन अठारह प्रकृतिनि का अजघन्य स्थितिबंध तौ सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव च्यारि प्रकार है। बहुरि जघन्य, अनुत्कृष्ट, उत्कृष्ट – ए तीन स्थितिबंध सादि अर अध्रुव दोय ही प्रकार हैं। इनि बिना अवशेष सर्व प्रकृतिनि का अजघन्य, जघन्य, अनुत्कृष्ट, उत्कृष्ट च्यार्यों ही प्रकार स्थितिबंध है, सो आदि अर अध्रुव दोय प्रकार ही है।

अजघन्यादिक का स्वरूप वा सादि इत्यादिक का स्वरूप पूर्वै कह्या था, सो जानना ॥१५३॥

सव्वाओ दु ठिदीओ, सुहासुहाणंपि होंति असुहाओ ।
माणुसतिरिक्खदेवाउगं च मोत्तूण सेसाणं ॥१५४॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सर्वास्तु स्थितयः, शुभाशुभानामपि भवंति अशुभाः ।
मनुष्यतिर्यग्देवायुष्कं च मुक्त्वा शेषाणां ॥१५४॥

टीका – मनुष्यायु, तिर्यंचायु, देवायु बिना अवशेष सर्व शुभ प्रकृति वा अशुभ प्रकृतिनि की स्थिति सो अशुभ ही है, जातैं संसार कौं कारण है । याही तें तीन प्रकृतिनि बिना अवशेष सर्व प्रकृतिनि का बहुत कषायी संक्लेशी जीव कैं स्थितिबंध बहुत प्रमाण लीए हो है । स्तोक कषायी विशुद्ध जीव कैं थोरा प्रमाण लीए हो है ॥ १५४ ॥

आगैं आबाधा का लक्षण कहै हैं—

कम्मसरूवेणागयदव्वं ण य एदिउदयरूवेण ।
रूवेणुदीरणस्स व, आबाहा जाव ताव हवे ॥१५५॥

कर्मस्वरूपेणागतद्रव्यं न चैति उदयरूपेण ।
रूपेणोदीरणाया वा, आबाधा यावत्तावद्भवेत् ॥१५५॥

टीका – कार्मण शरीर नामा नामकर्म के उदय तें जीव के प्रदेशनि का जो चंचलपना सोई योग, तिसके निमित्त करि कार्माणवर्गणारूप पुद्गल स्कंध मूल प्रकृति वा उत्तर प्रकृति रूप होइ आत्मा के प्रदेशनि विषै परस्पर प्रवेश है; लक्षण जाका – असे बंधरूप करि जे तिष्ठैं हैं, ते यावत् उदयरूप वा उदीरणारूप करि प्राप्त होंइ, तावत् काल आबाधा कहिए ।

भावार्थ – कर्म प्रकृति का बंध भए पीछे यावत् काल उदयरूप वा उदीरणारूप न प्रवर्तै, तिस काल कौं आबाधाकाल कहिए है । तहां फल देने रूप परिणमना, सो तो उदय कहिए । बिना ही काल आए अपक्व कर्म का पचना, सो उदीरणा कहिए ॥१५५॥

आगैं तिस आबाधा कौं मूल प्रकृतिनि विषैं कहैं हैं—

उदयं पडि सत्तण्हं, आबाहा कोडकोडि उवहीणं ।
वाससयं तप्पडिभागेण य सेसट्ठिदीणं च ॥१५६॥

उदयं प्रति सप्तानामाबाधा कोटीकोटिरुदधीनां ।
वर्षशतं तत्प्रतिभागेन च शेषस्थितीनां च ॥१५६॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – आयु बिना सात कर्मनि की उदय की अपेक्षा आबाधा एक कोडाकोड़ी सागर स्थिति का एक सौ वर्ष जाननें । अवशेष स्थिति की इस ही प्रतिभाग करि आबाधा जाननी । सो कहिए हैं – एक कोडाकोडी सागर स्थिति की सौ वर्ष आबाधा होइ, तौ सत्तरि कोडाकोडी सागर स्थिति की आबाधा केती होइ ? ऐसैं त्रैराशिक करिए ।

तहां प्रमाणराशि एक कोडाकोडी सागर, फलराशि सौ वर्ष, इच्छाराशि सत्तरि कोडाकोडी सागर, तहां फलराशि करि इच्छा कौं गुणैं प्रमाण का भाग दीए लब्धराशि का प्रमाण सात हजार वर्ष आए, सोई मिथ्यात्व प्रकृति की उत्कृष्ट आबाधा जाननी ।

ऐसैं ही अपनी-अपनी स्थिति प्रमाण इच्छाराशि कीएं अपना-अपना आबाधा काल का प्रमाण आवै है । जिनकी चालीस कोडाकोडी सागर की स्थिति है, तिनका च्यारि हजार वर्ष प्रमाण आबाधाकाल है । जिनकी तीस कोडाकोडी सागर की स्थिति है, तिनका तीन हजार वर्ष प्रमाण आबाधा का काल है ।

ऐसै और भी प्रकृतिनि का आबाधाकाल जानना ।

बहुरि **'सण्णिअसण्णि चउक्के एगे अंतोमुहुत्तमाबाहा'** इस सूत्र करि पूर्वे बेंद्रियादिक कैं स्थिति संबंधी आबाधा कहि आए हैं, सो जाननी ।।१५६।।

आगें अंत:कोटाकोटी सागर प्रमाण स्थिति की आबाधा का प्रमाण कहिए हैं—

अंतोकोडाकोडिट्ठिदिस्स अंतोमुहुत्तमाबाहा ।
संखेज्जगुणविहीणं, सव्वजहण्णट्ठिदिस्स हवे ।।१५७।।

अंत:कोटीकोटिस्थितेः अंतर्मुहूर्त आबाधा ।
संख्यातगुणविहीनः, सर्वजन्यस्थितेर्भवेत् ।।१५७।।

टीका – अंत:कोटाकोटी सागर प्रमाण स्थिति की आबाधा अंतर्मुहूर्त प्रमाण है । बहुरि सर्व कर्मनि की जघन्य स्थिति तैं ताकी आबाधा तींहिस्यों संख्यात गुणी घाटि है, तहां सौ वर्ष के दश लाख असी हजार मुहूर्त होंइ, सो इतनै प्रमाण आबाधा एक कोडाकोडी सागर स्थिति की होइ, तौ एक मुहूर्त आबाधा कितकी स्थिति की होइ, ऐसै त्रैराशिक करिए ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तहां प्रमाणराशि मुहूर्त दश लाख असी हजार, फलराशि एक कोडाकोडी सागर, इच्छाराशि एक मुहूर्त । सो फल करि इच्छा कौं गुणें प्रमाण का भाग दीएं नव कोडी पचीस लाख बाणवे हजार पांच सौ बाणवै सागर अर एक सागर का एक सौ आठ भाग कीजिए, तामैं चौंसठि भाग इतनी स्थिति कीएं एक मुहूर्त आबाधा भई ।

बहुरि प्रमाणराशि – सत्तर कोडाकोडी सागर, फलराशि – दश लाख असी हजार मुहूर्त, इच्छा राशि – नव कोडी पचीस लाख बाणवे हजार पांच सौ बाणवै अर चौंसठि, एक सौ आठवां भाग प्रमाण सागर कीए तिस स्थिति की आबाधा एक मुहूर्त हो है ।

बहुरि प्रमाणराशि सत्तर कोडाकोडी सागर, फलराशि आबाधा का प्रमाण सात हजार वर्ष, इच्छाराशि एक सागर, सों फल करि इच्छा कौं गुणैं प्रमाण का भाग दीएं जो लब्ध प्रमाण साधिक संख्यात उच्छ्वास मात्र आया, सो एक सागर की आबाधा जाननी ॥१५७॥

आयुकर्म की आबाधा कहै हैं—

पुव्वाणं कोडितिभागादासंखेयअद्धवोत्ति हवे ।
आउस्स य आबाहा, ण ट्ठिदिपडिभागमाउस्स ॥१५८॥

पूर्वाणां कोटित्रिभागादसंक्षेपाद्धा वा इति भवेत् ।
आयुषश्च आबाधा, न स्थितिप्रतिभाग आयुषः ॥१५८॥

टीका – आयुकर्म की उत्कृष्ट आबाधा कोडीपूर्व वर्ष का तीसरा भाग प्रमाण जाननी । बहुरि जघन्य आबाधा अंतर्मुहूर्त प्रमाण है अथवा कोइ आचार्य को पक्ष तैं असंक्षेपाद्धा प्रमाण है । नाहीं है **संक्षेप** कहिए थोरा, **अद्धा** कहिए काल, जातैं सो **असंक्षेपाद्धा** कहिए, सो यहु काल आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण है, सो आयु कर्म की आबाधा असैं ही है । अन्य कर्मनि की ज्यों स्थिति के अनुसारि आबाधा नाहीं है ।

तहां प्रश्न – जो असंख्यात वर्ष की जिनकी आयु है, तिनका त्रिभाग प्रमाण आबाधा क्यों न कही ?

तांका समाधान – जो देव, नारकी; तिन कैं तो छह महीना आयु का अवशेष रहै अर भोगभूमियां कै नव महीना आयु का अवशेष रहै, तब त्रिभाग करि

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आयु बंधै है। अर कर्मभूमिया मनुष्य तिर्यंच कै अपनी सर्व आयु का त्रिभाग करि आयु बंधै है, सो कर्मभूमिया की उत्कृष्ट स्थिति कोडि पूर्व वर्ष प्रमाण है, तातैं तिसही का त्रिभाग उत्कृष्ट आबाधाकाल कह्या, सो त्रिभाग करि आठ अपकर्षनि विषैं आयु बंधैं अर जो कदाचित् किसी ही अपकर्ष में आयु न बंधै तो कोई आचार्य के मत तो आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण अर कोई आचार्य के मत एक समय घाटि मुहूर्त प्रमाण आयु का अवशेष रहै, तींहि के पहिले ही उत्तर भव कौं अंतर्मुहूर्त काल प्रमाण समयप्रबद्धनि विषैं बंध करि निष्ठापन करै है। ए दोऊ पक्ष आचार्यनि का परंपरा उपदेश करि अंगीकार कीए हैं ॥१५८॥

आगैं उदीरणा की अपेक्षा आबाधा कौं कहै हैं—

आवलियं आबाहोउदीरणमासिज्ज सत्त कम्माणं।
परभवियआउगस्स य, उदीरणा णत्थि णियमेण ॥१५९॥

आवलिकमाबाधोदीरणामाश्रित्य सप्तकर्मणां।
परभवीयायुष्कस्य च, उदीरणा नास्ति नियमेन ॥१५९॥

टीका — उदीरणा कौं आश्रय करि आयु बिना सात मूल प्रकृतिनि की आबाधा एक आवलीकाल प्रमाण है।

भावार्थ – जो कर्म उदय आवै तौ बंधै पीछै पूर्वै कह्या था आबाधाकाल का प्रमाण, सो व्यतीत भए पीछै उदय आवै। बहुरि जो कर्म उदीरणारूप प्रवर्तै तौ बंधै पीछैं एक आवली प्रमाणकाल गए पीछैं भी उदीरणारूप होइ, तातैं उदीरणा की अपेक्षा आबाधा एक आवली प्रमाण कही। बहुरि आयुकर्म की उदीरणा जिस आयु कौं भोगवै है, तिस ही आयु की उदीरणा होइ अर बध्यमान जो आगामी उत्तर भव की आयु, ताकी उदीरणा न होइ नियमकरि।

बहुरि कर्म है सो आवलीकाल प्रमाण तौ जैसैं बंधैं है, तैसैं ही रहै, उदयरूप वा उदीरणा रूप न होई, तातैं इस आवली कौं **अचलावली** कहिए है। तिस अचलावली कौं छोड़ि करि पीछे कर्म परमाणूनि का समुदाय मेंस्यों केतीक कर्मपरमाणूनि का अपकर्षण करि जे उदयावली विषैं प्राप्त करी, ते तौ आवलीकाल विषैं उदय देकरि खिरै। अर जे उपरितन स्थिति विषैं प्राप्त करीं, ते उदयावली तैं उपरि की स्थिति के अनुसार खिरैं। ते अंत के विषैं आवली का प्रमाण अतिस्थापनावली

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

कौं छोडि ऐसें जे परमाणू प्राप्त करीं ते नानागुणहानि करि सर्व निषेकनि विषैं खिरैं है ।

तहां उदयावली विषैं दीया उदीरणा द्रव्य कैसें खिरै है ? सो कहिए है—

"श्रद्धाणेण सव्वधणे खंडिदे मज्झिमधणमागच्छदि तं रूऊणद्धाणद्धेण ऊणेण णिसेयभागहारेण मज्झिमधणमवहरदे पचयं तं दोगुणहाणिणा गुणिदे श्रादि-णिसेयं तत्तो विसेस हीणकमं ।"

अध्वान कहिए विवक्षित काल के समयनि का प्रमाण सो गच्छ ताकरि सर्व धन कहिए विवक्षित सर्वपरमाणूनि का प्रमाण कौं, खंडिते कहिए भाग दीएं, मध्यमधन कहिए बीचि का समय विषैं जेती खिरैं तिसका प्रमाण आवै है । तिस मध्यम धन कौं एक घाटि गच्छ का आधा प्रमाण सो निषेक भागहार जो दोगुण-हानि, तामेंस्यों घटाएं जो प्रमाण होइ, ताका भाग दीएं जो प्रमाण होइ, सो चय का प्रमाण जानना । तिस चय कौं, दोगुणहानि कहिए गुणहानि के प्रमाण तें दूणा प्रमाण ताकरि गुणिए तब आदि निषेक कहिए पहिला समय विषै जेती परमाणू खिरैं, तिनका प्रमाण जानना । बहुरि द्वितीयादिक समय संबंधी निषेकनि विषैं जेती विशेष कहिए एक-एक चय घाटि परमाणूनि का खिरणा जानना । इनि सबनि का विशेष स्वरूप पूर्वें कहि आए हैं, तथा आगे कहैंगे, सो जानना । ऐसैं बिना ही काल आए जैसें पाल करि अंब पकाइए है, तैसें अपक्व कर्म कौं उदीरणा करि उदयावली विषैं प्राप्त कीया । तिस कर्म के खिरने का ऐसा विधान जानना ।।१५९।।

आगैं निषेक का स्वरूप कहैं हैं—

आबाहूणियकम्मट्ठिदी णिसेगो दु सत्तकम्माणं ।
आउस्सणिसेगो पुण, सगट्ठिदी होदि णियमेण ।।१६०।।

आबाधोनितकर्मस्थितिः निषेकस्तु सप्तकर्मणां ।
आयुषो निषेकः पुनः, स्वकस्थितिर्भवति नियमेन ।।१६०।।

टीका – आयु बिना सात कर्मनि का निषेक आबाधा करि हीन कर्मस्थिति प्रमाण जानना, समय-समय प्रति विषैं कर्म परमाणू खिरैं तिनके समूह का नाम निषेक जानना । सो विवक्षित कर्म की जेती स्थिति बंधी होइ, तिसमेंस्यों आबाधाकाल विषैं तौ कोइ परमाणू खिरैं नाही, पीछैं समय-समय प्रति विवक्षित कर्म परमाणू

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अनुक्रम तैं खिरै, तातैं जो कर्म की स्थिति होइ, तामेंस्यों आबाधाकाल घटाएं जो काल रहै, ताके समयनि का जो प्रमाण, सोई निषेकनि का प्रमाण जानना सो सात कर्म का निषेक तो असैं जानना।

बहुरि आयुकर्म की जेती स्थिति होइ, सोइ निषेकनि का प्रमाण जानना। इहां आबाधा न घटावनी, जातैं आयुकर्म की आबाधा तौ पहला भव ही में होय गई, पीछैं जो पर्याय धरचा, तहां आयुकर्म की स्थिति के जेते समय हैं, तिन सर्व समयनि विषैं प्रथम समयस्यों लगाय अंत समय पर्यंत सयय-समय प्रति परमाणू क्रम तैं खिरैं हैं, तातैं आयुकर्म की जेती स्थिति होइ, तेते समयनि का जो परिमाण, सोई आयुकर्म के निषेकनि का प्रमाण जानना ॥१६०॥

आबाहं बोलाविय, पढमणिसेगम्मि देय बहुगं तु।
तत्तो विसेसहीणं, बिदियस्सादिमणिसेओत्ति ॥१६१॥

आबाधां वा अपलाप्य, प्रथमनिषेके देयं बहुकं तु।
ततो विशेषहीनं, द्वितीयस्यादिमनिषेक इति ॥१६१॥

टीका – सो कर्म की जेती स्थिति बंधी होइ, तामैं जिससमय बंध भया हो, तीहिं का प्रथम समयस्यों लगाय आबाधाकाल पर्यंत तौ कोई परमाणू खिरैं नाही, तातैं तिस आबाधाकाल कौं छोडि करि जो अनंतर समय है, तहां प्रथम गुणहानि का प्रथम निषेक है, सो इस विषैं और निषेकनि तैं बहुत द्रव्य दीजिए है, बहुत परमाणू खिरै हैं। बहुरि प्रथम गुणहानि का द्वितीयादि निषेकनि विषैं द्वितीय गुणहानि का प्रथम निषेक पर्यंत एक-एक विशेष कहिए चय, ताकों घटाएं जो-जो प्रमाण आवै, तितना-तितना द्रव्य दीजिए है, तितने-तितने परमाणू खिरै हैं ॥१६१॥

बिदिये बिदियणिसेगे, हाणी पुव्विल्लहाणिअद्धं तु।
एवं गुणहाणिं पडि हाणी अद्धद्धयं होदि ॥१६२॥

द्वितीये द्वितीयनिषेके, हानिः पूर्वहान्यर्धं तु।
एवं गुणहानिं प्रति, हानिरर्धार्धं भवति ॥१६२॥

टीका– बहुरि दूसरी-गूणहानि विषैं जो-जो दूसरा निषेक, ताके विषैं प्रथम निषेक तैं पूर्वैं निषेक-निषेक प्रति जितना घटाया था, तिसतैं आधा घटाएं जो प्रमाण

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

रहै, तितना द्रव्य देना। असैं ही तृतीयादि निषेकनि विषैं तृतीय गुणहानि का प्रथम निषेक पर्यंत इतने-इतने ही घटावने। बहुरि असैं ही गुणहानि-गुणहानि प्रति आधा-आधा अनुक्रम जानना, सो इस सर्व कथन कौं पूर्वे कहि आए हैं वा आगैं विशेष करि कहैंगे, सामान्य-सा इहां अंकसंदृष्टि करि कहिए हैं—

विवक्षित कर्म की परमाणू तरेसठि सौ (६३००), आबाधा बिना स्थिति का प्रमाण अठतालीस समय (४८), गुणहानि एक, आठ समय प्रमाण (८)। तहां सर्व-स्थिति विषैं गुणहानि छह (६), दोगुणहानि सोलह (१६), अन्योन्याभ्यस्तराशि चौसठि (६४)। तहां प्रथम गुणहानि विषैं परमाणू बत्तीस सौ खिरैं, द्वितीयादिक गुणहानि विषैं आधे-आधे खिरैं – ३२००, १६००, ८००, ४००, २००, १००। एक घाटि अन्योन्याभ्यस्तराशि का सर्व द्रव्य कौं भाग दीएं अंत की गुणहानि विषैं परिमाण आवै है, यातैं दूणा-दूणा द्रव्य आदि की गुणहानि पर्यंत जानना।

बहुरि प्रथम गुणहानि का सर्व द्रव्य बत्तीस सौ, याकौं प्रथम गुणहानि का गच्छ का प्रमाण आठ, ताका भाग दीए मध्य धन च्यारिसै, याकौं एक घाटी गच्छ का आधा प्रमाण साढा तीन, सो निषेक भागहार जो सोला, तामैंस्यों घटाएं साढा बारह रहे, ताका भाग दीएं बत्तीस पाए, सो चय जानना। याकौं दोगुणहानि सोला करि गुणैं पांचसै बारह भए, सो निषेक संबंधी द्रव्य जानना। यातैं एक-एक चय घटाएं द्वितीयादि निषेक संबंधी द्रव्य होइ ५१२,४८०,४४८,४१६,३८४,३५२,३२०,२८८।

बहुरि इस दोय सौ अठचासी में एक चय घट्या तब दोय सौ छप्पन भया, सो प्रथम गुणहानि के प्रथम निषेक तैं आधा परिमाण भया, सो यहु द्वितीय-गुणहानि का प्रथम निषेक जानना। इहां हानिरूप चय का प्रमाण पूर्व तैं आधा सोला, सो तीसरी गुणहानि का प्रथम निषेक पर्यंत सोला-सोला घटावना – २५६, २४०, २२४, २०८, १९२, १७६, १६०, १४४।

यामैं एक चय घटाए एक सौ अठाईस सो दूसरी गुणहानि के प्रथम निषेक तैं आधा भया, सो यहु तीसरी गुणहानि का प्रथम निषेक है। इहां चय का प्रमाण तिसतैं आधा आठ जानना। असैं अंत की छठी गुणहानि पर्यंत सर्व धन का वा निषेकनि विषैं द्रव्य का वा चय का आधा-आधा प्रमाण जानना।

इस अनुक्रम तैं सर्व तरेसठि सौ परमाणू निजस्थिति विषैं खिरै हैं।

इस दृष्टांत करि यथायोग्य सर्व कर्मनि विषैं कथन जानना ॥१६२॥

॥ इति स्थितिबंधप्रकरणं समाप्तं ॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगें अनुभागबंध तेईस गाथानि करि कहै हैं–

सुहपयडीण विसोही, तिव्वो असुहाण संकिलेसेण ।
विवरीदेण जहण्णो, अणुभागो सव्वपयडीणं ।।१६३।।

शुभप्रकृतीनां विशुद्धया, तीव्रोऽशुभानां संक्लेशेन ।
विपरीतेन जघन्योऽनुभागः सर्वप्रकृतीनां ।।१६३।।

टीका – शुभ प्रकृति जो सातावेदनीयादिक प्रशस्त प्रकृति, तिनका विशुद्ध परिणामनि करि तीव्र कहिए उत्कृष्ट अनुभागबंध हो है । बहुरि अशुभ प्रकृति जे असातावेदनीयादिक अप्रशस्त प्रकृति, तिनका संक्लेश परिणाम करि तीव्र अनुभाग बंध हो है ।

बहुरि **'विपरीतेन'** कहिए शुभ प्रकृतिनि का संक्लेश परिणाम करि अर अशुभ प्रकृतिनि का विशुद्ध परिणाम करि जघन्य अनुभागबंध हो है ।

सर्व प्रकृतिनि का अैसें अनुभागबंध जानना । तहां मंदकषायरूप विशुद्ध परिणाम जानने । तीव्रकषायरूप संक्लेश परिणाम जाननें ।।१६३।।

बादालं तु पसत्था, विसोहिगुणमुक्कडस्स तिव्वाओ ।
वासीदि अप्पसत्था, मिच्छुक्कडसंकिलिट्ठस्स ।।१६४।।

द्वाचत्वारिंशत्तु प्रशस्ता, विशुद्धिगुणोत्कटस्य तीव्राः ।
द्व्यशीतिरप्रशस्ताः, मिथ्योत्कटसंक्लिष्टस्य ।।१६४।।

टीका – सातावेदनीयादिक बियालीस (४२) प्रशस्त-प्रकृति हैं, ते विशुद्धता गुण की उत्कृष्टता तीव्रता जाकैं पाइए तिस जीव कैं तीव्र अनुभाग लीएं बंधै हैं । बहुरि असातादिक बियासी (८२) अप्रशस्त प्रकृति, ते मिथ्यादृष्टि उत्कृष्ट संक्लेश परिणाम का धारी, ताकैं तीव्र अनुभाग सहित बंधै हैं । इहां वर्णादि च्यारि प्रकृति शुभरूप तौ प्रशस्त प्रकृतिनि में गिनी और अशुभरूप अप्रशस्त प्रकृतिनि में गिनी, दोऊ जायगा इनिका ग्रहण कीया है ।।१६४।।

आदाओ उज्जोओ, मणुवतिरिक्खाउगं पसत्थासु ।
मिच्छस्स होंति तिव्वा, सम्माइट्ठिस्स सेसाओ ।।१६५।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आतप उद्योतो, मानवतिर्यगायुष्कं प्रशस्तासु ।
मिथ्यस्य भवंति तीव्राः, सम्यग्दृष्टेः शेषाः ॥१६५॥

टीका – तिन बियालीस प्रशस्त प्रकृतिनि विषैं आतप, उद्योत, मनुष्यायु, तिर्यंचायु – इन च्यारि प्रकृतिनि का तौ विशुद्ध मिथ्यादृष्टि कैं तीव्र अनुभागबंध हो है । बहुरि अवशेष अठतीस प्रकृतिनि का विशुद्ध सम्यग्दृष्टि कैं तीव्र अनुभागबंध हो है ॥१६५॥

मणुऔरालदुवज्जं, विसुद्धसुरणिरयअविरदे तिव्वा ।
देवाउ अप्पमत्ते, खवगे अवसेसबत्तीसा ॥१६६॥

मनुष्यौदारिकद्विवज्रं, विशुद्धसुरनिरयाविरते तीव्राः ।
देवायुरप्रमत्ते, क्षपके अवशेषद्वात्रिंशत् ॥१६६॥

टीका – सम्यग्दृष्टि कैं अठतीस का तीव्र अनुभागबंध कह्या था, तिनविषैं मनुष्यगति वा आनुपूर्वी, औदारिक शरीर वा अंगोपांग, वज्रवृषभनाराच संहनन – इन पंचनि कौं तीव्र अनुभाग सहित जो जीव अनंतानुबंधी की विसंयोजन विषैं तीन करण करै है, तहां अनिवृत्तिकरण का अंत के समय विशुद्ध देव-नारकी असंयत सम्यग्दृष्टि है, सो बांधै है । बहुरि देवायु कौं तीव्र अनुभाग सहित अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती जीव बांधै है । अवशेष बत्तीस प्रकृति तीव्र अनुभाग सहित क्षपक श्रेणीवाला जीव बांधै है ॥१६६॥

उवघादहीणतीसे, अपुव्वकरणस्स उच्चजससादे ।
संमेलिदे हवंति हु, खवगस्सऽवसेसबत्तीसा ॥१६७॥

उपघातहीनत्रिंशति, अपूर्वकरणस्य उच्चयशःसातं ।
संमेलिते भवंति हि, क्षपकस्यावशेषद्वात्रिंशत् ॥१६७॥

टीका – अपूर्वकरण का छठा भाग में तीस व्युच्छित्ति गईं. तिनविषैं उपघात बिना गुणतीस अर उच्च गोत्र, यशस्कीर्ति, सातावेदनीय – ए सर्व मिली हुई अवशेष बत्तीस प्रकृति कही थीं, ते जाननी ॥१६७॥

मिच्छस्संतिमणवयं, णरतिरियाऊणि वामणरतिरिये ।
एइंदियआदावं, थावरणामं च सुरमिच्छे ॥१६८॥

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

मिथ्यात्वयांतिमनवकं, नरतिर्यगायुषी वामनरतिरश्चि ।
एकेंद्रियमातापं, स्थावरनाम च सुरमिथ्यात्वे ।।१६८।।

टीका – बियासी अप्रशस्त अर आतप, उद्योत, मनुष्यायु, तिर्यंचायु – इन छियासी का मिथ्यादृष्टि ही कैं तीव्र अनुभाग सहित बंध है। तिनविषैं जे मिथ्यादृष्टि विषैं सोलह प्रकृति की व्युच्छित्ति कही थी; तिनमें सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारणादिक अंत की नव प्रकृति, तिनकौं तौ संक्लेश परिणाम युक्त मनुष्य वा तिर्यंच, अर मनुष्यायु, तिर्यंचायु कौं विशुद्ध मनुष्य वा तिर्यंच है, सो तीव्र अनुभाग सहित बांधै है। बहुरि एकेंद्री, स्थावर – इन दोऊ का तौ संक्लेश परिणामनि का धारी अर आतप का विशुद्ध परिणाम का धारी देव है, सो अपनी आयु का छह महीना अवशेष रहे तीव्र अनुभाग बांधै है ।।१६८।।

उज्जोवो तमतमगे, सुरणारयमिच्छगे असंपत्तं ।
तिरियदुगं सेसा पुण, चदुगदिमिच्छे किलिट्ठे य ।।१६९।।

उद्योतः तमस्तमके, सुरनारकमिथ्यके असंप्राप्तं ।
तिर्यग्द्विकं शेषाः पुनः, चतुर्गतिमिथ्ये क्लिष्टे च ।।१६९।।

टीका – तमस्तमक सातवां नरक तिसविषैं उपशम सम्यक्त्व कौं सन्मुख भया अैसा विशुद्ध मिथ्यादृष्टि जीव सो उद्योत प्रकृति कौं तीव्र अनुभाग सहित बांधै है, जातैं अतिविशुद्ध कैं उद्योत प्रकृति का बंध न हो है। बहुरि असंप्राप्तसृपाटिका संहनन अर तिर्यंचगति वा आनुपूर्वी, इनकौं तीव्र अनुभाग सहित देव वा नारकी मिथ्यादृष्टि बांधै है। बहुरि अवशेष रहीं अडसठि (६८) प्रकृतिनि कौं तीव्र अनुभाग सहित च्यार्यों गति के संक्लेश परिणामनि के धारी मिथ्यादृष्टि जीव बांधै हैं ।।१६९।।

आगैं जघन्य अनुभागबंध जिनकैं हो है, तिनकौं कहैं हैं—

वण्णचउक्कमसत्थं, उवघादो खवगघादि पणवीसं ।
तीसाणमवरबंधो, सगसगवोच्छेदठाणम्हि ।।१७०।।

वर्णचतुष्कमशस्तमुपघातः क्षपकघाति पंचविंशतिः ।
त्रिंशतामवरबंधः, स्वकस्वकव्युच्छेदस्थाने ।। १७० ।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – अप्रशस्त वर्णादिक च्यारि, उपघात, ज्ञानावरण पांच, अंतराय पांच, दर्शनावरण च्यारि, निद्रा, प्रचला, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, पुरुषवेद, संज्वलन कषाय च्यारि – इन तीस प्रकृतिनि की अपनी-अपनी जहां बंध विषैं व्युच्छित्ति भई है, तहां इनका जघन्य अनुभागबंध हो है ॥१७०॥

अणथीणतियं मिच्छं, मिच्छे अयदे हु बिदियकोधादी ।
देसे तदियकसाया, संजमगुणपच्छिदे सोलं ॥ १७१ ॥

अन-स्थानत्रयं मिथ्यात्वं, मिथ्ये अयते हि द्वितीयक्रोधादयः ।
देशे तृतीयकषायाः, संयमगुणप्रस्थिते षोडश ॥ १७१ ॥

टीका – अनंतानुबंधी कषाय च्यारि, स्त्यानगृद्ध्यादिक तीन, मिथ्यात्व – ए आठ मिथ्यादृष्टि विषैं, अर अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि असंयत विषैं, प्रत्याख्यान च्यारि कषाय देशसंयत विषैं – ए सोला प्रकृति इन गुणस्थान विषै जो जीव संयम गुण धरने कौं सन्मुख भया, असा विशुद्ध जीव, ताकैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै हैं ॥१७१॥

आहारमप्पमत्ते, पमत्तसुद्धे य अरदिसोगाणं ।
णरतिरिये सुहुमतियं, वियलं वेगुव्वछक्काओ ॥१७२॥

आहारमप्रमत्ते, प्रमत्तशुद्धे च अरतिशोकयोः ।
नरतिरश्चि सूक्ष्मत्रयं, विकलं वैगूर्वषट्कं ॥१७२॥

टीका – आहारद्विक प्रशस्त प्रकृति है, तातैं प्रमत्त गुणस्थान कौं सन्मुख भया असा संक्लेशी अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती जीव ताकैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै है । बहुरि अरति अर शोक ए – अप्रशस्त हैं, तातैं अप्रमत्त गुणस्थान कौं सन्मुख भया असा विशुद्ध प्रमत्त गुणस्थानवर्ती जीव, ताकैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै है । बहुरि सूक्ष्म, अपर्याप्ति, साधारण – ए तीन अर बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री – तीन, देवद्विक, नरकद्विक, वैक्रियिकद्विक – ए छह, आयु च्यारि – ए सोला प्रकृति मनुष्य वा तिर्यंच कैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै है ॥१७२॥

सुरणिरये उज्जोवोरालदुगं तमतमम्हि तिरियदुगं ।
णीचं च तिगदिमज्झिमपरिणामे थावरेयक्खं ॥१७३॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सुरनिरये उद्योतौरालद्विकं तमस्तमसि तिर्यग्द्विकं ।
नीचं च त्रिगतिमध्यमपरिणामे स्थावरैकाक्षं ।।१७३।।

टीका – उद्योत अर औदारिक द्विक – ए देव अर नारकी कैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै है । तहां उद्योत प्रकृति अतिविशुद्ध परिणामी देव, ताकैं तौ बंधै नाहीं; तातैं संक्लेश परिणामी कैं जघन्य अनुभाग लीएं बंधै है, जातैं उद्योत प्रकृति प्रशस्त है । बहुरि तिर्यंचगति वा आनुपूर्वी, नीचगोत्र – ए तमस्तमक सातवां नरक विषैं विशुद्ध जीव कैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै हैं । बहुरि स्थावर, एकेंद्री – ए दोय प्रकृति नारकी बिना तीन गतिवाले जीव उत्कृष्ट संक्लेश वा विशुद्ध परिणाम करि रहित जो जीव मध्यम परिणामी होइ, ताकैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै हैं ।।१७३।।

सोहम्मोत्ति य तावं, तित्थयरं अविरदे मणुस्सम्हि ।
चदुगदिवामकिलिट्ठे, पण्णरस दुवे विसोहीये ।।१७४।।

सौधर्म इति च आतपं, तीर्थंकरमविरते मनुष्ये ।
चतुर्गतिवामक्लिष्टे, पंचदश द्वे विशुद्धे ।।१७४।।

टीका – आतप प्रकृति, भवनत्रिक अर सौधर्मद्विक देव संक्लेश परिणामी होइ, ताकैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै है । बहुरि तीर्थंकर प्रकृति जो नरक जाने कौं सन्मुख भया असा असंयत गुणस्थानवर्ती मनुष्य, ताकैं जघन्य अनुभाग युक्त बंधै है । बहुरि पंद्रह प्रकृति च्यार्‍यों गति का संक्लेशी जीवनि कैं अर दोय प्रकृति च्यार्‍यों गति का विशुद्ध जीवनि कैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै हैं ।।१७४।।

तिन पंद्रह अर दोय प्रकृतिनि के नाम कहैं हैं—

परघाददुगं तेजदु, तसवण्णचउक्क णिमिणपंचिंदी ।
अगुरुलहुं च किलिट्ठे, इत्थिणउंसं विसोहीये ।।१७५।।

परघातद्विकं तेजोद्वि, त्रसवर्णचतुष्कं निर्माणपंचेंद्रियं ।
अगुरुलघु च क्लिष्टे, स्त्रीनपुंसकं विशुद्धे ।। १७५ ।।

टीका – परघात-उच्छ्वास ए दोय, तैजस-कार्माण ए दोय, त्रस, बादर, पर्याप्तक, प्रत्येक – ए च्यारि, शुभरूप वर्णादिक च्यारि, निर्माण, पंचेंद्री, अगुरुलघु – ये पंद्रह प्रकृति च्यारचों गति का संक्लेशी जीव कैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै है,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

जातैं ए प्रकृति प्रशस्त हैं । बहुरि स्त्रीवेद अर नपुंसक वेद – ए दोऊ अप्रशस्त हैं, तातैं च्यारचों गति का विशुद्ध जीव कैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै है ।।१७५।।

सम्मो वा मिच्छो वा, अट्ठ अपरियत्तमज्झिमो य जदि ।
परियत्तमाणमज्झिम, मिच्छाइट्ठी दु तेवीसं ।।१७६।।

सम्यग्वा मिथ्यो वा, अष्ट अपरिवर्तनमध्यमश्च यदि ।
परिवर्तमानमध्यम,मिथ्यादृष्टिस्तु त्रयोविंशतिः ।।१७६।।

टीका – अगली गाथा विषैं इकतीस प्रकृति कहिए हैं, तिन विषैं पहिली आठ प्रकृति तौ अपरिवर्तमान मध्यम परिणामी सम्यग्दृष्टि वा मिथ्यादृष्टि जीव जो होइ तो जघन्य अनुभाग सहित बांधैं है । बहुरि अवशेष तेईस प्रकृति परिवर्तमान मध्यम परिणामी मिथ्यादृष्टि जीव ही जघन्य अनुभाग सहित बांधै है ।।१७६।।

ते प्रकृति कौंन ? सो कहैं हैं—

थिरसुहजससादहुगं, उभये मिच्छेव उच्चसंठाणं ।
संहदिगमणं णरसुरसुभगादेज्जाण जुम्मं च ।।१७७।।

स्थिरशुभयशस्सातद्विकमुभयस्मिन् मिथ्ये एव उच्चसंस्थानं ।
संहतिगमनं नरसुरसुभगादेयानां युग्मं च ।।१७७।।

टीका – स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, यशः-अयशः, साता-असाता – ए आठ अपरिवर्तमान मध्यम परिणामी सम्यग्दृष्टि वा मिथ्यादृष्टि दोऊ कैं जघन्य अनुभाग सहित बंधैं हैं । बहुरि उच्चगोत्र, संस्थान छह, संहनन छह, प्रशस्त-अप्रशस्त विहायोगति, मनुष्यगति वा आनुपूर्वी, देवगति वा आनुपूर्वी, सुभग-दुर्भग, आदेय-अनादेय – ए तेईस प्रकृति परिवर्तमान मध्यम परिणामी मिथ्यादृष्टि जीव ही कैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै हैं ।

इहां अपरिवर्तमान मध्यम परिणाम अर परिवर्तमान मध्यम परिणाम का लक्षण कहिए हैं—

अणुसमयं केवलं वड्ढमाणा हीयमाणा च जे संकिलेस्स-विसोहिपरिणामा ते अपरियत्तमाणा णाम । जेत्थ पुण ठाविदूण परिणामांतरं गंतूणं एगदोहि आगमणं संभवदि ते परियत्तमाण णाम । तत्थ उक्कस्सा मज्झिमा जहण्णा तिविहा परिणामा

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ण। तत्थ सव्व विसुद्धपरिणामेहि य जहण्णो अणुभागो होदि अप्पसत्थपयडीणं अणुभागादो अणंतगुणपसत्थपयडी अणुभागस्स अणंतगुणवड्ढिप्पसंगादो ण सव्व संकिलेट्ठपरिणामेहि य तिव्वसंकिलिस्सेण असुहाणं पयडीणं अणुभाग वड्ढिप्पसंगादो तम्हा जहण्णुक्कस्स परिणामणिराकरणट्ठं परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेहि ति उत्तं।

'अणुसमयं' कहिए समय-समय प्रति, केवल वर्धमान कहिए बधते ही जाय वा हीयमान कहिए घटते ही जाय असे जे संक्लेश रूप वा विशुद्ध रूप परिणाम, ते **अपरिवर्तमान** असै नाम कहिए। जातैं इहां परिणाम पलटि उलटा न आया। बहुरि जिस परिणाम विषैं तिष्ठ करि और परिणामांतर कौं प्राप्त होइ कोइ एक परिणाम थको पलटि तिसही परिणाम विषैं प्राप्त होना संभवै, ते परिणाम **परिवर्तमान** असे नाम कहिए, जातैं इहां परिणाम पलटि उलटा आया।

तहां उत्कृष्ट, मध्यम, जघन्य असैं परिणाम तीन प्रकार हैं। तहां नाहीं सर्वोत्कृष्ट विशुद्ध परिणामनि करि जघन्य अनुभागबंध हो है, जातैं अप्रशस्त प्रकृतिनि के अनुभाग तैं अनंत गुणा प्रशस्त प्रकृतिनि का अनुभाग है। तहां अनंत गुणवृद्धि का प्रसंग है।

भावार्थ – सर्वोत्कृष्ट विशुद्ध परिणामनि तैं तौ शुभ प्रकृतिनि का उत्कृष्ट अनुभागबंध हो है, इहां जघन्य अनुभाग का कथन है, तातैं सर्वोत्कृष्ट विशुद्ध परिणाम का ग्रहण न करना। बहुरि सर्वोत्कृष्ट संक्लेश परिणामनि करि भी जघन्य अनुभागबंध न होइ, जातैं तीव्र संक्लेश करि अशुभ प्रकृतिनि का अनुभाग वृद्धिरूप बहुत होइ। इहां जघन्य अनुभाग का कथन है, तातैं सर्वोत्कृष्ट संक्लेश परिणाम का भी ग्रहण न करना, तातैं जघन्य वा उत्कृष्ट परिणामनि के निराकरण के अर्थि परिवर्तमान मध्यम परिणामनि करि पूर्वोक्त प्रकृतिनि का जघन्य अनुभागबंध हो है, असैं कह्या ॥१७७॥

आगैं मूल प्रकृतिनि के उत्कृष्टादि के अनुभाग; तिनके सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव भेद संभवै हैं वा न संभवै हैं ? सो कहै हैं—

घादीणं अजहण्णोऽणुक्कस्सो वेयणीयणामाणं।
अजहण्णमणुक्कस्सो, गोदे चदुधा दुधा सेसा ॥१७८॥

घातिनामजघन्योऽनुत्कृष्टो वेदनीयनाम्नोः।
अजघन्योऽनुत्कृष्टो, गोत्रे चतुर्धा द्विधा शेषाः ॥१७८॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – च्यार्‍यों घाति कर्मनि का अजघन्य अनुभागबंध, वेदनीय अर नाम-कर्म का अनुत्कृष्ट अनुभागबंध, गोत्रकर्म का अजघन्य अर अनुत्कृष्ट बंध – ए तौ सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव भेद तैं च्यार्‍यों प्रकार हैं । बहुरि अवशेष च्यार्‍यों घाति कर्मनि का अजघन्य बिना तीन प्रकार, वेदनीय नाम का अनुत्कृष्ट बिना तीन प्रकार, गोत्र का अजघन्य, अनुत्कृष्ट बिना दोय प्रकार, आयुकर्म का जघन्य, अजघन्य, उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट च्यार्‍यों प्रकार अनुभागबंध, सो सादि अर अध्रुव के भेद तैं दोय ही प्रकार है ॥१७८॥

आगैं ध्रुव प्रकृतिनि विषैं तौ प्रशस्त वा अप्रशस्त प्रकृति अर अध्रुव प्रकृति तिनकैं जघन्य, अजघन्य, अनुत्कृष्ट, उत्कृष्ट अनुभागबंध संभवै हैं, तहां साद्यादिक भेद कहैं हैं–

सत्थाणं धुवियाणमणुक्कस्समसत्थगाण धुविणाणं ।
अजहण्णं च य चदुधा, सेसा सेसाणयं च दुधा ॥१७९॥

शस्तानां ध्रुवाणामनुत्कृष्टोऽशस्तकानां ध्रुवाणां ।
अजघन्यश्च च चतुर्धा, शेषाः शेषाणां च द्वेधा ॥१७९॥

टीका – तैजस, कार्मण, अगुरुलघु, निर्माण, प्रशस्तवर्णादिक च्यारि – ए ध्रुवबंधी प्रशस्त प्रकृति हैं, सो इनका तौ अनुत्कृष्ट अनुभागबंध और ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय की उगणीस (१९), मिथ्यात्व एक, सोलह कषाय, भय-जुगुप्सा, अप्रशस्त वर्णादिक च्यारि, उपघात – ए ध्रुवबंधी अप्रशस्त प्रकृति हैं, सो इनिका अजघन्य अनुभागबंध सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव के भेदतैं च्यारि प्रकार है ।

बहुरि निरंतर जिनका बंध पाइए असी कहीं जे ध्रुवबंध प्रकृति, तिनिका तौ इनि बिना जघन्यादिक तीन प्रकार अनुभागबंध अर अध्रुवबंधी तेहत्तरि (७३) प्रकृति तिनका जघन्यादिक च्यारि प्रकार सर्व अनुभागबंध – सो सादि अर अध्रुव के भेद तैं दोय ही प्रकार है ॥१७९॥

अनुभाग कहा कहिए ? असा प्रश्न करतैं तिस अनुभाग का स्वरूप प्रथम घाति कर्मनि विषैं कहैं हैं—

सत्ती[1] य लदादारूअट्ठीसेलोवमाहु घादीणं ।
दारुअणंतिमभागोत्ति देसघादी तदो सव्वं ॥१८०॥

१–विपाकोऽनुभवः । मोक्षशास्त्र अध्याय ८, सूत्र २१ ।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

शक्तिश्च लतादार्वस्थिशैलोपमा आहुः घातिनां ।
दार्वनंतिम भागः, इति देशघाति ततः सर्वं ।।१८०।।

टीका – घातिया जे ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, अंतराय कर्म तिनकी शक्ति कहिए स्पर्धक ते लता, दारु, अस्थि, शैल की उपमा कौं धरैं च्यारि भागनि करि तिष्ठै हैं । तहां लता कहिए बेलि, दारु कहिए काष्ठ, अस्थि कहिए हाड, शैल कहिए पाषाण-पर्वत – ए जैसैं अधिक-अधिक कठोरता कौं अनुक्रम तैं धरैं हैं, तैसैं स्पर्धक कहिए वर्गणानि का समूह ते लताभाग, दारुभाग, अस्थिभाग, शैलभाग करि च्यारि प्रकार हैं । तिनविषैं अनुक्रम तैं अपने फल देने की शक्तिरूप अनुभाग अधिक-अधिक जानना ।

तहां लताभाग तैं आदि देकरि दारुभाग का अनंतवां भाग पर्यंत जे स्पर्धक हैं, ते देशघाति जानने । इनके उदय होत संतैं भी आत्मा का गुण प्रगट रहै है । बहुरि दारुभाग का अनंत भाग मेंस्यों एक भाग बिना अवशेष बहुभाग कौं आदि देकरि अस्थिभाग, शैलभाग विषैं जे स्पर्धक हैं, ते सर्वघाति हैं । इनके उदय होत संतैं आत्मा के गुण का अंश भी प्रगट न होइ ।

यहां उदाहरण कहिए—

जहां अवधिज्ञान का अंश भी न पाइए, तहां अवधिज्ञानावरण का सर्व घातिया स्पर्धकनि का उदय जानना । जहां अवधिज्ञान पाइए अर अवधिज्ञानावरण का उदय भी पाइए तहां अवधिज्ञानावरण के देशघातिया स्पर्धकनि का उदय जानना । ऐसैं और भी प्रकृतिनि विषैं जानना ।।१८०।।

तहां उत्तर प्रकृतिनि विषैं मिथ्यात्व प्रकृति विषैं विशेष हैं, सो कहैं हैं—

देसोत्ति हवे सम्मं, तत्तो दारूअणंतिमे मिस्सं ।
सेसा अणंतभागा, अट्ठिसिलाफट्टया मिच्छे ।।१८१।।

देश इति भवेत् सम्यक्त्वं, ततः दार्वनंतिमे मिश्रं ।
शेषा अनंतभागा, अस्थिशिलास्पर्द्धका मिथ्यात्वे ।।१८१।।

टीका – मिथ्यात्व प्रकृति के लताभाग ने आदि देकरि दारुभाग का अनंत भागनि मध्ये एक भाग पर्यंत देशघातिया स्पर्धक हैं, ते सर्व सम्यक् प्रकृतिरूप हैं । बहुरि दारुभाग के एक भाग बिना जे अवशेष बहुभाग रहे, तिनके प्रमाण का अनंत

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

खंड कीजिए, तहां एक खंड प्रमाण जुदी ही जाति का सर्वघातिया स्पर्धक हैं, ते मिश्रप्रकृतिरूप जानने। बहुरि अवशेष दारुभाग का जो बहुभाग, ताका एक भाग बिना बहुभाग रहे, तिनकौं आदि देकरि अस्थिभाग, शैलभागरूप जे स्पर्धक हैं, ते सर्वघाति मिथ्यात्व प्रकृतिरूप जानने ॥१८१॥

आवरणदेसघादंतरायसंजलणपुरससत्तरसं ।
चदुविधभावपरिणदा, तिविधा भावा हु सेसाणं ॥१८२॥

आवरणदेशघात्यंतरायसंज्वलनपुरुषसप्तदश ।
चतुर्विधभावपरिणताः, त्रिविधा भावा हि शेषाणां ॥१८२॥

टीका – आवरणनि विषैं देशघातिया मति, श्रुत, अवधि, मनःपर्यय ज्ञानावरण अर चक्षु, अचक्षु, अवधि दर्शनावरण ए सात, पांच अंतराय, च्यारि संज्वलन, पुरुषवेद – ए सतरह प्रकृति शैल, अस्थि, दारु, लता भाग रूप च्यारि प्रकार भाव लीएं प्रवर्तैं हैं। तहां शैल, अस्थि, दारु, लता भागरूप प्रवर्तैं। बहुरि जहां शैलभाग न होइ तहां अस्थि, दारु, लता भागरूप ही प्रवर्तैं। जहां अस्थिभाग भी न होइ तहां दारु, लता भागरूप ही प्रवर्तैं हैं। बहुरि जहां दारुभाग भी न पाइए तहां केवल लता भागरूप ही प्रवर्तैं हैं – असैं सतरह प्रकृति च्यारि प्रकार भावरूप प्रवर्तैं हैं।

बहुरि इन सतरह बिना अवशेष प्रकृति रहीं तिनविषैं सम्यक्त्व प्रकृति, मिश्रप्रकृति बिना समस्त घातिया कर्मनि की प्रकृति तिनके तीन प्रकार ही भाव जानना। तहां केवलज्ञानावरण, केवलदर्शनावरण, पंच निद्रा, अनंतानुबंधी-अप्रत्याख्यान-प्रत्याख्यान बारह कषाय – इन उगणीस प्रकृतिनि कैं स्पर्धक सर्वघाति ही हैं, देशघाति नाहीं; तातैं शैलभाग अर अस्थिभाग अर दारुभाग का अनंत बहुभाग रूप स्पर्धक पाइए, तहां ए तीनों प्रकार पाइए वा शैलभाग बिना दोय प्रकार पाइए वा अस्थिभाग बिना भी एक प्रकार ही पाइए है; असैं तीनों प्रकार भाव हैं।

बहुरि पुरुषवेद बिना नोकषाय आठ, ते शैल, अस्थि, दारु, लता च्यारि प्रकार अनुभाग धरैं हैं। तहां ए शैल, अस्थि, दारु, लतारूप वा अस्थि, दारु, लता रूप वा दारु, लतारूप असे तीन प्रकार भाव कौं धरैं हैं, कदाचित् केवल लताभागरूप न प्रवर्तैं हैं ॥१८२॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि अघाति कर्म की प्रकृतिनि कौं कहैं हैं—

अवसेसा पयडीओ, अघादिया घादियाण पडिभागा ।
ता एव पुण्णपावा, सेसा पावा मुणेयव्वा ।।१८३।।

अवशेषाः प्रकृतयः, अघातिकाः घातिकानां प्रतिभागाः ।
ता एव पुण्यपापाः, शेषाः पापा मंतव्याः ।।१८३।।

टीका – अवशेष अघातिया कर्मनि की प्रकृति घातिया कर्मवत् प्रतिभाग युक्त जाननी । इनके स्पर्धक भी तीन भावरूप ही प्रवर्तें हैं । ते अघातिया कर्मनि की प्रकृति पुण्य प्रकृति वा पाप प्रकृति रूप हैं । अवशेष घातिया कर्मनि की सर्व प्रकृति पापरूप ही जाननी ।।१८३।।

तहां घातिया कर्मनि के स्पर्धक तिनके तो लता, दारू, अस्थि, शैल असें नाम कहे । अब प्रशस्त-अप्रशस्त अघातिया कर्मनि के स्पर्धक तिनकौं और नाम करि कहिए हैं—

गुडखंडसक्करामियसरिसा सत्था हु णिंबकंजीरा ।
विसहालाहलसरिसाऽसत्था हु अघादिपडिभागा ।।१८४।।

गुडखंडशर्करामृत, सदृशाः शस्ता हि निंबकांजीराः ।
विषहालाहलसदृशाः, अशस्ता हि अघातिप्रतिभागाः ।।१८४।।

टीका – अघातिया कर्मनि के प्रतिभाग कहिए शक्ति के भेद, ते प्रशस्तनि के तौ गुड, खंड, शर्करा, अमृत समान जानने । जैसें गुड अर खांड, शर्करा (मिश्री) अर अमृत ए अधिक-अधिक सुख कौं कारण मिष्ट हैं, तैसें गुडभाग, खांडभाग, शर्करा-भाग, अमृतभाग रूप प्रशस्त-प्रकृतिनि के स्पर्धक अधिक-अधिक सांसारिक सुख कौं कारण हैं ।

बहुरि अप्रशस्त प्रकृति के निंब, कांजीर, विष, हलाहल समान जानने । जैसें निंब, कांजीर, विष, हलाहल अधिक-अधिक दुःख का कारण कटुक हैं, तैसें निंबभाग, कंजीरभाग, विषभाग, हलाहलभाग रूप अप्रशस्त प्रकृतिनि के स्पर्धक क्रम तैं अधिक-अधिक दुःख कौ कारण जानने । तहां प्रशस्त प्रकृति बियालीस (४२) हैं । अप्रशस्त सैंतीस (३७) हैं । इहां वर्णादिक च्यारि प्रकृति प्रशस्त विषैं वा अप्रशस्त विषैं-दोऊ जायगा गिनी हैं ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तहां प्रशस्त प्रकृति गुड, खंड, शर्करा, अमृतरूप वा गुड, खंड, शर्करा रूप वा गुड, खंड रूप असैं तीन प्रकार भावरूप प्रवर्तै हैं। बहुरि अप्रशस्त प्रकृति निंब, कांजीर, विष, हलाहल रूप वा निंब, कांजीर, विषरूप वा निंब, कांजीर रूप तीन-प्रकार भावरूप प्रवर्तै हैं ।।१८४।।

।। इति अनुभागबंधः समाप्तः ।।

आगैं प्रदेशबंध कौं तेतीस गाथानि करि कहैं हैं—

एयक्खेत्तोगाढं, सव्वपदेसेहिं कम्मणो जोग्गं ।
बंधदि सगहेदूहिं य, अणादियं सादियं उभयं ।।१८५।।

एकक्षेत्रावगाढं, सर्वप्रदेशैः कर्मणो योग्यं ।
बध्नाति स्वकहेतुभिश्च, अनादिकं सादिकमुभयं ।।१८५।।

टीका – सूक्ष्म निगोदिया का शरीर घनांगुल के असंख्यातवें भाग मात्र जघन्य अवगाहनारूप क्षेत्र है, ताकौं **एकक्षेत्र** कहिए। तिस एकक्षेत्र विषैं अवगाहरूप तिष्ठता जो कर्मरूप परिणमने कौं योग्य अनादिक वा सादिक वा उभयरूप पुद्गल द्रव्य ताकौं जीव नामा पदार्थ अपने सर्व प्रदेशनि करि मिथ्यात्वादिक के निमित्त तैं बांधै है ।।१८५।।

एयसरीरोगाहियमेयक्खेत्तं अणेयखेत्तं तु ।
अवसेसलोयखेत्तं, खेत्तणुसारिट्ठियं रूवी ।।१८६।।

एकशरीरावगाहितमेकक्षेत्रमनेकक्षेत्रं तु ।
अवशेषलोकक्षेत्रं, क्षेत्रानुसारिस्थितं रूपि ।।१८६।।

टीका – एक शरीर की अवगाहना करि रुक्या असा जो आकाश, सो **एक-क्षेत्र** कहिए, सो घनांगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण एकक्षेत्र जानना। यद्यपि शरीर की अवगाहना जघन्य अवगाहना तैं लगाइ उत्कृष्ट पर्यंत वा समुद्घात अपेक्षा लोक पर्यंत है। तहां जघन्य अवगाहना के आदि भेद, सो तौ घनांगुल कौं पल्य के असंख्या-तवां भाग का भाग दीजिए तीहि प्रमाण अर अंत भेद लोक प्रमाण तहां अंत विषै आदि कौं घटाय एक मिलाएं समस्त अवगाहना के भेद हो हैं, तथापि बहुत जीव घनांगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण शरीर की अवगाहना के धारक हैं, तातैं

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

मुख्यता करि एकक्षेत्र का प्रमाण घनांगुल के असंख्यातवें भाग मात्र कह्या है, सो इतने क्षेत्र के बहुत प्रदेश हैं, तातैं प्रदेशनि की अपेक्षा यहु अनेकक्षेत्र है, तथापि विवक्षा करि इहां इस क्षेत्र कौं एकक्षेत्र कह्या है ।

बहुरि इस एकक्षेत्र का परिणाम करि हीन ऐसा-ऐसा अवशेष लोकाकाश का क्षेत्र, ताकौं **अनेकक्षेत्र** कहिए है । सो तिस-तिस क्षेत्र के अनुसारि तिष्ठता रूपी जो पुद्गल द्रव्य का ताका परिमाण असें जानना – जो समस्त लोक विषैं सर्व पुद्गल द्रव्य पाइए, तो एकक्षेत्र विषैं कितना पुद्गल द्रव्य पाइए, असा त्रैराशिक करना ।

तहां प्रमाणराशि समस्त लोक, फलराशि पुद्गल द्रव्य का परिमाण, इच्छा-राशि एकक्षेत्र का परिमाण । तहां फल करि इच्छा कौं गुणैं प्रमाण का भाग दीएं जो लब्धराशि का प्रमाण आया, तितने एकक्षेत्र संबंधी पुद्गल द्रव्य जानने । बहुरि इच्छाराशि अनेकक्षेत्र करि पूर्वोक्त सर्व विधान कीएं जो लब्धराशि का प्रमाण आया, तितने अनेकक्षेत्र संबंधी पुद्गल द्रव्य जानने ॥१८६॥

एयाणेयक्खेत्तट्ठियरूविअणंतिमं हवे जोग्गं ।
अवसेसं तु अजोग्गं, सादि अणादी हवे तत्थ ॥१८७॥

एकानेकक्षेत्रस्थितरूप्यनंतिमं भवेत् योग्यं ।
अवशेषं तु अयोग्यं, सादि अनादि भवेत्तत्र ॥१८७॥

टीका– तिन एक-अनेक क्षेत्र विषैं तिष्ठता रूपी पुद्गल द्रव्य का परिमाण, ताके अनंतवें भाग प्रमाण तौ अपना-अपना योग्य पुद्गल द्रव्य है, अवशेष अयोग्य पुद्गल द्रव्य है । तहां एकक्षेत्र संबंधी पुद्गल द्रव्य का परिमाण, ताकौं अनंत का भाग दीजिए, तहां एक भाग प्रमाण तौ कर्मरूप परिणमने कौं योग्य असे पुद्गलनि का प्रमाण है, अवशेष भाग प्रमाण जे कर्मरूप परिणमने कौं योग्य नाहीं, असे पुद्गलनि का प्रमाण है । बहुरि अनेकक्षेत्र संबंधी पुद्गल परिमाण कौं अनंत का भाग दीजिए, तहां एक भाग प्रमाण कर्मरूप होने कौं योग्य पुद्गलनि का प्रमाण है । अवशेष भाग प्रमाण कर्मरूप होने कौं अयोग्य पुद्गलनि का प्रमाण है ।

असैं एकक्षेत्र स्थितियोग्य, एकक्षेत्र स्थिति अयोग्य, अनेकक्षेत्र स्थितियोग्य, अनेकक्षेत्र स्थिति अयोग्य – ए च्यारि भेद भए । तहां एक-एक भेद विषैं सादि द्रव्य अर अनादि द्रव्य जानना । जो अतीत-काल विषैं जीव करि ग्रहण कीया होइ, सो

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सादि द्रव्य कहिये । जो अनादि तैं लगाय कबहूं जीव करि न ग्रह्या होइ, असा पुद्गल द्रव्य, सो अनादि द्रव्य कहिए ॥१८७॥

अब इनके प्रमाण जानने के अर्थि कथन करैं हैं —

जेट्ठे समयपबद्धे, अतीदकाले हदेण सव्वेण ।
जीवेण हदे सव्वं, सादी होदित्ति णिद्दिट्ठं ॥१८८॥

ज्येष्ठे समयप्रबद्धे, अतीतकालेन हतेन सर्वेण ।
जीवेन हते सर्वं, सादि भवतीति निर्दिष्टं ॥१८८॥

टीका – उत्कृष्ट योग के परिणामनि करि निपजै असा उत्कृष्ट समयप्रबद्ध का प्रमाण, ताकौं अतीत काल करि गुणिए जो प्रमाण होइ, ताकौं सर्व जीवराशि का प्रमाण करि गुणैं सर्व जीव संबंधी सादि द्रव्य का प्रमाण हो हैं । तहां जो एक समय विषैं उत्कृष्ट समयप्रबद्ध प्रमाण पुद्गल द्रव्य कौं ग्रहैं तौ संख्यात आवली करि सिद्ध-राशि कौं गुणैं जो प्रमाण होइ, तितना अतीतकाल का समयनि विषैं केते पुद्गल कौं ग्रहै, असैं त्रैराशिक करना ।

तहां प्रमाणराशि एक समय, फलराशि उत्कृष्ट समयप्रबद्ध, इच्छाराशि अतीत काल के समयनि का प्रमाण । तहां फल करि इच्छा कौं गुणैं प्रमाण का भाग दीए जो प्रमाण होइ, तितना एक जीव संबंधी सादि पुद्गल द्रव्य जानना । याकौं सर्व जीवराशि का प्रमाण करि गुणैं जो प्रमाण होइ, तितना सर्व जीव संबंधी सादि पुद्गल द्रव्य जानना । इस प्रमाण कौं सर्व पुद्गलराशि का प्रमाण मेंस्यों घटाएं जो प्रमाण अवशेष रहै, तितना अनादि पुद्गल द्रव्य जानना ॥१८८॥

आगैं पूर्वोक्त भेदनि विषैं सादि द्रव्य का प्रमाण कहैं हैं—

सगसगखेत्तगयस्स य, अणंतिमं जोग्गदव्वगयसादी ।
सेसं अजोग्गसंगयसादी होदित्ति णिद्दिट्ठं ॥१८६॥

स्वकस्वकक्षेत्रगतस्य च, अनंतिमं योग्यद्रव्यगतसादि ।
शेषमयोग्यसंगतसादि भवतीति निर्दिष्टं ॥१८६॥

टीका – एक-अनेक क्षेत्र विषैं तिष्ठता सादि द्रव्य कौं जैसा जिनदेव ने देख्या होइ, तैसैं अनंत का भाग दीजिए, तहां एक भाग प्रमाण तो अपना-अपना योग्य सादि द्रव्य है, अवशेष अयोग्य सादि द्रव्य है, असा कह्या है । सोई कहिए हैं—

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

जो सर्वलोक के प्रदेशनि विषैं सर्व जीव संबंधी सादि द्रव्य पूर्वोक्त प्रमाण पाइए तौ एक जीव की अवगाहनारूप घनांगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण एक-क्षेत्र ताके विषैं कितना पाइए ? वा एकक्षेत्र का परिमाण करि हीन लोक प्रमाण अनेकक्षेत्र विषैं कितना पाइए ? – असैं दोय त्रैराशिक करना ।

तहां प्रमाण सर्वलोक, फल सादि द्रव्य का प्रमाण, इच्छा एकक्षेत्र । फल कौ इच्छा करि गुणें प्रमाण का भाग दीए जो लब्धराशि का प्रमाण भया, तितना एक-क्षेत्र संबंधी सादि द्रव्य जानना ।

बहुरि प्रमाण सर्वलोक, फल सादि द्रव्य का प्रमाण, इच्छा अनेकक्षेत्र । फल कौं इच्छा करि गुणें प्रमाण का भाग दीएं जो लब्धराशि का प्रमाण भया, तितना अनेकक्षेत्र संबंधी सादि द्रव्य जानना । तहां एकक्षेत्र संबंधी सादि द्रव्य कौं अनंत का भाग दीजिए, तहां एक भाग प्रमाण एकक्षेत्र संबंधी कर्मरूप होने को योग्य सादि द्रव्य जानना । अवशेष भाग प्रमाण एकक्षेत्र संबंधी अयोग्य सादि द्रव्य जानने ।

असै ही अनेकक्षेत्र संबंधी सादि द्रव्य कौं अनंत का भाग दीजिए, तहां एक भाग प्रमाण अनेकक्षेत्र स्थित योग्य सादि द्रव्य जानना । अवशेष भाग प्रमाण अनेक क्षेत्र स्थित अयोग्य सादि द्रव्य जानना ।।१८९।।

आगै अनादि द्रव्य का प्रमाण कहैं हैं –

सगसगसादिविहीणे, जोग्गाजोग्गे य होदि णियमेण ।
जोग्गाजोग्गाणं पुण, अणादिदव्वाण परिमाणं १९०।।

स्वकस्वकसादिविहीने, योग्यायोग्ये च भवति नियमेन ।
योग्यायोग्यानां पुनः, अनादिद्रव्याणां परिमाणं ।।१९०।।

टीका – एकक्षेत्र स्थित योग्य द्रव्य वा अयोग्य द्रव्य, बहुरि अनेकक्षेत्र स्थित योग्य द्रव्य वा अयोग्य द्रव्य का जो परिमाण कह्या, तामेंस्यों अपना-अपना सादि द्रव्य का परिमाण घटाएं जो किछू अवशेष प्रमाण रहे, तितना-तितना अनुक्रम तैं एकक्षेत्र स्थित योग्य अनादि द्रव्य का वा एकक्षेत्र स्थित अयोग्य अनादि द्रव्य का व अनेकक्षेत्र स्थित योग्य अनादि द्रव्य का वा अनेक क्षेत्रस्थित अयोग्य अनादि द्रव्य का प्रमाण जानना । असैं ए भेद भए तिनविषैं योग्य सादि द्रव्य तैं वा योग्य अनादि

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

द्रव्य तैं वा योग्य उभय द्रव्य तैं एक समय विषै समयप्रबद्ध प्रमाण मूलप्रकृति, उत्तर प्रकृति उत्तरोत्तर प्रकृतिरूप करि समय-समय प्रति प्रदेशबंध करै है ।

भावार्थ – मिथ्यात्वादिक कै निमित्त तैं जीव समय-समय प्रति कर्मरूप परिणमन कौं योग्य ऐसे समयप्रबद्ध प्रमाण परमाणूनि का समूह कौं ग्रहण करि कर्मरूप परिणमावै है, तहां कोई समय विषैं तो जीव करि पूर्वे ग्रहणे में आए ऐसे सादि द्रव्य रूप परमाणू तिन का ही ग्रहण करै है । कोई समय विषैं किसी जीव करि अतीत काल में ग्रहणे में न आए ऐसे अनादि द्रव्यरूप परमाणू तिनही का ग्रहण करै है । कोई समय विषैं केई सादि द्रव्यरूप परमाणू, केई अनादि द्रव्यरूप परमाणू – तिनका ग्रहण करै है ।।१९०।।

तिस समयप्रबद्ध का प्रमाण कहै हैं —

सयलरसरूवगंधेहिं परिणदं चरमचदुहिं फासेहिं ।
सिद्धादोऽभव्वादो, ऽणंतिमभागं गुणं दव्वं ।।१९१।।

सकलरसरूपगंधैः, परिणतं चरमचतुर्भिः स्पर्शैः ।
सिद्धादभव्यादनंतिमभागं गुणं द्रव्यं ।।१९१।।

टीका – सो समयप्रबद्धरूप परमाणूनि का समूह सर्व – पांच प्रकार रस, पांच प्रकार वर्ण, दोय प्रकार गंध करि है । बहुरि स्पर्श का आठ भेदनि विषैं अंत का च्यारि भेद – शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष तिनही करि संयुक्त परिणम्या है; गुरु, लघु, मृदु, कठिन – ए च्यारि न पाइए है । सो समयप्रबद्ध सिद्धराशि के अनंतवें भाग वा अभव्यराशि तैं अनंत गुणा जानना । इतनी परमाणूनि का समूहरूप वर्गणानि कौं समय-समय ग्रहण करि कर्मरूप परिणमावैं है । ।।१९१।।

सो समयप्रबद्ध एक समय विषैं ग्रह्या हूवा आठ मूल प्रकृति रूप परिणमें, तहां एक-एक मूल प्रकृति का कैसे वट होइ, सो कहैं हैं —

आउगभागो थोवो, णामागोदे समो तदो अहियो ।
घादितियेवि य तत्तो, मोहे तत्तो तदो तदिये ।।१९२।।

आयुष्कभागः स्तोकः, नामगोत्रे समः ततोऽधिकः ।
घातित्रयेऽपि च ततो, मोहे ततस्ततस्तृतीये ।।१९२।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – सर्व मूल प्रकृतिनि विषैं आयुकर्म का भाग कहिए बट, सो थोरा है। बहुरि नामकर्म अर गोत्रकर्म इन दोन्या का भाग परस्पर समान है, तथापि आयुकर्म के भाग तैं अधिक है। अंतराय, ज्ञानावरण, दर्शनावरण – इन तीनों का भाग परस्पर समान है, तथापि नाम, गोत्र के भाग तैं अधिक है। बहुरि यातैं मोहनीय का भाग अधिक है। बहुरि यातें तीसरा कर्म वेदनीय ताका अधिक भाग है। तहां मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं च्यारि आयु का बंध है। सासादन विषैं नरक-बिना तीन आयु का बंध है। असंयत विषैं नरक, तिर्यंच बिना दोय आयु ही का बंध है। देशसंयत, प्रमत्त, अप्रमत्त विषैं एक देवायु ही का बंध है। ऊपरि अनिवृत्तिकरण पर्यंत विषैं आयु बिना सात कर्म ही का बंध है। सूक्ष्मसांपराय विषैं आयु, मोहनीय बिना छह कर्म का बंध है। ऊपरि तीन गुणस्थाननि विषैं एक वेदनीय का बंध है, सो उदयरूप ही है, तहां जितने कर्मनि का जहां बंध होइ, तहां समयप्रबद्ध विषैं तितने ही कर्म का बटवारा जानना ॥१९२॥

आगै वेदनीय कर्म कैं सर्वतैं अधिक भाग कह्या था, सो कारण कहिए हैं –

सुहदुक्खणिमित्तादो, बहुणिज्जरगोत्ति वेदणीयस्स ।
सव्वेहिंतो बहुगं, दव्वं होदित्ति णिद्दिट्ठं ॥१९३॥

सुखदुःखनिमित्तात्, बहुनिर्जरक इति वेदनीयस्य ।
सर्वेभ्यो बहुकं, द्रव्यं भवतीति निर्दिष्टं ॥१९३॥

टीका – वेदनीय कर्म सुख-दुःख कौं कारण है, तातैं सुख-दुःख कौं होत संतैं याकी निर्जरा बहुत हो है, तातैं अन्य मूल प्रकृतिनि के भागरूप द्रव्य प्रमाण तैं वेदनीय के बहुत द्रव्य है, ऐसा परमागम विषैं कह्या है ॥१९३॥

आगै और कर्मनि का हीनाधिक भाग का कारण कहैं हैं —

सेसाणं पयडीणं, ठिदिपडिभागेण होदि दव्वं तु ।
आवलिअसंखभागो, पडिभागो होदि णियमेण ॥१९४॥

शेषाणां प्रकृतीनां, स्थितिप्रतिभागेन भवति द्रव्यं तु ।
आवल्यसंख्यभागः, प्रतिभागो भवति नियमेन ॥१९४॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – वेदनीय बिना अवशेष मूल सर्व प्रकृतिनि का स्थिति प्रतिभाग करि द्रव्य हो है। जिस कर्म की स्थिति बहुत है, ताके अधिक द्रव्य है; जिसकी स्थिति परस्पर समान है, तिसका द्रव्य परस्पर समान जानना। जिसकी स्थिति हीन है, तिसका द्रव्य थोरा जानना।

तहां अधिक कितना है? असा प्रमाण ल्यावने के निमित्त प्रतिभागहार आवली का असंख्यातवां भाग जानना, नियम करि और प्रतिभागहार नाहीं। ताकी संदृष्टि नव का अंक जानना। सो इस प्रतिभागहार का भाग दीएं जो एक भाग का प्रमाण होइ, सो एक भाग जानना। एक भाग का प्रमाण बिना अवशेष सर्व भागनि का प्रमाण, सो बहुभाग जानना। बहुरि जिस कर्म का जितना द्रव्य कहिए है, तितना तिस कर्म के परमाणुनि का प्रमाण जानना ॥१९४॥

आगै विभाग का अनुक्रम दिखावै हैं—

बहुभागे समभागो, अट्ठण्हं होदि एक्कभागम्हि।
उत्तकमो तत्थवि, बहुभागो बहुगस्स देओ दु ॥१९५॥

बहुभागे समभागः, अष्टानां भवति एकभागे।
उक्तक्रमतत्रापि, बहुभागो बहुकस्य देयस्तु ॥१९५॥

टीका– मूलप्रकृति आठ – तिनकौं बहुभाग तौ समान देना। बहुरि जो एक भाग रह्या, ताकौं जैसें अनुक्रम कह्या है, तैसें देना। बहुरि तहां भी बहुभाग जाका बहुत द्रव्य होइ, ताकौं देना। सोई कहिए हैं—

एक समय विषैं कार्माण संबंधी समयप्रबद्ध प्रमाण परमाणु ग्रहै, तिन परमाणुनि का जो प्रमाण, सो कार्माण समयप्रबद्ध द्रव्य है। ताकौं आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां एक भाग कौं जुदा राखि बहुभाग के आठ भाग कीजिए, तहां एक-एक समान भाग आठ स्थानकनि विषैं जुदा-जुदा स्थापना। बहुरि जो एक भाग जुदा रह्या,ताकौं आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां एक भाग कौं जुदा राखि अवशेष बहुभाग है, सो '**बहुकस्य**' कहिए जाका बहुत द्रव्य कह्या है, असा वेदनीय नामा कर्म ताकौं देना, सो पूर्वोक्त आठ भागनि विषैं एक समान भाग का प्रमाण में इस प्रमाण कौं मिलाए जो प्रमाण होइ, तितनी परमाणु समयप्रबद्ध विषैं वेदनीय कर्मरूप परिणमै है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जो एकभाग रह्या, ताकौं आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां एकभाग कौं जुदा राखि बहुभाग मोहनीय कर्म कौं देना। सो उन आठ भागनि विषैं एक समान भाग का प्रमाण में इस प्रमाण कौं मिलाए जो प्रमाण होइ, तितनी परमाणु मोहनीय कर्मरूप परिणमैं हैं।

बहुरि जो एक भाग रह्या, ताकौं आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां एक भाग कौं जुदा राखि अवशेष बहुभाग के तीन भाग कीजिए, सो एक-एक भाग ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय कौं देना, सो उन आठ भागनि विषैं एक-एक समान भाग का प्रमाण इस एक-एक भाग कौं मिलाए जो-जो प्रमाण होइ, तितने-तितने परमाणु अनुक्रम तैं ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय रूप होइ परिणमैं हैं; इनि तीनों कर्मनि का द्रव्य परस्पर समान जानना।

बहुरि जो वह एक भाग रह्या, ताकों आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां एक भाग कौं जुदा राखि बहुभाग के दोय भाग कीजिए, सो एक-एक भाग नाम, गोत्र कौं देना। सो उन आठ भागनि विषैं एक-एक समान भाग का प्रमाण में इस एक-एक भाग कौं मिलाएं जो-जो प्रमाण होइ तितने-तितने परमाणु अनुक्रम तैं नाम वा गोत्ररूप होइ परिणमै हैं। इन दोऊ कर्मनि का द्रव्य परस्पर समान जानना।

बहुरि जो वह एक भाग रह्या, सो आयुकर्म कौं देना, सो उन आठ भागनि विषैं एक समान भाग का प्रमाण में इस एक-भाग का प्रमाण कौं मिलाएं, जो प्रमाण होइ, तितने परमाणु आयुकर्मरूप परिणमै हैं।

असें **'आउग भागो थोवो'** असा गाथा विषैं अनुक्रम कह्या, सो सिद्ध भया।

इसप्रकार एक समय विषैं समय-समयप्रबद्ध प्रमाण पुद्गल द्रव्य, आठ कर्मरूप होइ परिणमै है ॥१९५॥

आगै मूलप्रकृतिनि विषैं जो पिंडरूप द्रव्य कह्या, ताका अपनी-अपनी उत्तर प्रकृतिनि विषैं कैसै बटवारा हो है ? सो अनुक्रम कहै हैं—

उत्तरपयडीसु पुणो, मोहावरणा हवंति हीणकमा।
अहियकमा पुण णामाविग्घा य ण भंजणं सेसे ॥१९६॥

उत्तरप्रकृतिषु पुनः, मोहावरणाः भवंति हीनक्रमाः।
अधिकक्रमाः पुनः नाम, विघ्नाश्च न भंजनं शेषे ॥१९६॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – बहुरि उत्तर प्रकृतिनि विषैं मोहनीय, ज्ञानावरण, दर्शनावरण – ए तौ हीनक्रम कहिए अनुक्रम तैं घाटि-घाटि जानना। जैसै – ज्ञानावरण विषैं मतिज्ञानावरण के द्रव्य तैं श्रुतज्ञानावरण का द्रव्य थोरा है। यातैं अवधिज्ञानावरण का थोरा है - असैं ही अनुक्रम जानना। बहुरि नामकर्म अर अंतराय कर्म – ए दोऊ अधिक क्रम कहिए अनुक्रम तैं अधिक-अधिक हैं। जैसैं अंतराय कर्म विषैं दानांतराय के द्रव्य तैं लाभांतराय का द्रव्य अधिक है, यातैं भोगांतराय का द्रव्य अधिक है – असैं अधिक क्रम जानना।

बहुरि अवशेष वेदनीय, गोत्र, आयु इनविषैं बटवारा नाही है, जातैं इनकी एक-एक ही प्रकृति एकै काल बंधै है। वेदनीय कर्म विषैं कै साता का बंध होइ, कै असाता का बंध होइ, दोऊनि का एक काल विषैं बंध न होइ। गोत्र विषैं कै नीचगोत्र का बंध होइ, कै उच्चगोत्र का बंध होइ। आयु विषैं एक ही आयु का बंध होइ। तातैं इन तीनों कर्मनि का उत्तरप्रकृतिनि विषैं बटवारा नाही। जिस काल जिस उत्तर प्रकृति का बंध होइ, तिस काल जो मूलप्रकृति के द्रव्य का प्रमाण है, सोई सर्व तिस उत्तर-प्रकृति का द्रव्य जानना ॥१९६॥

आगे घातिकर्मनि विषैं सर्वघाति-देशघाति द्रव्य का बटवारा कहैं हैं—

सव्वावरणं दव्वं, अणंतभागो दु मूलपयडीणं।
सेसा अणंतभागा, देसावरणं हवे दव्वे ॥१९७॥

सर्वावरणं द्रव्यमनंतभागस्तु मूलप्रकृतीनां।
शेषा अनंतभागा, देशावरणं भवेद् द्रव्यं ॥१९७॥

टीका – ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय इन तीन मूलप्रकृतिनि का जो-जो अपना-अपना द्रव्य है, ताकौं जैसा जिनदेव देख्या, तैसा यथायोग्य अनंत का भाग दीजिए, तहां एक भाग प्रमाण तौ सर्वावरण कहिए सर्वघाति संबंधी द्रव्य है, अवशेष अनंत भाग रहे, तिन प्रमाण देशावरण कहिए देशघाति संबंधी द्रव्य है।

जैसैं ज्ञानावरण का जो पूर्वै परमाणुनि का प्रमाण कह्या, ताकौं अनंत का भाग दीजिये, तहां एक भाग प्रमाण परमाणु तौ सर्वघाति संबंधी हैं। अवशेष सर्वभाग प्रमाण परमाणु देशघाति संबंधी हैं। असैं ही दर्शनावरण वा मोहनीय विषैं भी जानना।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

कह्या जो सर्वघातिया द्रव्य का परिमाण, तीहि विषैं आगें बटवारा करैंगे। तहां देशघाति प्रकृति वा सर्वघाति प्रकृतिनि का बटवारा करैंगे, सो देशघाति मतिज्ञानावरणादिक, तिनकैं द्रव्य का जो परिमाण, तिनविषैं सर्वघाति परमाणुनि का प्रमाण के अर्थि प्रतिभागहार का प्रमाण कहिए हैं।

इहां कोऊ कहै कि देशघाति प्रकृतिनि विषैं सर्वघाति परमाणु कैसैं कहो हौ ?

ताका समाधान – जो पूर्वैं अनुभाग विषैं कहि आए हैं, जो मतिज्ञानावरणादिक का अनुभाग शैल, अस्थि, दारु, लताभाग करि च्यारि प्रकार है। तहां दारु भाग का तौ अनंतवां भाग अर समस्त लताभाग – ए तौ देशघाति हैं, सो अैसें अनुभाग कौं धरैं जे परमाणु ते देशघाति द्रव्य जानने। बहुरि शैलभाग अर अस्थिभाग अर दारुभाग के बहुभाग – ए सर्वघाति हैं, सो अैसें अनुभाग कौं धरैं जे परमाणु ते सर्वघाति द्रव्य जानने।

सो सर्वघातिनि का उदय होत संतै किंचिन्मात्र भी आत्मगुण प्रकट न होइ। जैसैं एकेंद्रियादिक जीवनि के चक्षुदर्शन का सर्वघातिया का भी उदय पाइए है, तहां किंचिन्मात्र भी चक्षुदर्शन न हो है।

बहुरि देशघातिनि का उदय होतैं भी आत्मगुण प्रकट हो है। जैसैं चतुरिंद्रियादिक जीवनि के चक्षुदर्शन के देशघातिनि का ही उदय पाइए हैं, तहां चक्षुदर्शन भी पाइए है। सो अैसें देशघातिनि विषैं सर्वघाति-देशघाति द्रव्य हैं ॥१९७॥

तहां सर्वघाति द्रव्य का परिमाण के अर्थि प्रतिभागहार का प्रमाण कहिए हैं—

देसावरणण्णोण्णब्भत्थं तु अणंतसंखमेत्तं खु।
सव्वावरणधणट्ठं, पडिभागो होदि घादीणं ॥१९८॥

देशावरणान्योन्याभ्यस्तं तु अनंतसंख्यामात्रं खलु।
सर्वावरणधनार्थं, प्रतिभागो भवति घातिनां ॥१९८॥

टीका – च्यारि ज्ञानावरण, तीन दर्शनावरण, पांच अंतराय, च्यारि संज्वलन, नव-नोकषाय – इनके परमाणुनि का प्रमाण तिनकी नाना गुणहानि शलाका अनंत है; अर जितनी नाना गुणहानि है, तितना दूवा मांडि परस्पर गुणिए, तब अन्योन्याभ्यस्तराशि होइ सो भी अनंत संख्यामात्र है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अंकसंदृष्टि करि – जैसै द्रव्य इकतीस सौ (३१००), स्थिति स्थान चालीस (४०), एक गुणहानि का प्रमाण आठ (८), इसतैं दूणा दोगुणहानि का प्रमाण (१६), नाना गुणहानि पांच (५), नानागुणहानि प्रमाण दूवा मांडि परस्पर गुणन कीजिए तब अन्योन्याभ्यस्तराशि (३२), सो इनकी रचना जैसैं तरेसठि सौ (६३००) द्रव्य अर स्थान अठतालीस का दृष्टांत पूर्वैं कह्या है, तथा आगैं कहेंगे, तैसैं ही जानना ।

विशेष इहां छठी नाना गुणहानि की रचना न करनी; द्रव्यादिक का प्रमाण इहां कह्या है, सो जानना । अर्थसंदृष्टि करि तैसैं जेता तिन पूर्वोक्त प्रकृति का परमाणुनि का प्रमाण, सो द्रव्य जानना । स्थितिस्थान तीन बार अनंत कौं परस्पर गुणिए, तितना जानना । गुणहानि दोय बार अनंत कौं परस्पर गुणिए, तितनी जाननी । इसतैं दूणी दोगुणहानि जाननी । नानागुणहानि अनंत जाननी । नानागुणहानि प्रमाण दूवे मांडि परस्पर गुणन कीजिए, तितनी अन्योन्याभ्यस्तराशि जाननी । सो इहां जो अन्योन्याभ्यस्तराशि का प्रमाण सोई सर्वघाति द्रव्य का परिमाण अवधारने के निमित्त प्रतिभाग जानना ।

सोई कहिए हैं—

मतिज्ञानावरणादिक च्यारि, तिनका द्रव्य केवलज्ञान का बट बिना अपना सर्वघातिनि का द्रव्य सहित देशघातिनि का द्रव्य प्रमाण है, सो किछू अधिक समयप्रबद्ध के आठवें भाग प्रमाण है । याकौं एक घाटि अन्योन्याभ्यस्तराशि का भाग दीजिए, तब शैलभाग की अनंत गुणहानि विषैं द्रव्य का प्रमाण हो है । पीछैं नीचैं एक-एक गुणहानि प्रति दूणा-दूणा द्रव्य होइ करि दारुभाग का अनंत भागनि विषैं एक भाग बिना अवशेष बहुभाग संबंधी द्रव्य, तिनकी प्रथम गुणहानि विषैं शैलभाग का अंत की गुणहानि के द्रव्य कौं यथायोग्य आधा अनंत करि गुणै जो प्रमाण होइ, तितना द्रव्य जानना । जातैं इहां पर्यंत जेती गुणहानि भई, सोई गच्छ जानना । सो एक घाटि गच्छमात्र दोय के अंकनि कौं गुणै सर्वघाति संबंधी अन्योन्याभ्यस्तराशि अनंत प्रमाण हो है, ताका जो आधा प्रमाण, सोई इहां गुणकार जानना । इहां सर्वघाति द्रव्य पूर्ण हुवा । इन सर्व गुणहानिनि का द्रव्य कौं जोड़ैं जो प्रमाण होइ, तितने परमाणु सर्वघाति संबंधी जानने, ताही तैं सर्वघातिनि का द्रव्य के अर्थि अन्योन्याभ्यस्तराशि का प्रतिभाग कह्या है ।

अब आगे देशघाति का द्रव्य कहैं हैं —

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

दारुभाग का बहुभाग की प्रथम गुणहानि का द्रव्य तैं नीचैं दारुभाग का अनंत भागनि विषैं एक भाग की अंत गुणहानि का द्रव्य दूणां है। बहुरि नीचे गुणहानि-गुणहानि प्रति दूणां-दूणां द्रव्य होइ, लताभाग की प्रथम गुणहानि विषैं एक घाटि सर्व नाना-गुणहानि का जो प्रमाण, तितना दूवा मांडि परस्पर गुणन कीए जो प्रमाण होई, सोई अन्योन्याभ्यस्तराशि का आधा प्रमाण करि शैलभाग की अंत गुणहानि का द्रव्य कौं गुणें जो प्रमाण होइ, तितना द्रव्य जानना। इन गुणहानिनि का जोड़ दीएं जो प्रमाण होइ- तितने परमाणु देशघाति संबंधी जानने।

अंकसंदृष्टि करि जैसें – सर्व द्रव्य इकतीस सौ (३१००) याकौं एक घाटि अन्योन्याभ्यस्तराशि इकतीस (३१) का भाग दीएं सौ (१००) पाया, सो शैलभाग की अंत गुणहानि का द्रव्य जानना। पीछें गुणहानि-गुणहानि प्रति दूणां-दूणां होइ २००,४००,८०० एक घाटि नानागुणहानि च्यारि, जितना दूवा मांडि (२।२। २।२।)। परस्पर गुणन कीजै, तब सोला भए, सोई अन्योन्याभ्यस्तराशि बत्तीस का आधा प्रमाण है। याकरि शैलभाग की अंत गुणहानि द्रव्य सौ (१००), ताकौं गुणिए तब सोलह सौ (१६००) भए, सो लताभाग की प्रथम गुणहानि का द्रव्य जानना।

ऐसें ही तीन दर्शनावरणादिक के द्रव्यनि विषैं भी सर्वघाति-देशघाति द्रव्य का प्रमाण जानना ॥१९८॥

आगें पूर्वें कह्या सर्वघाति-देशघाति द्रव्य, तिनका विशेष विभाग का अनुक्रम कहैं हैं —

सव्वावरणं दव्वं, विभंजणिज्जं तु उभयपयडीसु।
देसावरणं दव्वं, देसावरणेसु णेविदरे ॥१९९॥

सर्वावरणं द्रव्यं, विभंजनीयं तु उभयप्रकृतिषु।
देशावरणं द्रव्यं, देशावरणेषु नैवेतरेऽस्मिन् ॥१९९॥

टीका – घातिया कर्मनि कैं अपने-अपने द्रव्य कौं अनंत का भाग दीजिए, तहां एक भाग प्रमाण सर्वघाति द्रव्य है। बहुभाग प्रमाण देशघाति द्रव्य है। तहां सर्वघाति द्रव्य तो सर्वघाति वा देशघाति प्रकृतिनि विषैं विभाग करि देना अर देशघाति द्रव्य है, सो देशघाति प्रकृतिनि विषैं ही देना, केवलज्ञानावरणादिक सर्वघातिनि विषैं न देना ॥१९९॥

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगें उत्तर प्रकृतिनि विषैं विभाग कहैं हैं —

बहुभागे समभागो, बंधाणं होदि एक्कभागम्हि ।
उत्तकमो तत्थवि बहुभागो बहुगस्स देओ दु ॥२००॥

बहुभागे समभागो, बंधानां भवति एकभागे ।
उक्तक्रमस्तत्रापि बहुभागः बहुकस्य देयस्तु ॥२००॥

टीका – युगपत् जिनका बंध संभवै है, असी जे उत्तरप्रकृति, तिनकौं अपना-अपना पिंडरूप द्रव्य कौं आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां बहुभाग का तौ बरोबरि बट करि अपनी-अपनी उत्तरप्रकृतिनि विषैं समान द्रव्य देना अर एक भाग विषैं मोहनीय, ज्ञानावरण, दर्शनावरण इनकी प्रकृतिनि कौं तौ अनुक्रम तैं घटता-घटता अर नामकर्म, अंतरायकर्म इनकी प्रकृतिनि कौं अनुक्रम तैं अधिक-अधिक द्रव्य देना, असा अनुक्रम कह्या है, सो करना । तहां भी जाका बहुत द्रव्य कह्या होइ, ताकौ बहुभाग देना ॥२००॥

सोई कहिए हैं —

घादितियाणं सगसगसव्वावरणीयसव्वदव्वं तु ।
उत्तकमेण य देयं, विवरीयं णामविग्घाणं ॥२०१॥

घातित्रयाणां स्वकस्वकसर्वावरणीयसर्वद्रव्यं तु ।
उक्तक्रमेण च देयं, विपरीतं नामविघ्नानां ॥२०१॥

टीका – ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय इन तीन कर्मनि का अपना-अपना सर्वघाति द्रव्य जैसैं प्रकृतिनि का अनुक्रम है, तैसैं आदि प्रकृति तैं लगाय अंत प्रकृति पर्यंत द्रव्य देना ।

बहुरि नामकर्म, अंतरायकर्म इनका **विपरीत** कहिए अंत प्रकृति तैं लगाय आदि-प्रकृति पर्यंत अनुक्रम तैं द्रव्य देना ।

सोई दिखाइए हैं —

ज्ञानावरणीय कर्म का सर्वद्रव्य पूर्वै कह्या था, ताकौं जैसा जिनदेव ने देख्या तैसा यथायोग्य अनंत का भाग दीजिए, तहां एक भाग प्रमाण सर्वघाति द्रव्य है, सो इस सर्वघाति द्रव्य का विभाग कीजिए है – इस सर्वघाति द्रव्य कौं आवली का

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए । तहां एक भाग बिना बहुभाग के पांच भाग कीजिए ते एक-एक समान भाग पांचौं प्रकृतिनि कौं दीजिए । बहुरि एकभाग रह्या ताकौं प्रतिभाग जो आवली का असंख्यातवां भाग ताका भाग दीजिए, तहां बहुभाग मतिज्ञानावरण कौं दीजिए । बहुरि जो एक-भाग रह्या, ताकौं तिस ही प्रतिभाग का भाग दीजिए, तहां बहुभाग, श्रुतज्ञानावरण कौं दीजिए । बहुरि जो एकभाग रह्या ताकौं तिस ही प्रतिभाग का भाग दीजिए, तहां बहुभाग अवधिज्ञानावरण कौं दीजिए। बहुरि जो अवशेष एकभाग रह्या, ताकौं तिस प्रतिभाग का भाग दीजिए, तहां बहुभाग मन:पर्यय ज्ञानावरण कौं दीजिए । बहुरि जो अवशेष एकभाग रह्या, सो केवलज्ञानावरण कौं दीजिए है । असैं पहिली जे पंच समान भाग कहे थे, तिन एक-एक में पीछैं जो-जो प्रमाण कह्या, सो मिलाएं अनुक्रम तैं मतिज्ञानावरणादिकनि का सर्वघाति द्रव्य का परिमाण हो है ।

बहुरि ज्ञानावरण द्रव्य का अनंत भागनि विषैं एकभाग बिना अवशेष बहुभाग प्रमाण देशघाति द्रव्य है, ताकौं पूर्वोक्त अनुक्रम करि तिसही आवली का असंख्यातवां भाग मात्र प्रतिभाग का भाग दीजिए, तहां एकभाग बिना बहुभाग के च्यारि भाग कीजिए, ते एक-एक समान भाग मतिज्ञानावरणादिक च्यारि प्रकृतिनि कौं देना । बहुरि अवशेष एकभाग रह्या, ताकौं प्रतिभाग का भाग दीजिए तहां बहुभाग मतिज्ञानावरण कौं देना । अवशेष एकभाग रह्या, ताकौं प्रतिभाग का भाग दीजिए, तहां बहुभाग श्रुतज्ञानावरण कौं देना । बहुरि अवशेष एकभाग रह्या, ताकौं प्रतिभाग का भाग दीजिए, तहां बहुभाग अवधिज्ञानावरण कौं देना । बहुरि अवशेष एकभाग रह्या, सो मन:पर्ययज्ञानावरण कौं देना – असैं पहिली जे समान च्यारि भाग कहे थे, तिन एक-एक में पीछैं जो-जो प्रमाण कह्या, सो-सो मिलाए अनुक्रम तैं मतिज्ञानावरणादि का देशघाति द्रव्य का परिमाण हो है । बहुरि अपना-अपना देशघाति वा सर्वघाति द्रव्य मिलाएं अपना-अपना ज्ञानावरण की उत्तर-प्रकृतिनि का सर्व द्रव्य का परिमाण हो है । इहां इतना जानना —

प्रकृतिनि के द्रव्य का विभाग विषैं सर्वत्र जहां प्रतिभाग का भाग कहे, तहां आवली का असंख्यातवां भाग का भाग जानना ।

बहुरि असैं ही दर्शनावरणी कर्म का पूर्वोक्त सर्वद्रव्य का परिमाण, ताकौं अनंत का भाग दीजिए, तहां एकभाग प्रमाण सर्वघाति द्रव्य है । तिस सर्वघाति

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

द्रव्य कौं प्रतिभाग का भाग दीजिए, तहां एकभाग बिना बहुभाग के नव भाग करने, सो एक-एक समान भाग नवौं प्रकृतिनि कौं देना। बहुरि अवशेष एकभाग कौं प्रतिभाग का भाग देय बहुभाग स्त्यानगृद्धि कौं देना। अवशेष एकभाग कौं प्रतिभाग का भाग देय बहुभाग निद्रानिद्रा कौं देना – असैं ही ज्ञानावरण का पंचक की ज्यों प्रतिभाग का भाग देइ-देइ बहुभाग-बहुभाग अनुक्रम तैं प्रचलाप्रचला कौं, निद्रा कौं, प्रचला कौं, चक्षुदर्शनावरण कौं, अचक्षुदर्शनावरण कौं, अवधिदर्शनावरण कौं हीन अनुक्रम तैं देना। अवशेष एक भाग केवलदर्शनावरण कौं देना। सो पहिलैं कहे समान भाग तिन एक-एक भाग विषैं पीछैं कह्या प्रमाण मिलाएं, अपना-अपना स्त्यानगृद्ध्यादिक का सर्वघाति द्रव्य का प्रमाण हो है।

बहुरि दर्शनावरण द्रव्य का अनंत भागनि विषैं एकभाग बिना बहुभाग प्रमाण देशघाति द्रव्य है, ताकौं प्रतिभाग का भाग दीजिए, तहां एकभाग बिना बहुभाग के तीन भाग कीजिए, सो एक-एक समान भाग चक्षु, अचक्षु, अवधि दर्शनावरण कौं देना। बहुरि एकभाग कौं प्रतिभाग का भाग देइ बहुभाग चक्षु-दर्शनावरण कौं देना। अवशेष एकभाग कौं प्रतिभाग का भाग देइ बहुभाग अचक्षु-दर्शनावरण कौं देना। अवशेष एकभाग अवधिदर्शनावरण कौं देना, सो पहिलै कह्या तीन समान भागनि विषैं एक-एक समान भाग में पीछैं कह्या प्रमाण मिलाएं अपना-अपना चक्षुदर्शनावरणादि का देशघाति द्रव्य हो है। चक्षु, अचक्षु, अवधि दर्शनावरण का सर्वघाति-देशघाति द्रव्य मिलाएं, तिनका सर्वद्रव्य का प्रमाण हो है। अवशेष छहों (**निद्रापंचकं केवलदर्शनावरणं चेति षट्**) प्रकृतिनि का सर्वघाति ही सर्वद्रव्य ही जानना।

बहुरि अंतरायकर्म का सर्वद्रव्य का जो प्रमाण, ताकौं प्रतिभाग का भाग दीजिए, तहां एक भाग बिना बहुभाग के पंच भाग करि एक-एक समान भाग एक-एक प्रकृति कौं देना। अवशेष एक भाग कौं प्रतिभाग का भाग देइ बहुभाग वीर्यांतराय कौं देना। बहुरि अवशेष एक भाग कौं प्रतिभाग का भाग देइ बहुभाग उपभोगांतराय कौं देना। असैं ही जो-जो अवशेष एक-एक भाग रहै, ताकौं प्रतिभाग का भाग देइ-देइ, बहुभाग-बहुभाग भोगांतराय कौं, लाभांतराय कौं देना। अवशेष एक भाग दानांतराय कौं देना, सो पहिलैं पंच समान भाग कहे, तिन एक-एक में पीछैं कह्या प्रमाण मिलाएं अपना-अपना द्रव्य का प्रमाण हो है। असैं अंतराय अधिक अनुक्रमरूप जानना ॥२०१॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगै मोहनीय विशेष है, सो कहैं हैं —

मोहे मिच्छत्तादी, सत्तरसण्हं तु दिज्जदे हीणं ।
संजलणाणं भागेव, होदि पणणोकसायाणं ॥२०२॥

मोहे मिथ्यात्वादिसप्तदशानां तु दीयते हीनं ।
संज्वलनानां भाग इव, भवति पंचनोकषायाणां ॥२०२॥

टीका – मोहनीयकर्म विषैं मिथ्यात्व, अनंतानुबंधी-संज्वलन-प्रत्याख्यान-अप्रत्याख्यान-लोभ, माया, क्रोध, मान (१६) – इन सतरह प्रकृतिनि कौं हीनक्रम कहिए अनुक्रम तैं घाटि-घाटि द्रव्य देना । बहुरि पंच नोकषायनि का भाग संज्वलन का भागवत् जानना । नोकषाय नव हैं, तिन विषैं एक समय युगपत् पंच ही का बंध होइ, तातैं इहां पंच नोकषाय कहे । तीन वेद विषैं एक ही वेद का बंध होइ । रति-अरति विषैं एक ही का बंध होइ, हास्य-शोक विषैं एक ही का बंध होइ । भय-जुगुप्सा इन दोऊ का बंध होइ, ऐसैं युगपत् पंच नोकषाय बंधैं हैं ॥२०२॥

अब इनका विभाग कैसैं हो है, सो कहैं हैं —

संजलणभागबहुभागद्धं अकसायसंगयं दव्वं ।
इगिभागसहियबहुभागद्धं संजलणपडिबद्धं ॥२०३॥

संज्वलनभागबहुभागार्धमकषायसंगतं द्रव्यं ।
एकभागसहितबहुभागार्धं संज्वलनप्रतिबद्धं ॥२०३॥

टीका – मोहनीयकर्म का सर्वद्रव्य का प्रमाण पूर्वैं कह्या, ताकौं अनंत का भाग दीजिए, तहां एक भाग प्रमाण सर्वघाति द्रव्य है । अवशेष बहुभाग प्रमाण देशघाति द्रव्य है । तहां देशघाति द्रव्य कौं आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां बहुभाग का आधा तौ नोकषायनि कौं देना । बहुरि बहुभाग का आधा अर एकभाग अवशेष रह्या, सो सर्व संज्वलन का देशघाति संबंधी द्रव्य जानना । ऐसैं ए तीन प्रकार द्रव्य भए । तिनविषैं सर्वघाति द्रव्य का विभाग कीजिए हैं—

सर्वघाति द्रव्य कौं आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण जो प्रतिभाग, ताका भाग दीजिए । तहां एकभाग कौं जुदा राखि अवशेष बहुभाग के सतरह भाग कीजिए, सो एक-एक समान भाग एक-एक प्रकृति कौं दीजिए । बहुरि जो एकभाग

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

रह्या, ताकौं प्रतिभाग का भाग देइ बहुभाग मिथ्यात्व कौं देना। अवशेष एकभाग कौं प्रतिभाग का भाग देइ बहुभाग अनंतानुबंधी लोभ कौं देना। अवशेष एकभाग कौं प्रतिभाग का भाग देइ बहुभाग अनंतानुबंधी माया कौं देना। इसही अनुक्रम तैं जो-जो एकभाग अवशेष रहता जाइ, ताकौं तिसही प्रतिभाग का भाग देइ-देइ बहु-भाग-बहुभाग अनंतानुबंधी क्रोध कौं, अनंतानुबंधी मान कौं, संज्वलन लोभ कौं, संज्वलन माया कौं, संज्वलन क्रोध कौं, संज्वलन मान कौं, प्रत्याख्यान लोभ कौं, प्रत्याख्यान माया कौं, प्रत्याख्यान क्रोध कौं, प्रत्याख्यान मान कौं, अप्रत्याख्यान लोभ कौं, अप्रत्याख्यान माया कौं, अप्रत्याख्यान क्रोध कौं देना, अवशेष एकभाग रहै, सो अप्रत्याख्यान मान कौं देना। सो पहिलैं सतरह समान भाग कहे थे, तिनका एक-एक भाग मैं पीछै कह्या अपना-अपना प्रमाण कौं मिलाएं अपना-अपना प्रकृतिनि का सर्वघाति द्रव्य का प्रमाण हो है।

बहुरि दूसरा संज्वलन का देशघाति संबंधी द्रव्य का जो प्रमाण कह्या, ताकौं प्रतिभाग का भाग दीजिए, तहां एक भाग कौं जुदा राखि अवशेष बहुभाग के च्यारि भाग करि एक-एक समान भाग च्यारचों कौ देना अवशेष एकभाग रह्या, ताकौं प्रतिभाग का भाग देइ बहुभाग संज्वलन लोभ कौं देना, अवशेष एक भाग कौं प्रतिभाग का भाग देइ बहुभाग संज्वलन माया कौं देना। अवशेष एक भाग कौं प्रतिभाग का भाग देइ बहुभाग संज्वलन क्रोध कौं देना। अवशेष एकभाग संज्वलन मान कौं देना। सो पहिलें च्यारि समान भाग कहे, तिन एक-एक भाग में पीछे कह्या अपना-अपना प्रमाण मिलाये, अपना-अपना देशघाति द्रव्य हो है। सो संज्वलन च्यारि प्रकृतिनि का देशघाति-सर्वघाति द्रव्य मिलाएं सर्व द्रव्य हो है।

मिथ्यात्व, बारह कषाय इनका सर्वघाति ही द्रव्य हैं अर नोकषाय का सर्व द्रव्य अघाति ही है।

सो नोकषाय का बटवारा कहिए हैं—

पूर्वैं जो तीसरा नोकषायसंबंधी द्रव्य कह्या, ताकौं प्रतिभाग का भाग दीजिए। तहां एक भाग कौं जुदा राखि बहुभाग के पंच भाग कीजिए। सो एक-एक समान भाग पांचौं प्रकृतिनि कौं दीजिए। बहुरि अवशेष एक भाग रह्या, ताकौं प्रतिभाग का भाग देइ बहुभाग तीनों वेदनि विषैं जिसका बंध होइ, ताकौं दीजिए। अवशेष एकभाग कौं प्रतिभाग का भाग देइ, बहुभाग रति, अरति विषैं जाका बंध होइ,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ताकौं दीजिए । अवशेष एक भाग कौं प्रतिभाग का भाग देइ, बहुभाग हास्य-शोक विषैं जाका बंध होइ, ताकौं दीजिये । अवशेष एकभाग कौं प्रतिभाग का भाग देइ बहुभाग भय कौं देना । अवशेष एक भाग जुगुप्सा कौं देना । सो पहिले समान पंच भाग कहे, तिन एक-एक में पीछैं कह्या अपना-अपना प्रमाण मिलाएं, अपना-अपना प्रकृतिनि का द्रव्य हो है ॥२०३॥

इहां नोकषायरूप पिंडप्रकृतिनि का द्रव्य विषै विशेष है, सो कहैं हैं—

तण्णोकसायभागो, सबंधपणणोकसायपयडीसु ।
हीणकमो होदि तहा, देसे देसावरणदव्वं ॥२०४॥

तन्नोकषायभागः, सबंधपंचनोकषायप्रकृतिषु ।
हीनक्रमो भवति तथा, देशे देशावरणद्रव्यं ॥२०४॥

टीका – सो नोकषाय संबंधी द्रव्य है, सो युगपत् बंध कौं प्राप्त होइ, असैं जो पंच नोकषाय, तिनविषैं हीन क्रम करि देना । सो मिथ्यादृष्टि तैं लगाइ पुरुषवेद, रति, हास्य,भय,जुगुप्सा इन पंचनि का अपूर्वकरण पर्यंत अथवा पुरुषवेद, अरति,शोक, भय, जुगुप्सा इन पंचनि का प्रमत्त पर्यंत युगपत् बंध होइ । बहुरि स्त्रीवेद, रति, हास्य, भय, जुगुप्सा इन पंचनि का अथवा स्त्रीवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा इन पंचनि का मिथ्यादृष्टि, सासादन विषैं युगपत् बंध होइ । बहुरि नपुंसकवेद, रति, हास्य, भय, जुगुप्सा इन पंचनि का अथवा नपुंसकवेद, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा – इन पंचनि का मिथ्यादृष्टि विषैं युगपत् बंध होइ, सो नोकषाय संबंधी द्रव्य का जैसें पूर्वैं बटवारा कह्या, तैसें जिन पंच प्रकृतिनि का बंध होइ, तिनकौं अनुक्रम तैं घाटि-घाटि द्रव्य देना ।

बहुरि अनिवृत्तिकरण विषैं एक पुरुषवेद ही का बंध है, तातैं तहां सवेदभाग पर्यंत नोकषाय संबंधी सर्व ही द्रव्य एक पुरुषवेद कौं देना । बहुरि देशघाति जो संज्वलन कषाय, ताका देशघाति संबंधी द्रव्य, सो युगपत् जेती प्रकृति बंधै तिनकौं हीन क्रम करि देना । सो मिथ्यादृष्टि तैं लगाय अनिवृत्तिकरण का दूसरा क्रोधबंध भाग पर्यंत तौ च्यार्यों का बटवारा करना । तीसरा भाग विषैं जहां क्रोध का बंध नाहीं, तहां तीन ही प्रकृति का बटवारा करना । चौथा भाग में जहां मान का भी बंध नाहीं, तहां दोय ही प्रकृति का बटवारा करना । पांचवां भाग विषैं जहां माया का

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

भी बंध नाहीं, तहां संज्वलन का देशघाति संबंधी सर्वद्रव्य एक लोभ ही कौं देना। बट पूर्वोक्त रीति करि अनुक्रम तैं घाटि-घाटि जानना ॥२०४॥

आगैं बंध कौं प्राप्त होंइ जे नोकषाय, तिनका निरंतर बंध होइ, तौ कितने काल होइ ? सो कहैं हैं —

पुंबंधऽद्धा अंतोमुहुत्त इत्थिम्हि हस्सजुगले य ।
अरदिदुगे संखगुणा, णपुंसकऽद्धा विसेसहिया ॥२०५॥

पुंबंधाद्धा अंतर्मुहूर्तः स्त्रियां हास्ययुगले च ।
अरतिद्वये संख्यगुणा, नपुंसकाद्धा विशेषाधिकः ॥२०५॥

टीका – पुरुषवेदनि का निरंतर-बंध होइ, बीचि और कोई वेद का बंध न होइ, तीहिं निरंतर-बंध का 'अद्धा' कहिए काल जैसा जिनदेव देख्या तैसा अंतर्मुहूर्त प्रमाण है, सो संख्यात गुणा संख्यात आवली प्रमाण है। ताकी सहनानी दोय गुणा अंतर्मुहूर्त। बहुरि स्त्रीवेद का निरंतर-बंध का काल तीहिस्यों संख्यात गुणा है, ताकी सहनानी च्यारि गुणा अंतर्मुहूर्त, हास्य अर रति का तीहिस्यों भी संख्यात गुणा है, ताकी सहनानी सोलह गुणा अंतर्मुहूर्त, बहुरि अरति, शोक का तीहिस्यों भी संख्यात गुणा है, ताकी सहनानी बत्तीस गुणा अंतर्मुहूर्त। बहुरि नपुंसक-वेद का तीहिस्यों किछू अधिक है, ताकी सहनानी बियालीस गुणा अंतर्मुहूर्त (४२), तहां तीनों वेद का काल मिलाए सहनानी की अपेक्षा अंतर्मुहूर्त अठतालीस (४८), अर हास्य-शोक का वा रति-अरति का मिलाएं अंतर्मुहूर्त अठतालीस (४८)।

तहां मिल्या हूवा काल कौं प्रमाणराशि कीए पिंडरूप द्रव्य कौं फलराशि कीए, अपना-अपना काल कौं इच्छाराशि कीए, लब्धराशि विषैं अपना-अपना द्रव्य का प्रमाण त्रैराशिक करि आवै है।

तहां तीनों वेद का द्रव्य का जो सत्ता विषैं प्रमाण, ताकौं तिस मिल्या हुवा काल की सहनानी रूप अंतर्मुहूर्त अठतालीस का भाग दीएं जो प्रमाण होई, ताकौं पुरुषवेद का काल की सहनानी अंतर्मुहूर्त दोय करि गुणैं जो प्रमाण होई, तितना पुरुषवेद संबंधी द्रव्य जानना। सो सब तैं थोरा है। बहुरि स्त्रीवेद का काल की सहनानी अंतर्मुहूर्त च्यारि करि गुणैं जो प्रमाण होइ, तितनी स्त्रीवेद संबंधी द्रव्य है, सो पुरुषवेद के द्रव्य तैं संख्यात गुणा है। बहुरि नपुंसक वेद का काल की सहनानी

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अंतर्मुहूर्त बियालीस करि गुणै जो होइ, सो नपुंसकवेद संबंधी द्रव्य है, सो स्त्रीवेद के द्रव्य तै संख्यात गुणा है ।

बहुरि रति-अरति संबंधी द्रव्य कौं सहनानी की अपेक्षा अंतर्मुहूर्त अठतालीस का भाग दीए जो प्रमाण होइ, ताकौं सहनानी की अपेक्षा रति का काल अंतर्मुहूर्त सोलह करि गुणै जो प्रमाण होइ, सो रति नोकषाय संबंधी द्रव्य जानना, सो स्तोक है । बहुरि अरति का काल अंतर्मुहूर्त बत्तीस करि गुणै जो प्रमाण होइ, सो अरति नोकषाय संबंधी द्रव्य जानना, सो रति के द्रव्य तैं संख्यात गुणा है ।

बहुरि हास्य, शोक संबंधी जो द्रव्य ताकौं सहनानी की अपेक्षा अंतर्मुहूर्त अठतालीस का भाग दीए जो प्रमाण होइ, ताकौं सहनानी की अपेक्षा हास्य का काल अंतर्मुहूर्त सोलह करि गुणैं जो प्रमाण होइ, सो हास्य नोकषाय संबंधी द्रव्य है, सो शोक के द्रव्य तैं संख्यात गुणा घाटि है । बहुरि शोक का काल अंतर्मुहूर्त बत्तीस करि गुणै जो प्रमाण होइ, सो शोक संबंधी द्रव्य है, सो हास्य के द्रव्य तैं संख्यात गुणा है ।

सो युगपत् जिनका बंध होइ, असे पंच नोकषाय पूर्वोक्त प्रकार अनुक्रम तैं घाटि-घाटि द्रव्यरूप कहे, तथापि पिंड विषैं परस्पर नानाकाल विषैं एकठे होने की अपेक्षा इस प्रकार करि द्रव्य का बटवारा अपने-अपने बंधकाल विषैं हो है । तीन वेदनि का एक पिंड जानना । रति-अरति का एक पिंड जानना । हास्य-शोक का एक पिंड जानना । सो पूर्वोक्त पिंड का द्रव्य इस प्रकार बंधै है ।।२०५।।

आगें अंतराय की पांच प्रकृति अर नाम के बंधस्थान तिनविषैं कहैं हैं—

पणविग्घे विवरीयं, सबंधपिंडिदरणामठाणेवि ।
पिंडं दव्वं च पुणो, सबंधसगपिंडपयडीसु ।।२०६।।

पंचविघ्ने विपरीतं, सबंधपिंडेतरनामस्थानेऽपि ।
पिंडं द्रव्यं च पुनः, सबंधस्वकपिंडप्रकृतिषु ।।२०६।।

टीका – दानांतरायादिक पंच अंतराय तिनविषैं **विपरीत** कहिए पूर्वोक्त क्रमस्यों विपरीत अंतसौं लगाय आदि पर्यंत क्रम जानना । सो ऊपरि कथन करही आए हैं । बहुरि नामकर्म के स्थानकनि विषैं युगपत् बंध कौं प्राप्त होइ असी जो नामकर्म की प्रकृति गत्यादिक पिंडरूप अर अगुरुलघु आदिक अपिंडरूप, तिनविषैं भी **'विपरीत'** कहिए अंत तैं लगाय आदि पर्यंत क्रम जानना ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सोई कहिए हैं—

युगपत् जाका बंध होइ अैसा नामकर्म का त्रयोविंशतिक स्थान है, सो तिर्यंच गति, एकेंद्री जाति, औदारिक-तैजस-कार्माण – ए तीन शरीर, हुंडकसंस्थान, वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, तिर्यंचानुपूर्वी, अगुरुलघु, उपघात, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, अनादेय, अयशस्कीर्ति, निर्माण – इन तेईस प्रकृतिनि का युगपत् बंध मनुष्य वा तिर्यंच मिथ्यादृष्टि जीव करै है। सो यहु त्रयोविंशतिक स्थान साधारण-सूक्ष्म एकेंद्री-लब्धि अपर्याप्तक भव कौं प्राप्त करने कौं योग्य है।

अब इनका बटवारा दिखाइए हैं—

पूर्वें मूलप्रकृतिनि का बटवारा में जो नामकर्म का द्रव्य कह्या, ताकौं आवली का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां एक भाग कौं जुदा राखि बहुभाग के इकईस भाग कीजिए, सो एक-एक समान भाग, एक-एक प्रकृति कौं देना। तेईस प्रकृतिनि का बंध था, तिन विषैं औदारिक-तैजस-कार्माण – ए तीनों प्रकृति एक शरीर नामा पिंडप्रकृति विषै आय गई अर और पिंडप्रकृतिनि विषैं एक-एक प्रकृति ही का बंध है, तातैं इहां इकईस ही भाग कीए। बहुरि जो एक भाग रह्या, ताकौं आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण प्रतिभाग का भाग दीजिए, तहां बहुभाग अंत विषैं कही जो निर्माण प्रकृति ताकौं देना, अवशेष एक भाग रह्या, ताकौं प्रतिभाग का भाग देइ, बहुभाग अयशस्कीर्ति को देना। अवशेष एक भाग रह्या, ताकौं प्रतिभाग का भाग देइ बहुभाग अनादेय कौं देना।

अैसैं ही जो-जो एक भाग अवशेष रहता जाय, ताकौं प्रतिभाग का भाग देइ-देइ, बहुभाग-बहुभाग दुर्भग कौं, अशुभ कौं, अस्थिर कौं, साधारण कौं, अपर्याप्त कौं, सूक्ष्म कौं, स्थावर कौं, उपघात कौं, अगुरुलघु कौं, तिर्यंचानुपूर्वी कौं, स्पर्श कौं, रस कौं, गंध कौं, वर्ण कौं, हुंड संस्थान कौं, शरीर पिंडप्रकृतिनि कौं, एकेंद्रियजाति कौं देना। अवशेष एक भाग रह्या, सो आदि विषैं कही जो तिर्यंचगति प्रकृति ताकौं देना, सो पूर्वैं इकईस समान भाग कहे थे, तिन एक-एक भाग में अपना-अपना पीछैं कह्या प्रमाण मिलाए, अपना-अपना प्रकृति का द्रव्य हो है।

सो जैसै तेईस का बंध का उदाहरण दिखाया, तैसैं ही जहां पचीस का युगपत् बंध होइ, तहां अैसैं ही पचीस का बटवारा जानना। अैसैं ही छबीस, अठाईस, गुणतीस, तीस, इकतीस प्रकृतिनि का बंध विषैं भी बटवारा जानना।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जहां ऊपरले गुणस्थान में एक यशस्कीर्ति ही का बंध है, तहां सर्व ही नामकर्म का द्रव्य तिस एक प्रकृति ही कौं देना। बहुरि इन स्थानकौं विषैं जिनका युगपत् बंध होइ, तिन पिंडप्रकृति के भेदनि का बटवारा एक पिंडप्रकृतिनि का द्रव्य विषैं अधिक अनुक्रम करि ही जानना।

जैसें त्रयोविंशतिक स्थानक विषैं एक शरीर नामा पिंडप्रकृति के तीन भेद पाइए, तो तहां जो शरीर प्रकृति का बटवारा विषैं जो द्रव्य आया, ताकौं प्रतिभाग का भाग देइ बहुभाग के तीन भाग करि एक-एक समान भाग तीनों को देना, अवशेष एक भाग कौं प्रतिभाग का भाग देइ बहुभाग कार्माण कौं देना। अवशेष एक भाग कौं प्रतिभाग का भाग देइ बहुभाग तेजस कौं देना। अवशेष एक भाग औदारिक कौं देना। पूर्वोक्त समान भागनि विषैं इनको मिलाएं अपना-अपना द्रव्य होइ। असैं ही और ठिकानैं भी जानना।

बहुरि जहां पिंडप्रकृति विषैं एक ही प्रकृति का बंध होइ, तहां पिंडप्रकृति का सर्व ही द्रव्य तिस एक प्रकृति कौं देना। इकतालीस जीव पदनि विषैं नामकर्म के स्थाननि का जैसें बंध होइ, सो कथन आगै स्थान समुत्कीर्तन अधिकार विषै कहैंगे, तहां जानने।

असैं प्रदेशबंध का कथन विषैं द्रव्य का बटवारा कह्या, सो एक-एक समय विषै जो एक-एक समयप्रबद्ध बंधै है, तहां समयप्रबद्ध प्रमाण परमाणुनि विषैं जिस-जिस प्रकृति का जितना-जितना द्रव्य कह्या, तितना-तितना परमाणु तिस-तिस प्रकृतिरूप होइ परिणमैं हैं, असा भावार्थ जानना।

कोऊ बहुभाग समभागादिक विषैं न समझैं, ताकौं एक दृष्टान्त दिखाइए हैं —

जैसैं सर्वद्रव्य च्यारि हजार छिनवै (४०९६), तिनका बटवारा च्यारि जायगा करना। प्रतिभाग का प्रमाण आठ, तहां च्यारि हजार छिनवै कौं आठ का भाग दीजिये, तहां एक भाग बिना अवशेष बहुभाग पैंतींस सौ चौरासी (३५८४) ताके च्यारि भाग करि समान देनें, तहां एक एक भाग में आठ सौ छिनवै आए। अवशेष एक भाग का प्रमाण पांच सौ बारा, ताकौं प्रतिभाग आठ का भाग दीए चौसठि पाए, सो जुदा राखि, अवशेष बहुभाग च्यारि सौ अठतालीस बहु द्रव्यवालों कौं देना। अवशेष एक भाग चौंसठि कौं प्रतिभाग का भाग दीए आठ पाए, सो

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

जुदा राखि अवशेष बहुभाग छप्पन, तिस तैं हीन द्रव्यवाले कौं देना । अवशेष एक भाग कौं प्रतिभाग का भाग दीए एक पाया, सो जुदा राखि अवशेष बहुभाग सात, तिस तैं हीन द्रव्यवाले कौं देना । अवशेष एक भाग एक, सो तिसतैं हीन द्रव्यवाले कौं देना, सो समान भागनि विषैं इनकौं मिलाए क्रम तें तेरा सौ चवालीस, नौ सौ बावन, नौ सौ तीन, आठ सौ सत्याणवे प्रमाण द्रव्य आया (१३४४,९५२,९०३, ८९७) ।

अैसें च्यारि हजार छिनवै द्रव्य का बटवारा भया, सो अैसें ही पूर्वोक्त प्रकृतिनि का बटवारा जानना ।

बहुरि ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय इनकी प्रकृतिनि विषैं अनुक्रम तैं घटता-घटता द्रव्य जानना । अंतराय अर नामकर्म की प्रकृतिनि विषैं अनुक्रम तैं अधिक-अधिक द्रव्य जानना । वेदनीय, आयु, गोत्र इनकी उत्तर प्रकृति एक समय विषैं एक ही बंधै है; तातैं मूल प्रकृतिवत् इनका द्रव्य जानना ॥२०६॥

अैसें प्रदेश कहिए परमाणु, तिन का बंध का विधान कह्या । आगैं उत्कृष्टादिक प्रदेशबंधनि के साद्यादिक विशेष मूल प्रकृतिनि विषैं कहै हैं —

छण्हंपि अणुक्कस्सो, पदेसबंधो दु चदुवियप्पो दु ।
सेसतिये दुवियप्पो, मोहाऊणं च दुवियप्पो ॥२०७॥

षण्णामपि अनुत्कृष्टः, प्रदेशबंधस्तु चतुर्विकल्पस्तु ।
शेषत्रये द्विविकल्पः, मोहायुषोश्च द्विविकल्पः ॥२०७॥

टीका – ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय, नाम, गोत्र अंतराय इन छहौं का अनुत्कृष्ट प्रदेशबंध तो सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव भेद तें च्यारि प्रकार है । बहुरि इनही छहौं का अवशेष उत्कृष्ट, अजघन्य, जघन्य प्रदेशबंध सादि, अध्रुव भेद तैं दोय ही प्रकार है । बहुरि मोहनीय, आयु इन का उत्कृष्टादिक च्यारचों ही प्रकार का प्रदेशबंध सादि, अध्रुव के भेद तें दोय प्रकार है ॥२०७॥

आगें उत्तर प्रकृतिनि कौं कहैं हैं —

तीसण्हमणुक्कस्सो, उत्तरपयडीसु चउविहो बंधो ।
सेसतिये दुवियप्पो, सेसचउक्केवि दुवियप्पो ॥२०८॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

त्रिंशतामनुत्कृष्टः, उत्तरप्रकृतिषु चतुर्विधो बंधः ।
शेषत्रये द्विविकल्पः, शेषचतुष्केऽपि द्विविकल्पः ।।२०८।।

टीका – उत्तर प्रकृतिनि विषैं तीस प्रकृतिनि का अनुत्कृष्ट प्रदेशबंध तौ सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव के भेद तैं च्यारि प्रकार है । अवशेष उत्कृष्ट, अजघन्य, जघन्य प्रदेशबंध सादि, अध्रुव के भेद तैं दोय प्रकार है । अवशेष निवै (९०) प्रकृतिनि का उत्कृष्ट, अनुत्कृष्ट, अजघन्य, जघन्य च्यारचों प्रकार का प्रदेशबंध सादि, अध्रुव के भेद तैं दोय प्रकार ही है ।।२०८।।

तैतीस प्रकृति कौंन ? सो कहै हैं—

णाणंतरायदसयं, दंसणछक्कं च मोहचोद्दसयं ।
तीसण्हमणुक्कस्सो, पदेसबंधो चदुवियप्पो ।।२०६।।

ज्ञानांतरायदशकं, दर्शनषट्कं च मोहचतुर्दशकं ।
त्रिंशतामनुत्कृष्टः, प्रदेशबंधः चतुर्विकल्पः ।।२०९।।

टीका – पांच ज्ञानावरण, पांच अंतराय, निद्रा, प्रचला, चक्षु, अचक्षु, अवधि, केवल, दर्शनावरणीय छह, अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान, संज्वलन, क्रोध-मान-माया-लोभ, ए अर भय, जुगुप्सा ए चौदह इन तीसनि का अनुत्कृष्ट प्रदेशबंध सादि इत्यादिक च्यारि प्रकार है। सादि, अनादि, ध्रुव, अध्रुव का स्वरूप पूर्वं कह्या है, सो जानना ।।२०९।।

आगें उत्कृष्ट प्रदेशबंध होने की सामग्री कहै हैं—

उक्कडजोगो सण्णी, पज्जत्तो पयडिबंधमप्पदरा ।
कुणदि पदेसुक्कस्सं, जहण्णये जाण विवरीयं ।।२१०।।

उत्कृष्टयोगः संज्ञी, पर्याप्तः प्रकृतिबंधाल्पतरः ।
करोति प्रदेशोत्कृष्टं, जघन्यके जानीहि विपरीतं ।।२१०।।

टीका – जो जीव उत्कृष्ट योगकरि संयुक्त होइ, सैनी होइ, पर्याप्त होइ, जाकै थोरी प्रकृतिनि कौ बंध होइ असा जीव उत्कृष्ट प्रदेशबंध कौं करै । बहुरि जघन्य प्रदेशबंध विषैं **'विपरीतं'** कहिए अन्यथा जानहु । सो जो जीव जघन्य योग

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

करि संयुक्त, असैनी, अपर्याप्त, बहुत प्रकृतिनि का बांधनेवाला होइ, सो जघन्य प्रदेश बंध कौं करै है ॥२१०॥

आगें मूल प्रकृतिनि के उत्कृष्ट बंध का स्वामीपना गुणस्थाननि विषैं कहैं हैं—

आउक्कस्स पदेसं, छक्कं मोहस्स णव दु ठाणाणि ।
सेसाण तणुकसाओ, बंधदि उकस्सजोगेण ॥२११॥

आयुष्कस्य प्रदेशं, षट्कं मोहस्य नव तु स्थानानि ।
शेषाणां तनुकषायो, बध्नाति उत्कृष्टयोगेन ॥२११॥

टीका – आयुकर्म के उत्कृष्ट प्रदेशबंध कौं छह गुणस्थान उलंघि अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती होइ करै है । बहुरि मोहनीय का उत्कृष्ट प्रदेशबंध नवमा गुणस्थान को पाई अनिवृतिकरण गुणस्थानवर्ती करै है । बहुरि अवशेष ज्ञानावरण, दर्शनावरण, वेदनीय नाम, गोत्र, अंतराय इनकौ उत्कृष्ट प्रदेशबंध सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानवर्ती जीव करै है । इन तीनों स्थानकनि विषैं उत्कृष्ट योग का धारक अर थोरी प्रकृति का बांधनेवाला जीव पूर्वोक्त प्रकृतिनि का उत्कृष्ट प्रदेशबंध करै है ॥२११॥

आगें उत्तर प्रकृतिनि कौं कहैं हैं—

सत्तर सुहुमसरागे, पंचऽणियट्टिम्हि देसगे तदियं ।
अयदे बिदियकसायं, होदि हु उक्कस्सदव्वं तु ॥२१२॥

छण्णोकसायणिद्दा, पयलातित्थं च सम्मगो य जदी ।
सम्मो वामो तेरं, णरसुरआऊ असादं तु ॥२१३॥

देवचउक्कं वज्जं, समचउरं सत्थगमणसुभगतियं ।
आहारमप्पमत्तो, सेसपदेसुक्कडो मिच्छो ॥२१४॥

सप्तदश सूक्ष्मसरागे, पंचानिवृत्तौ देशके तृतीयं ।
अयते द्वितीयकषायं, भवति हि उत्कृष्टद्रव्यं तु ॥२१२॥

षट्नोकषायनिद्रा, प्रचलातीर्थं च सम्यक् च यदि ।
सम्यग्वामः त्रयोदश, नरसुरायुरसातं तु ॥२१३॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

देवचतुष्कं वज्रं, समचतुरस्रं शस्तगमनसुभगत्रयं ।
आहारमप्रमत्तः, शेषप्रदेशोत्कटो मिथ्यः ।।२१४।।

टीका – पांच ज्ञानावरण, च्यारि दर्शनावरण, पांच अंतराय, यशस्कीर्ति, उच्चगोत्र, सातावेदनीय – इन सतरहौं प्रकृतिनि का उत्कृष्ट प्रदेशबंध सूक्ष्मसांपराय विषैं हो है । बहुरि पुरुषवेद, संज्वलन च्यारि - इन पंचनि का अनिवृत्तिकरण विषैं हो है । बहुरि प्रत्याख्यान च्यारि कषायनि का देशविरत विषैं हो है । बहुरि अप्रत्याख्यान च्यारि कषायनि का असंयत विषैं हो है । बहुरि हास्यादिक छह नोकषाय, निद्रा, प्रचला, तीर्थंकर – इन नवौं का उत्कृष्ट प्रदेशबंध सम्यग्दृष्टि करै है । बहुरि मनुष्यायु, देवायु, असातावेदनीय, देवगति वा आनुपूर्वी, वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग – ए च्यारि, वज्रवृषभनाराच संहनन, समचतुरस्रसंस्थान, प्रशस्तविहायोगति, सुभग, सुस्वर आदेय, इन तेरह प्रकृतिनि का उत्कृष्ट प्रदेशबंध सम्यग्दृष्टि वा मिथ्यादृष्टि दोऊ करैं हैं । आहारकद्विक का उत्कृष्ट प्रदेशबंध अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती करैं हैं । इन चौवन बिना अवशेष छ्यासठि प्रकृतिनि का उत्कृष्ट प्रदेशबंध मिथ्यादृष्टि करैं है । सर्वत्र उत्कृष्ट योगादिक सामग्री होत संतैं ही प्रकृतिनि का उत्कृष्ट प्रदेशबंध जानना ।।२१२-२१४।।

आगैं जघन्य प्रदेशबंध का स्वामित्वपना मूलप्रकृतिनि विषैं कहैं हैं—

सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स पढमे जहण्णये जोगे ।
सत्तण्हं तु जहण्णं, आउगबंधेवि आउस्स ।।२१५।।

सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तकस्य प्रथमे जघन्यके योगे ।
सप्तानां तु जघन्यमायुष्कबंधेऽपि आयुषः ।।२१५।।

टीका – सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक जीव अपना पर्याय का पहला समय विषैं जघन्य योग करि सात मूल प्रकृतिनि का जघन्य प्रदेशबंध करैं है । अर तिस जीव के आयु का बंध होतैं आयु का भी जघन्य प्रदेशबंध हो है ।।२१५।।

आगैं उत्तर प्रकृतिनि विषैं कहैं हैं—

घोडणजोगोऽसण्णी, णिरयदुसुरणिरयआउगजहण्णं ।
अपमत्तो आहारं, अयदो तित्थं च देवचऊ ।।२१६।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

घोटमानयोगः असंज्ञी, निरयद्विसुरनिरयायुष्कजघन्यं ।
अप्रमत्तः आहारमयतः तीर्थं च देवचतुः ।। २१६ ।।

टीका – जिन योगस्थानकनि की वृद्धि भी होइ, वा हानि भी होइ, वा जैसै के तैसै भी रहै तिन योगस्थानकनि कों **घोटमान योगस्थान** कहिए अथवा **परिणाम-योगस्थान** कहिए। सो असा योग का धारी असैनी जीव सो नरकगति वा आनुपूर्वी, देवायु-नरकायु इन च्यार्‍यों का जघन्य प्रदेशबंध करें हैं। बहुरि आहारकद्विक का अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती जघन्य प्रदेशबंध करै हैं, जातैं याके अपूर्वकरणतैं बहुत प्रकृतिनि का बंध है। बहुरि पर्याय का पहिला समय विषैं जघन्य उपपादयोग का धारी असंयत सम्यग्दृष्टि जीव सो तीर्थंकर, देवगति वा आनुपूर्वी, वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग इन पंचनि का जघन्य प्रदेशबंध करै है ।।२१६।।

चरिमअपुण्णभवत्थो, तिविग्गहे पढमविग्गम्हि ठिओ ।
सुहमणिगोदो बंधदि, सेसाणं अवरबंधं तु ।। २१७ ।।

चरमापूर्णभवस्थः, त्रिविग्रहे प्रथमविग्रहे स्थितः ।
सूक्ष्मनिगोदो बध्नाति, शेषाणामवरबंधं तु ।।२१७।।

टीका – बहुरि छह हजार बारह क्षुद्रभवनि का अंत का क्षुद्रभव विषैं तिष्ठता विग्रहगति का वक्र मुडना तीहि में पहिला वक्र विषैं तिष्ठता असा सूक्ष्म-निगोद जीव सो पूर्वोक्त ग्यारह तैं अवशेष रही एक सौ नव प्रकृति, तिनका जघन्य प्रदेशबंध करै है।

असैं उत्कृष्ट जघन्य प्रदेशबंध का स्वामित्वपना कहा, सो जहां उत्कृष्ट घणा परमाणु बंधै, तहां उत्कृष्ट प्रदेशबंध कहिये, जहां जघन्य थोरा परमाणु बंधै, तहां जघन्य प्रदेशबंध कहिए। सो पूर्वोक्त प्रकार जानना।

बहुरि इहां च्यारि प्रकार बंध विषैं पहिलै कह्या जो प्रकृतिबंध, तिस मूल प्रकृति वा उत्तर प्रकृतिनि विषैं एक जीव कै एक समय विषैं युगपत् बंध कौं जे प्राप्त होंइ, तिन प्रकृतिनि का जघन्यादिक भेदरूप स्थिति, अनुभाग, प्रदेशरूप बंध के भेद हों हैं। तहां एक जीव कै एक काल विषैं कितनी-कितनी प्रकृतिनि का बंध होइ सो मिथ्यादृष्टि आदिक गुणस्थाननि विषैं टीकाकार रचना दिखावैं हैं—

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

गुण-स्थान	ज्ञाना-वरण	दर्शना-वरण	वेद-नीय	मोहनीय	आयु	नामकर्म	गोत्र	अंत-राय	सर्वप्रकृतिनिका एकजीव के एककाल बंध का प्रमाण
अ	०	०	०	०	०	०	०	०	०
स	०	०	१	०	०	०	०	०	१
क्षी	०	०	१	०	०	०	०	०	१
उ	०	०	१	०	०	०	०	०	१
सू	५	४	१	०	०	१	१	५	१७
अ	५	४	१	५।४।३।२।१	०	१	१	५	२३।२१।२०।१९।१८
अ	५	६।४	१	९	०	२८।२९।३०।३१।१	१	५	५५।५६।५७।५८।२६
अ	५	६	१	९	१	।३०८।२९२।३१	१	५	५६।५७।५८।५९
प्र	५	६	१	९	१	२८।२९	१	५	५६।५७
दे	५	६	१	१३	१	२८।२९	१	५	६०।६१
अ	५	६	१	१७	१	२८।२९।३०	१	५	६४।६५।६६
मि	५	६	१	१७	०	२८।२९	१	५	६३।६४
सा	५	९	१	२१	१	२८।२९।३०	१	५	७१।७२।७३
मि	५	९	१	२२	१	२३।२५।२६।२८।२९।३०	१	५	६७।६९।७०।७२।७३।७४
सर्व-गुण स्थान	ज्ञा५	द९।६।४	वेद१	मो २६ मध्ये २२।२१।१७। १३।९।५।४।३।२।१	में१ आ४	ना २३।२५।२६।२८। २९।३०।३१।१	गोत्र में १	अं ५	ज्ञानावरणादिक की प्रकृति जोडै ज्ञा५ द९ वे१ मो२२ आ१ ना२३ गो१ अं५ सर्व६७ एवं सर्वत्रज्ञेयं

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

इस यंत्र का अर्थ लिखिए हैं—एक जीव कै एक काल विषैं ज्ञानावरण पांच का ही बंध होइ। दर्शनावरण नव का छह का वा च्यारि का बंध होइ। वेदनीय दोय में एक का बंध होइ। मोहनीय की छब्बीस में बाईस वा इकईस वा सतरह वा तेरह वा नव वा पांच, च्यारि, दोय, एक का बंध होइ। आयु चारि में एक का बंध होइ। नामकर्म की तेईस वा पचीस वा छब्बीस वा अठाईस वा गुणतीस वा तीस वा इकतीस वा एक प्रकृति का बंध होइ। गोत्र दोय में एक का बंध होइ। अंतराय पांच का बंध होइ।

तहां मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषै ज्ञानावरण पांच का, दर्शनावरण नव का, वेदनीय एक का, मोहनीय बाईस का, आयु एक का, नाम तेईस, वा पचीस, वा छब्बीस वा अठाईस वा गुणतीस वा तीस का, गोत्र एक का, अंतराय पांच का बंध होइ। तहां सर्व प्रकृति जोडें सडसठि, वा गुणहत्तरी, वा सत्तरि, वा बहत्तरि, वा तेहत्तरि, वा चहोत्तरि का बंध होइ।

असैं ही सासादनादिक गुणस्थाननि विषैं जैसे यंत्र विषैं कह्या है, तैसैं प्रकृतिनि का बंध जानना। तहां प्रकृतिनि के बदलने तैं भंग उपजै है। जैसैं चहोत्तरि का बंध विषैं वेदनीय कर्म का एक का बंध तहां साता का वा असाता का बंध की अपेक्षा भंग दोय भया। असैं प्रकृतिनि का प्रमाण के घटने बंधने तैं स्थानभेद हो हैं। एक ही स्थान विषैं प्रकृतिनि के बदलने तैं भंग हो हैं। सो कहिए हैं—

मिथ्यादृष्टि विषैं सतसठि का स्थान में एक भंग है। गुणहत्तरि का स्थान में नव भंग, सत्तरि का स्थान में आठ भंग, बहत्तरि का स्थान में नव भंग, तेहत्तरि का स्थान में बाणवै सौ सोला भंग- चहोत्तरि का स्थान में छियालीस सौ आठ भंग। बहुरि सासादन विषैं एकहत्तरि का स्थान में आठ भंग, बहत्तरि का स्थान में चौसठि सौ भंग, तेहत्तरि का स्थान में बत्तीस सौ भंग। मिश्र विषैं तरेसठि-चौंसठि का दोऊ स्थानकनि में आठ-आठ भंग। असंयत विषैं चौसठि, पैंसठि, छ्यासठि के स्थाननि विषैं आठ-आठ भंग। देशसंयत विषैं साठि, इकसठि का स्थानकनि में आठ-आठ भंग। प्रमत्त का छप्पन, सतावन का स्थानकनि में आठ-आठ भंग। अप्रमत्त विषैं छप्पन, सतावन, अट्ठावन, गुणसठि का स्थानकनि विषैं एक-एक भंग। अपूर्वकरण का – पचावन, छप्पन, सतावन, अठावन, छब्बीस का स्थानकां विषैं एक-एक भंग। अनिवृत्तिकरण का बाइस, इकईस, बोस, उगणीस, अठारह का स्थानकां विषैं एक-

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

एक भंग । सूक्ष्मसांपराय का सतरह का स्थान विषैं एक भंग है । सो इन भंगनि का वा प्रकृतिनि का कथन स्थानसमुत्कीर्तन अधिकार विषैं आगैं नामकर्म के स्थानक कहैंगे, तहां प्रगट जानि लेना ॥२१७॥

आगैं प्रकृति, प्रदेशबंध कौं कारण योगस्थान, तिनका स्वरूप, संख्या वा स्वामी बियालीस गाथानि करि कहैं है—

जोगट्ठाणा तिविहा, उववादेयंतवड्ढिपरिणामा ।
भेदाएक्केक्कंपि य, चोद्दसभेदा पुणो तिविहा ॥२१८॥

योगस्थानानि त्रिविधानि, उपपादैकांतवृद्धिपरिणामानि ।
भेदादेकैकमपि च, चतुर्दशभेदाः पुनः त्रिविधाः ॥२१८॥

टीका – योगस्थान तीन प्रकार हैं – उपपादयोगस्थान, एकांतवृद्धियोगस्थान, परिणामयोगस्थान । बहुरि एक-एक भेद के, चौदह जीवसमासनि की अपेक्षा, चौदह-चौदह भेद हो हैं । सूक्ष्म एकेंद्री अपर्याप्त का उपपादयोगस्थान, सूक्ष्म एकेंद्री पर्याप्त का उपपादयोगस्थान, असैं ही बादर एकेंद्री, बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री, असैंनी पंचेंद्री, सैनी पंचेंद्री पर्याप्त-अपर्याप्त के उपपादयोगस्थान जानने । एक उपपादयोगस्थान के चौदह भेद भए । असैं ही एकांतवृद्धि वा परिणाम योगस्थान के चौदह-चौदह भेद जानने । बहुरि ये एक-एक के चौदह भेद सामान्य, जघन्य, उत्कृष्ट की अपेक्षा तीन प्रकार हैं । तहां सामान्य की अपेक्षा चौदह भेद, सामान्य अर जघन्य की अपेक्षा अठाईस भेद, सामान्य अर जघन्य अर उत्कृष्ट की अपेक्षा बियालीस भेद हो हैं ॥२१८॥

आगैं उपपादयोगस्थानकनि का स्वरूप कहैं हैं—

उववादजोगठाणा, भवादिसमयट्ठियस्स अवरवरा ।
विग्गहइजुगइगमणे, जीवसमासे मुणेयव्वा ॥२१९॥

उपपादयोगस्थानानि, भवादिसमयस्थितस्यावरवराणि ।
विग्रहर्जुगतिगमने, जीवसमासे मंतव्यानि ॥ २१९ ॥

टीका – उपपादयोगस्थान जो पर्याय धरै, ताका पहिला समय विषैं तिष्ठता जीव कैं हो है । तहां जो जीव विग्रहगति कहिए वक्रगति करि बीचि में मुडि करि जाय अर नवीन पर्याय कौं प्राप्त होइ, ताकैं जघन्य उपपादयोगस्थान हो

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

है । बहुरि जो जीव ऋजुगति कहिए सूवा, बीचि में मुड़े नाहीं असी गति करि नवीन पर्याय कौं धरै, ताकैं उत्कृष्ट उपपादयोगस्थान हो है । ते उपपादयोगस्थान चौदह जीवसमासनि विषैं जानने ।

इहां प्रश्न – जो पर्याय का पहिला समय विषैं तौ अपर्याप्त अवस्था ही है, तहां पर्याप्त जीवसमासनि विषैं उपपाद योगस्थान कैसैं कहिए है ?

ताका समाधान— जो निर्वृत्ति अपर्याप्त जीव कैं पर्याय का पहिला समय विषैं योगस्थान हो हैं, ते तौ पर्याप्त जीवसमासनि विषैं उपपादयोगस्थान जानने । अर जे लब्धि अपर्याप्तक जीव कैं पर्याय का पहिला समय विषैं योगस्थान हो हैं, ते अपर्याप्त जीवसमासनि विषैं उपपादयोगस्थान जानने । जातैं निर्वृति अपर्याप्त अवस्था विषैं भी पर्याप्त नामकर्म का ही उदय है ।

'उपपद्यते' कहिए जीव करि पर्याय का पहिला समय विषैं प्राप्त करिए, सो उपपाद कहिए, सो इस उपपादयोगस्थान के सर्व सामान्य कौं आदि देकरि भेद, जो जीव नवीन पर्याय धरैं ताका पहिला समय विषैं ही संभवैं हैं ।।२१६।।

आगैं परिणामयोगस्थान का स्वरूप कहैं हैं—

परिणामजोगठाणा, सरीरपज्जत्तगादु चरिमोत्ति ।
लद्धिअपज्जत्ताणं, चरिमतिभागम्हि बोधव्वा ।।२२०।।

परिणामयोगस्थानानि, शरीरपर्याप्तकात् चरम इति ।
लब्ध्यपर्याप्तकानां, चरमत्रिभागे बोद्धव्यानि ।।२२०।।

टीका – बहुरि परिणामयोगस्थान शरीर पर्याप्ति कौं पूर्ण होत संतैं पहिला समयस्यों लगाय अपनो आयुर्बल का अंत समय पर्यंत जानने । बहुरि लब्धि अपर्याप्तक जीव के अपनी स्थिति सांस के अठारहवें भाग प्रमाण, ताका त्रिभाग करतैं अंत का जो त्रिभाग ताका पहिला समयस्यों लगाय अंत का समय पर्यंत परिणाम योगस्थान जानने ।।२२०।।

सगपज्जत्तीपुण्णे, उवरिं सव्वत्थ जोगमुक्कस्सं ।
सव्वत्थ होदि अवरं, लद्धिअपुण्णस्स जेट्ठंपि ।।२२१।।

स्वकपर्याप्तिपूर्णे, उपरि सर्वत्र योगोत्कृष्टं ।
सर्वत्र भवत्यवरं, लब्ध्यपर्याप्तस्य ज्येष्ठमपि ।।२२१।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – अपना-अपना शरीर नामा पर्याप्ति कौं संपूर्ण होत संतैं तीहि शरीर पर्याप्ति का पूर्ण होने का समयस्यों लगाय ऊपरि सर्व अपनी आयुर्बल का समयनि विषैं परिणामयोगस्थान उत्कृष्ट भी, अर जघन्य भी संभवै है। बहुरि लब्धि अपर्याप्तक का अपनी स्थिति सांस का अठारहवां भाग प्रमाण, ताका अंत का त्रिभाग का पहिला समयस्यों लगाय अंत का समय पर्यंत सर्व स्थिति के भेदनि विषैं उत्कृष्ट परिणामयोग भी, अर जघन्य परिणामयोग भी संभवै हैं। सो दोनों ही जीवां के ते सर्व परिणामयोगस्थान घोटमानयोग जानने। जातै ए योगस्थान घटै भी हैं, वा बधै भी हैं, वा जैसै के तैसें भी रहैं हैं ॥२२१॥

आगैं एकांतानुवृद्धियोगस्थाननि का स्वरूप कहैं हैं—

एयंतवड्ढिठाणा, उभयट्ठाणाणमंतरे होंति ।
अवरवरट्ठाणाओ, सगकालादिम्हि अंतम्हि ॥२२२॥

एकांतवृद्धिस्थानानि, उभयस्थानानामंतरे भवंति ।
अवरवरस्थानानि, स्वककालादौ अंते ॥ २२२ ॥

टीका – एकांतानुवृद्धियोगस्थान पर्याय धरने का दूसरा समयस्यों लगाय एक समय घाटि शरीर पर्याप्ति के अंतर्मुहूर्त काल का अंत समय पर्यंत उपपादयोग अर परिणामयोग का अंतराल विषैं हो है। तीहि एकांतवृद्धि का जघन्य स्थान तो अपने काल का आदि समय विषैं हो है अर उत्कृष्ट स्थान अंत के समय विषैं हो है। ताही तैं एकांत कहिए नियम करि अपने काल का पहिला समयस्यों लगाय अंत का समय पर्यंत समय-समय प्रति असंख्यात-असंख्यात गुणा अविभाग प्रतिच्छेदनि की वृद्धि जिस विषैं होइ, सो एकांतानुवृद्धियोगस्थान कहिए हैं। ऐसैं कहे योगनि के विशेष ते सर्व चौदह जीवसमासनि विषैं जानने ॥२२२॥

आगैं योगस्थानकनि के अवयव कहैं हैं—

अविभागपडिच्छेदो, वग्गो पुण वग्गणा य फड्ढयगं ।
गुणहाणीवि य जाणे, ठाणं पडि होदि णियमेण ॥२२३॥

अविभागप्रतिच्छेदो, वर्गः पुनः वर्गणा च स्पर्धकं ।
गुणहानिरपि च जानीहि स्थानं प्रति भवति नियमेन ॥२२३॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – समस्त योगस्थान जगच्छ्रेणी के असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं, तिन विषैं एक-एक स्थान के प्रति अविभाग प्रतिच्छेद, वर्ग, वर्गणा, स्पर्धक, गुणहानि – इतने भेद हो है, नियमकरि असा जानहु ।।२२३।।

इनका स्वरूप आगैं कहैं हैं—

पल्लासंखेज्जदिमा, गुणहाणिसला हवंति इगिठाणे ।
गुणहाणिफड्ढयाओ, असंखभागं तु सेढीये ।।२२४।।

पल्यासंख्येयमिमा, गुणहानिशला भवंति एकस्थाने ।
गुणहानिस्पर्धकानि, असंख्यभागं तु श्रेण्याः ।।२२४।।

टीका – एक स्थानक विषैं गुणहानि शलाका पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण है । सो यहु नानागुणहानि का प्रमाण है । बहुरि एक गुणहानि विषैं स्पर्धक जगच्छ्रेणी के असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं ।।२२४।।

फड्ढयगे एक्केक्के, वग्गणसंखा हु तत्तियालावा ।
एक्केक्कवग्गणाए, असंखपदरा हु वग्गाओ ।।२२५।।

स्पर्धके एकैके, वर्गणासंख्या हि तावदालापाः ।
एकैकवर्गणायामसंख्यप्रतरा हि वर्गाः ।।२२५।।

टीका – एक-एक स्पर्धक विषैं वगर्गानि की संख्या **'तावन्मात्रालापाः'** कहिए तितनी ही जगच्छ्रेणी के असंख्यातवें भाग प्रमाण ही आलाप करि कहिए हैं । बहुरि एक-एक वर्गणा विषैं वर्ग असंख्यात जगत्प्रतर प्रमाण है ।।२२५।।

एक्केक्के पुण वग्गे, असंखलोगा हवंति अविभागा ।
अविभागस्स पमाणं, जहण्णउड्ढी पदेसाणं ।।२२६।।

एकैके पुनर्वर्गे, असंख्यलोका भवंति अविभागाः ।
अविभागस्य प्रमाणं, जघन्यवृद्धिः प्रदेशानां ।।२२६।।

टीका – बहुरि एक-एक वर्ग विषैं असंख्यात लोकप्रमाण अविभाग प्रतिच्छेद हैं । तहां अविभाग का प्रमाण प्रदेशनि विषैं जघन्य वृद्धिरूप जानना । जाका दूसरा भाग न होइ असा जु शक्ति का अंश, ताकौं अविभाग प्रतिच्छेद कहिए हैं ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

इहां उलटी गति करि कह्या है, तातैं अविभाग प्रतिच्छेद का समूह सो वर्ग, अर वर्ग का समूह सो वर्गणा, अर वर्गणा का समूह सो स्पर्धक अर स्पर्धक का समूह सो गुणहानि अर गुणहानि का समूह सो स्थान है, असैं सूधा मार्ग करि जानना ।।२२६।।

आगैं एकस्थान विषैं सर्व स्पर्धकादिकनि का प्रमाण कहैं हैं—

इगिठाणफड्ढयाओ, वग्गणसंखा पदेसगुणहाणी ।
सेढिअसंखेज्जदिमा, असंखलोगा हु अविभागा ।।२२७।।

एकस्थानस्पर्धकानि, वर्गणासंख्या प्रदेशगुणहानिः ।
श्रेण्यसंख्यातिमा, असंख्यलोका हि अविभागाः ।।२२७।।

टीका – एक योगस्थान विषैं सर्व स्पर्धक अर सर्व वर्गणानि की संख्या अर असंख्यात प्रदेशनि विषैं गुणहानि आयाम का प्रमाण – ए सामान्य पनै करि जगच्छ्रेणी के असंख्यातवें भाग मात्र हैं । तारतम्य करि ए परस्पर हीन-अधिक हैं । तहां एक गुणहानि विषैं जो स्पर्धकनि का प्रमाण है । ताकौं एक स्थान विषैं जो गुणहानि का प्रमाण, तीहिं करि गुणैं जो प्रमाण होइ, तितनां तौ एक योगस्थान विषैं स्पर्धक जानने । बहुरि जो एक स्पर्धक विषैं वर्गणानि का प्रमाण कह्या, ताकौं एक योगस्थान विषैं जो स्पर्धकनि का प्रमाण कह्या, ताकरि गुणैं जो प्रमाण होइ, तितना एक योगस्थान विषैं वर्गणानि का प्रमाण जानना ।

बहुरि एक स्पर्धक विषैं जो वर्गणानि का प्रमाण जगच्छ्रेणी के असंख्यातवें भाग मात्र कह्या, ताकौं एक गुणहानि विषैं जो स्पर्धकनि का प्रमाण कह्या, ताकरि गुणैं जो प्रमाण होइ, तितना एक गुणहानि विषैं वर्गणानि का प्रमाण जानना । इहां गुणकार का प्रमाण है, सो तिस जगच्छ्रेणी का भागहार के प्रमाण तैं असंख्यात गुणा घाटि जानना । अन्यथा श्रेणी का असंख्यातवां भाग की सिद्धि न होइ, सो इस ही कौं गुणहानि का आयाम कहिए हैं । सो इन सबनि कौं सामान्यपनैं जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग मात्र कहिए, जातैं असंख्यात के भेद बहुत हैं ।

बहुरि एक योगस्थान विषैं समस्त अविभाग प्रतिच्छेद असंख्यात लोकप्रमाण ही हैं । कर्मपरमाणुनि का प्रमाणवत् वा जघन्य ज्ञान के, अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाणवत् अनंत नाहीं हैं ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जीव के प्रदेश लोकप्रमाण हैं। बहुरि एकस्थान विषैं नाना गुणहानि पल्य कौं दोय बार असंख्यात का भाग दीजिए, तीहिं प्रमाण है। बहुरि नानागुणहानि का जो प्रमाण, तितना दूवा मांडि परस्पर गुणैं जो प्रमाण होइ, सो अन्योन्याभ्यस्त राशि है। सो पल्य कौं एक बार असंख्यात का भाग दीजिए, तीहिं प्रमाण है। बहुरि एक गुणहानि विषैं स्पर्धक जगच्छ्रेणी कौं दोय बार असंख्यात का भाग दीजिए, तीहिं प्रमाण है। बहुरि एक स्पर्धक विषैं वर्गणा जगच्छ्रेणी कौं एक बार असंख्यात का भाग दीजिए, तीहिं प्रमाण है। बहुरि एक गुणहानि विषैं जो स्पर्धकनि का प्रमाण ताकौं एक स्पर्धक विषैं जो वर्गणानि का प्रमाण ताकरि गुणैं एक गुणहानि विषैं सर्व वर्गणानि का प्रमाण हो है।

याकौं एक योगस्थान विषैं जो नानागुणहानि का प्रमाण, ताकरि गुणैं एक योगस्थान विषैं सर्व वर्गणानि का प्रमाण हो है। सो ए नानागुणहानि नै आदि दे करि अनुक्रम तैं असंख्यात-असंख्यात गुणा जानना ॥२२७॥

सव्वे जीवपदेसे, दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा।
उवरिं उत्तरहीणं, गुणहाणिं पडि तदद्धकमं ॥२२८॥

सर्वस्मिन् जीवप्रदेशे, द्वयर्धगुणहानिभाजिते प्रथमा।
उपरि उत्तरहीनं, गुणहानिं प्रति तदर्धक्रमः ॥२२८॥

टीका – सर्वही लोकप्रमाण जे जीव के प्रदेश तिनकौं द्वयर्धगुणहानि का भाग दीएं प्रथम गुणहानि का प्रथम स्पर्धक की प्रथम वर्गणा हो है। **उपर्युत्तर** कहिए एक-एक विशेष घटाए एक-एक वर्गणा हो है। बहुरि गुणहानि-गुणहानि प्रति आधा-आधा प्रमाण अनुक्रम करि जानना। बहुरि प्रथम वर्गणा कौं दोगुणहानि का भाग दीएं जो प्रमाण होइ, तितना विशेष का प्रमाण जानना ॥२२८॥

फड्ढयसंखाहि गुणं, जहण्णवग्गं तु तत्थ तत्थादी।
बिदियादिवग्गणाणं, वग्गा अविभाग अहियकमा ॥२२९॥

स्पर्धकसंख्याभिः गुणो, जघन्यवर्गस्तु तत्र तत्रादिः।
द्वितीयादिवर्गणानां, वर्गा अविभागाधिकक्रमाः ॥२२९॥

टीका – प्रथम गुणहानि तै लगाय अंत गुणहानि पर्यंत सर्व स्पर्धकनि विषैं तहां-तहां प्रथम वर्गणा तौ जघन्य वर्ग कौं स्पर्धकनि की संख्या करि गुणैं हो है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

बहुरि द्वितीयादिक वर्गणा अनुक्रम तें एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद बधाएं हो है। अब **'अविभागपडिच्छेदो'** इत्यादिक इन गाथानि का अर्थ स्पष्ट दिखाइए हैं—

अविभाग-प्रतिच्छेद, वर्ग, वर्गणा, स्पर्धक, गुणहानि, स्थान इतने भेद कहे। तहां एक जीव कैं एक-समय विषैं संभवै है असा जो गुणहानि का समूह, सो स्थान कहिए। बहुरि स्पर्धकनि का समूह सो गुणहानि कहिए। बहुरि अनुक्रम तें वृद्धि-हानिरूप जो वर्गणा तिनिका समूह सो स्पर्धक कहिए। बहुरि वर्ग का समूह सो वर्गणा कहिए। बहुरि अविभाग प्रतिच्छेदनि का समूह सो वर्ग कहिए। बहुरि जीव का प्रदेश कैं कर्म के ग्रहण करने की शक्ति विषैं जघन्य वृद्धि, सो अविभाग प्रतिच्छेद कहिए। इहां योग का अधिकार है, तातैं योगरूप शक्ति का विभाग रहित अंश का ग्रहण कीया। जघन्य वृद्धि का प्रमाण कहा ? सो कहिए हैं—

लोकप्रमाण जीव के प्रदेश हैं, तिनिका स्थापन करि इन सर्व प्रदेशनि विषैं जिस प्रदेश में योग की जघन्य शक्ति पाइए, तिस प्रदेश कौं जुदा ग्रहण करि तीहि प्रदेश में जितनी योग शक्ति पाइए है, ताकौं अपनी बुद्धि करि फैलावनी। बहुरि तिस जघन्य शक्ति तें अधिक अर अन्य शक्ति तैं हीन असी शक्ति जामैं पाइए असा कोई अन्य प्रदेश, ताका ग्रहण करि तिस माही जितनी योग शक्ति पाइए है, ताकौं जो पहिले जघन्य शक्ति फैलाई थी, ताके ऊपरि बुद्धि ही करि फैलावनी, सो तिस जघन्य शक्ति तें ऊपरि स्थापन करी जो शक्ति जितनी बधती होइ, तिस बधती प्रमाण का नाम योगनि का अविभाग प्रतिच्छेद है।

भावार्थ—जो जघन्य शक्ति लीए प्रदेश हैं, तिसतें एक अविभाग अंश करि अधिक शक्ति का धारी दूसरा प्रदेश तिसविषैं तिस जघन्य शक्ति तै जितनी शक्ति बधती होइ, सो तिस बधती प्रमाण का नाम योगनि का अविभाग प्रतिच्छेद है। तिस अविभाग प्रतिच्छेद का प्रमाण करि पहिलै फैलाई थी जो प्रदेश की जघन्य शक्ति, ताका खंड कीजिए, तब असंख्यात लोकप्रमाण खंड हो हैं।

भावार्थ—एक-एक खंड अविभाग प्रतिच्छेद का प्रमाण के समान कीजिए तौ जिस प्रदेश में जघन्य शक्ति कही थी, तिस प्रदेश की जघन्य शक्ति का असंख्यात लोकप्रमाण खंड हो है, तातैं असंख्यात लोकप्रमाण अविभाग प्रतिच्छेदनि का समूह जघन्य शक्ति है, ताकौं वर्ग कहिए। ताही तें एकवर्ग विषैं असंख्यात लोक प्रमाण अविभाग प्रतिच्छेद कहे हैं, तिस वर्ग की सहनानी 'व' असा अक्षर जानना।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि ताके आगें जिन प्रदेशनि विषैं जिनि विषै जघन्य शक्ति प्रमाण शक्ति पाइए असे जितने प्रदेश होंहि तितने लिखने, सो असें जघन्य शक्ति प्रमाण शक्ति के धारक जीव के प्रदेश असंख्यात जगत्प्रतर प्रमाण हैं।

काहैतें ? लोकप्रमाण जीव के प्रदेशनि कौं द्व्यर्धगुणहानि का भाग दीए जो प्रमाण आवै, तितने जघन्य शक्ति प्रमाण शक्ति के धारक प्रदेश हैं, सो एक गुणहानि विषैं जितना वर्गणा का प्रमाण कह्या है, तिस प्रमाण का ड्योढा कीजिए सो द्व्यर्धगुणहानि का प्रमाण है। सो जगच्छ्रेणी के असंख्यातवें भाग मात्र ही है। सो याका भाग जीव के प्रदेशनि कौं दीएं असंख्यात जगत्प्रतर प्रमाण हो है। सो इतने प्रदेशनि का समूह कौं प्रथम वर्गणा कहिए। एक प्रदेश संबंधी शक्ति का नाम वर्ग कह्या था, इहां असंख्यात जगत्प्रतर प्रमाण प्रदेशनि का समूह का नाम वर्गणा है, ताहीं तें एक वर्गणा विषैं असंख्यात जगत्प्रतर प्रमाण वर्ग कहे हैं।

बहुरि तिस जघन्य शक्तिरूप वर्ग विषैं जितने अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण कह्या, तिसतैं एक अधिक अविभाग प्रतिच्छेद जिनमैं पाइए असी शक्ति के धारक जितने प्रदेश होंहि, तितने प्रदेश ताके ऊपरि लिखने। ते प्रदेश प्रथम वर्गणा विषैं जितने प्रदेश कहे थे, तिनतैं एक विशेष घाटि जानने, सो प्रथम वर्गणा विषैं जो प्रदेशनि का प्रमाण है, ताकौं दोगुणहानि का भाग दीए जो प्रमाण होइ, सोई विशेष का प्रमाण जानना। सो विशेष की सहनानी **'वि'** असा अक्षर जानना।

बहुरि जो एक गुणहानि विषैं वर्गणानि का प्रमाण, ताकौं दूणा कीजिए, सो दोगुणहानि का प्रमाण जानना। सो प्रथम वर्गणा का प्रदेशनि का प्रमाण मेंस्यों विशेष का प्रमाण घटाए जो प्रमाण रहे, तितने प्रदेशनि का समूह कौं द्वितीय वर्गणा कहिए।

इहां पूर्वोक्त जघन्य शक्ति तें एक अविभाग प्रतिच्छेद करि अधिक शक्ति का धारक जो प्रदेश ताकौं वर्ग कहिए, इनका समूह सो द्वितीय वर्गणा जाननी।

बहुरि द्वितीय वर्गणा संबंधी वर्ग विषैं जितने अविभाग प्रतिच्छेद हैं, तातैं एक अविभाग प्रतिच्छेद जिन में बधता होइ अैसी शक्ति के धारक जितने प्रदेश होंइ, तितने ताके ऊपरि लिखने। ते प्रदेश द्वितीय वर्गणा विषैं जितने कहे थे, तिनमेंस्यों विशेष

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

का प्रमाण घटाएं जितना प्रमाण रहै, तितने जानने। इहां द्वितीय वर्गणा संबंधी वर्ग के अविभाग प्रतिच्छेदनि तैं एक अविभाग प्रतिच्छेद अधिक शक्ति का धारक प्रदेश कौं वर्ग कहिए, तिनका समूह तृतीय वर्गणा जाननी।

इस ही अनुक्रम तैं एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद करि अधिक शक्ति कौं लीएँ एक-एक विशेष करि घटते-घटते प्रमाण कौं लिएं जो वर्ग तिनका समूहरूप एक-एक वर्गणा हो है, सो असैं जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग प्रमाण वर्गणा होइ, तब प्रथम स्पर्धक होइ, ताही तैं एक स्पर्धक विषैं जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग प्रमाण वर्गणा कही है, ताकी सहनानी च्यारि का अंक है (४)। इस प्रथम स्पर्धक ही कौं **जघन्य स्पर्धक** कहिए हैं।

बहुरि इस प्रथम स्पर्धक की अंत की वर्गणा का वर्ग विषैं अविभाग प्रतिच्छेदनि का जो प्रमाण भया, ताके ऊपर प्रथम स्पर्धक की प्रथम वर्गणा संबंधी जघन्य वर्गणा विषैं जितने अविभाग प्रतिच्छेद हैं, तीहिस्यों दूणा अविभाग प्रतिच्छेद होंइ असै शक्ति के धारक प्रदेश पाइये। तिसतैं घाटि शक्ति का धारक कोई प्रदेश न पाइये। तातैं जिन विषैं जघन्य वर्ग तैं दूणा अविभाग प्रतिच्छेद पाइये ऐसी शक्ति के धारक जितने प्रदेश होंइ, तिनकी रचना प्रथम स्पर्धक की अंत की वर्गणा के ऊपरि करनी, ते प्रदेश प्रथम स्पर्धक की अंत की वर्गणा का प्रदेशनि के प्रमाण मेंस्यों पूर्वोक्त एक विशेष का प्रमाण घटाएं जो प्रमाण रहै, तितने जानने।

इहां जघन्य वर्ग तैं दूणां अविभाग प्रतिच्छेदरूप शक्ति का धारक जो प्रदेश, सो वर्ग जानना। तिनका जो समूह सो द्वितीय स्पर्धक की प्रथम वर्गणा जाननी। बहुरि इस प्रथम वर्गणा के वर्ग तैं एक अविभाग प्रतिच्छेद जामैं अधिक होइ असी शक्ति के धारक जे प्रदेश, तेई भए वर्ग, तिन द्वितीय स्पर्धक की प्रथम वर्गणा का प्रदेशनि का प्रमाण तैं एक विशेष के प्रमाण करि हीन प्रदेशरूप वर्गनि का जो समूह सो द्वितीय स्पर्धक की द्वितीय वर्गणा है। असैं ही अनुक्रमतैं एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद करि अधिक शक्ति कौं लीएं एक-एक विशेष करि घटते प्रमाण कौं लीएं जे वर्ग, तिन का समूहरूप एक-एक वर्गणा कौं होत संतैं जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग प्रमाण वर्गणा होइ। तिन वर्गणानि का समूह द्वितीय स्पर्धक जानना।

बहुरि तिस द्वितीय स्पर्धक की अंत की वर्गणा के ऊपरि प्रथम स्पर्धक की प्रथम वर्गणा संबंधी जघन्य वर्ग के अविभाग प्रतिच्छेदनि तैं तिगुणा अविभाग प्रतिच्छेद

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

जाविषैं पाइए अैसी शक्ति के धारक प्रदेश पाइए, घाटि शक्ति के धारक नाहीं । तातैं जघन्य वर्ग तैं तिगुणा अविभाग प्रतिच्छेदरूप शक्ति के धारक जे प्रदेश, तेई वर्ग तिन द्वितीय स्पर्धक की अंत की वर्गणा का प्रदेशनि तैं एक विशेष करि हीन प्रदेशरूप वर्गनि का जो समूह सो तृतीय स्पर्धक की प्रथम वर्गणा है । याकैं ऊपरि पूर्ववत् एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद करि अधिक शक्ति कौं लीएं एक-एक विशेष करि हीन प्रमाण कौं लीएं वर्गनि का समूहरूप एक-एक वर्गणा कौं होतैं जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग प्रमाण वर्गणा होइ । तिन वर्गणानि का समूह तृतीय स्पर्धक है ।

अैसे ही अनुक्रम तैं – **'फदृयसंखाहिगुणं जहण्णवग्गं तु तत्थ तत्थादी'** इत्यादि सूत्रोक्त अनुक्रम करि जघन्य वर्ग कौं स्पर्धकनि की संख्या करि गुणैं प्रथम वर्गणा होइ । प्रथम स्पर्धक की प्रथम वर्गणा संबंधी जघन्य वर्ग के अविभाग प्रतिच्छेदनि के प्रमाण कौं चौगुणा कीएं चौथा स्पर्धक की प्रथम वर्गणा के वर्ग का अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण होइ । पांच गुणा कीएं पांचवां स्पर्धक की प्रथम वर्गणा का होइ । छह गुणा कीए छठा स्पर्धक की प्रथम वर्गणा का होइ ।

अैसैं जेथवां स्पर्धक की प्रथम वर्गणा विवक्षित होइ, तितना गुणा जघन्य वर्ग कौ कीए तिस स्पर्धक की प्रथम वर्गणा का वर्ग का अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण आवै ।

बहुरि प्रथम वर्गणा का वर्ग तैं एक-एक अविभाग प्रतिच्छेद बधाएं द्वितीयादिक वर्गणानि के वर्गनि का अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण हो है, वर्गणा वर्गणानि विषैं एक-एक विशेष करि हीन वर्गनि का प्रमाण अनुक्रम तैं जानना । जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग प्रमाण वर्गणानि का समूह एक-एक स्पर्धक जानना । सो अैसैं जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग प्रमाण स्पर्धक भएं एक गुणहानि हो है । ताही तैं एक गुणहानि विषैं जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग प्रमाण स्पर्धक कहे हैं । याकी सहनानी नव का अंक जानना ।

बहुरि याके ऊपर द्वितीय गुणहानि का प्रथम स्पर्धक की प्रथम वर्गणा के प्रदेश रूप वर्ग – ते प्रथम गुणहानि का प्रथम स्पर्धक की प्रथम वर्गणा तैं आधा जानने । इस वर्गणा के वर्गनि विषैं अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण एक अधिक एक गुणहानि के स्पर्धकनि का प्रमाण करि जघन्य वर्ग के अविभाग प्रतिच्छेदनि कौं गुणैं जो प्रमाण होइ, तितना जानना; सो अविभाग प्रतिच्छेदनि का अनुक्रम तौ पूर्वोक्त ही जानना । अर प्रदेशरूप वर्गनि का प्रमाण प्रथम गुणहानि का प्रथम स्पर्धक की

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

वर्गणा का प्रमाण तैं द्वितीय गुणहानि का प्रथम स्पर्धक की प्रथम वर्गणा का प्रमाण आधा जानना। यामैं एक विशेष घटाएं द्वितीय वर्गणा का प्रमाण हो है, सो इस द्वितीय गुणहानि विषैं विशेष का प्रमाण प्रथम गुणहानि के विशेष के प्रमाण तैं आधा जानना।

ग्रैसैं ही एक-एक विशेष घटाएं तृतीयादि वर्गणानि का प्रमाण जानना।

इस ही प्रकार दूसरी गुणहानि तैं तीसरी गुणहानि की वर्गणानि विषैं वर्गनि का प्रमाण वा विशेष का प्रमाण आधा-आधा जानना। ग्रैसैं ही गुणहानि-गुणहानि प्रति आधा-आधा प्रमाण जानना। सो इसप्रकार पल्य का असंख्यातवें भाग प्रमाण गुणहानि होइ, तब एक योगस्थान होइ ताही तैं एक स्थानक विषैं पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण गुणहानि कही है। सो यहु सर्व कथन जघन्य योगस्थान का जानना।

ग्रैसैं यहु कथन शक्ति की प्रधानता करि कीया है।

अब प्रदेशनि की प्रधानता करि दिखाइए हैं। तहां अंकसंदृष्टि करि कथन दिखाइए हैं—

सर्व जीव के प्रदेश इकतीस सौ (३१००), नानागुणहानि पांच (५), एक गुणहानि विषैं वर्गणा का प्रमाणरूप गुणहानि आयाम आठ (८), नानागुणहानि प्रमाण दूवा मांडि परस्पर गुणन कीएं अन्योन्याभ्यस्तराशि का प्रमाण बत्तीस (३२), सो एक घाटि अन्योन्याभ्यस्तराशि इकतीस का भाग सर्व द्रव्य इकतीस सौ कौं दीएं – सौ (१००) पाया। सो अंत की गुणहानि का प्रमाण है। यातैं आदि की गुणहानि पर्यंत दूणा-दूणा प्रमाण है– १००, २००, ४००, ८००, १६००। याही तैं आदि की गुणहानि तैं गुणहानि-गुणहानि प्रति आधा-आधा द्रव्य कह्या है।

तहां सर्व द्रव्य इकतीस सौ कौं किछू अधिक द्वयर्धगुणहानि का भाग दीजिए, सो गुणहानि का आयाम आठ, ताका ड्योढा बारह अर किछू अधिक कहने तैं एक का चौसठि-भाग में भाग सात अधिक $१२\frac{७}{६४}$ इसका भाग दीएं दोय सौ छप्पन पाए, सो प्रथम गुणहानि का प्रथम स्पर्धक की प्रथम वर्गणा जाननी। याकौं दूणा गुणहानि का आयामरूप जो दोगुणहानि सोलह, ताका भाग प्रथम वर्गणा कौं दीए जो प्रमाण सोलह आया, सोई विशेष का प्रमाण जानना। विशेष कौं दोगुणहानि करि गुणैं प्रथम वर्गणा का प्रमाण हो है। सो प्रथम वर्गणा तैं एक-एक विशेष घटाए द्वितीयादिक वर्गणा हो हैं।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ऐसें एक घाटि गुणहानि का आयाम सात, सो इतना विशेष घटाए गुणहानि का अंत का स्पर्धक की अंत की वर्गणा हो है । बहुरि गुणहानि-गुणहानि प्रति आदि वर्गणा तैं आदि-वर्गणा का प्रमाण आधा-आधा जानना अर विशेष का भी प्रमाण आधा-आधा जानना । जातैं प्रथम वर्गणा कौं दोगुणहानि का भाग दीएं विशेष का प्रमाण हो है । याही तैं दोगुणहानि कौं निषेकहार कहिए हैं । ऐसैं अंकसंदृष्टि करि कथन दिखाया ।

प्रथमादिक गुणहानि संबंधी आठ-आठ वर्गणानि विषैं वर्गनि का प्रमाणरूप यंत्र ।

१४४	७२	३६	१८	६
१६०	८०	४०	२०	१०
१७६	८८	४४	२२	११
१९२	९६	४८	२४	१२
२०८	१०४	५२	२६	१३
२२४	११२	५६	२८	१४
२४०	१२०	६०	३०	१५
२५६	१२८	६४	३२	१६

याही प्रकार अर्थसंदृष्टि करि कथन जानना । सब जीव के प्रदेश लोकप्रमाण नानागुणहानि पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण एक गुणहानि का आयाम जगच्छ्रेणी के असंख्यातवें भाग प्रमाण, सो इन विषैं यथायोग्य कथन जानि लेना । ऊपरि कथन करि आए हैं, तातैं इहां विशेष न कह्या है । बहुरि वर्ग वा वर्गणा वा स्पर्धक वा नानागुणहानि वा जघन्य स्थान विषैं अविभाग प्रतिच्छेद मिलावने का विधान इस ही ग्रंथ की संस्कृत टीका विषैं कह्या है, सो मेरे बुद्धि की मंदता तैं नीकैं समझने में न आया अर प्रयोजन इतना ही है, जो अविभाग प्रतिच्छेदनि का जोड दिया अर कठिन कथन भएं मंदबुद्धिनि की बुद्धिभ्रमरूप होइ; तातैं इस बालबोध टीका विषैं नाहीं लिख्या है ।

ऐसैं जघन्य योगस्थानक का कथन जानना ।।२२९।।

अंगुलअसंखभागप्पमाणमेत्तऽवरफड्ढयावड्ढी ।
अंतरछक्कं मुच्चा, अवरट्ठाणादु उक्कस्सं ।।२३०।।

अंगुलासंख्यभाग, प्रमाणमात्रावरस्पर्धकवृद्धिः ।
अंतरषट्कं मुक्त्वा, अवरस्थानादुत्कृष्टं ।।२३०।।

टीका – सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्तक जीव कैं पूर्वोक्त सर्व तैं जघन्य उपपाद योगस्थान पाइए है । तिसतैं अनंतर स्थान कौं आदि देकरि सर्वोत्कृष्ट योग-

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

स्थान पर्यंत सांतर वा निरंतर वा सांतर-निरंतर सर्व ही जे ए योगस्थान तिन विषैं एक-एक योगस्थान प्रति निरंतर सूच्यंगुल का असंख्यातवें भाग प्रमाण जघन्य स्पर्धक युगपत् बंधै हैं, तब उत्तरोत्तर स्थान हो हैं। प्रथम जघन्य स्थान तैं सूच्यंगुल का असंख्यातवें भाग प्रमाण जघन्य स्पर्धक दूसरे स्थानक विषैं बधती हैं।

भावार्थ – जघन्य स्थान विषैं प्रथम गुणहानि का प्रथम स्पर्धक विषैं जितने अविभाग प्रतिच्छेद हैं, तिनतैं सूच्यंगुल के असंख्यातवें भाग गुणे अविभाग प्रतिच्छेद जघन्य स्थानक के अविभाग प्रतिच्छेदनि तैं ताके ऊपरि दूसरा योगस्थान विषैं बधती जानने। अैसैं ही दूसरे स्थानक तैं तीसरा स्थानक विषैं सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण जघन्य स्पर्धक बधती जानने। तीसरे तैं चौथा विषैं, चौथे तै पंचम विषैं असैं ही सर्वोत्कृष्ट परिणाम योगस्थान पर्यंत एक-एक स्थान विषैं सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण जघन्य स्पर्धक बधते जानने ॥२३०॥

बहुरि आगे कहिए हैं छह अंतर – तिनकौं छोड़ जघन्य स्थान तैं लगाय उत्कृष्ट पर्यंत जीवनि के योगस्थान हो हैं, असैं होतै कहा ? सो कहैं हैं—

सरिसायामेणुवरिं, सेढिअसंखेज्जभागठाणाणि।
चडिदेक्केक्कमपुव्वं, फड्ढयमिह जायदे चयदो ॥२३१॥

सदृशायामेनोपरि, श्रेण्यसंख्येयभागस्थानानि।
चटितैकैकमपूर्वं, स्पर्धकमिह जायते चयतः ॥२३१॥

टीका – तीहिं सर्व तैं जघन्य योगस्थान का समान आयाम के ऊपरि पूर्वोक्त प्रमाण स्थानक-स्थानक विषैं वृद्धिरूप चय करि एक-एक अपूर्व स्पर्धक उपजै है। सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण जघन्य स्पर्धकनि के जेते अविभाग प्रतिच्छेद होंहि, तिनकौं बधतैं एक स्थान होइ, तौ जघन्य स्थान का सर्व अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण विषैं एक गुणहानि संबंधी स्पर्धकनि की संख्या कौं नानागुणहानि करि गुणित ताकी अन्योन्याभ्यस्तराशि का भाग दीए जो प्रमाण होइ, तितने जघन्य स्पर्धक बंधैं कितने स्थानक होंहि ? असैं त्रैराशिक कीएं लब्धराशि का प्रमाण जगच्छ्रेणी के असंख्यातवें भाग प्रमाण आया।

बहुरि तैसैं ही ताके अनंतर समान आयाम कौं लीए द्वितीय स्थानक तैं लगाय सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण जघन्य स्पर्धक एक-एक स्थानक विषैं

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बधै असैं जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग प्रमाण स्थानक भएं, एक दूसरा अपूर्व स्पर्धक उपजै है। बहुरि ताके ऊपरि जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग प्रमाण स्थानक भएं तीसरा अपूर्व स्पर्धक हो हैं। असैं ही एकगुणहानि विषैं जितना स्पर्धकनि का प्रमाण कह्या था, तितने अपूर्व स्पर्धक भए जघन्य योगस्थान दूणा हो हैं। इहां अपूर्व स्पर्धक होने का विधान मेरे समझने में नीकैं न आया, तातैं स्पष्ट नाहीं लिख्या है।

भावार्थ – एकगुणहानि विषैं स्पर्धकनि का प्रमाण जगच्छ्रेणी कौं दोय बार असंख्यात का भाग दीजिये, इतना कह्या था, सो तितने ही अपूर्व स्पर्धक भएं जो योगस्थान होइ, ताके जितने अविभाग प्रतिच्छेद हैं, ते जघन्य योगस्थानक के अविभाग प्रतिच्छेदनि तें दूणे हैं। बहुरि याके ऊपरि तितने ही अपूर्व स्पर्धक गएं जो योगस्थान होइ सोइ तिस योगस्थान तें भी दूणा हो है। असे दूणा-दूणा क्रम तें होतैं संज्ञी पंचेंद्री पर्याप्तक जीव का सर्वोत्कृष्ट परिणाम योगस्थान हो है।

इहां स्थानभेद ल्यावने कौं त्रैराशिक करने। तहां सर्वत्र प्रमाणराशि सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग मात्र जघन्य स्पर्धक, फलराशि एक स्थान, इच्छाराशि जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग मात्र जघन्य स्पर्धकनि कौ अनुक्रम तें एक, दोय, च्यारि, आठ, सोलह, बत्तीस गुणा कीए जो होइ तींह प्रमाण जानना। इहां फल-करि इच्छा कौं गुणैं, प्रमाण का भाग दीएं जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग कौं सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग का भाग दीए जो प्रमाण होइ, ताकौं अनुक्रम तें एक गुणा, दो गुणा, च्यारि गुणा, आठ गुणा, सोलह गुणा कीएं जो-जो प्रमाण होइ तितने-तितने स्थानभेद हो हैं। इहां अंकसंदृष्टि अपेक्षा सोलह पर्यंत ही गुणकार कह्या है। अब इनका जोड दीजिए हैं—

'अंतधणं गुणगुणियं आदिविहीणं रूऊणुत्तरभजियं' इस करणसूत्र करि अंत का धन जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग कौं सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग करि गुणें जो प्रमाण होइ; तातैं सोलह गुणा है। ताकौं गुणकार दोय करि गुणिए तामैं आदि का प्रमाण जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग कौं सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए तीहिं प्रमाण है, सो घटाए जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग कौं सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग करि गुणि इकतीस गुणा कीजिए इतना हो है। बहुरि एक घाटि उत्तर एक, ताका भाग दीए भी इतने ही रहैं, सो इतना सब योग-स्थाननि के भेदनि का प्रमाण है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि याकौं एक घाटि गुणकार एक, ताका भाग दीएं भी इतना ही रहै है। सो याकौं प्रभव जो आदि ताका भाग दीए इकतीस पाए, तामैं एक मिलाएं बत्तीस भए, सो जेती बार गुणकार जो दोय ताका भाग दीएं एक रहै तीहिं प्रमाण गच्छ जानना। सो पांच बार दोय का भाग बत्तीस कौं दीएं एक रहै, तातैं अन्योन्याभ्यस्त-राशि की गुणकार शलाका पांच है। पांच जायगा दोय-दोय मांडि परस्पर गुणें अन्योन्याभ्यस्त राशि का प्रमाण बत्तीस आवै है, असा अर्थ जानना।

बहुरि असैं ही जघन्य स्थान तैं लगाय उत्कृष्ट स्थान पर्यंत सर्व योगस्थान के जघन्य भेदनि विषैं जघन्य योगस्थान जहां-जहां दूणा होइ तहां-तहां केते-केते योग-स्थाननि के भेद होंहि ? सो कहिए हैं–

तहां पूर्वोक्त प्रकार प्रमाण, फल, इच्छाराशि अनुक्रम तैं करने। विशेष इतना – इहां यथार्थ अपेक्षा कथन है, तातैं पूर्वैं जैसैं अंत विषैं सोलह का गुणकार कह्या, तैसैं इहां क्रम तैं दूणा-दूणा अंत विषैं पल्य के अर्धच्छेदनि का असंख्यातवां भाग का आधा प्रमाण मात्र गुणकार जानना। तहां **'अंतधणं गुणगुणियं'** इत्यादि सूत्रकरि जोडैं सर्व योगस्थाननि के भेदनि का प्रमाण हो है। याकौं एक घाटि गुणकार एक, ताकरि गुणि **प्रभव** जो आदिस्थान ताका भाग तामैं एक मिलाएं पल्य के अर्धच्छेदनि का असंख्यातवां भाग मात्र प्रमाण हो है। ताकौं जेती बार गुणकार दोय का भाग दीए एक रहै, तेती बार प्रमाण नानागुणहानि शलाका हैं, सो असंख्यात घाटि पल्य की वर्गशलाका प्रमाण है, जातैं पल्य की वर्गशलाका प्रमाण दूवा मांडि परस्पर गुणें तो पल्य का अर्धच्छेद मात्र प्रमाण होइ अर घटाएं असंख्यात, सो तितने दूवे मांडि परस्पर गुणैं, ताकौं असंख्यात का भागहार हो है।

भावार्थ – असंख्यात घाटि पल्य की वर्गशलाका का जो प्रमाण तेती बार जघन्य योगस्थान दूणां-दूणां भए उत्कृष्ट योगस्थान हो है; तातैं याकौं नानागुणहानि शलाका कहिए। बहुरि इस नानागुणहानि प्रमाण दूवे मांडि परस्पर गुणैं पल्य के अर्धच्छेदनि का असंख्यातवां भाग मात्र अन्योन्याभ्यस्तराशि हो है। याकरि जघन्य कौं गुणैं उत्कृष्ट योगस्थाननि के अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण हो है। बहुरि पूर्वोक्त प्रकार कीए योगस्थाननि का प्रमाण हो है ॥२३१॥

आगैं जो अब कथन कीजियेगा, ताकी प्रतिज्ञा करै हैं —

एदेसिं ठाणाणं, जीवसमासाण अवरवरविसयं।
चउरासीदिपदेहिं, अप्पाबहुगं परूवेमो ॥२३२॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

एतेषां स्थानानां, जीवसमासानामवरवरविषयं ।
चतुरशीतिपदैः, अल्पबहुकं प्ररूपयामः ॥२३२॥

टीका – ए कहे जे योगस्थान तिनि विषैं चौदह जीवसमासनि के जघन्य-उत्कृष्ट की अपेक्षा अर चकार तैं उपपादादिक तीन प्रकार योगनि की अपेक्षा चौरासी ठिकानानि करि अल्प-बहुत्व प्ररूपण करै हैं –थोरा इहां है, बहुत इहां है, ऐसा कथन करै हैं ॥२३२॥

सोई कहिए हैं —

सुहुमगलद्धिजहण्णं, तण्णिव्वत्तीजण्हणयं तत्तो ।
लद्धिअपुण्णुक्कस्सं, बादरलद्धिस्स अवरमदो ॥२३३॥

सूक्ष्मकलब्धिजघन्यं, तन्निर्वृत्तिजघन्यकं ततः ।
लब्ध्यपूर्णोत्कृष्टं, बादरलब्धेरवरमतः ॥२३३॥

टीका – सूक्ष्म, बादर, एकेंद्री, बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री, असैनी पंचेंद्री, सैनी पंचेंद्री इनकी सहनानी ऐसी जाननी —

सू.	बा.	वि.	ति.	च.	अ.	सै.
०१	०१	०२	०३	०४	०५	०६
		०	०	०	०	०
			०	०	०	०
				०	०	०
					०	०
						०

इन संदृष्टिनि करि संदृष्टि कथन करतैं रचना आगैं लिखैंगे । तहां सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक जीव का जघन्य उपपाद योगस्थान सब तैं स्तोक-थोरा है ।१। तातैं सूक्ष्म निगोदिया निर्वृत्ति अपर्याप्त जीव का जघन्य उपपाद योगस्थान पल्य का असंख्यातवां भाग गुणा है । पल्य का असंख्यात भागनि मध्ये एक भाग करि पूर्व योगस्थान के अविभाग प्रतिच्छेदनि के प्रमाण कौं गुणैं जो प्रमाण होइ, तितने अविभाग प्रतिच्छेदनि का प्रमाण लीए द्वितीय स्थान है ।२। ऐसैं ही आगैं भी

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

समझना। बहुरि तातैं सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तक का उत्कृष्ट उपपाद योगस्थान पल्य का असंख्यातवां भाग गुणा है ।३। बहुरि तिसतैं बादर लब्धि अपर्याप्तक का जघन्य उपपाद योगस्थान पल्य का असंख्यातवां भाग गुणा है ।४। ।।२३३।।

णिव्वत्तिसुहुमजेट्ठं, बादरणिव्वत्तियस्स अवरं तु ।
बादरलद्धिस्स वरं, बीइंदियलद्धिगजहण्णं ।।२३४।।

निर्वृत्तिसूक्ष्मज्येष्ठं, बादरनिर्वृत्तिकस्यावरं तु ।
बादरलब्धेर्वरं, द्वींद्रियलब्धिकजघन्यं ।।२३४।।

टीका – बहुरि तिसतैं सूक्ष्म निर्वृत्ति अपर्याप्तक का उत्कृष्ट उपपाद योगस्थान पल्य के असंख्यातवें भाग गुणा है ।५। बहुरि तातै बादर निर्वृत्ति अपर्याप्तक का जघन्य उपपाद योगस्थान पल्य के असंख्यातवें भाग गुणा है ।६। बहुरि तातैं बादर लब्धि अपर्याप्तक का उत्कृष्ट उपपाद योगस्थान पल्य के असंख्यातवें भाग गुणा है ।७। बहुरि तातैं बेंद्री लब्धि अपर्याप्तक का जघन्य उपपाद योगस्थान पल्य के असंख्यातवें भाग गुणा है ।८। ।।२३४।।

बादरणिव्वत्तिवरं, णिव्वत्तिबिइंदियस्स अवरमदो ।
एवं बितिबितितिचतिचचउविमणो होदि चउविमणो ।।२३५।।

बादरनिर्वृतिवरं, निर्वृत्तिद्वींद्रियस्यावरमतः ।
एवं द्वित्रिद्वित्रित्रिचत्रिचचतुर्विमनो भवति चतुर्विमनः ।।२३५।।

टीका – बहुरि तातैं बादर एकेंद्री निर्वृत्ति अपर्याप्तक का उत्कृष्ट उपपाद योगस्थान पल्य का असंख्यातवां भाग गुणा है ।९। बहुरि तातैं बेंद्री निर्वृत्ति अपर्याप्तक का जघन्य उपपाद योगस्थान पल्य का असंख्यातवां भाग गुणा है ।१०। बहुरि ऐसैं ही तातैं बेंद्री लब्धि अपर्याप्तक का उत्कृष्ट अर तेंद्री लब्धि अपर्याप्तक का जघन्य उपपाद योगस्थान अनुक्रम तैं पल्य का असंख्यातवां भाग गुणा है ।११। १२। अनुक्रम तैं ऐसैं शब्द करि एक-एक विषैं पल्य का असंख्यातवां भाग का गुणकार जानना।

बहुरि तातैं निर्वृत्ति अपर्याप्तक बेंद्री का उत्कृष्ट अर निर्वृत्ति अपर्याप्त तेंद्री का जघन्य उपपाद योगस्थान अनुक्रम तैं पल्य का असंख्यातवां भाग गुणे

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

हैं ।१३। १४। बहुरि तातैं लब्धि अपर्याप्तक तेंद्री का उत्कृष्ट अर लब्धि अपर्याप्तक चौंद्री का जघन्य उपपाद योगस्थान अनुक्रम तें पल्य का असंख्यातवां भाग गुणे हैं ।१५। १६। बहुरि तातैं निर्वृत्ति अपर्याप्तक तेंद्री का उत्कृष्ट अर निर्वृत्ति अपर्याप्तक चौंद्री का जघन्य उपपाद योगस्थान अनुक्रम तैं पल्य के असंख्यातवें भाग गुणे हैं ।१७।१८। बहुरि तातैं लब्धि अपर्याप्तक चौंद्री का तौ उत्कृष्ट अर लब्धि अपर्याप्तक असंज्ञी पंचेंद्री का जघन्य उपपाद योगस्थान अनुक्रम तें पल्य का असंख्यातवां भाग गुणे हैं ।१९।२०। बहुरि तातैं निर्वृत्ति अपर्याप्तक चौंद्री का तौ उत्कृष्ट अर निर्वृत्ति अपर्याप्तक असंज्ञी पंचेंद्री का जघन्य उपपाद योगस्थान पल्य का असंख्यातवें भाग गुणे हैं ।२१।२२। ॥२३५॥

तह य असण्णीसण्णी, असण्णिसण्णिस्स सण्णिउववादं ।
सुहुमेइंदियलद्धिगअवरं एयंतवड्ढिस्स ॥२३६॥

तथा च असंज्ञीसंज्ञी, असंज्ञिसंज्ञिनः संज्युपपादः ।
सूक्ष्मैकेंद्रियलब्धिकावरं एकांतवृद्धेः ॥२३६॥

टीका – बहुरि तैसें ही तातैं असंज्ञी लब्धि अपर्याप्तक का उत्कृष्ट अर संज्ञी लब्धि अपर्याप्तक का जघन्य उपपाद योगस्थान अनुक्रम तें पल्य का असंख्यातवां भाग गुणे हैं ।२३।२४। बहुरि तातैं असंज्ञी निर्वृत्ति अपर्याप्तक का उत्कृष्ट अर संज्ञी निर्वृत्ति अपर्याप्तक का जघन्य उपपाद योगस्थान अनुक्रम तैं पल्य का असंख्यातवां भाग गुणे हैं । ।२५।२६ । बहुरि तातैं संज्ञी पंचेंद्री लब्धि अपर्याप्त का उत्कृष्ट उपपाद योगस्थान पल्य का असंख्यातवां भाग गुणा है ।२७। बहुरि तातैं सूक्ष्म एकेंद्री लब्धि अपर्याप्त का जघन्य एकांतानुवृद्धि योगस्थान पल्य का असंख्यातवां भाग गुणा है ।२८। ॥२३६॥

सण्णिस्सुववादवरं, णिव्वत्तिगदस्स सुहुमजीवस्स ।
एयंतवड्ढिअवरं, लद्धिदरे थूलथूले य ॥२३७॥

संज्ञिन उपपादवरं, निर्वृत्तिगतस्य सूक्ष्मजीवस्य ।
एकांतवृद्धयवरं, लब्धीतरस्मिन् स्थूलस्थूले च ॥२३७॥

टीका – बहुरि तातैं संज्ञी पंचेंद्री निर्वृत्ति अपर्याप्तक का उत्कृष्ट उपपाद योगस्थान पल्य के असंख्यातवें भाग गुणा है ।२९। बहुरि तातैं सूक्ष्म एकेंद्री निर्वृत्ति

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

अपर्याप्त का जघन्य एकांतानुवृद्धि योगस्थान पल्य के असंख्यातवें भाग गुणा है ।३०। बहुरि तातैं बादर एकेंद्री लब्धि अपर्याप्तक का अर बादर एकेंद्री निर्वृत्ति अपर्याप्तक का जघन्य एकांतानुवृद्धि योगस्थान अनुक्रम तैं पल्य का असंख्यातवां भाग गुणे हैं ।३१।३२।। ।२३७।।

तह सुहुमसुहुमजेट्ठं, तो बादरबादरे वरं होदि ।
अंतरमवरं लद्धिगसुहुमिदरवरंपि परिणामे ।।२३८।।

तथा सूक्ष्मसूक्ष्मज्येष्ठं, ततो बादरबादरे वरं भवति ।
अंतरमवरं लब्धिकसूक्ष्मेतरवरमपि परिणामे ।।२३८।।

टीका – बहुरि तैसैं ही तातैं सूक्ष्म एकेंद्री लब्धि अपर्याप्तक अर सूक्ष्म एकेंद्री निर्वृत्ति अपर्याप्तक इनके उत्कृष्ट एकांतानुवृद्धि योगस्थान अनुक्रम तैं पल्य का असंख्यातवां भाग गुणे हैं । ३३ । ३४ । बहुरि तातैं बादर एकेंद्री लब्धि अपर्याप्तक अर बादर एकेंद्री निर्वृत्ति अपर्याप्तक इनके उत्कृष्ट एकांतानुवृद्धि योगस्थान अनुक्रम तैं पल्य के असंख्यातवें भाग गुणे हैं । ३५ । ३६ ।

'**ततः अंतरं**' कहिए बादर एकेंद्री निर्वृत्ति अपर्याप्त का उत्कृष्ट एकांतानुवृद्धि योगस्थान अर सूक्ष्म एकेंद्री लब्धि अपर्याप्तक का जघन्य परिणाम योगस्थान इन दोऊनि के बीचि जगच्छ्रेणी के असंख्यातवें भाग प्रमाण योगस्थान असे हैं, जिनका कोऊ स्वामी नाही । ए योगस्थान किसी जीव कैं न पाइए, तातैं यहु अंतर पड्या । सो इन स्थानकनि कौं उलंघि करि छोडि करि सूक्ष्म एकेंद्री वा बादर एकेंद्री लब्धि अपर्याप्तक इनके जघन्य वा उत्कृष्ट परिणाम योगस्थान अनुक्रम तैं पल्य का असंख्यातवां भाग गुणे हैं ।

इहां सूक्ष्म का जघन्य, बादर का जघन्य, सूक्ष्म का उत्कृष्ट, बादर का उत्कृष्ट – असैं क्रम जानना ।३७।३८।३९।४०। ।।२३८।।

अंतरमुवरीवि पुणो, तप्पुण्णाणं च उवरि अंतरियं ।
एयंतवड्ढिठाणा, तसपणलद्धिस्स अवरवरा ।।२३९।।

अंतरमुपर्यपि पुनः तत्पूर्णानां च उपर्यंतरितं ।
एकांतवृद्धिस्थानानि, त्रसपंचलब्धेरवरवराः ।।२३९।।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – बहुरि 'अंतरं' कहिए इहां दूसरा अंतर है । बादर एकेंद्री लब्धि अपर्याप्तक का उत्कृष्ट परिणामयोग के पीछै जगच्छ्रेणी के असंख्यातवें भाग प्रमाण योगस्थान असे हैं, जिनका कोऊ स्वामी नाहीं । सो इनकौं छोडि करि बहुरि सूक्ष्म एकेंद्री वा बादर एकेंद्री पर्याप्तक तिनका जघन्य वा उत्कृष्ट परिणाम योगस्थान – अनुक्रम तैं ए च्यारि पल्य का असंख्यातवां भाग गुणे हैं ।४१।४२।४३।४४। बहुरि याके ऊपरि तीसरा अंतर है, सो बादर एकेंद्री पर्याप्त का उत्कृष्ट योगस्थान, पीछैं जगच्छ्रेणी के असंख्यातवें भागमात्र योगस्थान अैसे हैं, जिनका कोऊ स्वामी नाही; तिनकौं छोडि करि बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री, असैनी पंचेंद्री, लब्धि अपर्याप्त तिनका जघन्य वा उत्कृष्ट एकांतानुवृद्धि योगस्थान अनुक्रम तैं ए दश पल्य का असंख्यातवां भाग गुणे हैं ।४५। ४६।४७।४८।४९।५०।५१।५२।५३।५४। ।।२३९।।

लद्धीणिव्वत्तीणं, परिणामेयंतवड्ढिठाणाओ ।
परिणामट्ठाणाओ, अंतरअंतरिय उवरुवरिं ।।२४०।।

लब्धिनिर्वृत्तीनां, परिणामैकांतवृद्धिस्थानानि ।
परिणामस्थानानि, अंतरांतरितान्युपर्युपरि ।।२४०।।

टीका – बहुरि इहां चौथा अंतर है । सैनी पंचेंद्री लब्धि अपर्याप्तक का उत्कृष्ट एकांतानुवृद्धि योगस्थान पीछैं जगच्छ्रेणी के असंख्यातवें भाग प्रमाण योगस्थान अैसे हैं, जिनका कोऊ स्वामी नाही । सो इनकौ उलंघि करि बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री, असैनी पंचेंद्री, सैनी पंचेंद्री लब्धि अपर्याप्तक जीव तिनका जघन्य अर उत्कृष्ट परिणाम योगस्थान अनुक्रम तैं ए दश पल्य का असंख्यातवां भाग गुणा जानना । ५५।५६।५७।५८।५९।६०।६१।६२।६३।६४ ।

बहुरि इहां पांचवां अंतर है । सो सैनी पंचेंद्री लब्धि अपर्याप्तक जीव का उत्कृष्ट परिणाम योगस्थान के पीछैं जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग प्रमाण योगस्थान अैसे हैं, जिनिका कोऊ स्वामी नाहीं । तिनकौं छोड़ि करि बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री, असैनी पंचेंद्री, सैनी पंचेंद्री निर्वृत्ति अपर्याप्तक जीव; तिनका जघन्य अर उत्कृष्ट एकांतानुवृद्धियोगस्थान – सो ए दश अनुक्रम तैं पल्य का असंख्यातवां भाग गुणा जानना ।६५।६६।६७।६८।६९।७०।७१।७२।७३।७४।

बहुरि इहां छठा अंतर हैं । सैनी पंचेंद्री निर्वृत्ति अपर्याप्तक जीव का उत्कृष्ट एकांतानुवृद्धि योगस्थान पीछै जगच्छ्रेणी के असंख्यातवें भाग प्रमाण योगस्थान

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

असे हैं, जिनका कोऊ स्वामी नाही। सो इनकौं उलंघि करि बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री, असैनी पंचेंद्री, सैनी पंचेंद्री, पर्याप्तक जीव तिनका जघन्य अर उत्कृष्ट परिणाम योगस्थान – ए दश अनुक्रम तैं पल्य का असंख्यातवां भाग गुणा जानना ।७५।७६।७७।७८।७९। ८०।८१।८२।८३।८४।

असैं ए चौरासी ठिकाने योगों के कहे ।

सो इहां अैसा भावार्थ जानना–जे योगस्थान कहे तिन विषैं प्रथम योगस्थान सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तक का जघन्य उपपाद योगस्थान है, ताके अविभाग प्रतिच्छेद सबनि तैं थोरे हैं । बहुरि तिन तैं सूक्ष्म निर्वृत्ति अपर्याप्तक का जघन्य उपपाद योगस्थान के अविभाग प्रतिच्छेद पल्य के असंख्यातवां भाग गुणा है । अैसैं ही अनुक्रम तैं जानना ।।२४०।।

आगैं इस कहे गुणकार कौं ग्रंथकर्ता कहैं हैं—

एदेसिं ठाणाओ, पल्लासंखेज्जभागगुणिदकमा ।
हेट्ठिमगुणहाणिसला, अण्णोण्णब्भत्थमेत्तं तु ।।२४१।।

एतेषां स्थानानि, पल्यासंख्येयभागगुणितक्रमाणि ।
अधस्तनगुणहानिशला, अन्योन्याभ्यस्तमात्रं तु ।।२४१।।

टीका – चौदह जीवसमासनि का उपपादादिक तीन योगनि की अपेक्षा जघन्य उत्कृष्ट भेद तैं चौरासी जे ए स्थानक भए, ते अनुक्रम तैं पहिले स्थानक तैं पिछला स्थानक पल्य का असंख्यातवां भाग गुणा क्रम तैं हैं, तथापि जघन्य योगस्थान तैं सर्वोत्कृष्ट योगस्थान पल्य के अर्धच्छेदनि का असंख्यातवां भाग गुणा है । तीहिं जघन्य योगस्थान अर उत्कृष्ट योगस्थान इन दोऊनि के बीच तिष्ठती अधस्तन गुणहानिशलाका असंख्यात रूप घाटि पल्य की वर्गशलाका प्रमाण है, तेई अन्योन्याभ्यस्तराशि की गुणकार शलाका कहिए, सो पूर्वैं कथन कीया है ।।२४१।।

आगैं ए तीनों योग हैं, ते बीच में एक योगस्थान तैं अन्य योगस्थान न होइ, अैसैं निरंतर कितने काल प्रवर्तै ? सो कहै हैं —

अवरुक्कस्सेण हवे, उववादेयंतवड्ढिठाणाणं ।
एक्कसमयं हवे पुण, इदरेसिं जाव अट्ठोत्ति ।।२४२।।

अवरोत्कृष्टेन भवेत्, उपपादैकांतवृद्धिस्थानानां ।
एकसमयो भवेत्पुनः इतरेषां यावदष्ट इति ।।२४२।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – उपपाद योगस्थान अर एकांतानुवृद्धि योगस्थान इनके प्रवर्तन का काल जघन्य वा उत्कृष्ट एक समय ही है । जातैं उपपाद योगस्थान जन्म के प्रथम समय विषैं ही हो है । एकांतानुवृद्धि योगस्थान समय-समय वृद्धिरूप अन्य-अन्य हो है । बहुरि इतर जे परिणामयोगस्थान तिनके प्रवर्तन का काल दोय समय तैं लगाय आठ समय पर्यंत है ।

भावार्थ – एक परिणामयोगस्थान दोय समय तैं लगाय आठ समय पर्यंत रहै, अधिक न रहै, पीछैं अन्य योगस्थान हो है ।।२४२।।

अट्ठसमयस्स थोवा, उभयदिसासुवि असंखसंगुणिदा ।
चउसमयोत्ति तहेव य, उवरिं तिदुसमयजोग्गाओ ।।२४३।।

अष्टसमयस्य स्तोका, उभयदिशयोरपि असंख्यसंगुणिताः ।
चतुःसमय इति तथैव च, उपरि त्रिद्विसमययोगाः ।।२४३।।

टीका – बेंद्री पर्याप्त जीव तीहिं का जघन्य परिणाम योगस्थान तैं लगाय संज्ञी पंचेंद्री पर्याप्त जीव कैं उत्कृष्ट परिणाम योगस्थान पर्यंत अंतर रूप जे योगस्थान कहे थे, तिन बिना जेते निरंतर योगस्थान हैं, तिनकी **'यव'** नामा अन्न के आकार रचना काल की अपेक्षा जाननी[१] । तहां जे निरंतर आठ समय विषैं प्रवर्तैं असे योगस्थान ते मध्य विषैं लिखने, अर जे योगस्थान निरंतर सात समय विषैं प्रवर्तैं, ते आधे तो आठ समय वालौं के ऊपरि लिखने, आधे नीचैं लिखने । बहुरि जे योगस्थान छह समय विषैं निरंतर प्रवर्तैं, ते तिनहू के आधे ऊपरि लिखने । बहुरि जे योगस्थान पंच समयनि विषैं निरंतर प्रवर्तैं ते तिनहू के आधे तौ नीचे अर आधें ऊपरि लिखने । बहुरि जे योगस्थान च्यारि समयनि विषैं निरंतर प्रवर्तैं तिनहू के आधे तौ नीचैं अर आधे ऊपरि लिखने । बहुरि जे योगस्थान तीन समयनि विषैं निरंतर प्रवर्तैं ते च्यारि समयावालों के ऊपरि ही लिखने । बहुरि जे योगस्थान दोय समय विषैं निरंतर प्रवर्तैं, ते तीन समयवालों के ऊपरि लिखने ।

इहां त्रसजीव संबंधी परिणाम योगस्थाननि विषैं मध्यवर्ती स्थान मध्य विषैं लिखिए हैं । तिनतैं पहिले स्थान वा पिछले स्थान तिनके ऊपरि वा नीचैं लिखिए है, असा अर्थ जानना ।

१–इसकी टिप्पणी २५८ पृष्ठ पर है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

यवकार रचना

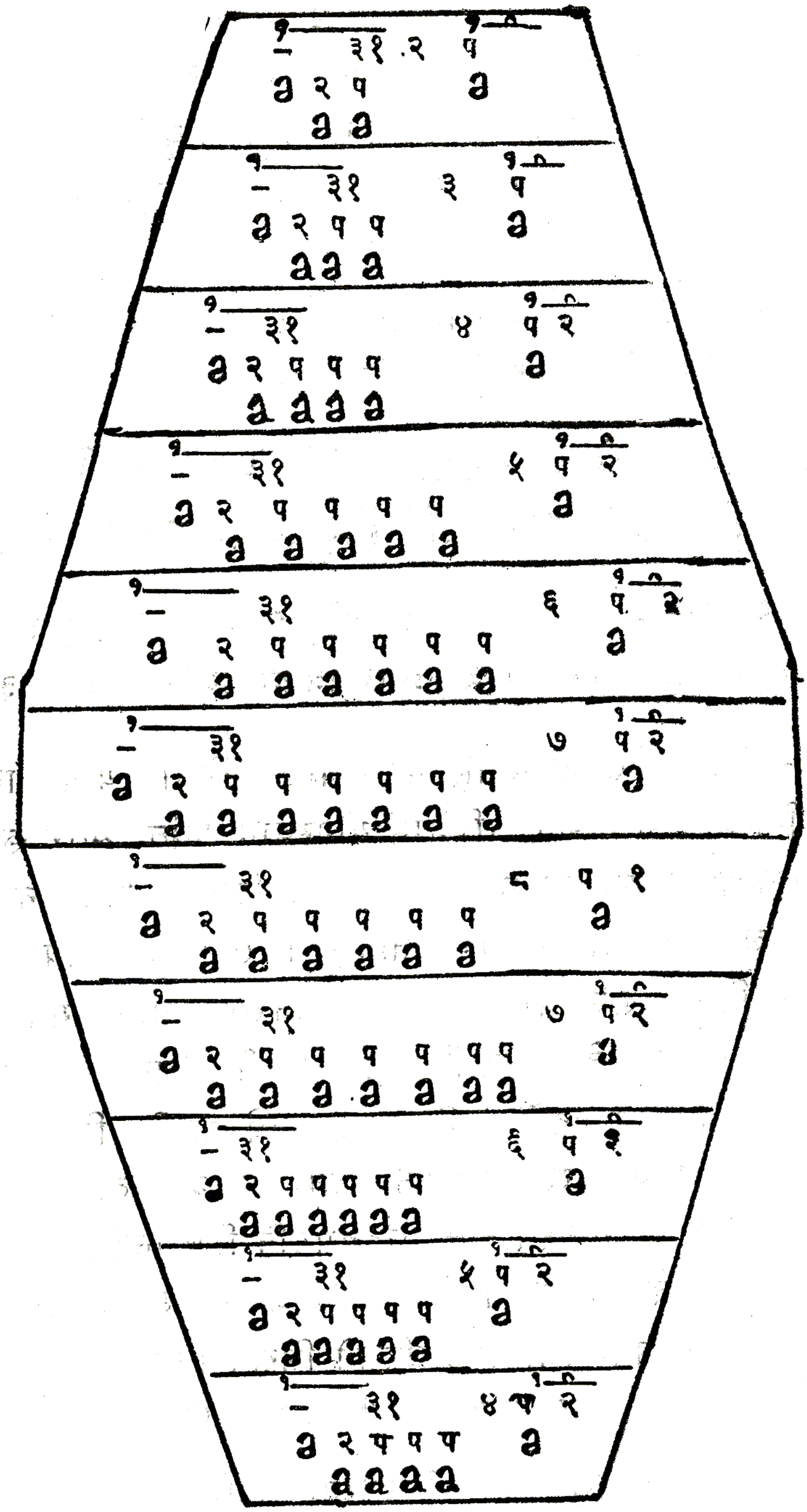

अब इन स्थाननि का प्रमाण कहिए हैं—

पर्याप्त बेंद्री का जघन्य परिणाम योग तैं लगाय संज्ञी पर्याप्त का उत्कृष्ट परिणामयोग पर्यंत योगस्थान जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग कौं एक घाटि पल्य के अर्धच्छेदनि का असंख्यातवां भाग करि गुणिए, सूच्यंगुल के असंख्यातवें

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

भाग का भाग दीजिए जो प्रमाण होइ, तामैं एक मिलाइए इतने प्रमाण हैं । ताकौं पल्य का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां एक भाग बिना बहुभाग प्रमाण तौ दोय समय निरंतर प्रवर्तें असे योगस्थान हैं। बहुरि तिस एक भाग कौं पल्य का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां एक भाग बिना बहुभाग प्रमाण तीन समय निरंतर प्रवर्तें असे योगस्थान हैं । बहुरि तिस एक भाग कौं पल्य का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए तहां एक भाग बिना अवशेष बहुभाग का आधा तौ नीचले च्यारि समय निरंतर प्रवर्तें असे योगस्थान हैं । आधा ऊपरिले च्यारि समय निरंतर प्रवर्तें असे योगस्थान हैं ।

बहुरि तिस एक भाग कौं पल्य का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए । तहां एक भाग बिना बहुभाग का आधा तौ नीचले पांच समय निरंतर प्रवर्तें असे योगस्थान हैं । आधा ऊपरले पांच समय निरंतर प्रवर्तें असे योगस्थान हैं । बहुरि तिस एक भाग कौं पल्य का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए । तहां एक भाग बिना बहुभाग का आधा भाग तौ नीचले छह समय निरंतर प्रवर्तें असे योगस्थान हैं, आधा ऊपरले छह समय निरंतर प्रवर्तनेवाले योगस्थान हैं । बहुरि तिस एक भाग कौं पल्य का असंख्यातवां भाग का भाग दीजिए, तहां एक भाग बिना बहुभाग का आधा तौ नीचले सात समय निरंतर प्रवर्तनेवाले योगस्थान हैं, आधा ऊपरले सात-समय निरंतर प्रवर्तनेवाले योगस्थान हैं । अवशेष एक भाग रह्या, तीहिं प्रमाण आठ समय निरंतर प्रवर्तनेवाले योगस्थान जानना ।

याही तै गाथा विषैं असा कह्या जो आठ समयवालों का थोरा प्रमाण है, अर ऊपर वा नीचैं असंख्यात-असंख्यात गुणा हैं । तहां च्यारि समयवालों पर्यंत नीचैं वा ऊपरि दोऊ दिशा विषैं जानने । तीन वा दोय समयवाले स्थानक ऊपरि ही जानने ।

असे इहां काल की अपेक्षा यव आकार रचना है । जैसैं यव बीचि में मोटा हो है, ऊपरि नीचैं पतला हो है, तैसैं बीचि में आठ समयवाले लिखे अर ऊपरि नीचैं घाटि समयवाले लिखे, असैं यव आकार रचना है ।।२४३।।

आगैं पर्याप्त त्रस जीवनि का परिणाम योगस्थाननि विषैं जीवनि का प्रमाण कहै हैं, ताकी यव नामा अन्न के आकारि रचना कहैं हैं—

मज्झे जीवा बहुगा, उभयत्थ विसेसहीणकमजुत्ता ।
हेट्ठिमगुणहाणिसला दुवरि सलागा बिसेसऽहिया ।।२४४।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

मध्ये जीवा बहुका, उभयत्र विशेषहीनक्रमयुक्ताः ।
अधस्तनगुणहानिशलाया, उपरिशलाका विशेषाधिकाः ॥१४४॥

टीका – जीवनि का प्रमाणरूप यवरचना विषैं बीचि में जीव बहुत हैं, ऊपरि वा नीचैं अनुक्रम तें विशेष करि घाटि-घाटि जीव हैं ।

भावार्थ – जैसें यव नामा अन्न बीचि में मोटा हो है अर ऊपरि नीचैं क्रम तैं घटता-घटता हो है, तैसें त्रस पर्याप्त संबंधी परिणाम योगस्थानकनि विषैं यव आकार में जो बीचि का स्थानक है, तहां जीवनि का प्रमाण बहुत है । बीचि का स्थानक के धारक जीव बहुत हैं । बहुरि तिस बीचि के स्थानक तें ऊपरि के स्थानकनि विषैं वा नीचे के स्थानकनि विषैं अनुक्रम तें जीवनि का प्रमाण घटता-घटता है । तिन स्थानकनि के धारक जीव अनुक्रम तै घटते-घटते पाइए हैं, ऐसें यहु यव आकार रचना है । तहां नीचली गुणहानिशलाका तें ऊपरि की गुणहानिशलाका का प्रमाण किछू अधिक है ।

सोई कहिए हैं—

दव्वतियं हेट्ठुवरिमदलवारा दुगुणमुभयमण्णोण्णं ॥
जीवजवे चोद्दससयबावीसं होदि बत्तीसं ॥२४५॥

चत्तारि तिण्णि कमसो, पण अड अट्ठं तदो य बत्तीसं ।
किंचूणतिगुणहाणिविभजिदे दव्वे दु जवमज्झं ॥२४६॥

द्रव्यत्रयमध उपरिमदलवारा द्विगुणमुभयमन्योन्यं ।
जीवयवे चतुर्दशशतद्वाविंशतिः भवति द्वात्रिंशत् ॥२४५॥

चत्वारि त्रीणि क्रमशः, पंच अष्ट-अष्ट ततश्च द्वात्रिंशत् ।
किंचिदूनत्रिगुणहानिविभाजिते द्रव्ये तु यवमध्यं ॥२४६॥

टीका – यव के आकारि जीवनि की संख्या की रचना विषैं प्रथम अंकनि की सहनानी करि कथन दिखाइए हैं—तहां द्रव्य तौ त्रसपर्याप्त जीवनि का प्रमाण, सो चोदह सौ बाईस (१४२२), अर स्थिति त्रसपर्याप्त जीव संबंधी परिणाम योगस्थानकनि का प्रमाण, सो बत्तीस (३२), बहुरि गुणहानि आयाम जो एक गुणहानि विषैं तिन स्थानकनि का प्रमाण सो च्यारि (४) । बहुरि ऐसी सर्व गुणहानि आठ

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

(८), इनकौं नानागुणहानि कहिए। तहां नीचली नानागुणहानि का प्रमाण तीन (३), अर ऊपरि की गुणहानि का प्रमाण पांच (५) – असैं आठ नानागुणहानि जाननी। बहुरि नानागुणहानि प्रमाण दूवा मांडि परस्पर गुणैं जो प्रमाण होइ, तितनी अन्योन्याभ्यस्तराशि है। तहां नीचली अन्योन्याभ्यस्तराशि का प्रमाण आठ (८), ऊपरि की अन्योन्याभ्यस्तराशि का प्रमाण बत्तीस (३२) असैं सर्व चालीस (४०) हैं।

तहां तिगुणी गुणहानि किछू घाटि का भाग द्रव्य कौं दीएं जीवनि की संख्या यव आकार के मध्य होइ, सो गुणहानि का आयाम का प्रमाण च्यारि (४), ताकौं तिगुणा कीएं बारह भए। किंचिदून कहने करि यामैंस्यों एक का चौसठि भागनि में जे सत्तावन भाग ते घटाइए, इहां समच्छेद विधान कर तैं सात सौ ग्यारह का चौसठिवां भाग भया। याका भाग सर्वद्रव्य चौदह सौ बाईस कौं दीजिए, तब एक सौ अठाईस पाया, सो जीव यव आकार रचना विषैं मध्य प्रमाण जानना, तातैं मध्य विषैं जीव बहुत हैं असैं कह्या। बहुरि तीहिं मध्य तैं ऊपरि वा नीचैं गुणहानि के जे निषेक तिन विषैं अपनी-अपनी गुणहानि विषैं जो विशेष का प्रमाण तितना-तितना घाटि क्रम तैं जानना।

सो विशेष का प्रमाण कितना है ? अपनी-अपनी गुणहानि का पहिला निषेक कौं दूणा गुणहानि का आयाम प्रमाण जो दोगुणहानि, ताका भाग दीएं जो प्रमाण होइ अथवा अंत का निषेक कौं एक अधिक गुणहानि का आयाम का भाग दीएं जो प्रमाण होइ, सो विशेष का प्रमाण जानना। तातैं नीचली वा ऊपरली गुणहानि का द्रव्य वा विशेष आधा-आधा अनुक्रम तैं जानना।

सोई दिखाइए हैं – ऊपर की पांच गुणहानि तिन विषैं पहली गुणहानि का पहिला निषेक का प्रमाण एक सौ अठाईस (१२८), याकौं दोगुणहानि आठ, ताका भाग दीजिए, तब सोला पाए, सो विशेष जानना। सो एक-एक निषेक विषैं सोला-सोला घटावना। अंत का निषेक विषैं एक घाटि गुणहानि आयाम का जो प्रमाण, तितना विशेष घटाइए, तब आदि निषेक एक सौ अठाईस, मध्य एक सौ बारा अर छिनवै अर अंत निषेक अस्सी असा प्रमाण भया १२८, ११२, ९६, ८०।

इन सबनि का जोड दीजिए **'मुहभूमी जोगदले पदगुणिदे पदधणं होदि'** **'मुख'** कहिए अंत अर **'भूमि'** कहिए आदि, सो अंत तौ असी (८०) अर आदि एक सौ अठाईस इनका जोग कहिए जोड दोय सौ आठ **'दले'** कहिए आधा एक सौ

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

च्यारि भए। **पद** कहिए गच्छ आयाम ताकरि गुणिए, सो च्यारि करि गुणिए, तब पद धन च्यारि सौ सोलह भये।

ऐसें ऊपर की प्रथम गुणहानि का सर्वधन च्यारि सौ सोलह जानना। सो यवमध्य के प्रमाण कौं एक अधिक तिगुना गुणहानि आयाम करि गुणिये गुण-हानि आयाम का भाग दीजिए, सोई प्रथम गुणहानि का द्रव्य जानना।

यवमध्य का प्रमाण एक सौ अठाईस ताकौं तिगुणी गुणहानि बारह, एक अधिक भएं तेरा, ताकरि गुणिए गुणहानि आयाम च्यारि का भाग दीएं, च्यारि सौ सोला पाए, सोई प्रथम गुणहानि का द्रव्य है। बहुरि ऊपरि एक-एक गुणहानि विषैं द्रव्य का प्रमाण वा विशेष का प्रमाण आधा-आधा जानना। बहुरि एक घाटि नाना गुणहानि का जो प्रमाण, तितना दूवा मांडि परस्पर गुणैं, जो प्रमाण होइ, ताका भाग प्रथम गुणहानि के द्रव्य कौं दीएं, अंत की गुणहानि विषैं द्रव्य का प्रमाण हो है। तहां ऊपरि की गुणहानि पांच, तामैं एक घटाएं च्यारि, सो च्यारि दूवा मांडि, २।२।२।२। परस्पर गुणन कीएं सोला (१६), याका भाग प्रथम गुणहानि द्रव्य च्यारि सौ सोला कौं दीएं छबीस पाया, सोई अंत गुणहानि का द्रव्य जानना।

बहुरि नीचली गुणहानि तीन, तिन विषैं पहिली गुणहानि विषैं यव मध्य विषैं जो प्रमाण, तामैंस्यों एक विशेष घटाएं प्रथम निषेक होइ, सो यवमध्य एक सौ अठाईस (१२८) यामैं विशेष का प्रमाण सोला, सो घटाएं एक सौ बारा रह्या, सोई आदि निषेक का प्रमाण जानना। बहुरि यामैं एक-एक निषेक में एक-एक विशेष घटावतां अंत का निषेक विषैं एक घाटि गुणहानि का आयाम प्रमाण विशेष घटाएं चौंसठि हो है। सो मुख चौंसठि (६४), भूमि एक सौ बारा (११२) – इनकों जोडें एक सौ छिहंतरि, आधा अठ्यासी पद जो च्यारि ताकरि गुणै तीन सौ बावन हुवा, सोई नीचली प्रथम गुणहानि का सर्व द्रव्य जानना। सो यव मध्य जो एक सौ अठाईस, ताकौं ग्यारह करि गुणिए च्यारि का भाग दीजिए, इतने प्रमाण हो है। सो ऊपरि की प्रथम गुणहानि के द्रव्य तैं इहां यवमध्य कौं दूणा करि च्यारि का भाग दीजिए, इतना ऋण जानना। सो यवमध्य एक सौ अठाईस ताकौं दूणा करि च्यारि का भाग दीएं चौसठि पाया सो ऋण जानना। इतने ऊपरि की प्रथम गुण-हानि के द्रव्य मेंस्यों घटाए नीचली प्रथम गुणहानि का द्रव्य हो है।

बहुरि ऊपरि की गुणहानि का निषेकनि तैं नीचली गुणहानि का निषेकनि विषैं ऊपरिली गुणहानि का चय प्रमाण ऋण जानना। जैसें ऊपरि की गुणहानि

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

का प्रथम निषेक एक सौ अठाईस, तहां चय का प्रमाण सोला घटाए नीचली गुरण-हानि का प्रथम निषेक का प्रमाण हो है, असें सर्वत्र जानना।

बहुरि गुणहानि-गुणहानि प्रति द्रव्य आधा-आधा जानना । तहां एक घाटि नीचली गुणहानि मात्र दूवानि का भाग आदि गुणहानि के द्रव्य कौं दीएं अंत की गुणहानि विषैं द्रव्य हो है । बहुरि ऋण भी जो प्रथम गुणहानि विषैं कह्या, सो गुणहानि-गुणहानि प्रति आधा-आधा हो है ६४।३२।१६।

तहां **'अंतधणं गुणगुणियं आदिविहीणं'** इस सूत्र करि अंत धन चौसठि कौं गुणकार दोय करि गुणै, आदि सोलह घटाएं, सर्व निचली गुणहानिनि विषैं ऋण का प्रमाण होइ है, सो गुणहानि आयाम का प्रमाण करि नीचली अंत की गुणहानि विषैं जो विशेष का प्रमाण, ताकौं गुणें जो प्रमाण होइ, तितना यवमध्य के प्रमाण मेंस्यों घटाए जो प्रमाण होइ, तितना जानना । सो गुणहानि आयाम च्यारि (४), याकरि नीचली अंत की गुणहानि का विशेष च्यारि कौं गुणैं सोलह पाए, सो यव मध्य मेंस्यों घटाए एक सौ बारह रहे, सो सर्व ऋण जानना । चौंसठि, बत्तीस, सोला इनकौं मिलाएं एक सौ बारा हो है ।

बहुरि नीचली वा ऊपरली सर्व गुणहानि का सर्व द्रव्य **'अंतधणं गुणगुणियं'** इत्यादि सूत्र करि जोडि, तामैं तिस ऋण कौं घटाएं शुद्ध द्रव्य चौदह सौ बाईस (१४२२) हो है ।

बहुरि इहां गुणहानि विषैं जितने-जितने निषेकनि विषैं घटै हैं, असा विशेष प्रमाण, बहुरि योगनि का स्थानक तेई निषेक तिन विषैं जीवनि का प्रमाण, बहुरि गुणहानि विषैं सर्व द्रव्य का प्रमाण, बहुरि नीचली गुणहानि विषैं ऊपर की गुणहानि तें जो प्रमाण घाटि होइ सोई ऋण, ताका प्रमाण इन सर्व प्रमाणनि के दिखाने कौं यंत्र लिखिए हैं[1] —

इस यंत्र का असा भावार्थ जानना–जेते त्रस पर्याप्त संबंधी परिणाम योग-स्थान बत्तीस कहे, तिन विषैं ऊपरली गुणहानि का प्रथम निषेक रूप जो योगस्थान, ताके धारक एक सौ अठाईस जीव हैं । याकौं यवमध्य कहिए । बहुरि तिस स्थानक तें पहिला वा पिछला दोय स्थानक तिनके धारक एक सौ बारा एक सौ बारा जीव हैं ।

१ टिप्पणी २६४ पृष्ठ पर देखें ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

१–पृष्ठ २६३ की टिप्पणी—

नाम	विशेष का प्रमाण	निषेकनि विषै जीवनि का प्रमाण	गुणहानि विषैं सर्व द्रव्य का प्रमाण
ऊपरि की पंचम गुणहानि	१	५ ६ ७ ८	२६
ऊपरि की चौथी गुणहानि	२	१० १२ १४ १६	५२
ऊपरि की तीजी गुणहानि	४	२० २४ २८ ३२	१०४
ऊपरि की दूजी गुणहानि	८	४० ४८ ५६ ६४	२०८
ऊपरि की प्रथम गुणहानि	१६	८० ९६ ११२ १२८	४१६
नीचै की प्रथम गुणहानि	१६	उपरि की प्रथम गुणहानि कै निषेकनि तै ऋण १६ ११२ ९६ ८० ६४	उपरि की प्रथम गुणहानि के सर्व द्रव्य तै ऋण ६४ अवशेष ३५२
नीचै की दूजो गुणहानि	८	उपरि की द्वितीय गुणहानि के निषेकनि तै ऋण ८ ५६ ४८ ४० ३२	उपरि की द्वितीय गुणहानि के सर्व द्रव्य तै ऋण ३२ अवशेष १७६
नीचै की तीजी गुणहानि	४	उपरि की तृतीय गुणहानि के निषेकनि तै ऋण ४ २८ २४ २० १६	उपरि की तृतीय गुणहानि के सर्व द्रव्य तै ऋण १६ अवशेष ८८

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

असें ही सर्व योगस्थानकनि विषैं जीवनि का प्रमाण जानना ।

असें जैसें अंकनि की सहनानी करि कथन दिखाया, तैसें ही यथार्थ कथन जानना । विशेष इतना जो द्रव्यादि का प्रमाण जैसा होइ, तैसा जानना । और सर्व विधान अंकसंदृष्टि विषैं कह्या, तैसें ही जानना ॥२४५-२४६॥

सो यथार्थ कथन दिखावने के निमित्त सूत्र कहैं हैं—

पुण्णतसजोगठाणं, छेदाऽसंखस्सऽसंखबहुभागे ।
दलमिगिभागं च दलं, दव्वदुगं उभयदलवारा ॥२४७॥

पूर्णत्रसयोगस्थानं, छेदासंख्यस्यासंख्यबहुभागे ।
दलमेकभागं च दलं, द्रव्यद्विकमुभयदलवाराः ॥२४७॥

टीका – जैसें द्रव्य का प्रमाण चौदा सौ बाईस कह्या, तैसें संख्यात का भाग प्रतरांगुल कौं दीएं जो प्रमाण होइ, ताका भाग जगत्प्रतर कौं दीएं जो प्रमाण होइ, तितने पर्याप्त त्रस जीव हैं । सो जो यहु पर्याप्त त्रस जीवनि का प्रमाण सो द्रव्य जानना । बहुरि जैसें स्थिति का प्रमाण बत्तीस कह्या, तैसें बेंद्री पर्याप्त का जघन्य परिणाम योगस्थान तैं लगाय संज्ञी पर्याप्तक का उत्कृष्ट परिणामयोग पर्यंत जितने योगस्थान होंइ, तितना स्थिति का प्रमाण जानना । सो चौरासी ठिकाने कहे, तहां द्वींद्रिय पर्याप्त का जघन्य परिणाम योग कैं ठिकानें जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग कौं पिचहत्तर बार पल्य का असंख्यातवां भाग करि गुणें प्रमाण हो है । ताका अपवर्तन कीएं जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग मात्र ही भया । बहुरि यामें सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग मात्र मिलैं अनंतर स्थान भया, ताकौं आदि देकरि संज्ञी पर्याप्त का उत्कृष्ट योगस्थान संदृष्टि अपेक्षा जघन्य तैं बत्तीस गुणा यथार्थ अपेक्षा पल्य के अर्धच्छेदनि का असंख्यातवां भाग गुणा है ।

तहां पर्यंत स्थाननि का प्रमाण कहिए हैं—

तहां बेंद्री पर्याप्त का जघन्य परिणाम योगस्थान तैं अनंतर स्थान तौ आदि जानना अर संज्ञी पर्याप्त का उत्कृष्ट परिणाम योगस्थान अंत जानना । सो **'आदी अंते सुद्धे वड्ढिहिदे रूवसंजुदे ठाणे'** इस सूत्र करि अंत मेंस्यों आदि का प्रमाण घटाइ दीजै । बहुरि एक-एक स्थान विषे सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण अविभाग प्रतिच्छेद बंधे हैं, तातैं तिनका भाग दीजिए जो प्रमाण होइ, तामें

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

एक और मिलाए त्रस पर्याप्त संबंधी परिणाम योगस्थानकनि का प्रमाण आवै है, सोई स्थिति का प्रमाण जानना ।

बहुरि इन स्थानकनि के धारक केते-केते जीव पाइए, असा भेद कहने के अर्थि विधान कहिए हैं—

जैसें आठ नानागुणहानि विषैं तीन नीचली कही थीं, पांच ऊपरली कही थीं, तैसें पल्य का अर्धच्छेदनि का असंख्यातवां भाग प्रमाण सर्व नानागुणहानि, ताकौ असंख्यात का भाग दीजिए, तहां एक भाग कौं जुदा राखि अवशेष बहुभागनि का जो प्रमाण, ताका आधा तौ नीचली नानागुणहानि का प्रमाण जानना अर बहुभाग का तौ आधा अर एक भाग जुदा राख्या, सो मिलाए जो प्रमाण होइ, तितना ऊपरली नानागुणहानि का प्रमाण जानना ।

णाणागुणहाणिसला, छेदासंखेज्जभागमेत्ताओ ।
गुणहाणीणद्धाणं, सव्वत्थवि होदि सरिसं तु ।।२४८।।

नानागुणहानिशलाः छेदासंख्येयभागमात्राः ।
गुणहानीनामद्धानां, सर्वत्रापि भवति सदृशं तु ।।२४८।।

टीका – सो नीचली वा ऊपरली गुणहानि कौं मिलाएं पल्य का अर्धच्छेदनि का जो प्रमाण, ताके असंख्यातवें भाग नानागुणहानि भई, ताका भाग पूर्वोक्त स्थिति के प्रमाण कौं दीएं जो प्रमाण आवै, तितना एक गुणहानि का आयाम का प्रमाण जानना । जैसें स्थिति बत्तीस (३२) ताकौं सर्व नानागुणहानि आठ (८) का भाग दीएं च्यारि पाया (४), सोई एक गुणहानि का आयाम का प्रमाण है । तैसे इहां भी जानना । सो गुणहानि का आयाम का प्रमाण ऊपरिली वा नीचली गुणहानि विषैं समान है । एक-एक गुणहानि विषैं इतना – इतना स्थान पाइए है । बहुरि इस गुणहानि आयाम का दूणा प्रमाण सोई दो गुणहानि का प्रमाण जानना ।।२४८।।

अण्णोण्णगुणिदरासी, पल्लासंखेज्जभागमेत्तं तु ।
हेट्ठिमरासीदो पुण, उवरिल्लमसंखसंगुणिदं ।।२४९।।

अन्योन्यगुणितराशिः, पल्यासंख्येयभागमात्रं तु ।
अधस्तनराशितः पुनः, उपरिममसंख्यातसंगुणितं ।।२४९।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – नानागुणहानि प्रमाण दूवा मांडि परस्पर गुणिए सो अन्योन्याभ्यस्त राशि है । सो जैसें नीचलो आठ अर ऊपरली बत्तीस अन्योन्याभ्यस्तराशि कह्या, तैसें ही सामान्यपनैं पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण अन्योन्याभ्यस्तराशि है, तथापि नीचली अन्योन्याभ्यस्तराशि तैं ऊपरली अन्योन्याभ्यस्तराशि असंख्यात गुणीं है ।

अब तहां जघन्य परिणामयोग तैं लगाय उत्कृष्ट परिणामयोग पर्यंत योग-स्थानक विषैं जीवनि का विभाग अंकसंदृष्टिवत् अैसैं जानना —

किंचित् उन तिगुणी गुणहानि आयाम का भाग सर्वद्रव्य कौं दीएं यवमध्य का प्रमाण होइ । याकौं दोगुणहानि का भाग दीएं चय का प्रमाण होइ । चय कहौ वा विशेष कहौ दोऊ एकार्थ हैं । इस चय कौं दोगुणहानि करि गुणैं यवमध्य हो है । बहुरि तींहिं ऊपर की प्रथम गुणहानि विषैं प्रथम निषेक यवमध्य प्रमाण, ऊपरि द्वितीयादि निषेक एक-एक चय घाटि जानना । सो एक घाटि गुणहानि का आयाम प्रमाण चय यवमध्य मेंस्यों घटैं प्रथम गुणहानि का अंत निषेक विषैं प्रमाण हो है । यामै एक विशेष घटाइये तब यवमध्य तैं आधा प्रमाण होइ, सोई द्वितीय गुणहानि का प्रथम निषेक जानना । यातैं ऊपरि एक विशेष घटाएं द्वितीयादिक निषेक होंइ, सो एक घाटि गुणहानि का आयाम प्रमाण विशेष घटैं अंत निषेक होइ । इहां प्रथम गुणहानि विषैं विशेष का प्रमाण था, तींहस्यों आधा द्वितीय गुणहानि विषैं विशेष का प्रमाण जानना । बहुरि द्वितीय गुणहानि का अंत निषेक मेंस्यों एक घटाएं द्वितीय गुणहानि का प्रथम निषेक तैं आधा प्रमाण होइ, सोई तृतीय गुणहानि का प्रथम निषेक जानना । यातैं द्वितीय गुणहानि का विशेष तैं आधा प्रमाण लिएं जो विशेष, सो एक-एक विशेष घटाएं द्वितीयादिक निषेक होइ – अैसैं अंत की गुण-हानि पर्यंत जानना । गुणहानि-गुणहानि प्रति जीव द्रव्य आधे-आधे जानने । बहुरि नीचली गुणहानि विषैं यवमध्य के नीचे प्रथम गुणहानि का प्रथम निषेक तैं लगाय अंत की गुणहानि का अंत निषेक पर्यंत गुणहानि-गुणहानि प्रति समस्त निषेकनि विषैं जो-जो ऊपरली गुणहानि का निषेकनि विषैं प्रमाण कह्या, तिन मेंस्यों अपनी-अपनी गुणहानि विषैं जितना-जितना विशेष का प्रमाण कह्या, तितना-तितना निषेक-निषेक विषैं ऋण कीएं निषेकनि का प्रमाण हो है । सोई कहिए हैं—

ऊपरि की प्रथम गुणहानि का प्रथम निषेक यवमध्य प्रमाण है, तामैस्यों प्रथम गुणहानि विषैं जितना विशेष का प्रमाण कह्या है, तितना घटाएं नीचली प्रथम, गुण-

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

हानि का प्रथम निषेक का प्रमाण हो है । बहुरि ऊपरि की प्रथम गुणहानि का द्वितीय निषेक बिषैं जो प्रमाण कह्या है तामैंस्यों प्रथम गुणहानि का विशेष प्रमाण ऋण घटाएं नीचली प्रथम गुणहानि के द्वितीय निषेक का प्रमाण हो है । असे प्रथम गुणहानि का अंत निषेक पर्यंत जानना । बहुरि ऊपरि की द्वितीय गुणहानि विषैं जो प्रथम निषेक का प्रमाण था, तामैंस्यों द्वितीय गुणहानि विषैं जो विशेष का प्रमाण कह्या है, तितना घटाएं नीचली द्वितीय गुणहानि विषैं प्रथम निषेक का प्रमाण जानना । ताका द्वितीय निषेक मेंस्यों तितना ही घटाएं याका द्वितीय निषेक का प्रमाण जानना असें अंत निषेक पर्यंत जानना । असें ही तृतीयादिक गुणहानि विषैं भी ऋण का प्रमाण अपना-अपना विशेष के समान जानि निषेक का प्रमाण जानना । नीचली गुणहानि की रचना विषैं ऋण कौं मिलाएं नीचली गुणहानि का प्रमाण ऊपरि की गुणहानि रचना के समान सर्व रचना हो है । असै गुणहानि जिस-जिस निषेक विषैं जितना जितना प्रमाण होइ तिस-तिस योगस्थान विषैं तितना-तितना जीवनि का प्रमाण जानना ।

बहुरि गुणहानि विषैं सर्वद्रव्य जोडने के अर्थि **'मुहभूमी जोगदले पदगुणिदे पदधणं होदी'** इस सूत्रकरि मुख तौ अंत निषेक अर भूमि आदि निषेक इनकों मिलाय करि आधा कीजिए, पीछें गुणहानि का आयाम का प्रमाण करि गुणिए, जो-जो प्रमाण होइ, तितना-तितना अपनी-अपनी गुणहानि विषैं सर्वद्रव्य का प्रमाण जानना । सो प्रथम गुणहानि के सर्वद्रव्य तैं द्वितीय गुणहानि का द्रव्य आधा है ।

असैं गुणहानि-गुणहानि प्रति द्रव्य आधा-आधा जानना सर्व गुणहानिनि के द्रव्य जोडने के अर्थि **'अंतधणं गुणगुणियं'** इत्यादि सूत्रकरि प्रथम गुणहानि का द्रव्य अंतधन ताकौं दोय गुणकार करि गुणि, तामैं अंत गुणहानि का द्रव्य आदि धन सो घटाएं एक घाटि उत्तर एक, ताका भाग दीजिए ऊपरि वा नीचैं सर्व गुणहानि का द्रव्य प्रमाण हो है ।

बहुरि नीचली गुणहानि विषैं जो ऋण कह्या, सो अपना-अपना विशेष प्रमाण जो ऋण, ताकौं गुणहानि का आयाम करि गुणैं अपनी-अपनी गुणहानि विषैं ऋण का प्रमाण हो है । सर्व ऋण जोडने कौं **'अंतधणं गुणगुणियं'** इत्यादि सूत्र करि प्रथम गुणहानि का ऋण को गुणकार दोय करि गुणि, तामैं अंत गुणहानि का ऋण कौं घटाइ, एक घाटि उत्तर एक का भाग दीएं जो प्रमाण होइ, तिस ऋण के प्रमाण

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

कौं ऊपरि के गुणहानि का द्रव्य में घटाएं अथवा नीचली गुणहानि का द्रव्य में मिलाएं नीचली-ऊपरली गुणहानि विषैं द्रव्य समान हो है । बहुरि ऊपरली वा नीचली सर्व गुणहानि संबंधी सर्व द्रव्य का जोड दीए पर्याप्त त्रस जीवनि का प्रमाण हो है।

ऐसैं पर्याप्त त्रस संबंधी परिणाम योगस्थानकनि विषैं पर्याप्त त्रस जीवनि का प्रमाण जानना ।

अंकनि की सहनानी पूर्वै कही है, तार्कार कथन कौं नीके समझ लेना । ऊपरि की गुणहानि का प्रथम निषेक रूप जो योगस्थान ताके धारक जीव बहुत हैं । ताके नीचैं वा ऊपरि जे योगस्थान हैं, तिनके धारक पूर्वोक्त अनुक्रम लीए थोरे जीव हैं । याही तैं यव आकार रचना कही है ।। २४६ ।।

आगैं इन योगस्थानकनि के धारक जोव कितना-कितना प्रदेशबंध करे हैं इस प्रश्न कौं करते समयप्रबद्ध की वृद्धि का प्रमाण कहै हैं—

इगिठाणफड्ढयाओ, समयपबद्धं च जोगवड्ढी य ।
समयपबद्धचयट्ठं, एदे हु पमाणफलइच्छा ॥२५०॥

एकस्थानस्पर्धकानि, समयप्रबद्धं च योगवृद्धिश्च ।
समयप्रबद्धचयार्थं, मेते हि प्रमाणफलेच्छाः ॥२५०॥

टीका – तींहि बेंद्री पर्याप्त का जघन्य परिणामयोगस्थान संबंधी स्पर्धक अर समयप्रबद्ध अर योगनि की वृद्धि – ए तीन समयप्रबद्ध का एक-एक योगस्थान विषैं बंधने का प्रमाण ल्यावने के अर्थि प्रमाण, फल, इच्छा – इन तीन राशिरूप हो है । तहां जघन्य योगस्थान विषैं श्रेणी का असंख्यातवां भाग प्रमाण जघन्य स्पर्धक पाइए है, सो तौ प्रमाणराशि अर तिस जघन्य योगस्थान करि जघन्य समयप्रबद्ध प्रमाण प्रदेशनि का बंध हो है, सो फलराशि । बहुरि एक-एक योगस्थान विषैं सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण जघन्य स्पर्धक बधती पाइए है; तातैं सो इच्छाराशि । तहां फल करि इच्छा कौं गुणैं, प्रमाण का भाग दीएं जो लब्धराशि का प्रमाण आया, तितना-तितना प्रदेशनि की अधिकता ने लीयां एक-एक ऊपरि के योगस्थाननि करि समयप्रबद्ध बंधैं हैं । जघन्य योगस्थान करि जघन्य समयप्रबद्ध बंधे हैं, ताके अनंतर योगस्थान करि इतना प्रमाण करि बधता समयप्रबद्ध बंधे हैं ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

ऐसें निरंतर बंधि करि जहां जघन्य योगस्थान दूणां है, तहां जघन्य समयप्रबद्ध दूणां बंधै हैं, जहां चौगुणा है, तहां चौगुणा बंधै हैं। ऐसें संज्ञी पर्याप्त का उत्कृष्ट योगस्थान विषैं जघन्य योगस्थान पल्य का अर्धच्छेदनि कैं असंख्यातवां भाग गुणा हो है। तहां जघन्य समयप्रबद्ध कौं पल्य का अर्धच्छेदनि का असंख्यातवां भाग करि गुणिए ऐसा समयप्रबद्ध बंधै है ॥२५०॥

आगैं इस कथन का अर्थ पांच गाथानि करि कहै हैं—

बीइंदियपज्जत्तजहण्णट्ठाणादु सण्णिपुण्णस्स ।
उक्कस्सट्ठाणोत्ति य, जोगट्ठाणा कमे उड्ढा ॥२५१॥

द्वींद्रियपर्याप्तजघन्यस्थानात् संज्ञिपूर्णस्य ।
उत्कृष्टस्थानामिति, च योगस्थानानि क्रमेण वृद्धानि ॥२५१॥

टीका – बेंद्री पर्याप्त जीव का जघन्य परिणामयोगस्थान तैं लगाय संज्ञी-पर्याप्त जीव का उत्कृष्ट परिणामयोगस्थान पर्यंत परिणामयोगस्थान अनुक्रम तैं एक-एक स्थान विषैं समान वृद्धि प्रमाण करि बधती जानने ॥२५१॥

सेढियसंखेज्जदिमा, तस्स जहण्णस्स फड्ढया होंति ।
अंगुलअसंखभागा, ठाणं पडिफड्ढया उड्ढा ॥२५२॥

श्रेण्यसंख्येयिमानि, तस्य जघन्यस्य स्पर्धकानि भवंति ।
अंगुलासंख्यभागानि, स्थानं प्रति स्पर्धकानि वृद्धानि ॥२५२॥

टीका – तिनविषैं जो बेंद्री पर्याप्तक का जघन्य परिणामयोगस्थान है, सो जगच्छ्रेणी का असंख्यातवां भाग मात्र स्पर्धकनि का समूहरूप है। बहुरि याके अनंतर स्थान तैं लगाय एक-एक स्थान प्रति सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण जघन्य स्पर्धक बधती जानने। जघन्य स्पर्धक के जेते अविभाग प्रतिच्छेद हैं, तिनकौं सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग करि गुणें जो प्रमाण होइ, तितने-तितने अविभाग प्रतिच्छेद एक-एक योगस्थान विषैं बधती जानने ॥२५२॥

धुववड्ढीवड्ढंतो, दुगुणं दुगुणं कमेण जायंते ।
चरिमे पल्लच्छेदाऽसंखेज्जदिमो गुणो होदि ॥२५३॥

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ध्रुववृद्धिवर्धमानानि, द्विगुणं द्विगुणं क्रमेण जायंते ।
चरमे पल्यच्छेदा, संख्येयिमो गुणो भवति ।।२५३।।

टीका – ऐसैं ध्रुव कहिए एकरूप स्थानक-स्थानक प्रति वृद्धि, ताकरि बधता जघन्य स्थान दूणा है । बहुरि तैसैं ही बधता-बधता तिस तैं भी दूणा हो है । ऐसैं अनुक्रम तैं दूणा-दूणा होतैं अंत का संज्ञी पर्याप्त जीव का उत्कृष्ट परिणाम योग-स्थान विषैं पल्य का अर्धच्छेदनि का असंख्यातवां भाग प्रमाण गुणकार हो है । जघन्य योगस्थान के अविभाग प्रतिच्छेदनि के प्रमाण कौं पल्य का अर्धच्छेदनि का असंख्यातवां भाग करि गुणें जो प्रमाण होइ, तितने सर्वोत्कृष्ट योगस्थानक के अविभाग प्रतिच्छेद जानने ।।२५३।।

ते भेद कितने हैं ? सो कहिए हैं —

आदी अंते सुद्धे, वड्ढिहिदे रूवसंजुदे ठाणा ।
सेढिअसंखेज्जदिमा, जोगट्ठाणा णिरंतरगा ।।२५४।।

आदौ अंते शुद्धे, वृद्धिहते रूपसंयुते स्थानानि ।
श्रेण्यसंख्येयिमानि, योगस्थानानि निरंतरकानि ।।२५४।।

टीका – आदि तो जघन्य स्थान अर अंत उत्कृष्ट स्थान इनकौं शोधिए, अंत का उत्कृष्ट स्थानक के जेते अविभाग प्रतिच्छेद हैं, तिन मेंस्यों जघन्य स्थानक के अविभाग प्रतिच्छेद घटाइए, जो प्रमाण आवै, ताकौं वृद्धि का भाग दीजिये, सो एक-एक स्थानक विषैं सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण जघन्य स्पर्धकनि के जेते अविभाग प्रतिच्छेद होंहि तितने बंधै हैं; तातैं इनका भाग दीजिए, जो प्रमाण आवै, तितना वृद्धि सहित स्थानक जानना । इनविषैं एक जघन्य योगस्थान मिलाइए जो प्रमाण होइ, तितने सर्व निरंतर योगस्थान जानने । ते ए स्थान जगच्छ्रेणी के असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं ।।२५४।।

अंतरगा तदसंखेज्जदिमा सेढी असंखभागा हु ।
सांतरणिरंतराणिवि, सव्वाणिवि जोगठाणाणि ।।२५५।।

अंतरगाणि तदसंख्येयिमानि श्रेण्यसंख्येयभागानि हि ।
सांतरनिरंतराण्यपि, सर्वाण्यपि योगस्थानानि ।।२५५।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – बहुरि अंतरगत योगस्थान ते निरंतर योगस्थाननि के असंख्यातवें भागि प्रमाण हैं। ते भी जगच्छ्रेणी के असंख्यातवें भाग ही हैं। बहुरि सांतर, निरंतर, मिश्ररूप योगस्थान, ते अंतरगत योगस्थाननि के असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं, ते पणि जगच्छ्रेणी के असंख्यातवें भाग हैं। बहुरि इन तीनों योगस्थानकनि कौं मिलाए जो सर्व योगस्थान हैं, ते भी जगच्छ्रेणी के असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं, जातैं असंख्यात के भेद बहुत हैं। सो यथायोग्य असंख्यात का भाग जानना ॥२५५॥

इन योगस्थानकनि विषैं आदि अंतस्थान कहैं हैं —

सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स पढमे जहण्णओ जोगो ।
पज्जत्तसण्णिपंचिंदियस्स उक्कस्सओ होदि ॥२५६॥

सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तकस्य प्रथमे जघन्यको योगः ।
पर्याप्तसंज्ञिपंचेंद्रियस्योत्कृष्टको भवति ॥२५६॥

टीका – इन सर्व योगस्थाननि विषैं सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक कैं अंत का क्षुद्रभव का पहिला समय विषैं जो उपपाद जघन्य योगस्थान हो है, सो आदि स्थान जानना। बहुरि सैनी पंचेंद्री पर्याप्त जीव कैं जो उत्कृष्ट परिणाम योगस्थान है, सो अंतस्थान जानना ॥२५६॥

पूर्वैं कहे च्यारि प्रकार के बंध, तिनके कारण कहैं हैं —

जोगा पयडिपदेसा, ठिदिअणुभागा कसायदो होंति ।
अपरिणदुच्छिण्णेसु य, बंधट्ठिदिकारणं णत्थि ॥२५७॥

योगात्प्रकृतिप्रदेशौ, स्थित्यनुभागौ कषायतो भवतः ।
अपरिणतोच्छिन्नेषु च बंधः स्थितिकारणं नास्ति ॥२५७॥

टीका – प्रकृतिबंध अर प्रदेशबंध – ए दोऊ तौ योगनि के निमित्त तैं हो हैं। जैसा शुभ वा अशुभ योग होइ, तैसी प्रकृति बंधै वा जैसा योगस्थान होइ, तैसा ही समयप्रबद्ध बंधै; तातैं इनकौं निमित्त योग है। बहुरि स्थितिबंध अर अनुभाग बंध कषायनि के निमित्त तैं हो हैं, जैसी कषाय हो है, तैसी ही यथायोग्य स्थिति बंधै अर जैसा कषाय होइ, तैसा यथायोग्य अनुभाग बंधै; तातैं इनको निमित्त कषाय है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जघन्य एक समय, उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त काल प्रमाण जाके कषायस्थान उदयरूप नाही अैसा उपशांतकषाय, बहुरि कषाय रहित क्षीणकषाय, सयोगी जिन – इनकैं तत्काल बंध है, ताके स्थितिबंध का कारण नाही। चकार तैं अयोगी केवली विषैं च्यार्‍यों बंध का कारण योग अर कषाय नाही है ।।२५७।।

आगैं योगस्थान अर प्रकृति संग्रह अर स्थितिभेद अर स्थितिबंधाध्यवसाय-स्थान अर अनुभागबंधाध्यवसायस्थान अर कर्मन के प्रदेश – इनका अल्प-बहुत्व तीन गाथानि करि कहै हैं —

सेढिअसंखेज्जदिमा, जोगट्ठाणाणि होंति सव्वाणि ।
तेहिं असंखेज्जगुणो, पयडीणं संगहो सव्वो ।।२५८।।

श्रेण्यसंख्येयिमानि, योगस्थानानि भवंति सर्वाणि ।
तैरसंख्येयगुणः, प्रकृतीनां संग्रहः सर्वः ।।२५८।।

टीका – निरंतर वा सांतर वा सांतर-निरंतर भेद कौं लीएं सर्व योगस्थान जगच्छ्रेणी के असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं। बहुरि तिनतैं असंख्यात लोक गुणा सर्व प्रकृति संग्रह है। सर्व योगस्थान के प्रमाण कौं लोक तैं असंख्यात गुणा प्रमाण करि गुणैं सर्व उत्तरोत्तर कर्म प्रकृतिनि का प्रमाण हो है। सोई कहिए हैं —

ज्ञानावरणीय कर्म की उत्तर प्रकृति पांच, तहां श्रुतज्ञानावरण विषैं पर्याय ज्ञान तौ निरावरण है; तातैं असंख्यात लोकबार षट्स्थान वृद्धिकरि बधतैं अैसैं जे पर्यायसमास ज्ञान के भेद, तिनके आवरण की अपेक्षा असंख्यात लोक कौं असंख्यात लोक करि गुणिए इतने श्रुतज्ञानावरण के भेद हैं। बहुरि श्रुतज्ञान है, सो मतिपूर्वक है; तातैं तितने ही मतिज्ञानावरण के भेद हैं।

बहुरि अवधिज्ञानावरण विषैं घनांगुल का असंख्यात भाग जामैं घटाइए, अैसा जो लौक, ताकौं सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग करि गुणिएं जो प्रमाण होइ, तामैं एक और मिलाइए, एते देशावधि के भेद हैं; तातैं देशावधि आवरण के भी इतने ही भेद हैं। बहुरि अग्निकाय के जीवनि के प्रमाण कौं अग्निकाय का शरीर की अवगाहना के भेदनि का प्रमाण करि गुणैं जो प्रमाण होइ, तितने परमावधि के भेद हैं; तातैं परमावधि आवरण के भी इतने ही भेद हैं। बहुरि सर्वावधि एक ही प्रकार है; तातैं सर्वावधि आवरण का भी एक ही भेद है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि बीस कोडाकोडी सागर का समय प्रमाण कल्पकाल कौं असंख्यात गुणा कीजिए, इतने मनःपर्ययज्ञान के भेद हैं; तातैं मनःपर्ययज्ञानावरण के भी इतने ही भेद हैं।

बहुरि केवलज्ञान अभेद है; तातै केवलज्ञानावरण का एक भेद है।

असैं सर्व मिलि करि अवधि, मनःपर्यय, केवलज्ञानावरण करि अधिक श्रुतज्ञानावरण युक्त मतिज्ञानावरण प्रमाण ज्ञानावरण को उत्तरोत्तर प्रकृतिनि के भेद हो हैं।

बहुरि सर्व प्रकृति नामकर्म के निमित्त तैं हैं; तातै नामकर्म की प्रकृतिनि विषैं आनुपूर्वी प्रकृति के उत्तरोत्तर भेद कहिए हैं। आनुपूर्वी क्षेत्रविपाकी है; तातैं क्षेत्र की अपेक्षा याके भेद जानने। तहां नारकानुपूर्वी नरकक्षेत्रविपाकी है, सो नरक क्षेत्र एक राजू प्रतर प्रमाण है। बहुरि तहां उष्ट्रादि मुख के आकार जे योनिस्थान, तिन बिना अन्यत्र नाहीं उपजै है; तातैं तीन अंगुलनि के भेदनि विषैं प्रमाण रूप सूच्यंगुल का असंख्यातवां भाग प्रमाण आयाम करि तिस क्षेत्र कौं गुणिए इतना है।

बहुरि पर्याप्त पंचेंद्री तिर्यंच वा मनुष्य जब नरक कौं गमन करै, तब नारकानुपूर्वी का उदय होइ तीहि करि पूर्वै तिर्यंच, मनुष्य पर्याय विषैं आकार था, ताका नाश न होइ; तातैं तहां पर्याप्त पंचेंद्री तिर्यंच वा मनुष्य की जघन्य अवगाहना तौ घनांगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण है, तिस करि पूर्वोक्त क्षेत्र कौं गुणे जो क्षेत्र का प्रमाण होइ, सो तौ नारकानुपूर्वी का पहिला भेद है। बहुरि तिनही की उत्कृष्ट अवगाहना संख्यात घनांगुल प्रमाण है, तिस करि पूर्वोक्त क्षेत्र कौं गुणें जो प्रमाण होइ, सो नारकानुपूर्वी का अंत का भेद है। '**आदी अंते सुद्धे वड्ढिहिदे रूवसंजुदे ठाणा**' इस सूत्र करि अंत का भेद विषैं जितना क्षेत्र के प्रदेशनि का प्रमाण होइ, तामैं पहिला भेद के क्षेत्र का प्रदेशनि का प्रमाण घटाए अवशेष रहै, ताकौं एक-एक भेद विषैं एक-एक प्रदेश बधती है; तातैं एक का भाग दीएं जेते के तेते रहैं, तामैं एक मिलाए जो प्रमाण होइ, तितनी नारकानुपूर्वी के उत्तरोत्तर भेद जानने।

बहुरि असैं ही तिर्यंचानुपूर्वी तिर्यंच क्षेत्रविपाकी है, सो तिर्यंच का क्षेत्र सर्व लोक है।

बहुरि भोगभूमि बिना नारकी अर त्रस-स्थावर तिर्यंच अर कर्मभूमिया मनुष्य अर सहस्रार पर्यंत देव – ए तिर्यंचगति विषैं उपजैं हैं, सो आनुपूर्वी के उदय तैं पूर्व

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

शरीर के आकार कौं न छांड़ै है; तातैं जघन्य अवगाहना सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक की घनांगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण ताकरि पूर्वोक्त क्षेत्र कौं गुणैं तिर्यंचानुपूर्वी का प्रथम भेद होइ है । बहुरि उत्कृष्ट अवगाहना संख्यात घनांगुल प्रमाण, ताकरि गुणैं अंत का भेद होइ, सो **'आदी अंते सुद्धे'** इत्यादि सूत्र करि अंत मेंस्यों आदि कौं घटाएं एक का भाग दीएं एक मिलाएं जो प्रमाण होइ, तितने भेद तिर्यंचानुपूर्वी के जानने ।

बहुरि मनुष्यगत्यानुपूर्वी मनुष्यक्षेत्रविपाकी है, सो मनुष्य क्षेत्र तिन मनुष्यनि कैं पर्याप्त-अपर्याप्त पंचेंद्रियपना है; तातैं तिनकी उत्पत्तियोग पैंतालीस लाख योजन प्रमाण गोल विष्कंभ करि गुणित त्रसनाली एक राजू ताका प्रतर प्रमाण है । इहां मानुषोत्तर परैं चार्‌यों कोण विषैं भी मनुष्य न उपजैं; तातैं चौकोर क्षेत्र न कह्या । सो आदि की छह पृथ्वी का नारकी वा त्रस स्थावर कर्मभूमिया तिर्यंच वा मनुष्य – ए मनुष्य विषैं उपजैं हैं, सो आनुपूर्वी के उदय करि पूर्व आकार कौं न छांडैं; तातैं जघन्य अवगाहना घनांगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण तीहिं करि गुणैं पहिला भेद अर उत्कृष्ट अवगाहना संख्यात घनांगुल प्रमाण, ताकरि गुणें अंत का भेद सो **'आदी अंते सुद्धे'** इत्यादिक सूत्र करि अंत मेंस्यों आदि कौं घटाएं एक का भाग दीएं, एक मिलाएं जो प्रमाण होइ, तितने भेद मनुष्यानुपूर्वी के जानने ।

बहुरि देवानुपूर्वी देवक्षेत्रविपाकी हैं । तिन देवनि का क्षेत्र तिनकैं त्रसपना तैं विवक्षारूप ज्योतिषी लोक का अंत पर्यंत नव सौ योजन करि त्रसनाली के प्रतर क्षेत्र कौं गुणें जो प्रमाण होइ, तितना जानना अौर देवनि का उत्पत्तिक्षेत्र स्तोक – थोरा है; तातैं विवक्षा न लीनी, ज्योतिषीनि की ही मुख्यता करि कथन कीया है । तहां पर्याप्त पंचेंद्री तिर्यंच वा मनुष्यतें देव विषैं उपजैं हैं । तहां देवगति कौं गमनकाल विषैं देवगति, देवायु का उदय सहित देवानुपूर्वी का उदय करि पूर्व आकार का नाश न होइ; तातैं तिनकी जघन्य अवगाहना संख्यात घनांगुल प्रमाण है । ताकरि तिस क्षेत्र की गुणि प्रथम भेद हो है । उत्कृष्ट अवगाहना संख्यात घनांगुल प्रमाण है, ताकरि गुणैं अंत भेद हो है । सो **'आदो अंते सुद्धे'** इत्यादिक सूत्र करि अंत मेंस्यों आदि कौं घटाएं एक का भाग दीएं, एक मिलाएं जो प्रमाण होइ, तितने भेद देवगत्यानुपूर्वी के जानने ।

ए सर्व आनुपूर्वी के उत्तरोत्तर भेद पूर्वोक्त ज्ञानावरण के उत्तरोत्तर भेदनि विषैं मिलाइए तब सर्व प्रकृति संग्रह होइ । ज्ञानावरण अर आनुपूर्वी इनकी तौ

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

उत्तरोत्तर प्रकृति कहीं, शेष प्रकृतिनि का उत्तरोत्तर भेदनि का उपदेश इहां नाहीं, अैसा कथन टीकाकार रचना के अनुसार कीया है । बहुश्रुतनि कौं शुद्ध करि लेना ।

अैसें कर्मनि की उत्तरोत्तर-प्रकृतिनि का प्रमाण कह्या ।।२५८।।

तेहिं असंखेज्जगुणा, ठिदिअवसेसा हवंति पयडीणं ।
ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणा तत्तो असंखगुणा ।।२५९।।

तैरसंख्येयगुणाः, स्थित्यवशेषा भवंति प्रकृतीनां ।
स्थितिबंधाध्यवसायस्थानानि ततोऽसंख्यगुणानि ।।२५९।।

टीका – तिन प्रकृति-संग्रहनि तैं प्रकृतिनि के स्थिति के भेद असंख्यात गुणे हैं । काहेतें ? एक-एक प्रकृति के स्थितिभेद जघन्य स्थिति कौं उत्कृष्ट स्थिति में घटाइ एक समय का भाग देइ, तामैं एक मिलाएं, जघन्य स्थिति तैं लगाय एक-एक समय बधता उत्कृष्ट स्थिति पर्यंत संख्यात पल्य प्रमाण पाइए है । सो एक प्रकृति के स्थितिभेद संख्यात पल्य प्रमाण होइ, तौ पूर्वोक्त सर्व उत्तरोत्तर प्रकृतिनि के जे भेद तिनके स्थिति-भेद तैं कितने हो हैं ? अैसें त्रैराशिक करि प्रकृति संग्रह के प्रमाण तैं संख्यात पल्य गुणे स्थिति के भेद हो हैं । बहुरि इन स्थिति के भेदनि तैं स्थितिबंधाध्यवसायस्थान असंख्यात गुणे हैं । जिन परिणामनि तैं स्थितिबंध होइ, तिनके स्थाननि कौं स्थितिबंधाध्यवसायस्थान कहिए हैं ।

सो इनका कथन अंकसंदृष्टि करि दिखाइए हैं—

एक प्रकृति की स्थितिबंध कौं कारण कषाय परिणाम इकतीस सौ (३१००) सो तौ द्रव्य जानना । अर तिस एक प्रकृति के स्थितिभेद चालीस (४०) सो स्थिति स्थान जानना । तहां नानागुणहानि पांच (५), नानागुणहानि प्रमाण दूवा मांडि परस्पर गुणैं अन्योन्याभ्यस्तराशि बत्तीस (३२), एक गुणहानि विषैं स्थिति का प्रमाण सोई गुणहानि आयाम, सो नानागुणहानि शलाका का भाग सर्व स्थिति कौं दीएं जो प्रमाण होइ, सो गुणहानि आयाम का प्रमाण जानना । सो नाना गुणहानि पांच (५), ताका भाग स्थिति चालीस (४०), ताकौं दीएं आठ पाए, सो आठ एक गुणहानि का आयाम जानना । याकौ दूणा कीएं दोगुणहानि का प्रमाण हो है ।

तिन स्थिति के भेदनि विषैं सर्व तैं जघन्य स्थितिबंध को कारण अैसें जो कषायाध्यवसाय ते सर्व तैं थोरे हैं, तिनका प्रमाण नव (९) । 'पदहतमुखमादिधनं'

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

इस सूत्र करि एक गुणहानि का जो आयाम, सोई हूवा पद कहिए गच्छ आठ (८), ताकरि **हतं** कहिए गुण्या हूवा, **मुखं** कहिए आदि स्थान नव (९), सो **आदि-धनं** कहिए आदि धन हो है। सो आदि धन बहत्तरि (७२) भया।

बहुरि एक अधिक गुणहानि का भाग आदि स्थानक कौं दीएं जो प्रमाण होइ सो चय जानना। सो इहां गुणहानि का प्रमाण आठ, एक अधिक कीएं नव, ताका भाग आदि स्थानक नव (९), ताकौं दीएं एक पाया, सोई चय जानना। एक-एक स्थानक विषैं एक-एक बधता कषायाध्यवसाय स्थान प्रथम गुणहानि पर्यंत जानना। सो **'व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं'** एक घाटि गच्छ का आधा कौं चय करि गुणिए पीछैं गच्छ करि गुणै जो प्रमाण होइ, सो सर्व चयधन जानना।

सो इहां गच्छ आठ, एक घटाएं सात, आधा साढा तीन, चय का प्रमाण एक, ताकरि गुणैं साढा तीन ही रहे। बहुरि गच्छ का प्रमाण आठ, ताकरि गुणैं अट्ठाइस भए, सो चयधन जानना, सो आदि धन अर उत्तर धन दोऊ मिलाएं, प्रथम गुणहानि का सर्व द्रव्य हो है। सो आदि धन बहत्तरि (७२), उत्तर धन अट्ठाईस (२८), दोऊ मिलैं सौ भए (१००) सो प्रथम गुणहानि का सर्व द्रव्य जानना। बहुरि गुण-हानि-गुणहानि प्रति दूणा-दूणा द्रव्य जानना १००, २००, ४००, ८००, १६००। एक घाटि नानागुणहानि प्रमाण बार दूणां-दूणां होइ सो अंतस्थानक विषैं अन्यो-न्याभ्यस्तराशि का जो आधा प्रमाण ताकरि प्रथम कौं गुणें जो प्रमाण होइ, सो अंत का प्रमाण जानना।

इहां नानागुणहानि पांच में एक घटाएं च्यारि, सो इतना दूवा मांडि परस्पर गुणैं सोला भए, सोई अन्योन्याभ्यस्तराशि बत्तीस का आधा प्रमाण है, सो सोला करि प्रथम स्थानक सौ कौं गुणैं सोला सौ भए, सोई अंत गुणहानि का द्रव्य जानना। इन सबनि का जोड दीजिए है – **'अंतधणं गुणगुणियं आदिविहीणं रूऊणु-त्तरभजियं'** यहां स्थानक-स्थानक प्रति समान गुणकार होइ, तिनके जोड देने का यहु करणसूत्र है, सो गुणकार करता-करता अंत के विषैं जो प्रमाण आवै, ताकौं गुण-कार का प्रमाण करि गुणिए, तामेंस्यों आदि का प्रमाण घटा दीजिए, जो प्रमाण आवे, ताकौं एक घाटि उत्तर का भाग दीजिए, तब सर्वधन होइ।

सो इहां अंतस्थानक का प्रमाण सोला सौ (१६००) अर दूणा-दूणा किया था; तातैं गुणकार कौं प्रमाण करि गुणैं बत्तीस सौ (३२००) भए, तामैं आदि का

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रमाण सौ घटाए इकतीस सौ रहे । याकौं इहां दूणा-दूणा कीया है; तातैं उत्तर का प्रमाण दोय, तामैं एक घटाए एक, ताका भाग दीएं इकतीस सौ ही रहै, सो पांचौं गुणहानि का जोड़ दीएं एक प्रकृति के स्थितिबंध कौं कारण इकतीस सौ जानने ।

अब यथार्थ करि कहिए हैं —

एक प्रकृति के स्थितिबंध कौं कारण असंख्यात लोक प्रमाण कषायाध्यवसाय हैं, सो द्रव्य जानना । बहुरि एक प्रकृति का जघन्य स्थिति तैं लगाय उत्कृष्ट स्थिति पर्यंत संख्यात पल्य प्रमाण स्थिति के भेद, सो स्थितिस्थान जानना । बहुरि नानागुणहानि पल्य का अर्धच्छेदां कै असंख्यातवें भाग मात्र जाननी । बहुरि अन्योन्याभ्यस्तराशि पल्य के असंख्यातवें भाग मात्र जाननी । नानागुणहानि शलाका का स्थिति कौं भाग दीएं जो प्रमाण होइ, सो गुणहानि आयाम जानना । याकौ दूणां कीए दोगुणहानि हो है । तहां सर्व स्थिति के भेद विषैं जघन्य स्थितिबंध कौं कारण असैं कषायाध्यवसायस्थान सर्व तैं थोरे हैं, ते परिण असंख्यात लोक मात्र हैं ।

'पदहतमुखमादिधनं' गच्छ करि गुण्या हूवा आदि स्थानक सो आदि धन जानना । एक अधिक गुणहानि आयाम का भाग आदि कौं दीएं चय का प्रमाण होइ, सो **'व्येकपदार्थघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं'** एक घाटि गच्छ का आधा कौं चयकरि गुणिए जो प्रमाण होइ, ताकौं गच्छ करि गुणिए तब चयधन होइ । बहुरि आदिधन अर चयधन इन दोउनि कौं मिलाए प्रथम गुणहानि का सर्व द्रव्य होइ, सो गुणहानि-गुणहानि प्रति दूणां-दूणां होतैं-होतैं अंत विषैं एक घाटि नानागुणहानि प्रमाण दूणा होतैं अन्योन्याभ्यस्तराशि का आधा प्रमाण करि आदि कौं गुणैं जो प्रमाण होइ, सोई अंत की गुणहानि का द्रव्य जानना ।

सो **'अंतधणं गुणगुणियं आदिविहीणं रूऊणुत्तरभजियं'** इस सूत्र करि अंत विषैं जो प्रमाण भया, ताकौं गुणकार दोय करि गुणैं, तामैं आदि का प्रमाण घटाइए उत्तर का प्रमाण दोय, तामैं एक घटाएं एक रह्या ताका भाग दीजिए, सो तेते ही रहे, यों करता जो प्रमाण भया सो सर्व गुणहानि का धन जानना । सो एक प्रकृति के संख्यात पल्य प्रमाण स्थितिभेद तिनके इतने असंख्यात लोकप्रमाण स्थितिबंधाध्यवसाय स्थान भए, तौ सर्व उत्तरोत्तर प्रकृति संग्रह के भेदनि के कितने स्थिति बंधाध्यवसाय स्थान होंहि ? असैं त्रैराशिक करि स्थिति के भेदनि तैं असंख्यात लोक गुणे प्रकट देखिए हैं । इन स्थितिबंधाध्यवसाय स्थानकनि विषैं अधःप्रवृत्तकरणवत्

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अनुकृष्टि विधान है, सो आगें कहैंगे । इहां मुख्य कथन नाही; तातै न कह्या है ॥२५९॥

अणुभागाणं बंधज्झवसाणमंसखलोगगुणिदमदो ।
एत्तो अणंतगुणिदा, कम्मपदेसा मुणेयव्वा ॥२६०॥

अनुभागानां बंधाध्यवसायमसंख्यलोकगुणितमतः ।
एतस्मादनंतगुणिताः, कर्मप्रदेशाः मंतव्याः ॥२६०॥

टीका – इन सर्व स्थितिबंधाध्यवसाय स्थाननि तें अनुभागाध्यवसाय स्थान असंख्यात लोक गुणां जानना । सो कहिए हैं — जघन्य स्थितिबंध नै कारण जे कषायाध्यवसाय स्थान तिन संबंधी अनुभागाध्यवसाय स्थान असंख्यात लोक करि असंख्यात लोक कौं गुणिए इतने प्रमाण हैं, सो इहां द्रव्य जानना । बहुरि जघन्य स्थितिबंध कौं कारण जे स्थितिबंधाध्यवसाय स्थान असंख्यात लोकवार षट्स्थान वृद्धि कौं लीएं हैं, तथापि असंख्यात लोक मात्र ही है, सो इहां स्थितिस्थान जानने । बहुरि नानागुणहानि शलाका आवली कौं दोय बार असंख्यात का भाग दीजिए तीह प्रमाण है ।

बहुरि तिस नानागुणहानि का भाग स्थितिस्थानकनि कौं दीएं जो प्रमाण होइ तितना एक गुणहानि का आयाम जानना । याकौं दूणां कीए दोगुणहानि हो है । आवली का असंख्यातवां भाग प्रमाण अन्योन्याभ्यस्तराशि है । इहां जघन्य स्थितिबंध कौं कारण जघन्य अध्यवसाय स्थान तींहिं विषैं अनुभागाध्यवसाय स्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं, ते सब तैं थोरे हैं, याकौं मुख कहिए । **'पदहतमुखमादिधनं'** पद जो गुणहानि का आयाम, ताकरि इस मुख कौं गुणैं जो प्रमाण होइ, सो आदि-धन जानना । **'व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं'** एक घाटि पद जो गुणहानि का आयाम, ताकौं आधा कीजिए । बहुरि याकौं एक घाटि पद का भाग आदि कौं दीजिए सो चय का प्रमाण है, ताकरि गुणिए बहुरि जो प्रमाण होइ, ताकौं पदकरि गुणिए, यों करता जो प्रमाण होइ, सो चयधन जानना ।

आदिधन अर चयधन कौं मिलाएं प्रथम गुणहानि का सर्व द्रव्य हो है । सो गुणहानि-गुणहानि प्रति दूणा-दूणा अनुक्रम करि अंतगुणहानि विषैं एक घाटि नाना-गुणहानि प्रमाण दूणा कीएं अन्योन्याभ्यस्तराशि का आधा प्रमाण गुणकार हो है । याकरि आदि कौं गुणैं अंत गुणहानि का सर्व द्रव्य हो है । **'अंतधणं गुणगुणियं**

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आदिविहीणं रूऊणुत्तरभजियं' इस सूत्र करि अंत गुणहानि के द्रव्य कौं गुणकार दोय करि गुणिए, तामेंस्यों आदि गुणहानि का द्रव्य घटाइए, उत्तर जो दोय, तामैं एक घटाइ एक रह्या, ताका भाग दीएं तितने ही रहे, यों करता जो प्रमाण भया, तितना सर्व गुणहानि का द्रव्य भया। सो जघन्य स्थितिबंधाध्यवसाय स्थान संबंधी अनुभागाध्यवसायस्थानकनि का इतना प्रमाण भया।

सो जो एक स्थिति भेद का अनुभागाध्यवसाय स्थानभेद इतने भए, तौ पूर्वोक्त सर्वस्थिति के भेदनि का अनुभागाध्यवसाय स्थान केते होइ ? ऐसैं त्रैराशिक करतें लब्धराशि का जो प्रमाण होइ, सो स्थिति बंधाध्यवसायनि तैं असंख्यात गुणा जानना।

बहुरि इन अनुभागाध्यवसाय स्थानकनि तैं कर्म के प्रदेश जे परमाणू ते अनंत गुणे हैं, सोई कहिए हैं—अंकसंदृष्टि करि कथन दिखाइए हैं—

एक समय विषैं जितने परमाणु बंधै, सो समयप्रबद्ध कहिए तिनका प्रमाण तरेसठि सौ (६३००), कर्म की स्थिति का प्रमाण अठतालीस समय, सो स्थिति (४८) नानागुणहानि छह (६), एक-एक गुणहानि विषैं जेती स्थिति होइ, सो गुणहानि के आयाम आठ (८), नानागुणहानि प्रमाण दूवे मांडि परस्पर गुणें अन्योन्याभ्यस्तराशि चौसठि (६४), गुणहानि का आयाम कौं दूणा कीजिये, सो दोगुणहानि का प्रमाण सोलह।

सो एक घाटि अन्योन्याभ्यस्तराशि तरेसठि का भाग सर्व द्रव्य तेरसठि सौ कौं दीजै तब सौ (१००) पाया। सो अंत की गुणहानि का प्रमाण जानना। यातैं दूणां-दूणां द्रव्य आदि की गुणहानि पर्यंत जानना। सो आधा अन्योन्याभ्यस्तराशि करि अंतगुणहानि के द्रव्य कौं गुणैं आदि गुणहानि का द्रव्य हो है, सो बत्तीस करि सौ को गुणें बत्तीस सौ हो है। सोई आदि गुणहानि का द्रव्य जानना। यातैं द्वितीयादि गुणहानि का द्रव्य आधा-आधा जानना (३२००, १६००, ८००, ४००, २००, १००)।

बहुरि तींहि प्रथम गुणहानि संबंधी द्रव्य कौं गुणहानि आयाम का भाग दीजिए तब मध्यधन होइ, सो बत्तीस सौ नै आठ का भाग दीया च्यारि सौ पाया, सो मध्यधन है, याकौं एक घाटि गुणहानि आयाम का आधा प्रमाण कौं निषेक भागहार जो दोगुणहानि तामेंस्यों घटाएं जो प्रमाण रहै, ताका भाग दीएं जो

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रमाण आवै, सो चय का प्रमाण जानना । सो एक घाटि गुणहानि आयाम सात, ताका आधा साढा तीन, तिस कौं दोगुणहानि सोलह मेंस्यों घटाएं साढा बारा रहे, ताका भाग मध्यधन कौं दीए बत्तीस पाया, सोई प्रथम गुणहानि विषैं चय जानना।

इस चय कौं दोगुणहानि करि गुणैं जो प्रमाण होइ, सो आदि निषेक जानना, सो बत्तीस कौं सोलह करि गुणैं पांच सौ बारा आदि निषेक भया । यामेंस्यों एक चय बत्तीस घटाएं च्यारि सौ असी दूसरा निषेक जानना ।

ऐसैं अनुक्रम तैं प्रथम गुणहानि का अंत निषेक पर्यंत घटावना ।

बहुरि प्रथम गुणहानि का अंत निषेक में प्रथम गुणहानि संबंधी एक चय घटाएं प्रथम गुणहानि का प्रथम निषेक तैं आधा प्रमाण होइ, सोई द्वितीय गुणहानि का प्रथम निषेक जानना । यातैं द्वितीय गुणहानि संबंधी एक-एक चय घटाएं द्वितीयादिक निषेक हो हैं । इहां पूर्वोक्त प्रकार विधान कीएं प्रथम गुणहानि तैं द्वितीय गुणहानि विषैं चय का प्रमाण वा निषेकनि का प्रमाण सर्व आधा-आधा हो है । याके अंत के निषेक मेंस्यों द्वितीय गुणहानि संबंधी एक चय घटाएं तृतीय गुणहानि का प्रथम निषेक हो है । यातैं एक-एक चय घटाएं द्वितीयादिक निषेक हो हैं ।

इहां चय का वा निषेकनि का प्रमाण द्वितीय गुणहानि तैं आधा-आधा जानना ।

ऐसैं ही गुणहानि-गुणहानि प्रति आधा-आधा प्रमाण है, सो सर्व गुणहानि का यंत्र लिखिए हैं[1] —

इहां ऐसा अर्थ जानना – समयप्रबद्ध तरेसठि सौ वर्गणा कर्म की बंधरूप भई अर ताका आबाधाकाल अधिक अठतालीस समय की स्थिति बंधी । तहां आबाधा काल विषैं तौ कोऊ परमाणु खिरै नाही, आबाधाकाल भए पीछैं पहिले समय पांच सौ बारा परमाणु खिरैं, पीछै बत्तीस-बत्तीस घाटि खिरैं । एक गुणहानि का काल विषैं सर्व परमाणु बत्तीस सौ खिरैं कर्मवर्गणा कौं छोडैं गलि जाईं । द्वितीय गुणहानि का प्रथम समय विषैं दोय सौ छप्पन खिरैं, पीछैं सोलह-सोलह घाटि खिरैं । सर्व परमाणु द्वितीय गुणहानि विषैं सोलह सौ खिरै । ऐसैं गुणहानि-गुणहानि प्रति आधा-आधा खिरैं । तहां सर्वगुणहानि विषैं तरेसठि सौ परमाणु इसप्रकार खिरैं हैं ।

१–टिप्पणी पृष्ठ २८२ पर देखें ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

नाम	चय का प्रमाण	निषेकनि का प्रमाण	सर्वद्रव्य का प्रमाण
प्रथम गुणहानि	३२	५१२ ४८० ४४८ ४१६ ३८४ ३५२ ३२० २८८	३२००
द्वितीय गुणहानि	१६	२५६ २४० २२४ २०८ १९२ १७६ १६० १४४	१६००
तृतीय गुणहानि	८	१२८ १२० ११२ १०४ ९६ ८८ ८० ७२	८००
चतुर्थ गुणहानि	४	६४ ६० ५६ ५२ ४८ ४४ ४० ३६	४००
पंचम गुणहानि	२	३२ ३० २८ २६ २४ २२ २० १८	२००
षष्टम गुणहानि	१	१६ १५ १४ १३ १२ ११ १० ९	१००
सर्वद्रव्य	६३००		

सो जैसें अंकसंदृष्टि करि कथन दिखाया, तैसें अर्थ करि कथन जानना। विशेष इतना – जो द्रव्यादिक का प्रमाण जैसा होइ, तैसा जानना।

सोई कहिए हैं। मोहनीय कर्म की अपेक्षा कथन दिखाइए हैं —

मोहनीय कर्म की परमाणु समयप्रबद्ध विषैं जितने बंधैं, सो द्रव्य का प्रमाण जानना। मोहनीय कर्म की स्थिति सत्तर कोडाकोडी सागर प्रमाण, तामेंस्यों आबाधा-काल घटाए जो प्रमाण रहे, तीहि का जितना समय, सो स्थिति का प्रमाण जानना। बहुरि पल्य की वर्गशलाका का जेता अर्धच्छेद तिनको पल्य का अर्धच्छेदां मेंस्यों घटाएं जो प्रमाण रहे, सो नानागुणहानि शलाका का प्रमाण जानना। इसका भाग तिस स्थिति कौं दीएं जो प्रमाण आवै, तितना एक गुण-हानि का आयाम का प्रमाण जानना। याकौं दूणा कीएं दोगुणहानि का प्रमाण हो है।

नानागुणहानि प्रमाण दूवा मांडि परस्पर गुणें जो प्रमाण होइ, सो अन्योन्याभ्यस्तराशि का प्रमाण जानना। सो अंकसंदृष्टि विषें जैसा विधान कह्या तैसा विधान करतें गुणहानि विषें वा निषेकनि विषैं जितना-जितना द्रव्य का प्रमाण आवै, सो जानना। सो आबाधाकाल भए पीछैं प्रथम समय विषैं तौ प्रथम गुणहानि का प्रथम निषेक विषैं जितना द्रव्य का प्रमाण होइ, तितने परमाणु खिरैं। दूसरा समय विषें दूसरा निषेक विषैं जितना द्रव्य का प्रमाण होइ, तितने परमाणु खिरैं।

ऐसें एक गुणहानि का काल का जितना समय आयाम होइ, तितने समयनि विषें प्रथम गुणहानि का जितना द्रव्य होइ, तितने परमाणु खिरैं। पीछै इस ही अनुक्रम तैं गुणहानि-गुणहानि विषैं आधा-आधा खिरैं, सो सर्वगुणहानि विषें संपूर्ण समयप्रबद्ध इस अनुक्रम तैं कर्मपणा कौं छोडि खिरि जांय।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सो असैं तौ जो समयप्रबद्ध बंधै, ताकी निर्जरा होने का विधान है। अर एक-एक समयप्रबद्ध समय-समय प्रति नवीन बंधै हैं, सो द्रव्यकर्म तैं अनादि संबंध है, तातैं पूर्वोक्त प्रकार बंध होतैं वा निर्जरा होतैं जीव कैं किंचिदून द्व्यर्धगुणहानि करि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सदा काल सत्ता रहे है। गुणहानि का आयाम का जो प्रमाण ताकौं ड्योढा कीएं जो प्रमाण होइ, तामें किछू प्रमाण घटाएं जो प्रमाण रहै, तीहिं करि समयप्रबद्ध का प्रमाण कौं गुणैं जो प्रमाण आवै, तितने कर्म परमाणुनि की सत्ता जीव कैं सदा काल पाइए।

बहुरि वर्तमान काल विषैं एक-एक समयप्रबद्ध का एक-एक निषेक उदय होतैं, समय-समय प्रति एक-एक समयप्रबद्ध का उदय हो है। सो कैसैं ? द्व्यर्ध-गुणहानि गुणित समयप्रबद्ध मात्र सत्ता है। बहुरि कैसै एक-एक समयप्रबद्ध प्रमाण उदय है ? इस कथन कौं अंकसंदृष्टि तैं त्रिकोणरचना करि दिखाइए हैं।

त्रिकोण-यंत्र का अर्थ लिखिए हैं – जो समयप्रबद्ध तरेसठि सौ परमाणु प्रमाण बंधरूप भया, सो आबाधाकाल को छोडि अठतालीस समयरूप स्थिति विषैं अनुक्रम तैं अठतालीस समयनि विषैं असैं खिरै हैं – ५१२, ४८०, ४४८, ४१६, ३८४, ३५२, ३२०, २८८ यहु प्रथम गुणहानि। २५६, २४०, २२४, २०८, १९२, १७६, १६०, १४४ यहु द्वितीय गुणहानि। १२८, १२०, ११२, १०४, ९६, ८८, ८०, ७२ यहु तृतीय गुणहानि। ६४, ६०, ५६, ५२, ४८, ४४, ४०, ३६ यहु चतुर्थ गुणहानि। ३२, ३०, २८, २६, २४, २२, २०, १८ यहु पंचम गुणहानि। १६, १५, १४, १३, १२, ११, १०, ९ यहु षष्टम गुणहानि।

इन छहों गुणहानिनि विषैं तरेसठि सौ परमाणु असैं खिरै हैं, तहां जिस समय-प्रबद्ध का बंध भएं आबाधा अधिक अड़तालीस समय होइ गये, तिसतैं लगाय जे याके पहिलैं समयप्रबद्ध बंधे थे, तिनका तौ कोऊ निषेक सत्ता विषै रह्या नाहीं; तातैं उनका तौ किछू प्रयोजन रह्या ही नाहीं। बहुरि जिस समयप्रबद्ध का बंध भए आबाधा अधिक सैंतालिस समय भए, तिसके सैंतालीस निषेक तौ गलि गए, एक निषेक अंत का अवशेष रह्या, सो त्रिकोण यंत्र विषैं नव परमाणु रूप अंत का निषेक ऊपरि लिख्या।

बहुरि ताके नीचैं जिस समयप्रबद्ध का बंध भएं आबाधा अधिक छियालीस समय भए, तिसके छियालीस निषेक तौ गलि गए, दोय निषेक अवशेष सत्ता विषैं रहैं,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सो त्रिकोण यंत्र विषैं नव परमाणु अर दश परमाणु का दोय निषेक लिखे। बहुरि ताके नीचैं जिस समयप्रबद्ध का बंध भए आबाधा अधिक पैंतालीस समय भए, तिसके पैंतालीस निषेक तो खिर गये, तीन निषेक अवशेष सत्ता विषैं रहे, सो त्रिकोण यंत्र विषैं नव परमाणु वा दश परमाणु वा ग्यारह परमाणु का तीन निषेक लिखे।

अैसैं ही जिस-जिस समयप्रबद्ध का बंध भए एक-एक घाटि समय भए, तिस-तिस के एक-एक घाटि निषेक तौ गलि गए, अवशेष एक-एक अधिक निषेक सत्ता विषैं रहे, तिनकौं नीचैं-नीचैं लिखतैं जिस समयप्रबद्ध का बंध भए आबाधा अधिक एक समय भया होइ, ताका एक निषेक तौ गलि गया, अवशेष सैंतालीस निषेक रहे, ते नव सौ लगाय च्यारि सौ असी परमाणु के निषेक लिखे।

बहुरि ताके नीचैं अंत विषैं जिस समयप्रबद्ध का बंध भए आबाधाकाल ही भया अर जाका एक भी निषेक खिर्‌या नाहीं ताके नव सौ लगाय पांच सौ बारा पर्यंत परमाणुवां का सर्व अठतालीस सौ ही निषेक सत्ता विषैं पाइए हैं, ते लिखे।

अैसें त्रिकोण-यंत्र विषैं गले पीछे अवशेष निषेक रहे, ते अनुक्रम तैं लिखे। सो इस सर्व त्रिकोण-यंत्र का जोड दीएं जो प्रमाण होइ, तितनी सत्ता जीव कैं सदा काल जाननी।

जोड देने का विधान कहिए हैं —

अंत गुणहानि विषैं अंत का निषेक नव लिखि, ताकौ एक-एक अधिक गुणकार कर नौ अैसी एक पंक्ति करनी अर दूसरी पंक्ति विषैं अंत विषैं तो शून्य लिखना, पीछै संकलन रूप प्रमाण लिखना। बहुरि द्वितीयादिक गुणहानि विषैं प्रथमादिक गुणहानि का सर्वद्रव्य तौ आदि जानना, उत्तर दोऊ पंक्तिनि विषैं पूर्वोक्त तैं दूणा-दूणा प्रमाण जानना। तहां प्रथम गुणहानि की पंक्ति दोय अैसैं जाननी —

९ १	०
९ २	१ १
९ ३	१ ३
९ ४	१ ६
९ ५	१ १०
९ ६	१ १५
९ ७	१ २१
९ ८	१ २८

तहां नौ एकौ नौ, सो तो पहिला जोड, बहुरि नव दूणा अठारह अर एक एकौ एक, दोऊ मिलैं उगणीस भए। सो नव अर दश दोऊ मिलें उगणीस भए। बहुरि नवती सत्ताईस अर तीन इक तीन, दोऊ मिलैं तीस भए सो नव, दस, ग्यारा इनका जोड़ तीस भया – अैसैं जोड़ देतैं अंत विषैं नव आठो बहत्तरि अर अठाईस एकौ अठाईस दोऊ मिलैं सौ भया सो गुणहानि के सर्व निषेकनि का जोड़ सौ भया। बहुरि द्वितीय गुणहानि की पंक्ति दोय अैसी जाननी—

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

९ २ १	०
९ २ २	२ १
९ २ ३	२ ३
९ २ ४	२ ६
९ २ ५	२ १०
९ २ ६	२ १५
९ २ ७	२ २१
९ २ ८	२ २८

नौ दूनौं अठारा, अठारा एकौ अठारा, सो तौ पहिला निषेक अर नव दूनौ अठारा, अठारा दूनौ छत्तीस तौ ए अर दोय एकौ दोय इन कौ मिलाएं अठतीस भये, सो अठारा अर बीस मिलै अठतीस हो हैं। ऐसै ही अंत विषैं नव दूनौं अठारा, अठारा आठ एक सौ चवालीस अर अठाईस दूनौं छप्पन, दोऊ मिलैं दोय सौ भए, सो द्वितीय गुणहानि विषैं सर्व निषेकनि का जोड जानना। सो इस द्वितीय गुणहानि विषैं प्रथम गुणहानि का द्रव्य सर्वत्र एक-एक ठिकाने मिलाएं त्रिकोण विषैं जोड हो है।

जैसैं प्रथम गुणहानि का द्रव्य सौ मिलाएं एक सौ अठारा का जोड भया, ताके नीचैं अठतीस में सौ मिलाए एक सौ अठतीस का जोड भया ऐसैं ही जानना। ऐसैं अंत की गुणहानि पर्यंत दोऊ पंक्तिनि विषैं तौ दूणा-दूणा प्रमाण मांडि तिन दोऊ पंक्तिनि का एक-एक ठिकाना का प्रमाण मिलाएं जो-जो प्रमाण आवे तामैं पहिली भईं जे गुणहानि तिनका सर्व द्रव्य मिलाएं जो-जो प्रमाण होइ, तितना-तितना त्रिकोण विषैं अनुक्रम तें पंक्तिनि का जोड जानना। ९। १९। ३०। ४२। ५५। ६९। ८४। १००। ११८। १३८। १६०। १८४। २१०। २३८। २६८। ३००। ३३६। ३७६। ४२०। ४६८। ५२०। ५७६। ६३६। ७००। ७७२। ८५२। ९४०। १०३६। ११४०। १२५२। १३७२। १५००। १६४४। १८०४। १९८०। २१७२। २३८०। २६०४। २८४४। ३१००। ३३८८। ३७०८। ४०६०। ४४४४। ४८६०। ५३०८। ५७८८। ६३००।

इन सब जोडनि का जोड दीएं जो प्रमाण होइ, तितना सर्व त्रिकोण-यंत्र का जोड होइ। सो यहु सर्व जोड किंचिदून द्वयर्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण जानना। सर्व त्रिकोण का जोड इकहत्तरि हजार तीन सौ च्यारि भया (७१३०४) सो गुणहानि का आयाम का प्रमाण आठ ताकौं ड्योढा कीएं बारा भए, सोई द्वयर्धगुणहानि करि समयप्रबद्ध तरेसठि सौ कौं गुणिए, तब पिचहत्तरि हजार छह सौ हूवा अर इहां इकहत्तरि हजार तीन सौ च्यारि ही हूवा; तातैं गुणाकार विषैं किंचित् ऊन कह्या, सो जितना यहु सर्व त्रिकोण-यंत्र का जोड आया, तितनी सत्ता जाननी।

सो जैसैं अंकसंदृष्टि करि कथन कीया, तैसैं अर्थसंदृष्टि करि कथन जानना। निषेकादिक का प्रमाण तौ जैसा होइ, तैसा जानना। और विधान सर्व अंकसंदृष्टि

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

वत् जानना । संस्कृत टीका विषैं अर्थसंदृष्टि वा अंकसंदृष्टि करि जोड देने का विधान कह्या है, तहांस्यों विशेष जानना । वा आगैं संदृष्टि अधिकार विषै लिखैंगे, प्रयोजन इहां लिख्या ही है ।

ऐसैं किंचिदून द्व्यर्धगुणहानि करि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण जीव कै सत्ता सदा काल पाइए है, गुणहानि आयाम के समयनि का जो प्रमाण, ताकौं ड्योढा करि, तामैंस्यों किंचित् ऊन कहिए पल्य की संख्यात वर्ग शलाका करि अधिक गुणहानि आयाम का अठारह्वां भाग घटाइए तीहिं करि समयप्रबद्ध कौं गुणैं जो प्रमाण होइ, तितनी कर्म परमाणु जीव कैं सदा काल रहै हैं । याही तैं सर्वस्थिति संबंधी अनुभागबंधाध्यवसाय-स्थाननि तैं कर्मप्रदेश अनंत गुणे कहे हैं । जैसैं समय-समय विषैं एक समयप्रबद्ध नवीन बंधै, तैसैं एक-एक समयप्रबद्ध उदयरूप होइ खिरै, सत्ता पूर्वोक्त प्रमाण सदा रहै ।

एक समय विषैं एक समयप्रबद्ध का खिरना कैस होई ? सो कहिए हैं —

वर्तमान विवक्षित समय विषै जिस समयप्रबद्ध का बंध भएं आबाधाकाल ही भया होइ अर जाका पूर्वै एक भी निषेक गल्या नाहीं होइ, ताका तौ पांच सौ बारा रूप प्रथम निषेक उदय रूप हो है और निषेक आगामीकाल विषैं उदय आवैंगे । बहुरि जिस समयप्रबद्ध का बंध भये आबाधाकाल अर एक समय होइ गया होइ अर जाका एक निषेक पूर्वै खिरचा होइ, ताका च्यारि सौ असी रूप दूसरा । निषेक वर्तमान समय विषैं उदय आवे है । छियालीस निषेक आगामीकाल विषैं उदय आवैंगे । बहुरि जिस समयप्रबद्ध का बंध भएं आबाधाकाल अर दोय समय होइ गया होइ, ताका दोय निषेक तौ पूर्वै खिरैं अर च्यारि सौ अठतालीसरूप तीसरा निषेक वर्तमान समय विषैं खिरैं है । अवशेष पैंतालीस निषेक आगामीकाल विषैं खिरैंगे।

ऐसे ही अनुक्रम तैं जिस-जिस समयप्रबद्ध का बंध पहिलै-पहिलै भया, ताका पिछला-पिछला निषेक वर्तमान काल विषैं उदय होइ । अवशेष निषेक आगामीकाल में उदय होइ । अंत विषैं जिस समयप्रबद्ध का बंध भएं आबाधाकाल अर सैंतालीस समय होइ गए अर सैंतालीस निषेक जाके पूर्वै खिर गये ताका नव (९) रूप अंत का निषेक वर्तमान काल विषैं उदयरूप हो है । अवशेष निषेक कोऊ रह्या नाहीं, याके पहिलैं जे समयप्रबद्ध बंधे थे, तिनके सर्व निषेक गलि गए; तातै तिनका किछू प्रयोजन ही नाही ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अैसें वर्तमान विवक्षित एक समय विषैं पांच सौ बारास्यों लगाइ नव पर्यंत सर्व निषेक एकैकाल उदय होइ, तिनका जोड दीएं संपूर्ण समयप्रबद्ध प्रमाण हो है। याही तैं समय-समय प्रति एक-एक समयप्रबद्ध का उदय कह्या है। अैसें एक समय-प्रबद्ध प्रमाण परमाणु खिरैं, सोई एक समयप्रबद्ध प्रमाण परमाणु नवीन बंधै किंचिदून द्व्यर्धगुणहानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सत्ता रहै।

सो जैसे अंकसंदृष्टि करि कथन कीया तैसें ही अर्थसंदृष्टि करि कथन जानना। याही तैं अनुभाग बंधाध्यवसायस्थाननि तैं कर्मपरमाणु अनंत गुणि कहिए हैं, अैसा जानना ॥२६०॥

॥ इति प्रदेशबंधः ॥

अैसें बंध का निरूपण करि आगैं उदय का निरूपण प्रारंभै हैं—

आहरं तु पमत्ते, तित्थं केवलिणि मिस्सयं मिस्से ।
सम्मं वेदगसम्मे, मिच्छदुगयदेव आणुदओ ॥२६१॥

आहारं तु प्रमत्ते, तीर्थं केवलिनि मिश्रकं मिश्रे ।
सम्यक् वेदकसम्ये, मिथ्यद्विकायते एव आनूदयः ॥२६१॥

टीका – बहुरि च्यारि प्रकार का बंध का निरूपण के अनंतर गुणस्थाननि विषैं उदय का नियम कहै हैं – आहारक शरीर वा आहारक अंगोपांग इनका उदय प्रमत्त गुणस्थान विषैं ही है। तीर्थंकर प्रकृति का उदय सयोगी, अयोगी केवली विषैं ही है। मिश्र मोहनीय का उदय सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं ही है। सम्यक्त्व मोहनीय का उदय असंयतादि च्यारि गुणस्थानवर्ती वेदक सम्यग्दृष्टि विषैं ही है। आनुपूर्वी का उदय मिथ्यादृष्टि, सासादन, असंयत विषैं ही है। अन्यत्र तिनके उदय का अभाव है ॥२६१॥

आनुपूर्वी के उदय का बहुरि विशेष कहैं हैं–

णिरयं सासणसम्मो, ण गच्छदित्ति य ण तस्सणिरयाणू ।
मिच्छादिसु सेसुदओ, सगसगचरिमोत्ति णायव्वो ॥२६२॥

निरयं सासादनसम्यो, न गच्छतीति च न तस्य निरयानुः ।
मिथ्यादिषु शेषोदयः, स्वस्वकचरम इति ज्ञातव्यः ॥२६२॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – नरकगति कौं सासादन सम्यग्दृष्टि मरि करि न जाय, तातैं सासादन विषैं नारकानुपूर्वी का उदय नाहीं है । बहुरि पूर्वोक्त प्रकृतिनि का उदय मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थाननि विषैं अपना-अपना उदयस्थान का अंत पर्यंत जानना ।

इहां उदय प्रकरण विषैं व्युच्छित्ति, उदय, अनुदय – असैं तीन प्रकार करि कथन कीजिए हैं – तहां जिस गुणस्थान विषैं जेती प्रकृतिनि की व्युच्छित्ति कही होइ तिन प्रकृतिनि का तिस गुणस्थान पर्यंत तौ उदय जानना । तिस गुणस्थान तैं ऊपरि के गुणस्थाननि विषैं तिनका उदय न जानना । बहुरि जिस गुणस्थान विषैं जेती प्रकृतिनि का उदय होइ, सो उदय जानना । सो नीचली गुणस्थान विषैं जेती प्रकृतिनि का उदय कह्या होइ, तिनमेंस्यों तिस ही गुणस्थान विषैं जेती व्युच्छित्ति कही होइ, तिनकौं घटाएं तिस गुणस्थान के अनंतर ऊपरला गुणस्थान विषैं उदय प्रकृतिनि का प्रमाण जानना ।

तहां इतना विशेष है – कोई प्रकृति ऊपरला गुणस्थान विषैं उदय आवेगी, तिस विवक्षित गुणस्थान विषैं उदय नाहीं है, तौ ताकौं उदय मेंस्यों घटाइ देना अर जो पहिले गुणस्थान विषैं जिसका उदय न था अर विवक्षित गुणस्थान विषैं वाका उदय होइ, तौ वाकौं मिलाय लेनी, असैं उदय जानना ।

बहुरि जेती प्रकृतिनि का मूल विषैं उदय कह्या होइ, तिन विषैं विवक्षित गुणस्थान विषैं जेती प्रकृतिनि का उदय कह्या होइ, तिनतैं जे अवशेष प्रकृति रहैं, तिनका अनुदय जानना ।

अैसें व्युच्छित्ति, उदय, अनुदय का कथन जानना ।।२६२।।

तहां गुणस्थान विषैं व्युच्छित्ति पक्षांतर जो महाधवल का दूसरा नाम 'कषाय प्राभृत' ताका कर्ता जो 'यति वृषभाचार्य' ताके अनुसारि ताकरि अनुक्रम तैं कहिए हैं —

दस चउरिगि सत्तरसं, अट्ठ य तह पंच चेव चउरो य ।
छच्छक्कएक्कदुगदुग, चोद्दस उगुतीस तेरसुदयविधिः ।।२६३।।

दश चतुरेकं सप्तदश, अष्ट च तथा पंच चैव चतस्रश्च ।
षट् षट्कैकद्विकद्विकं, चतुर्दशैकोनत्रिंशत् त्रयोदशोदयविधिः ।।२६३।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – अभेदविवक्षा करि उदय प्रकृति एक सौ बाईस हैं। तिन विषैं उदयविधि कहिए उदय व्युच्छित्ति विवक्षित गुणस्थान तैं ऊपरि उदय का अभाव, सो मिथ्यादृष्टि विषैं दश हैं। सासादन विषैं च्यारि हैं, इस पक्ष विषैं एकेंद्री, स्थावर, बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री इन नामकर्म की प्रकृतिनि की व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं कही। सासादन विषैं इनका उदय न कह्या। दूसरा पक्ष विषैं इनका उदय सासादन विषैं भी कह्या है। असैं दोऊ पक्ष आचार्यनि करि जानने।

बहुरि मिश्र विषैं एक, असंयत विषैं सतरह, देशसंयत विषैं आठ, प्रमत्त विषैं पांच, अप्रमत्त विषैं च्यारि, अपूर्वकरण विषैं छह, अनिवृत्तिकरण विषैं छह, सूक्ष्मसांपराय विषैं एक, उपशांतकषाय विषैं दोय, क्षीणकषाय विषैं दोय अर चौदह सयोग केवली विषैं गुणतीस, जातैं नाना जीवनि की अपेक्षा साता-असाता दोऊ ही वेदनीय की व्युच्छित्ति नाहीं। अयोग केवली विषैं तेरह व्युच्छित्ति जाननी।

असैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं उदय एक सौ सतरह; तीर्थंकर, आहारक द्विक, मिश्रमोहनी, सम्यक्त्वमोहनी इनका उदय नाहीं; तातैं अनुदय पांच। सासादन विषैं उदय एक सौ छह; मिथ्यात्व विषैं व्युच्छित्ति दश अर नारकानुपूर्वी इनका उदय नाहीं; तातैं अनुदय सोला। मिश्र विषैं उदय सौ (१००), सासादन की व्युच्छित्ति च्यारि (४) अर आनुपूर्वी तीन का उदय नाहीं अर मिश्रप्रकृति आनि मिली; तातैं अनुदय बाईस। बहुरि असंयत विषैं उदय एक सौं च्यारि (१०४), आनुपूर्वी च्यारि अर सम्यक्त्व मोहनी ए तौ आनि मिली अर मिश्रमोहनी की मिश्र ही विषैं व्युच्छित्ति भई; तातैं अनुदय अठारह।

बहुरि असंयत विषैं व्युच्छित्ति सतरह भई; तातैं देशसंयत विषैं उदय सत्यासी; अनुदय पैंतीस। बहुरि देशसंयत विषैं आठ व्युच्छित्ति भई अर आहारक द्विक आनि मिले; तातैं प्रमत्त विषैं उदय इक्यासी, अनुदय इकतालीस। बहुरि प्रमत्त विषैं पांच व्युच्छित्ति भई; तातैं अप्रमत्त विषैं उदय छिहंतरि (७६), अनुदय छयालीस (४६)। बहुरि इहां चारि व्युच्छित्ति भई; तातैं अपूर्वकरण विषैं उदय बहत्तरि, अनुदय पचास। बहुरि इहां छह व्युच्छित्ति भई; तातैं अनिवृत्तिकरण विषैं उदय छयासठि, अनुदय छप्पन। बहुरि इहां छह व्युच्छित्ति भई, तातैं सूक्ष्मसांपराय विषैं उदय साठि, अनुदय बासठि। बहुरि इहां एक व्युच्छित्ति भई; तातैं उपशांत कषाय विषैं उदय गुणसठि, अनुदय तरेसठि। बहुरि इहां दोय व्युच्छित्ति भई; तातैं क्षीण

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

कषाय विषैं उदय सत्तावन, अनुदय पैंसठि । बहुरि इहां सोलह व्युच्छित्ति भई अर तीर्थंकर आनि मिली; तातैं सयोगी-जिन विषैं उदय बियालीस, अनुदय असी । इहां गुणतीस व्युच्छित्ति भई; तातैं अयोगकेवली विषैं उदय तेरह, अनुदय एक सौ नव ।

बहुरि उदीरणा व्युच्छित्ति, उदीरणा, अनुदीरणा की रचना विषैं प्रमत्त गुणस्थान पर्यंत तौ जैसैं उदय विषैं व्युच्छित्ति कही, तैसैं ही व्युच्छित्ति है । जैसैं उदय कह्या, तैसैं ही उदीरणा है । जैसै अनुदय कह्या, तैसैं ही अनुदीरणा है ।

बहुरि इतना विशेष है; जो मनुष्यायु, साता-असाता वेदनीय इनकी उदीरणा प्रमत्त गुणस्थान पर्यंत ही है, ऊपरि नाहीं । तातैं अप्रमत्त विषैं उदीरणा तेहत्तरि, अनुदीरणा गुणचास । इहां व्युच्छित्ति च्यारि; तातैं अपूर्वकरण विषैं उदीरणा गुणहत्तरि, अनुदीरणा तरेपन । इहां व्युच्छित्ति छह; तातैं अनिवृत्तिकरण विषैं उदीरणा तरेसठि, अनुदीरणा गुणसठि । इहां व्युच्छित्ति छह; तातैं सूक्ष्मसांपराय विषैं उदीरणा सत्तावन, अनुदीरणा पैंसठि । इहां व्युच्छित्ति एक; तातैं उपशांत कषाय विषैं उदीरणा छप्पन, अनुदीरणा छयासठि । इहां व्युच्छित्ति दोय; तातैं क्षीणकषाय विषैं उदीरणा चौवन, अनुदीरणा अडसठि । इहां व्युच्छित्ति सोलह; सयोगकेवली विषैं तीर्थंकर के मिलने तैं उदीरणा गुणतालीस, अनुदीरणा तियासी । इहां व्युच्छित्ति गुणतालीस; तातैं अयोगकेवली विषैं उदीरणा नास्ति, अनुदीरणा एक सौ बावीस ।।२६३।।

आगैं 'भूतबलि आचार्य' कृत 'धवल शास्त्र' का उपदेश इत्यादिरूप दूसरा पक्ष करि कथन करैं हैं —

पण णवइगि सत्तरसं, अड पंच च चउर छक्क छच्चेव ।
इगिदुग सोलस तीसं, बारस उदये अजोगंता ।।२६४।।

पंचनवैकं सप्तदशाष्ट, पंच च चतस्रः षट्कं षट् चैव ।
एकद्विकं षोडश त्रिंशत्, द्वादश उदये अयोगांताः ।।२६४।।

टीका – अपना अनुभाग रूप स्वभाव की जो प्रगटता, ताकौं उदय कहिए । अथवा अपना कार्य करि कर्मपणा कौं छोडैं, ताकौ उदय कहिए । तिस उदय का जो अंत, सो इहां व्युच्छित्ति कहिए । जिस गुणस्थान विषैं जाकी व्युच्छित्ति कही ताके ऊपरि ताका उदय नाहीं । सो व्युच्छित्ति प्रकृति मिथ्यादृष्टि तैं लगाइ अयोगकेवली

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पर्यंत गुणस्थान विषैं अनुक्रम तैं – पांच, नव, एक, सतरह, आठ, पांच, च्यारि, छह, छह, एक, दोय, सोलह, तीस, बारह जाननी ।।२६४।।

तैं व्युच्छित्ति प्रकृति कौन ? सो कहिए हैं —

मिच्छे मिच्छादावं, सुहुमतियं सासणे अणेइंदी ।
थावरवियलं मिस्से, मिस्सं च य उदयवोच्छिण्णा ।।२६५।।

मिथ्ये मिथ्यातपं, सूक्ष्मत्रयं सासादन अनेकेंद्रियं ।
स्थावरविकलं मिश्रे, मिश्रं च च उदयव्युच्छिन्नाः ।।२६५।।

टीका – मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं मिथ्यात्व, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण – ए पंच प्रकृति उदय तैं व्युच्छित्ति भई । बहुरि सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि, एकेंद्री, स्थावर, बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री – ए नव उदय तैं व्युच्छित्ति भई ।

पूर्वपक्ष विषैं अर इस पक्ष विषैं इतना विशेष – जो इहां तौ सासादन विषैं एकेंद्री, स्थावर, बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री का उदय कह्या अर ऊपरि इनका उदय सासादन विषैं न कह्या, मिथ्यादृष्टि विषैं ही कह्या । सो दोऊ कथन आचार्यनि नैं कीए हैं; तातैं दोऊ कथन कहे हैं ।

बहुरि मिश्र विषैं एक सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति उदय तैं व्युच्छित्ति भई है ।। ।।२६५।।

अयदे बिदियकसाया, वेगुव्वियछक्क णिरयदेवाऊ ।
मणुयतिरियाणुपुव्वी, दुब्भगणादेज्ज अज्जसयं ।।२६६।।

अयते द्वितीयकषाया, वैगूर्विकषट्कं निरयदेवायुः ।
मनुजतिर्यगानुपूर्व्ये, दुर्भगानादेयमयशस्कं ।।२६६।।

टीका – असंयत विषैं अप्रत्याख्यानावरण च्यारि, वैक्रियिक शरीर वा ताका अंगोपांग, नरक-देवगति वा तिनकी आनुपूर्वी ए छह, नरक-देव आयु, मनुष्य-तिर्यंच-आनुपूर्वी, दुर्भग, अनादेय, अयशस्कीर्ति – ए सतरह व्युच्छित्ति भई ।।२६६।।

देसे तदियकसाया, तिरियाउज्जोवणीचतिरियगदी ।
छट्ठे आहारदुगं, थीणतियं उदयवोच्छिण्णा ।।२६७।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

देशे तृतीयकषाया, तिर्यगायुरुद्योतनीचतिर्यग्गतिः ।
षष्ठे आहारकद्विकं, स्त्यानत्रयमुदयव्युच्छिन्नाः ।।२६७।।

टीका-देशसंयत विषैं प्रत्याख्यानावरण च्यारि, तिर्यंचायु-उद्योत, नीचगोत्र, तिर्यंचगति – ए आठ। बहुरि प्रमत्त छठा गुणस्थान विषैं आहारक शरीर वा अंगोपांग, स्त्यानगृद्धि-निद्रानिद्रा-प्रचलाप्रचला – ए तीन – ऐसे ए पांच उदय तैं व्युच्छित्ति भई। '**व्युच्छिन्नाः**' असा शब्द मध्य दीपक समान है; तातैं अन्यत्र भी यहु जानना जो व्युच्छित्ति कही है ।।२६७।।

अपमत्ते सम्मत्तं, अंतिमतियसंहदी यऽपुव्वम्हि ।
छच्चेव णोकसाया, अणियट्टीभागभागेसु ।।२६८।।

अप्रमत्ते सम्यक्त्वमंतिमसंहतिश्चापूर्वे ।
षट्चैव नोकषायाः, अनिवृत्तिभागभागयोः ।।२६८।।

टीका – अप्रमत्त विषैं सम्यक्त्व मोहनीय, अर्धनाराच, कीलित, सृपाटिक संहनन तीन – ए च्यारि। बहुरि अपूर्वकरण विषैं हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा – छह नोकषाय व्युच्छित्ति भई। बहुरि अनिवृत्तिकरण विषैं प्रकृति नाश का अनुक्रम की अपेक्षा करि सवेद भाग वा अवेद भाग विषैं असैं व्युच्छित्ति है ।।२६८।।

वेदतिय कोहमाणं, मायासंजलणमेव सुहुमंते ।
सुहुमो लोहो संते, वज्जं णारायणारायं ।।२६९।।

वेदत्रयं क्रोधमानं, मायासंज्वलनमेव सूक्ष्मांते ।
सूक्ष्मो लोभः शांते, वज्रनाराचनाराचं ।।२६९।।

टीका – अनिवृत्तिकरण का वेद सहित जो सवेदभाग तिह विषैं तो तीन वेद व्युच्छित्ति भए। अवेद भागनि विषैं अनुक्रम तैं संज्वलनक्रोध, संज्वलनमान, संज्वलनमाया व्युच्छित्ति भई – असैं छह व्युच्छित्ति हैं। बादर लोभ भी अनिवृत्तिकरण ही विषैं व्युच्छित्ति भया। बहुरि सूक्ष्मसांपराय का अंत विषैं सूक्ष्मकृष्टि कौं प्राप्त भया जो लोभ सो व्युच्छित्ति भया। बहुरि उपशांत कषाय विषैं वज्रनाराच-नाराच – ए दोय संहनन व्युच्छित्ति भए ।।२६९।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

खीणकसायदुचरिमे, णिद्दा पयला य उदयवोच्छिण्णा ।
णाणंतरायदसयं, दंसणचत्तारि चरिमम्हि ।। २७० ।।

क्षीणकषायद्विचरमे, निद्रा प्रचला च उदयव्युच्छिन्नाः ।
ज्ञानांतरायदशकं, दर्शनचत्वारि चरमे ।।२७०।।

टीका – क्षीणकषाय गुणस्थान के अंत के दोय समय तिन विषैं पहिला द्विचरम समय विषैं निद्रा, प्रचला – ए दोय उदय तैं व्युच्छित्ति भई । अंत के समय विषैं पांच ज्ञानावरण, पांच अंतराय, च्यारि दर्शनावरण – ए चौदह व्युच्छित्ति भई – एवं सोलह ।।२७०।।

तदियेक्कवज्जणिमिणं, थिरसुहसरगदिउरालतेजदुगं ।
संठाणं वण्णागुरु, चउक्क पत्तेय जोगिम्हि ।।२७१।।

तृतीयैकवज्रनिर्माणं, स्थिरशुभस्वरगतिऔरालतेजोद्विकम् ।
संस्थानं वर्णागुरुचतुष्कं प्रत्येकं योगिनि ।।२७१।।

टीका – सयोगकेवली गुणस्थान विषैं दोऊ वेदनीय विषैं एक कोऊ वेदनीय, वज्रवृषभनाराच, निर्माण, स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, सुस्वर-दुस्वर, प्रशस्त-अप्रशस्त विहायोगति, औदारिक शरीर वा अंगोपांग, तैजस-कार्माण, संस्थान छह, वर्णादिक च्यारि, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास – ए च्यारि, प्रत्येक शरीर – ए तीस व्युच्छित्ति भई ।।२७१।।

तदियेक्कं मणुवगदी, पंचिंदियसुभगतसतिगादेज्जं ।
जसतित्थं मणुवाऊ, उच्चं च अजोगिचरिमम्हि ।।२७२।।

तृतीयैकं मानवगतिः, पंचेंद्रियसुभगत्रसत्रिकादेयं ।
यशस्तीर्थं मानवायुरुच्चं चायोगिचरमे ।।२७२।।

टीका – अयोगी गुणस्थान का अंत समय विषैं दोऊ वेदनीय विषैं एक कोऊ वेदनीय, मनुष्यगति, पंचेंद्री, सुभग, त्रस-बादर-पर्याप्त – ए तीन, आदेय, यशस्कीर्ति, तीर्थंकरत्व, मनुष्यायु, उच्चगोत्र – ए बारह व्युच्छित्ति भई । ए व्युच्छित्ति नाना जीव की अपेक्षा कहिए अर सयोगी-अयोगी गुणस्थान विषैं साता वा असाता विषैं एक ही की व्युच्छित्ति कही है । सो एक जीव की अपेक्षा व्युच्छित्ति कही है । नाना जीव की

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अपेक्षा सयोगी गुणस्थान विषैं साता वा असाता दोऊ की व्युच्छित्ति नाही; तातैं सयोगी-अयोगी विषैं एक जीव की अपेक्षा तीस अर बारा व्युच्छित्ति हैं । नाना जीव की अपेक्षा गुणतीस अर तेरा व्युच्छित्ति हैं ।।२७२ ।।

आगैं पहिले गुणस्थानवत् सयोग केवली विषैं भी साता-असाता का उदय होइगा, ऐसी शंका कौं दूरि करै हैं—

णट्ठा य रायदोसा, इंदियणाणं च केवलिम्हि जदो ।
तेण दु सादासादजसुहदुक्खं णत्थि इंदियजं ।।२७३।।

नष्टौ च रागद्वेषौ, इंद्रियज्ञानं च केवलिनि यतः ।
तेन तु सातासातजसुखदुःखं नास्ति इंद्रियजम् ।।२७३।।

टीका – जातैं सयोग केवली कैं घातिकर्मनि का नाश भया है; तातैं राग कौं कारणभूत च्यारि प्रकार माया, च्यारि प्रकार लोभ, तीन वेद, हास्य-रति इनका अर द्वेष कौं कारणभूत च्यारि प्रकार क्रोध, च्यारि प्रकार मान, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा – इनका निर्मूल नाश भया है; तातैं राग-द्वेष नष्ट भया है । बहुरि युगपत् सकल प्रकाशी ज्ञान विषैं क्षयोपशमरूप परोक्ष मतिज्ञान अर श्रुतज्ञान न संभवै है; तातैं इंद्रियजनित ज्ञान नष्ट भया है, तिस कारण करि केवली कैं साता-असाता वेदनीय के उदय तैं सुख-दुःख नाही हैं, जातैं सुख-दुःख इंद्रियजनित हैं । बहुरि वेदनीय का सहकारी कारण मोहनीय का अभाव भया है; तातैं वेदनीय का उदय होत संतैं भी अपना सुख-दुःख देनेरूप कार्य करने कौं समर्थ नाहीं ।।२७३।।

याका हेतु कहै हैं—

समयट्ठिदिगो बंधो, सादस्सुदयप्पिगो जदो तस्स ।
तेण असादस्सुदओ, सादसरूवेण परिणमदि ।।२७४।।

समयस्थितिको बंधः, सातस्योदयात्मको यतस्तस्य ।
तेनासातस्योदयः, सातस्वरूपेण परिणमति ।।२७४।।

टीका – जातैं तिस केवली कैं साता वेदनीय का बंध एक समय स्थिति कौं लीएं है; तातैं उदयस्वरूप ही है; तातैं केवली कैं असाता वेदनीय का उदय साता-रूप होइकरि परिणमै है । काहेतैं ? केवली के विषैं विशुद्धता विशेष है; तातैं असाता

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

वेदनीय की अनुभागशक्ति अनंत गुणी हीन भई है अर मोह का सहाय था, ताका अभाव भया है; तातैं असाता वेदनीय का अप्रगट सूक्ष्म उदय है। बहुरि जो साता वेदनीय बंधै है, ताका अनुभाग अनंत गुणा है, जातैं साता वेदनीय की स्थिति की अधिकता तो संक्लेशता तैं हो है, अनुभाग की अधिकता विशुद्धता तैं हो है। सो केवली कैं विशुद्धता विशेष है; तातैं स्थिति का तौ अभाव है, बंध है सो उदयरूप परिणमता ही हो है। अर ताकैं साता वेदनीय का अनुभाग अनंत गुणा हो है, ताही तैं जो असाता का भी उदय है, सो सातारूप होइकरि परिणमैं है।

कोऊ कहै कि साता का उदय असातारूप होइ परिणमै है – असैं क्यों न कहो ?

ताका उत्तर असैं कहैं कि साता का स्थितिबंध दोय समय का ठहरै वा अन्य प्रकार कहैं असाता ही का बंध होइ; तातैं तैं कह्या, तैसैं कहना संभवै नाहीं ॥२७४॥

एदेण कारणेण दु, सादस्सेव दु णिरंतरो उदओ।
तेणासादणिमित्ता, परीसहा जिणवरे णत्थि ॥२७५॥

एतेन कारणेन तु, सातस्यैव तु निरंतर उदयः।
तेनासातनिमित्ताः, परीषहाः जिनवरे न सन्ति ॥२७५॥

टीका – इसही कारण करि केवली कैं निरंतर साता ही का उदय है, तींहि कारण करि असाता के उदय तैं निपजैं असा क्षुधा, पिपासा, शीत, उष्ण, दंशमशक, चर्या, शय्या, बंध, रोग, तृणस्पर्श, मल – ए ग्यारह परीषह केवली विषैं नाहीं हैं। सूत्र के कर्ता **'एकादश जिने'** बहुरि **'वेदनीये शेषाः'** असा कह्या है, सो कारण असाता वेदनीय का उदय विषैं कार्यरूप परीषह का उपचार करि कह्या है। मुख्यपनैं करि परीषह का केवली कैं अभाव है।

अथ अभेदविवक्षा करि उदय प्रकृति एक सौ बाईस (१२२)। तहां मिथ्यादृष्टि विषैं उदय एक सौ सतरह (११७), अनुदय तीर्थंकर, आहारकद्विक, सम्यक्त्व मोहनी, मिश्रमोहनी – ए पांच। बहुरि पांच व्युच्छित्ति अर नारकानुपूर्वी मिलि करि सासादन विषैं अनुदय ग्यारह, उदय एक सौ ग्यारह है। बहुरि नव व्युच्छित्ति अर अवशेष तीन आनुपूर्वी का अनुदय है अर सम्यग्मिथ्यात्व का उदय है; तातैं मिश्र अनुदय बाइस, उदय सौ (१००)। बहुरि व्युच्छित्ति एक का अनुदय है अर च्यारि आनुपूर्वी अर सम्यक्त्व मोहनीय का उदय है; तातैं असंयत विषैं अनुदय

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अठारह, उदय एक सौ च्यारि । बहुरि व्युच्छित्ति सतरह है; तातैं देशसंयत विषैं अनुदय पैंतीस, उदय सित्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति आठ का अनुदय है अर आहारक द्विक का उदय है; तातैं प्रमत्त विषैं अनुदय इकतालीस, उदय इक्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति पांच है; तातैं अप्रमत्त विषैं अनुदय छियालीस, उदय छिहंत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि; तातैं अपूर्वकरण विषैं अनुदय पचास, उदय बहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति छह; तातैं अनिवृत्तिकरण विषैं अनुदय छप्पन, उदव छ्यासठि । बहुरि व्युच्छित्ति छह; तातैं सूक्ष्मसांपराय विषैं अनुदय बासठि, उदय साठि । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं उपशांतकषाय विषैं अनुदय तरेसठि, उदय गुणसठि । बहुरि व्युच्छिति दोय; तातैं क्षीणकषाय विषैं अनुदय पैंसठि, उदय सत्तावन । बहुरि व्युच्छित्ति सोलह का अनुदय अर तीर्थंकरत्व का उदय है; तातैं सयोग केवली विषैं अनुदय असी, उदय बियालीस । बहुरि व्युच्छित्ति तीस; तातैं अयोगकेवली विषैं अनुदय एक सौ दश, उदय बारह जानना ।।२७५।।

ए कहे उदय, अनुदय तिनकौं दोय गाथानि करि कहैं हैं—

सत्तरसेक्कारख चदुसहियसयं सगिगिसीदि छदुसदरी ।
छावट्ठि सट्ठि णवसग, वण्णास दुदालबारुदया ।।२७६।।

सप्तदशैकादशशून्यचतुःसहितशतं सप्तैकाशीतिः षट्द्विसप्ततिः ।
षट्षष्टिः षष्टिः नवसप्त, पंचाशत् द्विचत्वारिंशद्द्वादशोदयाः ।।२७६।।

टीका – मिथ्यादृष्टयादिक गुणस्थाननि विषैं अनुक्रम तैं एक सौ सतरह, एक सौ ग्यारह, एक सौ, एक सौ च्यारि, सत्यासी, इक्यासी, छिहंतरि, बहत्तरि, छ्यासठि, साठि, गुणसठि, सत्तावन, बियालीस, बारह – प्रकृति उदयरूप जाननी ।।२७६।।

पंचेक्कारसबावीसट्ठारसपंचतीस इगिछादालं ।
पण्णं छप्पण्णं बितिपणसट्ठि असीदि दुगुणपणवण्णं ।।२७७।।

पंचैकादशद्वाविंशत्यष्टादशपंचत्रिंशदेकषट्चत्वारिंशत् ।
पंचाशत् षट्पंचाशत् द्वित्रिपंचषष्टिरशीतिः द्विगुणपंचपंचाशत् ।।२७७।।

टीका – तिन मिथ्यादृष्टयादिक गुणस्थाननि विषैं अनुक्रम तैं पांच, ग्यारह, बाईस, अठारह, पैंतीस, इकतालीस, छियालीस, पचास, छप्पन, बासठि, तरेसठि, पैंसठि, असी, एक सौ दश – प्रकृति अनुदयरूप जाननी ।।२७७।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगें उदय प्रकृतिनि की उदीरणा कहैं हैं—

उदयस्सुदीरणस्स य, सामित्तादो ण विज्जदि विसेसो ।
मोत्तूण तिण्णिठाणं, पमत्त जोगी अजोगी य ॥२७८॥

उदयस्योदीरणायाश्च, स्वामित्वात् न विद्यते विशेषः ।
मुक्त्वा त्रयस्थानं, प्रमत्तं योग्ययोगी च ॥२७८॥

टीका – उदय कैं अर उदीरणा कैं स्वामित्वपने तैं किछू विशेष नाहीं । प्रमत्त, सयोगी, अयोगी – इन तीनों गुणस्थानों को छोडि अन्यत्र उदयवत् उदीरणा जाननी ॥२७८॥

तहां विशेष कहा ? सो कहैं हैं—

तीसं बारस उदयुच्छेदं केवलिणमेकदं किच्चा ।
सादमसादं च तहिं, मणुवाउगमवणिदं किच्चा ॥२७९॥

त्रिंशत् द्वादश उदयोच्छेदं केवलिनोरेकत्र कृत्वा ।
सातमसातं च तत्र, मानवायुष्कमपनीतं कृत्वा ॥२७९॥

टीका – सयोगी-अयोगी विषैं व्युच्छित्ति तीस अर बारह है, तिनकौ एकट्ठी करि तिनमेंस्यों साता-असाता, मनुष्यायु ए घटाइए ॥२७९॥

अवणिदतिप्पयडीणं, पमत्तविरदे उदीरणा होदि ।
णत्थित्ति अजोगिजिणे, उदीरणा उदयपयडीणं ॥२८०॥

अपनीतत्रिप्रकृतीनां, प्रमत्तविरते उदीरणा भवति ।
नास्तीति अयोगिजिने, उदीरणा उदयप्रकृतीनां ॥२८०॥

टीका – घटाई जे तीन प्रकृति साता, असाता, मनुष्यायु इनकी उदीरणा की व्युच्छित्ति प्रमत्तसंयत विषैं ही भई; तातैं प्रमत्त विषैं व्युच्छित्ति आठ है । बहुरि अयोगी जिन विषैं उदीरणा का अभाव है । तातैं तिन तीन प्रकृतिनि कौं घटाएं अवशेष गुणतालीस प्रकृति रहीं, तिनकी उदीरणा की व्युच्छित्ति सयोगी विषैं जाननी । तिन तीन प्रकृतिनि की उदीरणा अप्रमत्तादिक गुणस्थाननि विषैं नाहीं है, तातैं इनकी उदीरणा संक्लेश परिणामनतैं हो है ॥२८०॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगें उदीरणा की व्युच्छित्ति कहैं हैं—

पण णव इगि सत्तरसं, अट्ठट्ठ य चदुर छक्क छच्चेव ।
इगि दुग सोलुगदालं, उदीरणा होंति जोगंता ।।२८१।।

पंच नवैकं सप्तदश, अष्टाष्ट च चत्वारि षट्कं षट् चैव ।
एकं द्विकं षोडशैकोनचत्वारिंशदुदीरणा भवंति योग्यंताः ।।२८१।।

टीका – मिथ्यादृष्टयादि सयोगी पर्यंत उदीरणा की व्युच्छित्ति अनुक्रम तै पांच, नव, एक, सतरह, आठ, आठ, च्यारि, छह, छह, एक, दोय, सोलह, गुणतालीस – प्रकृति जाननी । असैं व्युच्छित्ति होतें मिथ्यादृष्टि विषैं उदीरणा एक सौ सतरह, अनुदीरणा तीर्थंकर, आहारक-द्विक, सम्यक्त्वमोहनी, मिश्रमोहनी – ए पांच । बहुरि व्युच्छित्ति पांच अर नारकानुपूर्वी की उदीरणा नाहीं; तातैं सासादन विषैं अनुदीरणा ग्यारह, उदीरणा एक सौ ग्यारह । बहुरि व्युच्छित्ति नव अर अवशेष तीन आनुपूर्वी की उदीरणा नाहीं अर सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति की उदीरणा हैं; तातैं मिश्र विषैं अनुदीरणा बाईस, उदीरणा सौ (१००) । बहुरि व्युच्छित्ति एक की उदीरणा नाहीं, सम्यक्त्वमोहनीय अर च्यारि आनुपूर्वी की उदीरणा है; तातैं असंयत विषैं अनुदीरणा अठारह, उदीरणा एक सौ च्यारि । बहुरि व्युच्छित्ति सतरह; तातैं देशसंयत विषैं अनुदीरणा पैंतीस, उदीरणा सित्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति आठ की उदीरणा नाहीं अर आहारकद्विक की उदीरणा है; तातैं प्रमत्त विषैं अनुदीरणा इकतालीस, उदीरणा इक्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति आठ; तातैं अप्रमत्त विषैं अनुदीरणा गुणचास, उदीरणा तेहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि; तातैं अपूर्वकरण विषैं अनुदीरण तरेपन, उदीरणा गुणहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति छह; तातैं अनिवृत्तिकरण विषैं अनुदीरणा गुणसठि, उदीरणा तरेसठि । बहुरि व्युच्छित्ति छह; तातैं सूक्ष्मसांपराय विषैं अनुदीरणा पैंसठि । उदीरणा सत्तावन । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं उपशांत कषाय विषैं अनुदीरणा छ्यासठि, उदीरणा छप्पन । बहुरि व्युच्छित्ति दोय; तातैं क्षीणकषाय विषैं अनुदीरणा अडसठि, उदीरणा चौवन । बहुरि व्युच्छित्ति सोलह की उदीरणा नाहीं अर तीर्थंकर की उदीरणा है; तातैं सयोग विषैं अनुदीरणा तियासी, उदीरणा गुणतालीस । बहुरि व्युच्छित्ति गुणतालीस; तातैं अयोगी विषैं उदीरणा का अभाव, अनुदीरणा एक सौ बाईस है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

उदीरणा कहा कहिए ? **'अपक्वपाचनं उदीरणा'** दीर्घ काल में जिनका उदय आवैं असे अगले निषेक, तिनकौं अपकर्षण करि थोरा काल में जिनका उदय आवै, असै निषेकनि को उदयावली विषैं देय करि उदयरूप अनुभव करि कर्मपना छुडाय और पुद्गल पर्यायरूप परिणमावना, ताकौं उदीरणा कहिए ।

भावार्थ – जे कर्मप्रकृति बंधरूप भई थीं, ते अपनी-अपनी गुणहानि विषैं जे निषेक तिनका अनुक्रम तैं उदयरूप हो हैं । बहुरि जे निषेक आगामी बहुत काल में उदय प्रावैंगे, तिन निषेकनि कौं जे निषेक थोरे काल में उदय आवैं, तिन विषैं मिलाा देना ।

जैसे आम बहुत काल में पचता, ताकौं पाल में देइ थोरे काल में पचाया, तैसे जे कां परमाणू का समुदायरूप निषेक बहुत काल में उदय आवने योग्य थे, तिनकौं थोरे काल में उदय आवने योग्य कीए । बहुरि तिनको उदयरूप अनुभव करि तिन कर्मप्रमाणूनि कौं कर्मपने तैं छुडाय और पर्यायरूप परिणमावना तिसका नाम उदीरणा है ।।२८१।।

आगै कही जो उदीरणा वा अनुदीरणा रूप प्रकृतिनि की संख्या, ताकौं दोय गाथनि करि कहैं हैं—

सत्तरसेक्कारखचदुसहियसयं सगिगिसीदि तियसदरी ।
णवतिण्णिसट्ठि सगछक्कवण्ण चउवण्णमुगुदालं ।।२८२।।

पंचेक्कारसबावीसट्ठारस पंचतीस इगिणवदालं ।
तेवण्णेक्कुणसट्ठी, पणछक्कडसट्ठि तेसीदी[1] ।।२८३।।

सप्तदशैकादशखचतुः सहितशतं सप्तैकाशीतिः त्रिसप्ततिः ।
नवत्रिषष्ठिः सप्तषट्कपंचाशत् चतुःपंचाशत् एकोनचत्वारिंशत् ।।२८२।।

पंचैकादशद्वाविंशत्यष्टादश पंचत्रिंशत् एकनवचत्वारिंशत् ।
त्रिपंचाशदेकोनषष्टिः, पंचषट्काष्टषष्टिः त्र्यशीतिः ।।२८३।।

टीका – मिथ्यादृष्टचादिक तेरह गुणस्थाननि विषैं एक सौ सतरह, एक सौ ग्यह, पूरा एक सौ, एक सौ च्यारि, सत्यासी, इक्यासी, तिहत्तरि, गुणहत्तरि, तरेसठि,

1-दीरणा त्रिभङ्गी की रचना संदृष्टि के लिये देखिये अर्थसंदृष्टि अधिकार ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सत्तावन, छप्पन, चौवन, गुणतालीस उदीरणा प्रकृति अनुक्रम तैं जाननी। बहुरि पांच, ग्यारह, बाईस, अठारह, पैंतीस, इकतालीस, गुणचास, तरेपन, गुणसठि, पैंसठि अर छ्यासठि, अडसठि, तियासी अनुदीरणा प्रकृति जाननी ॥२८२-२८३॥

ऐसे गुणस्थाननि विषै उदय उदीरणा त्रिभंगी कहि, अब गत्यादिक मार्गणा विषै उदय त्रिभंगी कह्या चाहै हैं। सो प्रथम गत्यादिक विषैं उदय का अनुक्रम कहिए हैं—

गदियादिसु जोग्गाणं, पयडिप्पहुदीणमोघसिद्धाणं।
सामित्तं णेदव्वं, कमसो उदयं समासेज्ज ॥२८४॥

गत्यादिषु योग्यानां, प्रकृतिप्रभृतीनामोघसिद्धानां ।
स्वामित्वं नेतव्यं, क्रमश उदयं समासाद्य ॥२८४॥

टीका – योग्य जे प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेश गुणस्थान वर्णन विषैं सिद्ध भए तिनका स्वामित्वपना गत्यादिमार्गणानि विषैं आगम के अनुसारि क्रम तैं उदय की अपेक्षा करि प्राप्त करणा ॥२८४॥

तहां प्रथम परिभाषा पंच गाथानि करि कहै हैं—

गदिआणुआउउदओ, सपदे भूपुण्णबादरे ताओ।
उच्चुदओ णरदेवे, थीणतिगुदओ णरे तिरिये ॥२८५॥

गत्यान्वायुरुदयः, सपदे भूपूर्णबादरे आतपः ।
उच्चोदयो नरदेवे, स्त्यानत्रिकोदयो नरे तिरश्चि ॥२८५॥

टीका – विवक्षित पर्याय का पहिला समय ही तीहिं विवक्षित पर्याय संबंधी गति वा आनुपूर्वी वा आयु का उदय हो है, सपदे कहिए समान एक पर्याय सम्बंधी गति का वा आनुपूर्वी वा आयु का उदय एक जीव कैं युगपत् हो है। बहुरि आतप प्रकृति का उदय बादर पर्याप्तक पृथ्वीकायिक जीव ही कैं है और कैं नाहीं। बहुरि उच्च गोत्र का उदय किसी मनुष्य विषैं वा सर्व देव के भेदनि विषैं पाइए है। बहुरि स्त्यानगृद्धयादिक तीन निद्रा का उदय मनुष्य अर तिर्यंच विषैं ही है, अन्यत्र नाहीं ॥२८५॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

संखाउगणरतिरिए, इंदियपज्जत्तगादु थीणतियं ।
जोग्गमुदेदुं वज्जिय, आहारविगुव्विणुट्ठवगे ॥२८६॥

संख्यायुष्कनरतिरश्चि, इंद्रियपर्याप्तकात् स्त्यानत्रयं ।
योग्यमुदेतुं वर्जयित्वा, आहारविगूर्वणोत्थापके ॥२८६॥

टीका – बहुरि संख्यात वर्ष की जिनकी आयु है, असै जो कर्मभूमियां मनुष्य वा तिर्यंच तिनही के इंद्रियपर्याप्ति पूर्ण भए पीछे स्त्यानगृद्धचादिक तीन प्रकृति उदय योग्य हैं, तहां भी आहारक ऋद्धि अर वैक्रियिक ऋद्धि का धारक मनुष्य कैं स्त्यान-गृद्धचादिक तीन प्रकृति उदय योग्य नाहीं ॥२८६॥

अयदापुण्णे ण हि थी, संढोवि य घम्मणारयं मुच्चा ।
थीसंढयदे कमसो, णाणुचऊ चरिमतिण्णाणू ॥२८७॥

अयतापूर्णे न हि स्त्री, षंढोऽपि च धर्मनारकं मुक्त्वा ।
स्त्रीषंढायते क्रमशो, नानुचत्वारि चरमत्रयानुः ॥२८७॥

टीका – निवृत्ति-अपर्याप्त-असंयत गुणस्थान विषैं स्त्रीवेद का उदय नाहीं, जातैं असंयत मरि स्त्री नाहीं उपजैं है । बहुरि धर्मा नरक बिना नपुंसक वेद का भी उदय नाहीं, जातैं पूर्वैं नरकायु बांध्या होइ, असैं तिर्यंच वा मनुष्य सम्यक्त्व सहित मरि धर्मा नरक विषैं ही उपजैं हैं, याही तैं असंयत विषैं स्त्री वेदी कै तो च्यारचों आनुपूर्वी का उदय नाहीं । नपुंसक कैं नरक बिना तीन आनुपूर्वी का उदय नाहीं है ॥२८७॥

इगिविगलथावरचऊ, तिरिए अपुण्णो णरेवि संघडणं ।
ओरालदु णरतिरिए, वेगुव्वदु देवणेरयिए ॥२८८॥

एकविकलस्थावरचत्वारि, तिरश्चि अपूर्णो नरेऽपि संहननं ।
औरालद्विनरतिरश्चि, वैक्रियिकद्विदेवनैरयिके ॥२८८॥

टीका – एकेंद्री, बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री – ए जाति नामकर्म अर स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण – ए तिर्यंच विषैं ही उदय योग्य हैं । अपर्याप्त प्रकृति मनुष्य विषैं भी उदय योग्य है । बहुरि छह संहनन, औदारिक शरीर वा अंगोपांग, तिर्यंच,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

मनुष्य विषैं ही उदय योग्य हैं । बहुरि वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग देव, नारक विषैं ही उदय योग्य है ॥२८८॥

तेउतिगूणतिरिक्खे, सुज्जोवो बादरेसु पुण्णेसु ।
सेसाणं पयडीणं, ओघं वा होदि उदओ दु ॥२८६॥

तेजस्त्रिकोनतिर्यक्षु, उद्योतो बादरेषु पूर्णेषु ।
शेषाणां प्रकृतिनामोघवत् भवति उदयस्तु ॥२८६॥

टीका – तेजस्काय, वातकाय, साधारण वनस्पतिकाय इन बिना अन्य बादर पर्याप्त तिर्यंचनि विषैं उद्योत प्रकृति का उदय है । बहुरि अवशेष प्रकृतिनि का उदय का अनुक्रम गुणस्थानवत् जानना ॥२८६॥

ऐसैं पंच परिभाषा सूत्रनि करि उदय का नियम कहि करि च्यारि गतिनि विषैं उदय प्रकृति कह्या चाहैं हैं । तहां प्रथम नरकगति विषैं कहैं हैं —

थीणतिथीपुरिसूणा, घादी णिरयाउणीचवेयणियं ।
णामे सगवचिठाणं, णिरयाणू णारयेसुदया ॥२६०॥

स्त्यानत्रिस्त्रीपूरुषोना, घातिनो निरयायुर्नीचवेदनीयं ।
नाम्नि स्वकवचः स्थानं, निरयानुः नारकेषूदयाः ॥२९०॥

टीका – स्त्यानगृद्ध्यादिक तीन अर स्त्री, पुरुषवेद इन पंच बिना घातिकर्मनि की बियालीस प्रकृति (४२) अर नरकायु, नीच गोत्र, साता-असाता वेदनीय नामकर्म विषैं नारकी जीवा कैं भाषापर्याप्ति स्थान विषैं होइ – ऐसैं गुणतीस प्रकृति (२६) अर नारकानुपूर्वी – ए छिहंतरि प्रकृति नरकगति विषैं उदय योग्य हैं ॥२९०॥

तिन गुणतीस प्रकृतिनि कौं कहैं हैं —

वेगुव्वतेजथिरसुहदुग दुग्गदिहुंडणिमिणपंचिंदी ।
णिरयगदि दुब्भगागुरु, तसवण्णचऊ य वचिठाणं ॥२६१॥

वैगूर्वतेजः स्थिरशुभद्विकं दुर्गतिहुंडनिर्माणपंचेंद्रियं ।
निरयगतिर्दुर्भगागुरु, त्रसवर्णचत्वारि च वचःस्थानं ॥२९१॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – वैक्रियिक द्विक, तैजस, कार्माण, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ अप्रशस्त विहायोगति, हुंडसंस्थान, निर्माण, पंचेंद्री, नरकगति, दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, अयशस्कीर्ति – ए च्यारि; अगुरुलघु, उपघात, परघात, उछ्वास – ए च्यारि, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक – ए च्यारि, वर्ण, गंध, रस, स्पर्श – ए च्यारि – असैं गुणतीस प्रकृति नारकी जीवनि कैं वचन पर्याप्ति के ठिकानैं उदयरूप हैं ।।२९१।।

आगैं धर्मानरक विषैं उदय की व्युच्छित्ति कहै हैं—

मिच्छमणंतं मिस्सं, मिच्छादितिए कमा छिदी अयदे ।
बिदियकसाया दुब्भगणादेज्जदुगाउणिरयचऊ ।।२९२।।

मिथ्यमनंतं मिश्रं, मिथ्यात्वादित्रये क्रमात् छित्तिरयते ।
द्वितीयकषाया दुर्भगानादेयद्विकायुर्निरयचत्वारि ।।२९२।।

टीका – मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति एक मिथ्यात्व, सासादन विषैं व्युच्छित्ति च्यारि – अनंतानुबंधी, मिश्रविषैं व्युच्छित्ति एक मिश्र मोहनी, असंयत विषैं व्युच्छित्ति बारह अप्रत्याख्यान च्यारि, दुर्भग, अनादेय, अयशस्कीर्ति, नरक आयु, नरकगति, नारकानुपूर्वी, वैक्रियिक शरीर, वैक्रियिक अंगोपांग – ए बारह ।

सो असैं होतैं धर्मा नरक[1] विषैं मिथ्यादृष्टि विषैं मिश्रमोहनी अर सम्यक्त्व मोहनी – ए अनुदय दोय, उदय चौहत्तरि (७४) । बहुरि मिथ्यात्व व्युच्छित्ति अर नारकानुपूर्वी का उदय नाहीं; तातैं सासादन विषैं अनुदय चार, उदय बहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि का उदय नाहीं अर मिश्रमोहनीय का उदय पाइए; तातैं मिश्र विषैं अनुदय सात, उदय गुणहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति एक का उदय नाही अर सम्यक्त्वमोहनी अर नारकानुपूर्वी का उदय पाइए; तातैं असंयत विषैं अनुदय छह; उदय सत्तरि है ।।२९२।।

१–गाथा २९२ के आधार से–

प्रथम नरक रचना

मि	सा	मि	अ
१	४	१	१२
७४	७२	६९	७०
२	४	७	६

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगैं द्वितीयादिक पृथ्वीनि विषैं कहैं हैं—

बिदियादिसु छसु पुढविसु, एवं णवरि य असंजदट्ठाणे
णत्थि णिरयाणुपुव्वी, तिस्से मिच्छेव वोच्छेदो ॥२९३॥

द्वितीयादिषु षट्सु पृथिवीषु, एवं नवरि च असंयतस्थाने ।
नास्ति निरयानुपूर्वी, तस्मात् मिथ्ये एव व्युच्छेदः ॥२९३॥

टीका – वंशादिक[1] पृथ्वीनि विषैं धर्मावत् उदययोग्य प्रकृति छिहंतरि । तहां असंयत विषैं नरकानुपूर्वी का उदय नाहीं, पूर्वैं जिनके नरकायु का बंध भया होइ असा भी सम्यग्दृष्टि वंशादिक पृथ्वीनि विषैं उपजै नाहीं; तातैं मिथ्यादृष्टि विषैं नारकानुपूर्वी अर मिथ्यात्व – ए दोय प्रकृति व्युच्छित्ति हैं । उदय चौहत्तरि अनुदय दोय – मिश्र मोहनी अर सम्यक्त्व मोहनी । बहुरि व्युच्छित्ति दोय; तातैं सासादन विषैं अनुदय च्यारि, उदय बहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि का उदय नाहीं अर मिश्रमोहनीय का उदय पाइए; तातैं मिश्र विषैं अनुदय सात, उदय गुणहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति एक का उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनीय का उदय पाइए; तातैं असंयत विषैं अनुदय सात, उदय गुणहत्तरि है ॥२९३॥

आगैं तिर्यंच गति विषैं कहैं हैं—

तिरिये ओघो सुरणर णिरयाऊउच्च मणुदुहारदुगं ।
वेगुव्वछक्कतित्थं, णत्थि हु एमेव सामण्णे ॥२९४॥

तिरश्चि ओघः सुरनरनिरयायुरुच्चं मनुद्वि आहारद्विकं ।
वैगूर्विकषट्कतीर्थं, नास्ति हि एवमेव सामान्ये ॥२९४॥

१–गाथा २९३ के आधार से– द्वितीयादिनरक रचना

मि	सा	मि	अ
२	४	१	११
७४	७२	६९	६९
२	४	७	७

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – तिर्यंच गति[1] विषैं **ओघ**: कहिए गुणस्थानवत् उदय योग्य एक सौ बाईस; तिनविषैं इहां देव, मनुष्य, नारक आयु तीन, उच्च गोत्र मनुष्यगति वा आनुपूर्वी, आहारक शरीर वा अंगोपांग, वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग, देव-नारकगति वा आनुपूर्वी – ए छह, तीर्थंकर – ए पंद्रह प्रकृति उदय योग्य नाहीं, तातैं उदय योग्य प्रकृति एक सौ सात हैं ।

सो पंच प्रकार तिर्यंचनि विषैं सामान्य तिर्यंच विषै असें ही उदय योग्य प्रकृति एक सौ सात, गुणस्थान पांच । तहां व्युच्छित्ति गुणस्थाननि विषैं कही, तैसैं ही पंच, नव इत्यादिक जाननी; तातैं मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति पांच, उदय एक सौ पांच, अनुदय मिश्रमोहनी, सम्यक्त्व मोहनी – दोय । बहुरि सासादन विषैं पंच मिलने तैं अनुदय सात, उदय सौ (१००), व्युच्छित्ति नव । बहुरि नव व्युच्छित्ति अर तिर्यंचानुपूर्वी का उदय नाहीं अर मिश्रमोहनी का उदय; तातैं मिश्र विषैं अनुदय सोलह उदय इक्याणवैं, व्युच्छित्ति एक । बहुरि व्युच्छित्ति एक का उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनी अर तिर्यंचानुपूर्वी का उदय है; तातैं असंयत विषैं अनुदय पंद्रह, उदय बाणवैं, व्युच्छित्ति अप्रत्याख्यान च्यारि, तिर्यंचानुपूर्वी, दुर्भग, अनादेय, अयशस्कीर्ति – ए आठ । बहुरि व्युच्छित्ति आठ का उदय नाहीं; तातैं देशसंयत विषैं अनुदय तेईस, उदय चौरासी, व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् आठ ॥२९४॥

आगैं पंचेंद्री तिर्यंच वा पर्याप्त तिर्यंच विषैं कहैं हैं—

थावरदुगसाहारणताविगिविगलूण ताणि पंचक्खे ।
इत्थिअपज्जत्तूणा, ते पुण्णे उदयपयडीओ ॥२९५॥

स्थावरद्विकसाधारणातपैकविकलोनाः ताः पंचाक्षे ।
स्त्र्यपर्याप्तोनास्ताः, पूर्णे उदयप्रकृतयः ॥२९५॥

१–गाथा २९४ के आधार से— सामान्यतिर्यग् रचना

मि	सा	मि	अ	दे
५	९	१	८	८
१०५	१००	९१	९२	८४
२	७	१६	१५	२३

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका –स्थावर, सूक्ष्म, साधारण आतप, एकेंद्री, बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री – इन आठ बिना सामान्य तिर्यंच विषैं उदय योग्य प्रकृति कही थीं, ते पंचेंद्री तिर्यंच[१] के उदय योग्य निन्याणवै प्रकृति हैं। तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्व, अपर्याप्त – ए दोय, उदय सत्याणवै, अनुदय मिश्रमोहनी, सम्यक्त्व मोहनी – ए दोय। सासादन विषैं व्युच्छित्ति अनंतानुबंधी च्यारि, उदय पच्याणवै, अनुदय दोय मिलने तैं च्यारि। मिश्र विषैं व्युच्छित्ति मिश्रमोहनी एक, उदय इक्याणवै, अनुदय तिर्यंचानुपूर्वी का उदय नाही अर मिश्रमोहनी का उदय पाइए अर व्युच्छित्ति का च्यारि मिलने तैं आठ। असंयत विषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त आठ अर मिश्र संबंधी आठ विषैं तहां की व्युच्छित्ति एक मिलाए अर सम्यक्त्व मोहनी अर तिर्यंचानुपूर्वी का उदय पाइए; तातैं इनकौ घटाएं अनुदय सात, उदय बाणवै। बहुरि देशसंयत विषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् आठ, अनुदय आठ मिलावने तैं पंद्रह, उदय चौरासी है।

बहुरि पंचेंद्री-तिर्यंच कैं उदय योग्य प्रकृति मेंस्यों स्त्रीवेद अर अपर्याप्त – ए दोय प्रकृति घटाएं, पंचेंद्री पर्याप्तक के उदय योग्य प्रकृति सित्याणवै – तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति एक मिथ्यात्व, अनुदय सम्यक्त्व मोहनी, मिश्रमोहनी – दोय, उदय पच्याणवै। बहुरि सासादन विषैं व्युच्छित्ति अनंतानुबंधी च्यारि, एक मिलने तैं अनुदय तीन, उदय चौराणवै। बहुरि मिश्र विषैं व्युच्छित्ति मिश्र-मोहनी एक, अनुदय च्यारि, व्युच्छित्ति की अर तिर्यंचानुपूर्वी के मिलने तैं अर मिश्र मोहनी के घटने तैं सात, उदय निवैं। बहुरि असंयत विषैं व्युच्छित्ति आठ, अनुदय एक मिलने तैं अर सम्यक्त्व-मोहनी अर तिर्यंचानुपूर्वी के घटने तैं छह, उदय इक्याणवै। बहुरि देशसंयत विषैं व्युच्छित्ति आठ, अनुदय आठ मिलने तै चौदह, उदय तियासी ॥२९५॥

पुंसंढूणित्थिजुदा, जोणिणिये अविरदे ण तिरयाणू।
पुण्णिदरे थी थीणति, परघाददु पुण्णउज्जोवं ॥२९६॥

१–गाथा २९५ के आधार से – पंचेंद्रिपर्याप्ततिर्यग् रचना

मि	सा	मि	अ	दे
१	४	१	८	८
९५	९४	९०	९१	८३
२	३	७	६	१४

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पुंषंढोनस्त्रीयुता, योनिमती अविरते न तिर्यगानुः ।
पूर्णेतरे स्त्री स्त्यानत्रि, परघातद्वि पूर्णोद्योतं ॥२६६॥

टीका – बहुरि योनिमत् तिर्यंच[1] जो तिर्यंचरणी ताके उदययोग्य प्रकृति पंचेंद्री पर्याप्त कै सत्याणवैं कहीं, तामैं पुरुषवेद, नपुंसकवेद घटाएं स्त्रीवेद मिलाएं छिनवे हो हैं। तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं एक मिथ्यात्व, सासादन विषैं व्युच्छित्ति अनंतानुबंधी च्यारि अर तिर्यंचानुपूर्वी ए पांच, जातैं अविरत सम्यग्दृष्टि मरि तिर्यंचरणी न उपजैं। बहुरि मिश्र विषैं व्युच्छित्ति एक मिश्रमोहनी, असंयत विषैं आठ मेंस्यों तिर्यंचानुपूर्वी बिना व्युच्छित्ति सात। देशसंयत विषैं गुणस्थानवत् व्युच्छित्ति आठ।

ऐसे होतें मिथ्यादृष्टि विषैं मिश्रमोहनी, सम्यक्त्व मोहनी अनुदय दोय, उदय चौराणवै। एक व्युच्छित्ति भई; तातैं सासादन विषैं अनुदय तीन, उदय तिराणवै। व्युच्छित्ति पांच का उदय नाहीं, मिश्रमोहनी का उदय; तातैं मिश्र विषैं अनुदय सात, उदय निवासी। व्युच्छित्ति एक का उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनी का उदय; तातैं असंयत विषैं अनुदय सात, उदय निवासी। व्युच्छित्ति सात; तातैं देशसंयत विषैं अनुदय चौदह, उदय बियासी।

बहुरि लब्धि अपर्याप्तक पंचेंद्री तिर्यंच विषैं योनिमत्तिर्यंच विषैं उदय योग्य छिनवै प्रकृति कहीं थीं, तिनमेंस्यों इतनी प्रकृति घटाइए, स्त्रीवेद, स्त्यानगृद्धयादिक तीन, परघात, उच्छ्वास, पर्याप्ति, उद्योत ॥२९६॥

सुरगदिदु जसादेज्जं, आदीसंठाणसंहदीपणगं ।
सुभगं सम्मं मिस्सं, हीणा तेऽपुण्णसंढजुदा ॥२९७॥

१–गाथा २९६ के आधार से— योनिमतीतिर्यग्रचना

मि	सा	मि	अ	दे
१	५	१	७	८
९४	९३	८९	८९	८२
२	३	७	७	१४

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

स्वरगतिद्वि यश आदेय, मादिसंस्थानसंहतिपंचकं ।
सुभगं सम्यक्त्वं मिश्रं, हीनाः ता अपूर्णषंढयुताः ।।२९७।।

टीका – सुस्वर, दुःस्वर, प्रशस्त-अप्रशस्त विहायोगति, यशस्कीर्ति, आदेय आदि का पंच संस्थान, आदि का पंच संहनन, सुभग सम्यक्त्वमोहनी, मिश्रमोहनी – ए सत्ताईस घटाइए अर अपर्याप्त, नपुंसकवेद मिलाएं असैं पंचेंद्री लब्धि अपर्याप्तक कैं उदय योग्य प्रकृति इकहत्तरि हैं । गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि है ।।२९७।।

आगैं मनुष्यगति विषैं कहैं हैं—

मणुवे ओघो थावर, तिरियादावदुगएयवियलिंदी ।
साहरणिदराउतियं, वेगुव्वियछक्क परिहीणो ।।२९८।।

मानवे ओघः स्थावर, तिर्यगातपद्विकैकविकलेंद्रियं ।
साधारणेतरायुस्त्रयं, वैगूर्विकषट्कं परिहीनः ।।२९८।।

टीका – मनुष्य च्यारि प्रकार – तिनविषैं सामान्य मनुष्य विषैं उदय योग्य प्रकृति गुणस्थान विषैं उदय योग्य प्रकृति एक सौ बाईस मेंस्यों स्थावर, सूक्ष्म, तिर्यंच गति वा आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, एकेंद्रियादिक च्यारि साधारण, नरक, तिर्यंच, देव आयु वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग, देव, नरक गति वा आनुपूर्वी – ए छह – असैं बीस प्रकृति घटाए एक सौ दोय प्रकृति जाननी ।।२९८।।

मिच्छमपुण्णं छेदो, अणमिस्सं मिच्छगादितिसु अयदे ।
बिदियकसायणराणू, दुब्भगऽणादेज्जअज्जसयं ।।२९९।।

मिथ्यात्वमपूर्णं छेदः, अनमिश्रं मिथ्यकादित्रिषु अयते ।
द्वितीयकषायनरानुः, दुर्भगानादेयायशस्कं ।।२९९।।

टीका – तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यात्व, अपर्याप्त – दोय; सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि; मिश्र विषै मिश्रमोहनी; असंयत विषै अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि, मनुष्यानुपूर्वी, दुर्भग, अनादेय, अयशस्कीर्ति – ए आठ ।।२९९।।

देसे तदियकसाया, णीचं एमेव मणुससामण्णे ।
पज्जत्तेवि य इत्थीवेदापज्जत्तिपरिहीणो ।।३००।।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

देशेतृतीयकषाया, नीचमेवमेव मनुष्यसामान्ये ।
पर्याप्तेऽपि च स्त्री, वेदापर्याप्तिपरिहीना ।।३००।।

टीका – देशसंयत विषै तीसरा प्रत्याख्यान-कषाय च्यारि अर नीच गोत्र – ए पांच । ऊपरि प्रमत्तादिक विषै गुणस्थानोक्त पांच, च्यारि, छह, छह, एक, दोय, सोला, तीस, बारा व्युच्छित्ति जाननी ।

तहां मिथ्यादृष्टि विषैं अनुदय मिश्रमोहनी, सम्यक्त्व-मोहनी, आहारक द्विक, तीर्थंकर – ए पांच, उदय सत्याणवै । बहुरि व्युच्छित्ति दोय, तातैं सासादन विषैं अनुदय सात, उदय पच्याणवै । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि अर मनुष्यानुपूर्वी का उदय नाहीं अर मिश्रमोहनी का उदय; तातै मिश्र विषैं अनुदय ग्यारह, उदय इक्याणवै । बहुरि व्युच्छित्ति एक का उदय नाहीं अर सम्यक्त्वमोहनी अर मनुष्यानुपूर्वी का उदय तातैं असंयत विषैं अनुदय दश, उदय बाणवै । बहुरि व्युच्छित्ति आठ; तातैं देशसंयत विषैं अनुदय अठारह, उदय चौरासी । बहुरि व्युच्छित्ति पांच का उदय नाहीं, आहारकद्विक का उदय; तातैं प्रमत्त विषैं अनुदय इकईस, उदय इक्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति पांच; तातैं अप्रमत्त विषैं अनुदय छब्बीस, उदय छिहंतरि । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि; तातैं अपूर्वकरण विषैं अनुदय तीस, उदय बहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति छह; तातैं अनिवृत्तिकरण विषैं अनुदय छत्तिस, उदय छचासठि । बहुरि व्युच्छित्ति छह; तातैं सूक्ष्मसांपराय विषैं अनुदय बियालीस, उदय साठि । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं उपशांतकषाय विषैं अनुदय तियालीस, उदय गुणसठि । बहुरि व्युच्छित्ति दोय; तातैं क्षीणकषाय विषैं अनुदय पैंतालीस, उदय सत्तावन । बहुरि व्युच्छित्ति सोलह का उदय नाहीं अर तीर्थंकरत्व का उदय; तातैं सयोगी विषैं अनुदय साठि, उदय बियालीस । बहुरि व्युच्छित्ति तीस; तातैं अयोगी विषैं अनुदय निवै, उदय बारह ।

बहुरि तैसें ही पर्याप्त-मनुष्य विषैं, सामान्य मनुष्य विषैं कही प्रकृति तिनमैंस्यों स्त्रीवेद अर अपर्याप्त घटाएं उदय योग्य प्रकृति सौ (१००) । तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यात्व, सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि, मिश्र विषैं एक, असंयत विषैं आठ, देशसंयत विषैं पांच, अप्रमत्त विषैं च्यारि, अपूर्वकरण विषैं छह, अनिवृत्तिकरण विषैं स्त्रीवेद बिना पांच ही । ऊपरि सामान्य मनुष्यवत् व्युच्छित्ति जाननी ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं अनुदय पांच पूर्वोक्त, उदय पिच्याणवै । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं सासादन विषैं अनुदय छह, उदय चौराणवैं । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि अर मनुष्यानुपूर्वी का उदय नाहीं अर मिश्र मोहनी का उदय; तातैं मिश्र विषै अनुदय दश, उदय निवैं । बहुरि व्युच्छित्ति एक का उदय नाहीं अर सम्यक्त्व प्रकृति, मनुष्यानुपूर्वी का उदय, तातै असंयत विषैं अनुदय नव, उदय इक्याणवै । बहुरि व्युच्छित्ति आठ; तातैं देशसंयत विषैं अनुदय सतरह, उदय तियासी । बहुरि व्युच्छित्ति पांच का उदय नाहीं, आहारद्विक का उदय; तातै प्रमत्त विषैं अनुदय बीस, उदय असी । बहुरि व्युच्छित्ति पांच; तातैं अप्रमत्त विषैं अनुदय पचीस, उदय पिचहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि; तातैं अपूर्वकरण विषैं अनुदय गुणतीस, उदय इकहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति छह; तातैं अनिवृत्तिकरण विषैं अनुदय पैंतीस, उदय पैंसठि । बहुरि व्युच्छित्ति पांच; तातैं सूक्ष्मसांपराय विषैं अनुदय चालीस, उदय साठि । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं उपशांत-कषाय विषैं अनुदय इकतालीस, उदय गुणसठि । बहुरि व्युच्छित्ति दोय; तातैं क्षीणकषाय विषैं अनुदय तियालीस, उदय सत्तावन । बहुरि व्युच्छित्ति सोला का उदय नाहीं, तीर्थंकरत्व का उदय; तातैं सयोगी विषैं अनुदय अठावन, उदय बियालीस । बहुरि व्युच्छित्ति तीस; तातैं अयोगी विषैं अनुदय अठचासी, उदय बारा है ।।३००।।

मणुसिणिएत्थीसहिदा, तित्थयराहारपुरिससंढूणा ।
पुण्णिदरेव अपुण्णे, सगाणुगदिआउगं णेयं ।।३०१।।

मनुष्यिण्यां स्त्रीसहिताः, तीर्थकराहारपुरुषषंढोनाः ।
पूर्णेतर इवापूर्णे, स्वकानुगत्यायुष्कं ज्ञेयं ।।३०१।।

टीका – बहुरि मनुष्यणी[१] विषैं उदय योग्य प्रकृति छिनवै हैं । पर्याप्त मनुष्य विषैं सौ कहीं, तिनमें स्त्रीवेद मिलावना अर तीर्थंकर, आहाकद्विक, पुरुषवेद, नपुंसकवेद घटावनां । तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं एक मिथ्यात्व; सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि अर मनुष्यानुपूर्वी – ए पांच; मिश्र विषैं मिश्रमोहनी एक; असंयत विषैं दूसरा कषाय च्यारि, दुर्भग, अनादेय, अयशस्कीर्ति – ए सात; देशसंयत विषैं तीसरा कषाय च्यारि, नीच-गोत्र – ए पांच; प्रमत्त विषैं स्त्यानगृद्धि-त्रिक, अप्रमत्त, अपूर्वकरण विषैं गुणस्थानवत् च्यारि अर छह, अनिवृत्तिकरण के भागनि

१–नोट–इस पृष्ठ की तालिका को अगले पृष्ठ पर देखें ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

विषैं अनुक्रम तैं स्त्रीवेद, संज्वलन क्रोध, मान, माया – ए च्यारि, सूक्ष्मसांपराय विषैं सूक्ष्म लोभ, उपशांत मोह विषैं वज्रनाराच, नाराच – ए दोय क्षीणकषाय विषैं सोला; सयोगी विषै तीर्थंकर नाहीं; तातैं ग्यारह ।

ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं अनुदय मिश्रमोहनी, सम्यक्त्व-मोहनी – दोय, उदय चौराणवै । बहुरि व्युच्छित्ति एक, तातैं सासादन विषैं अनुदय तीन, उदय तेराणवै । बहुरि व्युच्छित्ति पांच का उदय नाहीं, मिश्रमोहनी का उदय; तातैं मिश्र विषैं अनुदय सात, उदय निवासी । बहुरि व्युच्छित्ति एक का उदय नाही, सम्यक्त्व-मोहनी का उदय; तातैं असंयत विषैं अनुदय सात, उदय निवासी । बहुरि व्युच्छित्ति सात; तातैं देशसंयत विषैं अनुदय चौदह, उदय बियासी । बहुरि व्युच्छित्ति पांच; तातैं प्रमत्त विषैं अनुदय उगणीस, उदय सतहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति तीन; तातैं अप्रमत्त विषैं अनुदय बाईस, उदय चहोत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि; तातैं अपूर्वकरण विषैं अनुदय छव्वीस, उदय सत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति छह; तातैं अनिवृत्तिकरण विषैं अनुदय बत्तीस, उदय चौसठि । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि तातैं सूक्ष्मसांपराय विषैं अनुदय छत्तीस, उदय साठि । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं उपशांतकषाय विषैं अनुदय सैतीस, उदय गुणसठि । बहुरि व्युच्छित्ति दोय; तातैं क्षीणकषाय विषैं अनुदय गुणतालीस, उदय सत्तावन । बहुरि व्युच्छित्ति सोलह; तातैं सयोगी विषैं अनुदय पचावन, उदय इकतालीस । बहुरि व्युच्छित्ति तीस; तातैं अयोगी विषैं अनुदय पिच्यासी, उदय ग्यारह ।

बहुरि मनुष्य लब्धि-अपर्याप्तक विषैं उदय प्रकृति इकहत्तरि, तिर्यंच लब्धि अपर्याप्तक विषैं इकहत्तरि कही तिनमें तिर्यंच गति वा आनुपूर्वी वा आयु घटावनी । मनुष्यगति वा आनुपूर्वी वा आयु मिलावनी । गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि है ।।३०१।।

---

१. गाथा ३०१ के आधार से— योनिमन्मनुष्यरचना ।

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
१	५	१	७	५	३	४	६	४	१	२	१६	३०	११
९४	९३	८९	८९	८२	७७	७४	७०	६४	६०	५९	५७	४१	११
२	३	७	७	१४	१९	२२	२६	३२	३६	३७	३९	५५	८५

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगैं भोगभूमि मनुष्य वा तिर्यंच विषैं दोय गाथानिकरि कहैं हैं—

मणुसोघं वा भोगे, दुब्भगचउणीचसंढथीणतियं ।
दुग्गदितित्थमपुण्णं, संहदिसंठाणचरिमपणं ॥३०२॥

हारदुहीणा एवं, तिरये मणुदुच्चगोदमणुवाउं ।
अवणिय पक्खिव णीचं, तिरियदुतिरियाउउज्जोवं ॥३०३॥

मनुष्यौघ इव भोगे, दुर्भगचतुर्नीचषंढस्त्यानत्रयं[1] ।
दुर्गतितीर्थमपूर्णं, संहतिसंस्थानचरमपंच ॥३०२॥

आहारद्विहीना एवं, तिरश्चि मनुद्विउच्चगोत्रमानवायुः ।
अपनीय प्रक्षिप्य नीचं, तिर्यग्द्वितिर्यगायुरुद्योतं[2] ॥३०३॥

टीका – भोगभूमियां मनुष्य विषैं सामान्य मनुष्यवत् एक सौ दोय – तामैंस्यों दुर्भग, दुःस्वर, अनादेय, अयशस्कीर्ति – ए च्यारि, नीच गोत्र, नपुंसक वेद, स्त्यानगृद्ध्यादिक तीन, अप्रशस्त विहायोगति, तीर्थंकरत्व, अपर्याप्त, अंत के पांच संहनन, अंत के पंच संस्थान, आहारक द्विक – इन चौबीस बिना उदय योग्य अठहत्तरि । तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यात्व, सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि, मिश्र विषैं मिश्र मोहनी, असंयत विषैं दूसरा कषाय च्यारि, मनुष्यायु – ए पांच ।

ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं मिश्र मोहनी, सम्यक्त्व मोहनी – ए अनुदय दोय, उदय छिहंतरि । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं सासादन विषैं अनुदय तीन, उदय पिचहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि अर मनुष्यानुपूर्वी का उदय नाहीं अर मिश्र

१–गाथा ३०२ के आधार से—

१ भोगभूमिमनुष्यरचना ।

मि	सा	मि	अ
१	४	१	५
७६	७५	७१	७२
२	३	७	६

२–गाथा ३०३ के आधार से—

२ भोगभूमितिर्यग्रचना ।

मि	सा	मि	अ
१	४	१	५
७७	७६	७२	७३
२	३	७	६

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

मोहनी का उदय; तातैं मिश्रविषै अनुदय सात, उदय इकहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति एक का उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनी, मनुष्यानुपूर्वी का उदय; तातैं असंयत विषैं अनुदय छह, उदय बहत्तरि है ।

अैसैं ही भोगभूमियां तिर्यंच विषैं भोगभूमियां मनुष्यवत् अठहत्तरि । तिनमेंस्यों मनुष्य-गति वा आनुपूर्वी, उच्चगोत्र, मनुष्यायु – ए च्यारि दूर करनी अर नीचगोत्र, तिर्यंचगति वा आनुपूर्वी, तिर्यंचायु, उद्योत – ए पांच मिलावनी – अैसैं उदय योग्य प्रकृति गुणयासी । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्व, सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि मिश्र विषैं मिश्रमोहनी, असंयत विषैं दूसरा कषाय च्यारि तिर्यंचायु – ए पांच व्युच्छित्ति ।

अैसैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं मिश्रमोहनी, सम्यक्त्वमोहनी अनुदय दोय, उदय सतहत्तरि । बहुरि एक व्युच्छित्ति; तातैं सासादन विषैं अनुदय तीन, उदय छिहंतरि । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि, तिर्यंचानुपूर्वी का उदय नाहीं, मिश्रमोहनी का उदय; तातैं मिश्र विषैं अनुदय सात, उदय बहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति एक का उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनी अर तिर्यंचानुपूर्वी का उदय; तातैं असंयत विषैं अनुदय छह, उदय तिहंत्तरि है ।।३०२ । ३०३।।

आगैं देवगति विषैं कहै हैं—

भोगं व सुरे णरचउणराउवज्जूण सुरचउसुराउं ।
खिव देवे णेवित्थी, इत्थिम्मि ण पुरिसवेदो य ।।३०४।।

भोग इव सुरे नरचतुर्नरायुर्वज्र्योनित्वा सुरचतुःसुरायुः ।[1]
क्षिप्त्वा देवे नैव स्त्री, स्त्रियां न पुरुषवेदश्च ।।३०४।।

१–गाथा ३०४ के आधार से–

सौधर्माद्युपरिमग्रैवे=यो ७६				
व्यु	१	४	१	६
उ	७४	७३	६९	७०
अ	२मि	३सा	७मि	६अ

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – देवनि विषैं भोगभूमि मनुष्यवत् अठहत्तरि। तहां मनुष्यगति वा आनुपूर्वी, औदारिक शरीर वा अंगोपांग, मनुष्यायु, वज्रवृषभनाराच संहनन एक – ए छह घटावनी अर देवगति वा आनुपूर्वी, वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग, देवायु – ए पंच मिलावनी।

असैं सामान्य देव विषैं उदय योग्य सतहत्तरि। तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यात्व, सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि, मिश्र विषैं मिश्रमोहनी एक, असंयत विषैं दूसरा कषाय च्यारि, देवगति वा आनुपूर्वी, वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग, देवायु – ए नव।

असैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं सम्यक्त्व मोहनी, मिश्रमोहनी – ए अनुदय दोय, उदय पिचहत्तरि। बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं सासादन विषैं अनुदय तीन, उदय चहोत्तरि। बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि, देवानुपूर्वी इनका उदय नाहीं, मिश्रमोहनी का उदय; तातैं मिश्र विषैं अनुदय सात, उदय सत्तरि। बहुरि व्युच्छित्ति एक का उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनी देवानुपूर्वी का उदय; तातैं असंयत विषैं अनुदय छह, उदय इकहत्तरि।

बहुरि देवनि विषैं पुरुष वेद ही का उदय है अर देवांगना विषैं स्त्रीवेद ही का उदय है; तातैं सौधर्मादिक उपरिम ग्रैवेयक पर्यंत देवनि विषैं उदय-योग्य प्रकृति स्त्रीवेद बिना छिहंतरि हैं। अन्य सर्व सामान्य देववत् रचना है। तहां मिथ्यादृष्ट्यादिक च्यारि गुणस्थाननि विषैं व्युच्छित्ति एक, च्यारि, एक, नव, उदय चहोत्तरि, तेहत्तरि, गुणहत्तरि, सत्तरि; अनुदय दोय, तीन, सात, छह अनुक्रम तैं जाननी ॥३०४॥

आगैं अनुदिशादिक विषैं कहैं हैं—

अविरदठाणं एक्कं, अणुद्दिसादिसु सुरोघमेव हवे ।[1]
भवणतिकप्पित्थीणं, असंजदे णत्थि दे वाणू ॥३०५॥

अविरतस्थानमेकमनुदिशादिषु सुरौघमेव भवेत् ।
भवनत्रिकल्पस्त्रीणामसंयते नास्ति देवानुः ॥३०५॥

नोट–१–इस पृष्ठ की तालिका को अगले पृष्ठ पर देखें।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका –नव अनुदिश, पंच अनुत्तर – इन चौदह विमाननि विषैं एक असंयत गुणस्थान ही है; तातैं जे देवनि विषैं असंयत गुणस्थान विषैं उदय रूप कही थीं, तेई सत्तरि प्रकृति तहां उदय योग्य जाननी ।

बहुरि भवनत्रिक अर कल्पवासिनी देवांगना इनकैं सामान्य देववत् उदय योग्य प्रकृति सतहत्तरि – तिनविषैं केवल देवनि विषैं स्त्रीवेद बिना अर केवल देवांगना विषैं पुरुष वेद बिना छिहंत्तरि प्रकृति उदय योग्य जाननी । सो भवनत्रिक अर कल्पवासिनी देवांगना इनविषैं सम्यग्दृष्टि उपजैं नाहीं; तातैं देवानुपूर्वी का चौथे गुणस्थान में उदय नाही । अैसें सासादन विषैं व्युच्छित्ति पांच अर असंयत विषैं व्युच्छित्ति आठ कहनी, और सब सुगम है । मिथ्यादृष्टचादिक विषैं व्युच्छित्ति एक, पांच, एक, आठ; उदय चहोत्तरि, तेहत्तरि, गुणहत्तरि, गुणहत्तरि; अनुदय दोय, तीन, सात, सात जाननी ।।३०५।।

आगै इंद्रिय-मार्गणा विषैं तीन गाथानि करि कहैं हैं—

तिरियअपुण्णं वेगे, परघादचउक्कपुण्णसाहरणं ।
एइंदियजसथीणतिथावरजुगलं च मिलिदव्वं ।।३०६।।

रिणमंगोवंगतसं, संहदिपंचक्खमेवमिह वियले ।
अवणिय थावरजुगलं, साहरणेयक्खमादावं ।।३०७।।

खिव तसदुग्गदिदुस्सरमंगोवंगं सजादिसेवट्टं ।
ओघं सयले साहरणिगिविगलादावथावरदुगूणं ।।३०८।।

१–गाथा ३०५ के आधार से—

१ अनुदिशानुत्तररचना

अ
०
७०
०

२ भवनत्रयकल्पस्त्रीयोग्य ७६

व्यु	१	५	१	८
उ	७४	७३	६९	६९
अ	२	३	७	७
	मि	सा	मि	अ

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तिर्यगपूर्णमिवैके, परघातचतुष्कपूर्णसाधारणं ।
एकेंद्रिययशः स्त्यानत्रिस्थावरयुगलं मेलितव्यं ॥३०६॥

ऋणमंगोपांगत्रसं, संहतिपंचाक्षमेवमिह विकले[१] ।
अपनीय स्थावरयुगलं, साधारणैकाक्षमातापं ॥३०७॥

क्षिप्त्वा त्रसदुर्गतिदुःस्वरमंगोपांगं स्वजातिसृपाटिकं ।
ओघः सकले[२] साधारणैकविकलातापस्थावरद्विकोनं ॥३०८॥

टीका – एकेंद्रिय मार्गणा विषैं तिर्यंच लब्धि अपर्याप्तवत् इकहत्तरि । तहां परघात, आतप, उद्योत, उच्छ्वास, पर्याप्त, साधारण, एकेंद्री, यशस्कीर्ति, स्त्यानगृद्धित्रिक, स्थावर, सूक्ष्म – ए तेरा मिलावनी अर औदारिक अंगोपांग, त्रस, सृपाटिका-संहनन, पंचेंद्री – ए च्यारि घटावनी – असैं उदय योग्य प्रकृति असी । तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यात्व, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण – ए पांच अर स्त्यानगृद्धि तीन, परघात, उद्योत, उच्छ्वास – इन छहों का एकेंद्री कैं सासादन विषैं उदय नाहीं; तातैं छह ए – असैं सर्व ग्यारह । सासादन विषैं अनंतानुबंधी

---

१ – गाथा ३०६, ३०७ एवं ३०८ के आधार से –

१ विकलत्रयरचना

मि	सा
१०	५
८१	७१
०	१०

२ पचेंद्रियरचना

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
२	४	१	१७	८	५	४	६	६	१	२	१६	३०	१२
१०९	१०६	१००	१०४	८७	८१	७६	७२	६६	६०	५९	५७	४२	१२
५	८	१४	१०	२७	३३	३८	४२	४८	५४	५५	५७	७२	१०२

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

च्यारि, एकेंद्रिय, स्थावर – ए छह व्युच्छित्ति । असैं मिथ्यादृष्टि विषैं अनुदय नास्ति, उदय असी । बहुरि व्युच्छित्ति ग्यारह; तातैं सासादन विषैं अनुदय ग्यारह, उदय गुणहत्तरि है ।

बहुरि बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री – इन विकलत्रय विषैं एकेंद्रीवत् असी, तिनमेंस्यों स्थावर, सूक्ष्म, साधारण, एकेंद्री, आतप – ए पांच घटाइए; त्रस, अप्रशस्त विहायोगति, दुःस्वर, अंगोपांग, अपनी-अपनी जाति, सृपाटिक संहनन – ए छह मिलाइए – असैं उदय योग्य प्रकृति इक्यासी । तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यात्व, अपर्याप्त, स्त्यानगृद्धित्रिक, परघात, उच्छ्वास, उद्योत, अप्रशस्त विहायोगति, दुःस्वर – ए दश । सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि, अपनी एक जाति – ए पांच व्युच्छित्ति । असैं मिथ्यादृष्टि विषैं अनुदय नास्ति, उदय इक्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति दश; तातैं सासादन विषैं अनुदय दश, उदय इकहत्तरि ।

बहुरि पंचेंद्रीय विषैं गुणस्थानवत् एक सौ बाईस । तहां साधारण, एकेंद्रियादिक जाति च्यारि, आतप, स्थावर, सूक्ष्म – ए आठ घटाएं उदययोग्य प्रकृति एक सौ चौदह अर गुणस्थान चौदह । तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषै मिथ्यात्व, अपर्याप्त दोय सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि मिश्रादिक विषैं गुणस्थानवत् एक, सतरह, आठ, पांच, च्यारि, छह, छह, एक, दोय, सोला, तीस, बारह व्युच्छित्ति जाननी ।

तहां मिथ्यादृष्टि विषैं अनुदय गुणस्थानवत् पांच, उदय एक सौ नव । बहुरि व्युच्छित्ति दोय अर नारकानुपूर्वी का उदय नाहीं; तातैं सासादन विषैं अनुदय आठ, उदय एक सौ छह । मिश्रादिक विषैं गुणस्थानवत् अनुक्रम तैं उदय सौ, एक सौ च्यारि, सत्यासी, इक्यासी, छिहंतरि, बहत्तरि, छ्यासठि, साठि, गुणसठि, सत्तावन, बियालीस, बारा प्रकृति जाननी । मूल में आठ घाटि हैं; तातैं मिश्रादिक विषै अनुक्रम तैं अनुदय चौदह, दश, सत्ताईस, तेतीस, अठतीस, बियालीस, अठतालीस, चौवन, पचावन, सतावन, बहत्तरि, एक सौ दोय प्रकृति जाननी ॥३०६–३०८॥

आगैं कायमार्गणा विषैं कहैं हैं—

एवं वा पणकाये, ण हि साहारणमिणं च आदावं ।
दुसु तद्दुगमुज्जोवं, कमेण चरिमम्हि आदावं ॥३०९॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

एकं वा पंच काये, नहि साधारणमिदं चातापं[1] ।
द्वयोस्तद्द्विकमुद्योत:, क्रमेण चरमे आतप: ।।३०९।।

टीका – कायमार्गणा विषैं पांच काय विषैं एकेंद्रीवत् असी तहां साधारण घटाए पृथ्वीकाय विषैं उदय योग्य गुण्यासी, बहुरि तिन असी मेंस्यों साधारण, आतप ए दोय घटाए अप्कायिक विषैं उदय योग्य अठहत्तरि बहुरि तिन असीनि मेंस्यों साधारण, आतप, उद्योत – ए तीन घटाएं तेजस्कायिक, वातकायिक विषैं उदय योग्य सतहत्तरि। बहुरि तिन असीनि मेंस्यों आतप घटाए वनस्पति कायिक विषैं उदय योग्य गुण्यासी तहां पृथ्वीकायिक विषैं उदय योग्य गुण्यासी, गुणस्थान दोय, जातैं **'णहि सासणो अपुण्णो साहारणसुहुमगेय तेउदुगे'** । इस वचन तें पृथ्वी, अप, प्रत्येक वनस्पति विषैं ही सासादन मरि उपजै है। तहां उत्पन्न भया सासादन कै तोहिं गुणस्थान विषैं उदय योग्य नाहीं असी मिथ्यात्व, आतप उद्योत, सूक्ष्म, अपर्याप्त ए पांच प्रकृति अर तिनके सासादन तौ निर्वृत्ति अपर्याप्त दशा ही में होय अर स्त्यानगृद्धि तीन तौ इंद्रिय-पर्याप्ति पूर्ण भए उदय योग्य होइ । उच्छ्वास, उच्छ्वास पर्याप्ति पूर्ण भए उदय योग्य होइ। परघात शरीर पर्याप्ति पूर्ण भए उदय योग्य होइ, तातैं इन पंचनि का उदय सासादन विषैं नाहीं, तातैं मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति दश है। सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि, एकेंद्री स्थावर – ए छह व्युच्छित्ति हैं। असैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं अनुदय नास्ति, उदय गुण्यासी, बहुरि व्युच्छित्ति दश, तातैं सासादन विषैं अनुदय दश, उदय गुणहत्तरि।

बहुरि अपकाय विषैं उदय योग्य अठहत्तरि तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त दश मेंस्यों आतप बिना नव, सासादन विषैं पूर्वोक्त छह – अैसैं होते मिथ्या

१–गाथा ३०६ के आधार से—

पृथ्वीकायरचना ।

मि	सा
१०	६
७६	६६
०	१०

अप्कायरचना ।

मि	सा
६	६
७८	६६
०	१

तेजोवातकायरचना ।

मि
०
७७
०

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

दृष्टि विषैं अनुदय नास्ति, उदय अठहत्तरि। बहुरि व्युच्छित्ति नव, तातैं सासादन विषैं अनुदय नव, उदय गुणहत्तरि ।

बहुरि तेजस्कायिक, वातकायिक विषैं उदय योग्य प्रकृति सतहत्तरि, गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि ।

बहुरि वनस्पतिकायिक विषैं उदय योग्य प्रकृति गुण्यासी । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्व, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, स्त्यानगृद्धित्रिक, परघात, उच्छ्वास, उद्योत, एवं दश सासादन विषैं पूर्वोक्त छह असैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं अनुदय नास्ति, उदय गुण्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति दश, तातैं सासादन विषैं अनुदय दश, उदय गुणहत्तरि है ॥३०९॥

आगैं त्रसमार्गणा विषैं कहैं हैं—

ओघं तसे ण थावर, दुगसाहरणेयतावमथ ओघं ।
मणवयणसत्तगे ण हि, ताविगिविगलं च थावराणुचओ[1] ॥३१०॥

ओघस्त्रसे न स्थावर, द्विकसाधारणैकातपमथ ओघः ।
मनोवचनसप्तके[2] नहि, आतापैकविकलं च स्थावरानुचतुष्कं ॥३१०॥

टीका – त्रसकायिक विषैं गुणस्थानवत् एक सौ बाईस तहां स्थावर, सूक्ष्म, साधारण, एकेंद्री, आतप ए पांच घटाएं उदय योग्य प्रकृति एक सौ सतरह, गुणस्थान तहां चौदह । व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यात्व अपर्याप्त, ए दोय । सासादन विषैं अनंतानुबंधी चतुष्क, विकलत्रय तीन एवं सात । मिश्रादिक विषैं अनुक्रमतैं गुणस्थानत्

१-२–गाथा ३१० के आधार से—

त्रसकाययोग्य ११७

	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
व्यु	२	७	१	१७	८	५	४	६	६	१	२	१६	३०	१२
उ	११२	१०९	१००	१०४	८७	८१	७६	७२	६६	६०	५९	५७	४२	१२
अ	५	८	१७	१३	३०	३६	४१	४५	५१	५७	५८	६०	७५	१०५

मनो ४ वा ३ योग्यप्रकृतयः १०९

स	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	स	उ	क्षी	स
व्यु	१	४	१	१३	८	५	४	६	६	१	२	१६	४२
उ	१०४	१०३	१००	१००	८७	८१	७६	७२	६६	६०	५९	५७	४२
अ	५	६	९	९	२२	२८	३३	३७	४३	४९	५०	५२	६७

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

एक, सतरह, आठ, पांच, च्यारि छह, छह, एक दोय, सोला, तीस, बारा व्युच्छित्ति जाननी ।

ऐसें होतें मिथ्यादृष्टि विषैं अनुदय पांच, गुणस्थानवत् उदय एक सौ बारह । बहुरि व्युच्छित्ति दोय अर नारकापूर्वी का उदय नाहीं, तातैं सासादन विषैं अनुदय आठ, उदय एक सौ नव मिश्रादि गुणस्थाननि विषैं गुणस्थानवत् अनुक्रम तैं उदय सौ, एक सौ च्यारि, सित्यासी, इक्यासी, छिहंतरि, बहत्तरि, छयासठि, साठि, गुणसठि, सत्तावन, बियालीस, बारह प्रकृति है । बहुरि मूल में पंच प्रकृति उदय योग्य नाहीं; तातैं मिश्रादिक विषैं अनुक्रम तैं अनुदय सतरह, तेरह, तीस, छत्तीस, इकतालीस, पैंतालीस, इक्यावन, सत्तावन, अठावन, साठि, पिचहत्तरि, एक सौ पांच प्रकृति हैं ।

बहुरि योगमार्गणा विषैं च्यारि प्रकार मनोयोग अर सत्य, असत्य, उभय वचनयोग – इन सप्तनि विषैं गुणस्थानवत् एक सौ बाईस । तिनविषैं आतप, एकेंद्री, विकलत्रय, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, च्यारि आनुपूर्वी – इन तेरह बिना उदय योग्य प्रकृति एक सौ नव, गुणस्थान तेरह । व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यात्व, सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि, मिश्र विषैं मिश्रमोहनी, असंयत विषैं सतरह मेंस्यों च्यारि आनुपूर्वी घटाए तेरह, च्यारि आनुपूर्वी का तौ उदय पर भव कौं गमन करतें होइ अर मनोयोग, वचनयोग अपना पर्याप्ति पूर्ण भएं पीछें होइ; तातैं आनुपूर्वी न कही । देशसंयत विषैं तीसरा कषाय च्यारि, तिर्यंचायु, उद्योत, नीचगोत्र, तिर्यंचगति – ए आठ । प्रमत्तादि विषैं गुणस्थानवत् पांच, च्यारि, छह, छह, एक, दोय, सोलह । बहुरि अयोगी विषैं योग का अभाव है; तातैं तीस अर बारा मिलाइ सयोगी विषैं बियालीस व्युच्छित्ति जाननी ।

ऐसें होतें मिथ्यादृष्टि विषैं गुणस्थानोक्त अनुदय पांच, उदय एक सौ च्यारि । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं सासादन विषैं अनुदय छह, उदय एक सौ तीन । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि का अनुदय, मिश्र मोहनी का उदय; तातैं मिश्र विषैं अनुदय नव, उदय सौ । बहुरि व्युच्छित्ति एक का अनुदय, सम्यक्त्व मोहनी का उदय; तातैं असंयत विषैं अनुदय नव, उदय सौ । बहुरि व्युच्छित्ति तेरह; तातैं देशसंयत विषैं अनुदय बाईस, उदय सित्यासी । आगैं प्रमत्तादि विषैं गुणस्थानवत् अनुक्रम तैं उदय इक्यासी, छिहंतरि, बहत्तरि, छयासठि, साठि, गुणसठि, सत्तावन, बियालीस जानना । मूल में तेरह प्रकृति उदय योग्य नाही; तातैं प्रमत्तादि विषैं

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अनुदय अठाईस, तैंतीस, सैंतीस, बियालीस, गुणचास, पचास, बावन, सतसठि जानना ।।३१०।।

आगैं अनुभय वचन अर औदारिक काययोग विषैं कहै हैं—

अणुभयवचि वियलजुदा, ओघमुराले ण हारदेवाऊ ।
वेगुव्वछक्कणरतिरियाणु अपज्जत्तणिरयाऊ ।।३११।।

अनुभयवचसि विकलयुता, ओघ औराले नाहारदेवायुः ।
वैगूर्वषट्कनरतिरियानुः अपर्याप्तनिरयायुः ।।३११।।

टीका – अनुभय वचन विषैं पूर्वोक्त एक सौ नव में विकलत्रय तीन मिलाएं उदय योग्य प्रकृति एक सौ बारह, गुणस्थान तेरह । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति एक मिथ्यात्व । सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि, विकलत्रय तीन – एवं सात । मिश्रादिक विषैं पूर्वोक्तवत् एक, तेरह, आठ, पांच, च्यारि, छह, छह, एक, दोय, सोला, बियालीस व्युच्छित्ति हैं ।

अैसें होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं गुणस्थानवत् अनुदय पांच, उदय एक सौ सात । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं सासादन विषैं अनुदय छह, उदय एक सौ छह । मिश्रादिक विषैं पूर्वोक्तवत् उदय सौ, सौ, सित्यासी, इक्यासी, छिहंतरि, बहत्तरि, छयासठि, साठि, गुणसठि, सत्तावन, बियालीस जानना । पूर्वोक्त तैं उदय योग्य तीन प्रकृति बंधती हैं; तातैं मिश्रादिक विषैं क्रम तैं अनुदय बारह, बारह, पचीस, इकतीस, छत्तीस, चालीस, छियालीस, बावन, तरेपन, पंचावन, सत्तरि प्रकृति जाननी ।

बहुरि औदारिक[१] काययोग विषैं गुणस्थानवत् एक सौ बाईस । तहां आहारक द्विक, देवायु, वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग, देव-नारक-गति वा आनुपूर्वी –

१–गाथा ३११ के आधार से— औदारिक काययोग रचना

	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स
व्यु	४	९	१	७	८	३	४	६	६	१	२	१६	४२
उ	१०६	१०२	९४	९४	८७	७९	७६	७२	६६	६०	५९	५७	४२
अ	३	७	१५	१५	२२	३०	३३	३७	४३	४९	५०	५२	६७

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ए छह, मनुष्य-तिर्यंच आनुपूर्वी, अपर्याप्त, नरकायु – इन तेरह बिना उदय योग्य प्रकृति एक सौ नव, गुणस्थान तेरह। तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं गुणस्थानवत् पांच में अपर्याप्त बिना च्यारि। सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि, एकेंद्री, स्थावर, विकलत्रय – ए नव। मिश्र विषैं एक मिश्रमोहनी। असंयत विषैं दूसरी कषाय च्यारि, दुर्भग आदि तीन – एवं सात। देशसंयत विषैं गुणस्थानवत् आठ, इस औदारिक योग की प्रवृत्ति होतैं आहारक योग की प्रवृत्ति न होइ, एकैं काल दोऊ योग न होइ; तातैं प्रमत्त विषैं व्युच्छित्ति स्त्यानगृद्धयादिक तीन, अप्रमत्तादिक विषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्तवत् च्यारि, छह, छह, एक, दोय, सोला, बियालीस हैं।

ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं अनुदय मिश्रमोहनी, सम्यक्त्व मोहनी, तीर्थंकर – ए तीन, उदय एक सौ छह। बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि; तातैं सासादन विषैं अनुदय सात, उदय एक सौ दोय। बहुरि व्युच्छित्ति नव का उदय नाही अर मिश्रमोहनी का उदय; तातैं मिश्र विषैं अनुदय पंद्रह, उदय चौराणवै। बहुरि व्युच्छित्ति एक का उदय नाही, सम्यक्त्व मोहनीय का उदय; तातैं असंयत विषैं अनुदय पंद्रह, उदय चौराणवै। बहुरि व्युच्छित्ति सात; तातैं देशसंयत विषैं अनुदय बाईस, उदय सित्यासी। बहुरि व्युच्छित्ति आठ; तातैं प्रमत्त विषैं अनुदय तीस, उदय गुण्यासी। बहुरि व्युच्छित्ति तीन; तातैं अप्रमत्त विषैं अनुदय तेतीस, उदय छिहंतरि। उपरि अपूर्वकरणादिक विषैं क्रम तैं पूर्ववत् उदय बहत्तरि, छ्यासठि, साठि, गुणसठि, सत्तावन, बियालीस जानना। अनुदय सैंतीस, तीयालीस, गुणचास, पचास, बावन, सतसठि जानना ॥३११॥

आगैं औदारिक-मिश्र-काययोग विषैं दोय गाथानि करि कहैं है—

तम्मिस्से पुण्णजुदा, ण मिस्सथीणतियसरविहायदुगं।
परघादचओ अयदे, णादेज्जदुदुब्भगं ण संढिच्छी ॥३१२॥

साणे तेसिं छेदो, वामे चत्तारि चोद्दसा साणे।
चउदालं वोछेदो, अयदे जोगिम्हि छत्तीसं ॥३१३॥

तन्मिश्रे पूर्णयुता, न मिश्रस्त्यानत्रयस्वरविहायोद्विकं।
परघातचत्वार्ययतेऽनादेयद्विदुर्भगं न षंढस्त्री ॥३१२॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

साने तेषां छेदो, वामे चत्वारि चतुर्दश साने ।
चतुश्चत्वारिंशत् व्युच्छेदः, अयते योगिनि षट्त्रिंशत् ।।३१३।।

टीका – तीहि औदारिक[१] मिश्रकाययोग विषैं, औदारिक योग विषैं एक सौ नव कहीं – तिनमें अपर्याप्ति मिलाइए, बहुरि मिश्र मोहनी, स्त्यानगृद्धित्रिक, सुस्वर-दुःस्वर प्रशस्त-अप्रशस्त विहायोगति, परघात, आतप, उद्योत, उच्छ्वास – ए बारा घटाइए – असैं उदययोग्य प्रकृति अठचाणवै, गुणस्थान च्यारि । सामान्य उदय प्रकृति एक सौ बाईस, तिनमें आहारक द्विक, देवायु, वैक्रियिक षट्, मनुष्य तिर्यंचानुपूर्वी, नरकायु, मिश्रमोहनी, स्त्यानगृद्धित्रिक, स्वरद्विक, विहायोगतिद्विक, परघातादि चतुष्क – ए चौईस उदय योग्य नाहीं,जातैं देव-नरक गति संबंधी वा पर्याप्त काल संबंधी वा विग्रहगति संबंधी प्रकृतिनि का इहां उदय नाहीं हैं, यातैं उदय योग्य प्रकृति अठचाणवै ही हैं । तहां औदारिक-मिश्र योगी असंयत गुणस्थानवर्ती कैं अनादेय, अयशस्कीर्ति, दुर्भग, नपुंसक, स्त्री वेद – इनका उदय नाही; तातैं इनकी व्युच्छित्ति सासादन विषैं ही जाननी ।

असैं मिथ्यात्व विषैं मिथ्यात्व, सूक्ष्म,अपर्याप्त, साधारण – ए च्यारि व्युच्छित्ति हैं । आतप प्रकृति पर्याप्त पूर्ण भएं उदय योग्य हैं; तातैं इहां न संभवै है । बहुरि सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि, स्थावर, एकेंद्री, विकलत्रय, अनादेय, अयशस्कीर्ति, दुर्भग, नपुंसक-वेद, स्त्री-वेद – ए व्युच्छित्ति चौदह । बहुरि असंयत विषैं अप्रत्याख्यान-कषाय च्यारि अर क्षीणकषाय पर्यंत औदारिक मिश्र योग संभवै नाही; तातैं ऊपरला गुणस्थानां की भी व्युच्छित्ति इहां ही कहनी । सो देशसंयत संबंधी उद्योत बिना सात, प्रमत्त संबंधी आहारक द्विक स्त्यानगृद्धित्रिक बिना शून्य, अप्रमत्त संबंधी च्यारि, अपूर्वकरण संबंधी छह, अनिवृत्ति-करण संबंधी स्त्री नपुंसक वेद बिना च्यारि, सूक्ष्मसांपराय संबंधी लोभ, उपशांतकषाय संबंधी दोय,

१–गाथा ३१२ के आधार से— औदारिक मिश्रकाययोग रचना

मि	सा	अ	स
४	१४	४४	३६
९६	९२	७९	३६
२	६	१९	६२

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

क्षोणकषाय संबंधी सोलह – ग्रैसैं ग्रसंयत विषैं व्युच्छित्ति चवालीस, बहुरि सयोगी विषैं व्युच्छित्ति छत्तीस, जातैं कपाट समुद्घात समय ग्रौदारिक मिश्र योग है । तहां स्वर-द्विक, विहायोगति-द्विक, परघात, उच्छ्वास – इनका उदय नाहीं ।

ग्रैसैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं सम्यक्त्व मोहनी, तीर्थंकर – ग्रनुदय दोय, उदय छिनवै । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि; तातैं सासादन विषैं ग्रनुदय छह, उदय बाणवै । बहुरि व्युच्छित्ति चौदह का उदय नाहीं, सम्यक्त्व मोहनी का उदय; तातैं ग्रसंयत विषैं ग्रनुदय उगणीस, उदय गुण्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति चवालीस, का उदय नाहीं, तीर्थंकर का उदय; तातैं सयोगी विषैं ग्रनुदय बासठि, उदय छत्तीस ॥३१२-३१३॥

ग्रागैं वैक्रियिक काययोग विषै कहैं हैं—

देवोघं वेगुव्वे, ण सुराणू पक्खिवेज्ज णिरयाऊ ।
णिरयगदिहुंडसंढं, दुग्गदि दुब्भगचग्रो णीचं ॥३१४॥

देवौघः वैगूर्वे च, सुरानुः प्रक्षिप्य निरयायुः ।
निरयगतिहुंडषंढं, दुर्गतिः दुर्भगचत्वारि नीचं ॥३१४॥

टीका – वैक्रियिक-काययोग विषैं सामान्यदेवगतिवत् सतहत्तरि । तिनमें देवानुपूर्वी घटाइए नरकायु, नरकगति, हुंडसंस्थान, नपुंसकवेद, ग्रप्रशस्त विहायोगति दुर्भग, दुःस्वर, ग्रनादेय, ग्रयशस्कीर्ति, नीचगोत्र – ए दश मिलाइए – ग्रैसैं उदय योग्य प्रकृति छियासी । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्व, सासादन विषैं ग्रनंतानुबंधी च्यारि, मिश्र विषैं एक मिश्रमोहनी, ग्रसंयत विषैं दूसरा कषाय च्यारि, देवनरकगति, वैक्रियिक-द्विक, देवनरकायु, दुर्भगादि तीन – ए तेरह ।

ग्रैसैं होतैं मिथ्यादृष्टि मिश्रमोहनी, सम्यक्त्व मोहनी – ग्रनुदय दोय, उदय चौरासी । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं सासादन विषैं ग्रनुदय तीन, उदय तियासी । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि का उदय नाहीं, मिश्रमोहनी का उदय; तातैं मिश्र विषैं ग्रनुदय छह, उदय ग्रसी । बहुरि व्युच्छित्ति एक का उदय नाहीं, सम्यक्त्व मोहनी का उदय; तातैं ग्रसंयत विषैं ग्रनुदय छह, उदय ग्रसी ॥३१४॥

ग्रागैं वैक्रियिक मिश्रयोग विषैं ड्योढ गाथा करि कहैं हैं–

वेगुव्वं वा मिस्से, ण मिस्स परघादसरविहायदुगं ।
साणे ण हुंडसंढं, दुब्भगणादेज्ज ग्रज्जसयं ॥३१५॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

णिरयगदिआउणीचं, ते खित्तयदेऽवणिज्ज थीवेदं ।
छट्ठगुणं वाहारे, ण थीणतियसंढथीवेदं ॥३१६॥

वैगूर्वं वा मिश्रे, न मिश्रं परघातस्वरविहायोद्विकं ।
साने न हुंडषंढं, दुर्भगानादेयमयशस्कं ॥३१५॥

निरयगत्यायुर्नीचं, ताः क्षिपायतेऽपनीय स्त्रीवेदं ।
षष्ठगुणं वाऽहारे, न स्त्यानत्रयषंढस्त्रीवेदं ॥३१६॥

टीका – वैक्रियिक[1] मिश्रयोग विषैं वैक्रियिक योगवत् छियासी । तहां मिश्र मोहनी परघात, उस्वास, सुस्वर, दुःस्वर, प्रशस्त-अप्रशस्त विहायोगति – ए नाही; तातैं उदययोग्य प्रकृति गुण्यासी । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्व, बहुरि सासादनवाला नरक न जाय; यातैं हुंडसंस्थान, नपुंसकवेद, दुर्भगादि ३, नरकगति, नरकायु, नीचगोत्र – इनका सासादन विषैं उदय नाही, असंयत विषैं है अर सासादन विषैं स्त्रीवेद, अनंतानुबंधी च्यारि – ए पांच व्युच्छित्ति हैं, असंयत विषैं अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि, वैक्रियिक द्विक, देव-नरक गति, देव-नरक आयु, दुर्भगादि – ऐसैं व्युच्छित्ति तेरह ।

ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं अनुदय एक सम्यक्त्व मोहनी, उदय अठहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति एक अर हुंडसंस्थानादिक आठ, इनका उदय नाही; तातैं सासादन विषैं अनुदय दस, उदय गुणहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति पांच का उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनी, हुंड संस्थानादिक आठ – इन नव का उदय पाइए; तातैं असंयत विषैं अनुदय छह, उदय तेहत्तरि ।

बहुरि आहारक काययोग विषैं षष्ठम गुणस्थान विषैं उदय इक्यासी । तिनमें इतनी घटाएं स्त्यानगृद्ध्यादिक तीन, नपुंसक-वेद, स्त्रीवेद ॥३१५-३१६॥

१–गाथा ३१५-३१६ के आधार से— वैक्रियिकमिश्ररचना

मि	सा	अ
१	५	१३
७८	६९	७३
१	१०	६

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

दुग्गदिदुस्सरसंहदि, ओरालदु चरिमपंचसंठाणं ।
ते तम्मिस्से सुस्सर, परघाददुसत्थगदि हीणा[1] ॥३१७॥

दुर्गतिदुस्वरसंहतिः, औरालद्वे चरमपंचसंस्थानं ।
तास्तन्मिश्रे सुस्वरं, परघातद्विशस्तगतिर्हीनाः ॥३१७॥

टीका – अप्रशस्त विहायोगति, दुःस्वर, संहनन छह, औदारिक शरीर वा अंगोपांग, अंत का पंच संस्थान – ए बीस नाहीं; तातैं उदय योग्य प्रकृति इकसठि हैं । बहुरि आहारक मिश्र विषैं तिन इकसठि मेंस्यों सुस्वर, परघात, उस्वास, प्रशस्त-विहायोगति – ए च्यारि घटाइए, तहां उदययोग्य प्रकृति सत्तावन हैं । दोऊ विषैं गुणस्थान एक प्रमत्त ही है ॥३१७॥

आगैं कार्माणकाययोग विषैं दोय गाथानि करि कहैं हैं—

ओघं कम्मे सरगदिपत्तेयाहारुरालदुग मिस्सं ।
उवघादपणविगुव्वदुथीणतिसंठाणसंहदी णत्थि ॥३१८॥

ओघः कर्मणि स्वरगतिप्रत्येकाहारौरालद्विकं मिश्रं ।
उपघातपंचवैगूर्वद्विस्त्यानत्रिसंस्थानसंहतिर्नास्ति ॥३१८॥

टीका – कार्माणयोग विषैं सामान्य उदय प्रकृति एक सौ बाईस । तिनमें सुस्वर, दुःस्वर, प्रशस्त-अप्रशस्त विहायोगति, प्रत्येक, साधारण, आहारक शरीर वा अंगोपांग, औदारिक शरीर वा अंगोपांग, मिश्रमोहनी, उपघात, परघात, आतप, उद्योत, उस्वास, वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग, स्त्यानगृद्धित्रिक, संस्थान छह, संहनन छह – इन तेतीस बिना उदय योग्य प्रकृति निवासी ।

१–गाथा ३१७ के आधार से— आ० आ० मि०रचना

प्र	प्र
०	०
६१	५७
०	०

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

इहां प्रश्न – जो अनादि संसार विषैं विग्रहगति, अविग्रहगति विषैं मिथ्यादृष्टि आदि सयोगी पर्यंत सर्व गुणस्थान विषैं कार्मारण का निरंतर उदय है **'विग्रहगतौ कर्मयोगः'** असैं सूत्र विषैं विग्रहगति ही विषैं कार्मणयोग कैसैं कह्या ?

ताका उत्तर–**'सिद्धे सत्यारंभो नियमाय'** सिद्ध होतैं भी बहुरि आरंभ सो नियम के अर्थि है; तातैं इहां असा नियम है, जो विग्रहगति विषैं कार्मारणयोग ही है और योग नाहीं ।

बहुरि प्रश्न – जो विग्रहगति का तौ अर्थ यहु है, जो विग्रह कहिए नवीन शरीर ताके धारने के अर्थि जो गमन होइ, सो विग्रहगति कहिए । तहां मिथ्यादृष्टि, सासादन, असंयत विषैं तौ संभवै । सयोग विषैं विग्रहगति का अभाव है, तहां कार्मण योग कैंसै कह्या ?

ताका समाधान – जो विग्रहगति विषैं कार्मारणयोग है असा तौ नियम नाहीं; तातैं प्रतर, लोकपूरण समुद्घात विषैं तीन समय कार्मारणयोग पाइए है । ॥३१८॥

साणे थीवेदछिदी, णिरयदुणिरयाउगं ण तियदसयं ।
इगिवण्णं पणवीसं, मिच्छादिसु चउसु वोच्छेदो ॥३१९॥

साने स्त्रीवेदछित्तिः, निरयद्विनिरायुष्कं न त्रिकदशकं ।
एकपंचाशत् पंचविंशतिः, मिथ्यादिषु चतुर्षु व्युच्छेदः ॥३१९॥

टीका – तहां[1] व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यात्व, सूक्ष्म, अपर्याप्त – ए तीन । सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि, एकेंद्री, स्थावर, विकल-त्रय, स्त्रीवेद – ए दश । असंयत विषैं सतरह, वैक्रियिक-द्विक बिना पंद्रह । बहुरि क्षीणकषाय पर्यंत

१–गाथा ३१९ के आधार से— कार्मारणकाययोगरचना

मि	सा	अ	स
३	१०	५१	२५
८७	८१	७५	२५
२	८	१४	६४

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

कार्माण योग न संभवै; तातैं ऊपरला गुणस्थानां की व्युच्छित्ति इहां ही कहनी । तहां देशव्रत संबंधी उद्योत बिना सात, प्रमत्त संबंधी आहारक द्विक स्त्यानगृद्धित्रिक बिना शून्य, अप्रमत्त संबंधी तीन संहनन बिना एक सम्यक्त्व मोहनी, अपूर्वकरण संबंधी छह, अनिवृत्तिकरण संबंधी स्त्रीवेद की सासादन ही में व्युच्छित्ति भई; तातैं पांच, सूक्ष्मसांपराय संबंधी एक, उपशांत मोह संबंधी संहनन के अभावतैं शून्य, क्षीणकषाय संबंधी सोलह – असैं सब मिलि असंयत विषैं व्युच्छित्ति इक्यावन । बहुरि सयोगी विषैं बियालीस मेंस्यों वज्रवृषभनाराच, स्वर द्विक, विहायोगति द्विक, औदारिक द्विक, संस्थान छह, उपघात, परघात, उच्छ्वास, प्रत्येक – इन सतरह बिना व्युच्छित्ति पचीस ।

असैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं सम्यक्त्व मोहनी, तीर्थंकर – अनुदय दोय, उदय सित्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति तीन अर नरक द्विक अर नरकायु का उदय नाहीं; तातैं सासादन विषैं अनुदय आठ, उदय इक्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति दश का उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनी, नरकद्विक, नरकायु का उदय; तातैं असंयत विषैं अनुदय चौदह, उदय पिचहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति इक्यावन का उदय नाहीं, तीर्थंकरत्व का उदय, तातैं सयोगी विषैं अनुदय चौंसठि, उदय पचीस पाइए है ॥३१९॥

आगैं वेदमार्गणा विषैं कहैं हैं—

मूलोघं पुंवेदे, थावरचउणिरयजुगलतित्थयरं[1] ।
इगिविगलं थीसंढं, तावं णिरयाउगं णत्थि ॥३२०॥

मूलौघः पुंवेदे, स्थावरचतुर्निरययुगलतीर्थकरं ।
एकविकलं स्त्रीषंढमातपं निरयायुष्कं नास्ति ॥३२०॥

१–गाथा ३२० के आधार से— पुंवेदरचना

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ
१	४	१	१४	८	५	४	६	६४
१०३	१०२	९६	९९	८५	७९	७४	७०	६४
४	५	११	८	२२	२८	३३	३७	४३

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – पुरुषवेद विषैं मूलौघवत् एक सौ बाईस । तहां स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, नरक द्विक, तीर्थंकरत्व, एकेंद्री, विकलत्रय, स्त्री-नपुंसक वेद, आतप, नरकायु – इन पंद्रह बिना उदय योग्यप्रकृति एक सौ सात । तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यात्व, सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि, मिश्र विषैं एक मिश्र मोहनी, असंयत विषैं अप्रत्याख्यान कषाय, वैक्रियिक द्विक, देवद्विक, देवायु, मनुष्य, तिर्यंचानुपूर्वी, दुर्भग, अनादेय, अयशस्कीर्ति – एवं चौदह । देशसंयतादिक विषैं गुणस्थानवत् क्रम तें आठ, पांच, च्यारि, छह । बहुरि अनिवृत्तिकरण का सवेद । पहिला-भाग विषैं पुरुषवेद, बहुरि संज्वलन क्रोध-मान-माया, बहुरि सूक्ष्मलोभ, बहुरि वज्रनाराच, नाराच, बहुरि क्षीणकषाय संबंधो सोलह, बहुरि तीर्थंकर बिना केवली संबंधी इकतालीस – असैं सब मिल चौसठि व्युच्छित्ति जाननी, जातैं अनिवृत्तिकरण सवेद भाग के ऊपरि वेद का उदय नाहीं ।

तहां मिथ्यादृष्टि विषैं मिश्रमोहनी, सम्यक्त्व मोहनी, आहारक द्विक – ये अनुदय च्यारि, उदय एक सौ तीन । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं सासादन विषैं अनुदय पांच, उदय एक सौ दोय । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि, आनुपूर्वी तीन का उदय नाहीं, मिश्रमोहनी का उदय; तातैं मिश्र विषैं अनुदय ग्यारह, उदय छिनवै । बहुरि व्युच्छित्ति एक का उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनी, तिर्यंच, मनुष्य, देवानुपूर्वी का उदय; तातैं असंयत विषैं अनुदय आठ, उदय निन्याणवै । बहुरि व्युच्छित्ति चौदह; तातैं देशसंयत विषैं अनुदय बाईस, उदय पिच्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति आठ का उदय नाहीं, आहारक द्विक का उदय; तातैं प्रमत्त विषैं अनुदय अठाईस, उदय गुण्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति पांच; तातैं अप्रमत्त विषैं अनुदय तेतीस, उदय चौहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि; तातैं अपूर्वकरण विषैं अनुदय सैंतीस, उदय सत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति छह; तातैं अनिवृत्तिकरण का सवेद भाग विषैं अनुदय तियालीस, उदय चौसठि ।।३२०।।

आगैं स्त्री-नपुंसक वेदनि विषैं कहै हैं—

इत्थीवेदे वि तहा, हारदुपुरिसूणमित्थिसंजुत्तं ।
ओघं संढे ण हि सुरहारदुथीपुं सुराउतित्थयरं ।।३२१।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

स्त्रीवेदेऽपि[१] तथाऽऽहारद्विपुरुषोनं स्त्रीसंयुक्तं ।
ओघः षंढे[२] नहि सुराहारद्विस्त्रीपुं सुरायुस्तीर्थंकरं ।।३२१।।

टीका – स्त्रीवेद विषैं पुरुषवेदवत् एक सौ सात । तहां आहारकद्विक, पुरुष वेद घटाइए, स्त्रीवेद मिलाइए – असैं उदययोग्य प्रकृति एक सौ पांच । तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यात्व । सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि, देव, मनुष्य, तिर्यंच-आनुपूर्वी – एवं सात । मिश्र विषैं एक मिश्र मोहनी । असंयत विषैं अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि, देवगति, वैक्रियिक द्विक, देवायु, दुर्भग, अनादेय, अयशस्कीर्ति – एवं ग्यारह । देशसंयत विषैं गुणस्थानवत् आठ । प्रमत्त विषैं स्त्रीवेदी संक्लेशी हैं; तातैं आहारक द्विक नाहीं, तातैं स्त्यानगृद्धि तीन । अप्रमत्त विषैं सम्यक्त्व मोहनी, अंत के संहनन तीन – एवं च्यारि । अपूर्वकरण विषैं छह नोकषाय । अनिवृत्तिकरण विषैं चौसठि ।

असैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं मिश्रमोहनी, सम्यक्त्व मोहनी अनुदय दोय, उदय एक सौ तीन । बहुरि एक व्युच्छित्ति; तातैं सासादन विषैं अनुदय तीन, उदय एक सौ दोय बहुरि व्युच्छित्ति सात का उदय नाहीं, मिश्रमोहनी का उदय, तातैं मिश्र

१–गाथा ३२१ के आधार से— स्त्रीवेदरचना

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ
१	७	१	११	८	३	४	६	६४
१०३	१०२	९६	९६	८५	७७	७४	७०	६४
२	३	९	९	२०	२८	३१	३५	४१

२–गाथा ३२१ के आधार से— षंडवेदरचना

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ
५	११	१	१२	८	३	४	६	६४
११२	१०६	९६	९७	८५	७७	७४	७०	६४
२	८	१८	१७	२९	३७	४०	४४	५०

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

विषैं अनुदय नव, उदय छिनवै । बहुरि व्युच्छित्ति एक का उदय नाहीं, सम्यक्त्व मोहनी का उदय, तातैं असंयत विषैं अनुदय नव, उदय छिनवै । बहुरि व्युच्छित्ति ग्यारह, तातैं देशसंयत विषैं अनुदय बीस, उदय पच्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति आठ, तातैं प्रमत्त विषैं अनुदय अठाईस, उदय सतहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति तीन, तातैं अप्रमत्त विषैं अनुदय इकतीस, उदय चौहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि, तातैं अपूर्वकरण विषैं अनुदय पैंतीस, उदय सत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति छह, तातैं अनिवृत्ति करण का सवेद भाग विषैं अनुदय इकतालीस, उदय चौंसठि है ।

बहुरि नपुंसक वेद विषैं **ओघः** कहिए मूल प्रकृति एक सौ बाईस । तहां देवगति वा आनुपूर्वी, आहारक द्विक, स्त्रीवेद, पुरुषवेद, देवायु, तीर्थंकरत्व – इन आठ बिना उदय योग्य-प्रकृति एक सौ चौदह । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्व, आतप, सूक्ष्मादि तीन – ए पांच । सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि, एकेंद्री, स्थावर, विकलत्रय, मनुष्य, तिर्यंचआनुपूर्वी – ए ग्यारह । मिश्र विषैं मिश्र-मोहनी । असंयत विषैं अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि, वैक्रियिक द्विक, नरक गति वा आनुपूर्वी वा आयु, दुर्भगादि तीन – एवं बारह । देशसंयत विषैं गुणस्थानवत् आठ । प्रमत्त विषैं स्त्यानगृद्धित्रिक । अप्रमत्त विषैं सम्यक्त्व मोहनी, अंत के संहनन तीन – ए च्यारि । अपूर्वकरण विषैं छह नोकषाय । अनिवृत्तिकरण का नपुंसक वेद भाग विषैं चौंसठि ।

ऐसें होतें मिथ्यादृष्टि विषैं मिश्रमोहनी अर सम्यक्त्व-मोहनी अनुदय दोय, उदय एक सौ बारा । बहुरि व्युच्छित्ति पांच, नरकानुपूर्वी का उदय नहीं, तातैं सासा-दन विषैं अनुदय आठ, उदय एक सौ छह । बहुरि व्युच्छित्ति ग्यारह का उदय नाहीं, मिश्रमोहनी का उदय, तातैं मिश्र विषैं अनुदय अठारह, उदय छिनवै । बहुरि व्युच्छिति एक का उदय नाहीं, सम्यक्त्व मोहनी, नरकानुपूर्वी का उदय, तातैं असंयत विषैं अनुदय सतरह, उदय सत्याणवै । बहुरि व्युच्छित्ति बारह, तातैं देशसंयत विषैं अनुदय गुणतीस, उदय पिच्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति आठ, तातैं प्रमत्त विषैं अनुदय सैंतीस, उदय सतहत्तरि । बहुरि व्युच्छिति तीन, तातैं अप्रमत्त विषैं अनुदय चालीस, उदय चौहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि, तातैं अपूर्वकरण विषैं अनुदय चवालीस, उदय सत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति छह, तातैं अनिवृत्तिकरण का सवेद भाग विषैं अनुदय पचास, उदय चौंसठि है ॥३२१॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगैं कषाय मार्गणा विषैं कहै हैं—

तित्थयरमाणमायालोहचउक्कूणमोघमिह कोहे[१] ।
अणरहिदे[२] णिगिविगलं, तावऽणकोहाणुथावरचउक्कं ॥३२२॥

तीर्थंकरमानमायालोभचतुष्कोनमोघ इह क्रोधे ।
अनरहिते नैकविकलमातापानक्रोधानुस्थावरचतुष्कं ॥३२२॥

टीका – क्रोध कषाय विषैं सामान्य एक सौ बाईस । तिनमें च्यारि क्रोध बिना अन्य बारह कषाय अर तीर्थंकर – इन तेरह बिना उदय योग्य प्रकृति एक सौ नव । तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं गुणस्थानवत् पांच । सासादन विषैं अनंतानुबंधी क्रोध,एकेंद्री, स्थावर, विकलत्रय – ए छह । मिश्र विषैं मिश्रमोहनी । असंयत विषैं अप्रत्याख्यान क्रोध, वैक्रियिक षट्क, मनुष्य-तिर्यंच आनुपूर्वी, देव-नरक आयु, दुर्भगादि तीन – एवं चौदह । देशसंयत विषैं प्रत्याख्यान क्रोध, तिर्यंचायु, उद्योत, नीचगोत्र, तिर्यंचगति – एवं पांच । प्रमत्त विषैं आहारकद्विक, स्त्यानगृद्धित्रिक – ए पांच । अप्रमत्त विषैं सम्यक्त्व मोहनी, अंत के संहनन तीन – एवं च्यारि । अपूर्वकरण विषैं नोकषाय छह, अनिवृतिकरण का पहिला भाग संबंधी तीन वेद, दूसरा भाग संबंधी सज्वलन क्रोध, सूक्ष्मसांपराय संबंधी लोभ का ग्रहण नाहीं, तातैं शून्य, उपशांत कषाय संबंधी दोय, क्षीणकषाय संबंधी सोलह, केवली संबंधी तीर्थंकर बिना इकतालीस – असैं सर्व मिलि तरेसठि प्रकृति की अनिवृत्तिकरण का द्वितीय भाग विषैं व्युच्छित्ति जाननी ।

असैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं मिश्रमोहनी, सम्यक्त्व मोहनी, आहारकद्विक – एवं अनुदय च्यारि, उदय एक सौ पांच । बहुरि व्युच्छित्ति पांच, नारकानुपूर्वी का उदय नाहीं; तातैं सासादन विषैं अनुदय दश, उदय निन्याणवै । बहुरि व्युच्छित्ति छह, अवशेष आनुपूर्वी तीन का उदय नाहीं, मिश्रमोहनी का उदय, तातैं मिश्र विषैं

१–गाथा ३२२ के आधार से

मि	आ	मि	अं	दे	प्र	अ	अ	अ
५	६	१	१४	५	५	४	६	६३
१०५	९९	९१	९५	८१	७८	७३	६९	६३
४	१०	१८	१४	२८	३१	३६	४०	४६

२–गाथा ३२२ के आधार से

मि
१
९१
०

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अनुदय अठारह, उदय इक्याणवै । बहुरि व्युच्छित्ति एक का उदय नाहीं, सम्यक्त्व मोहनी, च्यारि आनुपूर्वी का उदय, तातैं असंयत विषैं अनुदय चौदह, उदय पिच्याणवै । बहुरि व्युच्छित्ति चौदह, तातैं देशसंयत विषैं अनुदय अठाईस, उदय इक्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति पांच का उदय नाहीं, आहारक द्विक का उदय, तातैं प्रमत्त विषैं अनुदय इकतीस, उदय अठहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति पांच, तातैं अप्रमत्त विषैं अनुदय छत्तीस, उदय तेहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि, तातैं अपूर्वकरण विषैं अनुदय चालीस, उदय गुणहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति छह, तातैं अनिवृत्तिकरण का दूसरा क्रोध कषायभाग विषैं अनुदय छियालीस, उदय तरेसठि है ।

बहुरि अनंतानुबंधी रहित क्रोध विषैं मिथ्यादृष्टि विषैं उदय, एक सौ पांच का है । तिनमें एकेंद्री, विकलत्रय, आतप, अनंतानुबंधी क्रोध, च्यारि आनुपूर्वी, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण – इन चौदह बिना उदय योग्य प्रकृति इक्याणवै जाननी । अनंतानुबंधी का विसंयोजन करि मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं प्राप्त भया, ताके केतेइक काल अनंतानुबंधी का उदय न हो है, ताका यहु कथन जानना ॥३२२॥

एवं माणादितिए, मदिसुदअण्णाणगे दु सगुणोघं[1] ।
वेभंगेवि ण ताविगिविगलिंदी थावराणुचऊ[2] ॥३२३॥

एवं मानादित्रये, मतिश्रुताज्ञानके तु स्वगुणौघः ।
वैभंगेऽपि नातापैकविकलेंद्रियं स्थावरानुचत्वारि ॥३२३॥

टीका – इस ही प्रकार जैसैं अनंतानुबंध्यादिक च्यारि प्रकार क्रोध का कथन किया, तैसें ही मान चतुष्क विषैं, माया चतुष्क विषैं अन्य बारह कषाय अर तीर्थंकर बिना उदय योग्य प्रकृति एक सौ नव, एक सौ नव हैं, तातैं तिनकी रचना क्रोध रचनावत् जाननी । बहुरि लोभ विषैं भी वैसें ही तेरह प्रकृति के अभाव तैं उदय योग्य प्रकृति एक सौ नव याकी रचना सूक्ष्म-सांपराय पर्यंत जाननी ।

बहुरि ज्ञानमार्गणा विषैं कुमति-कुश्रुतज्ञान विषैं एक सौ बाईस प्रकृति में आहारकद्विक, तीर्थंकर, मिश्र मोहनी, सम्यक्त्व मोहनी बिना उदय योग्य प्रकृति एक

गाथा ३२३ के आधार से—

१–कुमति कुश्रुतरचना

मि	सा
६	६
११७	१११
०	६

२–विभंगरचना

मि	सा
१	४
१०४	१०३
०	१

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सौ सतरह । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्व, आतप, सूक्ष्मादि तीन, नरकानुपूर्वी – एवं छह । सासादन विषैं गुणस्थानवत् नव । असैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं अनुदय नास्ति, उदय एक सौ सतरह । बहुरि व्युच्छित्ति छह; तातैं सासादन विषैं अनुदय छह, उदय एक सौ ग्यारह ।

विभंग ज्ञान विषैं भी असैं ही । तहां आतप, एकेंद्री, विकलत्रय, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, आनुपूर्वी च्यारि – असैं तेरह बिना पूर्वोक्त उदय योग्य प्रकृति एक सौ च्यारि । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति एक मिथ्यात्व । सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि । असैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं अनुदय नास्ति, उदय एक सौ च्यारि । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं सासादन विषैं अनुदय एक, उदय एक सौ तीन ।।३२३।।

सण्णाणपंचयादी, दंसणमग्गणपदोत्ति सगुणोघं ।
मणपज्जवपरिहारे, णवरि ण संढित्थि हारदुगं ।।३२४।।

सद्ज्ञानपंचकादि, दर्शनमार्गणापदमिति स्वगुणौघः ।
मनःपर्ययपरिहारे, नवरि न षंढस्त्री आहारद्वयं ।।३२४।।

टीका – सुज्ञान पांच तैं लगाय दर्शनमार्गणा पर्यंत अपनी गुणस्थान रचनावत् रचना जाननी । सोई कहिए हैं – मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान विषैं गुणस्थान असंयतादिक नव, उदय योग्य एक सौ बाईस में पहिला, दूसरा, तीसरा गुणस्थान विषैं व्युच्छित्ति पंद्रह अर तीर्थंकर – इन सोलह बिना एक सौ छह प्रकृति हैं । तहां व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् असंयतादिक विषैं अनुक्रम तैं सतरह, आठ, पांच, च्यारि, छह, छह, एक, सोलह जाननी ।

असैं होतैं असंयत विषैं अनुदय आहारकद्विक, उदय एक सौ च्यारि । ऊपरि देशसंयतादिक क्षीणकषाय पर्यंत विषैं गुणस्थानवत् अनुक्रम तैं उदय सित्यासी, इक्यासी, छिहंतरि, बहत्तरि, छयासठि, साठि, गुणसठि, सत्तावन जाननी । बहुरि मूल में सोलह प्रकृति उदय योग्य नाहीं, तातैं देशसंयतादिक विषैं क्रम तैं अनुदय उणतीस, पचीस, तीस, चौतीस, चालीस, छियालीस, सैंतालीस, गुणचास, जानना ।

बहुरि मनःपर्ययज्ञान विषैं **'संढित्थीहारदुगं ण'** नपुंसक-वेद, स्त्रीवेद, आहारकद्विक – ए उदय योग्य नाहीं; तातैं प्रमत्त गुणस्थान में उदय योग्य इक्यासी में – ए च्यारि घटाएं उदय योग्य प्रकृति सतहत्तरि । गुणस्थान प्रमत्तादिक सात ।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तहां व्युच्छित्ति प्रमत्त विषैं स्त्यानगृद्धि तीन, अप्रमत्त विषैं गुणस्थानवत् च्यारि, अपूर्वकरण विषैं नोकषाय छह, अनिवृत्तिकरण विषैं पुरुषवेद, संज्वलन, क्रोधादि तीन – ए च्यारि, सूक्ष्मसांपराय विषैं सूक्ष्मलोभ, उपशांत कषाय विषैं वज्रनाराच, नाराच – ए दोय, क्षीणकषाय विषैं गुणस्थानवत् सोलह ।

असैं होतैं प्रमत्त विषैं अनुदय शून्य, उदय सतहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति तीन; तातैं अप्रमत्त विषैं अनुदय तीन,उदय चहोत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि, तातैं अपूर्वकरण विषैं अनुदय सात, उदय सत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति छह; तातैं अनिवृत्तिकरण विषैं अनुदय तेरह, उदय चौसठि । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि; तातैं सूक्ष्मसांपराय विषैं अनुदय सतरह, उदय साठि । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं उपशांतकषाय विषैं अनुदय अठारह, उदय गुणसठि । बहुरि व्युच्छित्ति दोय; तातैं क्षीणकषाय विषैं अनुदय बीस, उदय सत्तावन है ।

बहुरि केवलज्ञान विषैं उदय योग्य प्रकृति बियालीस । तहां सयोगी विषैं व्युच्छित्ति तीस । अयोगी विषैं बारह । ऐसैं होतैं सयोगी विषैं अनुदय शून्य, उदय बियालीस, अयोगी विषैं अनुदय तीस, उदय बारह ।

बहुरि संयम मार्गणा विषैं सामायिक, छेदोपस्थापना संयम विषैं उदय योग्य प्रकृति प्रमत्तगुणस्थानवत् इक्यासी । गुणस्थान प्रमत्तादिक च्यारि । तहां प्रमत्तादिक विषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् पांच, च्यारि, छह, छह । बहुरि उदय भी गुणस्थानवत् इक्यासी, छिहंतरि, बहत्तरि, छयासठि । बहुरि अनुदय शून्य, पांच, नव, पंद्रह जानना ।

बहुरि परिहारविशुद्धि विषैं **'संढित्थीहारदुगं ण'** नपुंसक, स्त्रीवेद, आहारक-द्विक – इन च्यारि बिना उदय योग्य प्रकृति सतहत्तरि । गुणस्थान दोय । तहां व्युच्छित्ति प्रमत्त विषैं स्त्यानगृद्धि आदिक तीन, अप्रमत्त विषैं गुणस्थानवत् च्यारि । असैं होतैं प्रमत्त विषैं अनुदय शून्य, उदय सतहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति तीन; तातैं अप्रमत्त विषैं अनुदय तीन, उदय चहोत्तरि ।

बहुरि सूक्ष्मसांपराय विषैं उदय योग्य प्रकृति साठि । सूक्ष्मसांपराय-गुणस्थान-वत् गुणस्थान एक ।

बहुरि यथाख्यात विषैं उपशांतकषाय की गुणसठि में तीर्थंकरत्व मिलाएं उदय योग्य-प्रकृति साठि, गुणस्थान उपशांतकषायादिक च्यारि । तिनमें व्युच्छित्ति

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

गुणस्थानवत् दोय, सोलह तीस बारा। उदय गुणस्थानवत् गुणसठि, सत्तावन, बियालीस, बारा। अनुदय एक, तीन, अठारह, अठतालीस जानना।

बहुरि देशसंयत विषैं देशसंयत गुणस्थानवत् उदय प्रकृति सित्यासी। गुणस्थान सोई एक जानना।

बहुरि असंयम विषैं तीर्थंकर, आहारकद्विक बिना उदय योग्य प्रकृति एक सौ उगणीस। गुणस्थान मिथ्यात्वादिक च्यारि। तिनमें अनुक्रम तें व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् पांच, नव, एक, सतरह। उदय गुणस्थानवत् एक सौ सतरह, एक सौ ग्यारह, सौ, एक सौ च्यारि। बहुरि तीन प्रकृति मूल में उदय योग्य नाहीं; तातैं अनुदय दोय, आठ, उगणीस, पंद्रह जानना ॥३२४॥

चक्खुम्मि ण साहारणताविगिबितिजाइ थावरं सुहुमं।
किण्हदुगे सगुणोघं, मिच्छे णिरयाणुवोच्छेदो ॥३२५॥

चक्षुषि न साधारणातापैकद्वित्रिजातिः स्थावरं सूक्ष्मं।
कृष्णद्विके स्वगुणौघो, मिथ्ये निरयानुव्युच्छेदः ॥३२५॥

टीका – बहुरि दर्शनमार्गणा विषैं चक्षुदर्शन विषैं एक सौ बाईस में साधारण, आतप, एकेंद्री, बेंद्री, तेंद्री, स्थावर, सूक्ष्म, तीर्थंकर एक – इन आठ बिना उदय योग्य प्रकृति एक सौ चौदह, गुणस्थान मिथ्यादृष्टि आदिक बारह। तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्व, अपर्याप्त – ए दोय। सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि, चौंद्री – एवं पांच। मिश्रादिक विषैं गुणस्थानवत् एक, सतरह, आठ, पांच, च्यारि, छह, छह, एक, दोय, सोलह प्रकृति व्युच्छित्ति जाननी।

ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं मिश्रमोहनी, सम्यक्त्वमोहनी, आहारकद्विक – ए च्यारि अनुदय, उदय एक सौ दस। बहुरि व्युच्छित्ति दोय अर नारकानुपूर्वी का उदय नाहीं; तातैं सासादन विषैं अनुदय सात, उदय एक सौ सात। बहुरि व्युच्छित्ति पांच, तीन; आनुपूर्वी का उदय नाहीं, मिश्र मोहनीय का उदय; तातैं मिश्र विषैं अनुदय चौदह, उदय सौ। बहुरि असंयतादिक विषैं अनुक्रम तें गुणस्थानवत् उदय एक सौ च्यारि, सित्यासी, इक्यासी, छिहंत्तरि, बहत्तरि, छयासठि, साठि, गुणसठि, सत्तावन जानना।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि मूल में आठ प्रकृति उदय योग्य नाहीं; तातैं असंयतादिक विषैं क्रम तैं अनुदय दस, सत्ताईस, तेतीस, अठतीस, बियालीस, अठतालीस, चौवन, पचावन, सत्तावन जानना, नीचली व्युच्छित्ति ऊपरि का अनुदय में मिलावना वा यथायोग्य प्रकृति का उदय, अनुदय विचार लेना।

बहुरि अचक्षुदर्शन विषैं तीर्थंकरत्व बिना उदय योग्य प्रकृति एक सौ इकईस, गुणस्थान मिथ्यादृष्टयादिक बारह। तहां व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् पांच, नव, एक, सतरह, आठ, पांच, च्यारि, छह, छह, एक, दोय, सोलह प्रकृति जाननी। उदय भी गुणस्थानवत् एक सौ सतरह, एक सौ ग्यारह, सौ, एक सौ च्यारि, सित्यासी, इक्यासी, छिहंतर, बहत्तरि, छचासठि, साठि, गुणसठि, सत्तावन जानना। मूल में एक प्रकृति उदय योग्य नाहीं; तातैं अनुदय गुणस्थानोक्त अनुदय तैं एक-एक घाटि जानना। सो मिथ्यादृष्टि विषैं तीर्थंकर बिना अनुदय च्यारि। सासादनादिक विषैं क्रम तैं दस, इकईस, सतरह, चौंतीस, चालीस, पैंतालीस, गुणचास, पचावन, इकसठि, बासठि, चौंसठि अनुदय जानना।

बहुरि अवधिदर्शन विषैं अवधिज्ञानवत् उदय-योग्य प्रकृति एक सौ छह, गुणस्थान नव। तिन विषैं व्युच्छित्ति, उदय, अनुदय अवधिज्ञान रचनावत् जानना।

बहुरि केवल दर्शन विषैं उदय-योग्य प्रकृति बियालीस, गुणस्थान दोय। तहां रचना केवलज्ञानवत् जाननी।

बहुरि लेश्यामार्गणा विषैं कृष्ण – नील विषैं तीर्थंकर, आहारक द्विक बिना उदय योग्य प्रकृति एक सौ उगणीस, गुणस्थान मिथ्यादृष्टि आदि च्यारि; जातैं '**अय-दोत्ति छल्लैसाओ**' इस वचन तैं असंयत पर्यंत छह लेश्या हैं। तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं गुणस्थानवत् पांच अर एक नारकानुपूर्वी एवं छह, जातैं सासादन कैं मरि नरक विषैं गमन नाहीं। मिश्र कैं आनुपूर्वी का उदय नाहीं, असंयत कैं द्वितीयादि पृथ्वी विषैं उपजना नाहीं हैं, तातैं कृष्ण, नील लेश्या रूप नारकानुपूर्वी की इहां ही व्युच्छित्ति भई है।

बहुरि सासादन विषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् नव अर असंयत संबंधी देवद्विक देवायु, तिर्यंचानुपूर्वी एवं तेरह। मिश्र विषैं मिश्रमोहनी। असंयत विषैं दूसरा कषाय च्यारि, नरकगति, नरकायु, वैक्रियिक द्विक, मनुष्यानुपूर्वी, दुर्भग आदि तीन एवं बारह।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

इहां **'भोगा पुण्णगसम्मेकाउस्स जहण्णियं हवे'** इस नियम तैं तिर्यंचानुपूर्वी इहां न कही है, जातैं देवनारकी असंयत – तिर्यंच विषैं उपजते नाहीं । बहुरि नरक तैं आया सम्यग्दृष्टि कैं कर्मभूमि का मनुष्य विषैं उपजने का नियम है । तहां पहिले अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत पूर्व भव संबंधी लेश्या रहै हैं; तातैं मनुष्यानुपूर्वी का उदय असंयत विषैं इहां संभवै है ।

ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं मिश्रमोहनी, सम्यक्त्व मोहनी अनुदय, उदय एक सौ सतरह । बहुरि व्युच्छित्ति छह; तातैं सासादन विषैं अनुदय आठ; उदय एक सौ ग्यारह । बहुरि व्युच्छित्ति तेरह, मनुष्यानुपूर्वी का उदय नाहीं अर मिश्रमोहनी का उदय; तातैं मिश्र विषैं अनुदय इकईस, उदय अठयाणवै । बहुरि व्युच्छित्ति एक का उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनी, मनुष्यानुपूर्वी का उदय; तातैं असंयत विषैं अनुदय बीस, उदय निन्याणवै है ।

बहुरि कपोत लेश्या विषैं कृष्ण नीलवत् उदय-योग्य प्रकृति एक सौ उगणीस, गुणस्थान आदि के च्यारि । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं गुणस्थानवत् व्युच्छित्ति पांच । सासादन विषैं गुणस्थानवत् नव अर देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, देवायु – ए बारह । मिश्र विषैं एक मिश्रमोहनी । असंयत विषैं अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि, नरकगति वा आनुपूर्वी, नरकायु, वैक्रियिक – शरीर वा अंगोपांग, तिर्यंच – मनुष्य – आनुपूर्वी, दुर्भगादि तीन – एवं चौदह ।

ऐसैं होतै मिथ्यादृष्टि विषैं सम्यक्त्वमोहनी, मिश्र मोहनी अनुदय दोय, उदय एक सौ सतरह । बहुरि व्युच्छित्ति पांच अर नारकानुपूर्वी का उदय नाहीं; तातैं सासादन विषैं अनुदय आठ, उदय एक सौ ग्यारह । बहुरि व्युच्छित्ति बारह, आनुपूर्वी दोय का उदय नाहीं, मिश्र मोहनी का उदय; तातैं मिश्र-मोहनी विषैं अनुदय इकईस, उदय अठयाणवै । बहुरि व्युच्छित्ति एक का उदय नाहीं अर सम्यक्त्व-मोहनी तीन आनुपूर्वी का उदय; तातैं असंयत विषैं अनुदय अठारह, उदय एक सौ एक ।

भवनवासी, व्यंतर, ज्योतिषी देवनि कैं अपर्याप्त – काल विषैं कृष्ण, नील, कपोत लेश्या ही है । पर्याप्त काल विषैं तेजोलेश्या का जघन्य अंश पाइए । बहुरि अशुभ-लेश्या का धारक असंयत भवनत्रिक विषैं उपजै नाहीं; तातैं देवद्विक, देवायु इन तीन प्रकृतिनि की व्युच्छित्ति सासादन विषैं ही कही ॥३२५॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सोई कहै हैं—

साणे सुराउसुरगदिदेवतिरिक्खाणुवोछिदी एवं ।
काओदे अयदगुणे, णिरयतिरिक्खाणुवोछेदो ॥३२६॥

साने सुरायुःसुरगति, देवतिर्यगानुव्युच्छित्तिरेवं ।
कापोते अयतगुणे, निरयतिर्यगानुव्युच्छेदः ॥३२६॥

टीका – तातैं कृष्ण, नील विषैं सासादन–गुणस्थान में देवगति वा आनुपूर्वी, देवायु, तिर्यंच–आनुपूर्वी की व्युच्छित्ति जानवी। गुणस्थानवत् नव सर्व तेरह हैं। बहुरि '**एवं**' कहिए असैं ही कपोत–लेश्या विषैं भी उदय योग्य प्रकृति एक सौ उगणीस है। तहां असंयत गुणस्थान विषैं नरक-तिर्यंच आनुपूर्वी, दुर्भगादि तीन, मनुष्य आनुपूर्वी आदि – असैं चौदह व्युच्छित्ति है, असा कह्या है ॥३२६॥

आगैं तीन शुभ लेश्या विषैं कहैं हैं—

तेउतिये सगुणोघं, णादाविगिविगलथावरचउक्कं ।
णिरयदुतदाउतिरियाणुगं णराणू ण मिच्छदुगे ॥३२७॥

तेजस्त्रये स्वगुणौघो, नातावैकविकलस्थावरचतुष्कं ।
निरयद्वितदायुस्तिर्यगानुकं नरानु न मिथ्यद्विके ॥३२७॥

टीका – तेज, पद्म, शुक्ल लेश्या विषैं अपना-अपना गुणस्थानवत् रचना। तहां विशेष जो आतप, एकेंद्री, विकलत्रय, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, नरक गति वा आनुपूर्वी, नरकायु, तिर्यंचानुपूर्वी – इन तेरह बिना उदय-योग्य प्रकृति एक सौ नव। तहां भी पीत-पद्म विषैं तीर्थंकर बिना उदय-योग्य प्रकृति एक सौ आठ। गुणस्थान सात आदि के। तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यात्व। सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि। मिश्र विषैं मिश्रमोहनी। असंयत विषैं अप्रत्याख्यान - कषाय च्यारि, देवगति वा आनुपूर्वी, वैक्रियिक-शरीर वा अंगोपांग, देवायु, मनुष्यानुपूर्वी, दुर्भगादि तीन – एवं तेरह। देशसंयत, प्रमत्त, अप्रमत्त विषैं गुणस्थानवत् आठ, पांच, च्यारि व्युच्छित्ति है।

असैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं मिश्रमोहनी, सम्यक्त्वमोहनी, आहारकद्विक अर '**णराणू ण मिच्छदुगे**' इस वचन करि मनुष्यानुपूर्वी – ए पांच अनुदय, उदय एक सौ

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तीन । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं सासादन विषैं अनुदय छह, उदय एक सौ दोय । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि, देवानुपूर्वी का अनुदय अर मिश्रमोहनी का उदय; तातैं मिश्र विषैं अनुदय दस, उदय अठचाणवै । बहुरि व्युच्छित्ति एक का अनुदय । बहुरि सम्यक्त्वमोहनी, मनुष्य-देवानुपूर्वी का उदय; तातैं असंयत विषैं अनुदय आठ, उदय सौ । बहुरि व्युच्छित्ति तेरह; तातैं देशसंयत विषैं अनुदय इकईस, उदय सित्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति आठ का अनुदय, आहारक-द्विक का उदय; तातैं प्रमत्त विषै अनुदय सत्ताईस, उदय इक्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति पांच; तातैं अप्रमत्त विषैं अनुदय बत्तीस, उदय छिहंतरि है ।

बहुरि शुक्ल-लेश्या विषैं उदय-योग्य प्रकृति एक सौ नव, गुणस्थान तेरह आदि के । तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टयादिक अप्रमत्त पर्यंत पीतपद्मवत् एक, च्यारि, एक, तेरह, आठ, पांच, च्यारि । अपूर्वकरणादिक विषैं गुणस्थानवत् छह, छह, एक, दोय, सोलह । सयोगी विषैं बियालीस प्रकृति जाननी ।

असैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं मिश्रमोहनी, सम्यक्त्वमोहनी, आहारकद्विक, तीर्थंकर अर **'णराणू ण मिच्छदुगे'** इस वचन तैं मनुष्यानुपूर्वी – एवं अनुदय छह, उदय एक सौ तीन । बहुरि व्युच्छित्ति सासादनादिक विषैं अनुदय पीतपद्म तैं एक तीर्थंकरत्व का अधिक है; तातैं इहां अनुदय सासादनादिक विषैं सात, ग्यारह, नव, बाईस, अठाईस, तेतीस जानना । अपूर्वकरणादिक विषैं मूल में तेरह प्रकृति उदय योग्य नाहीं; तातैं गुणस्थानोक्त अनुदय तैं तेरह-तेरह घाटि जानना । सो अपूर्वकरणादिक विषैं अनुदय क्रम तैं सैंतीस, तियालीस, गुणचास, पचास, बावन, सतसठि प्रकृति का जानना । बहुरि उदय सासादनादिक विषैं तौ पीतपद्मवत् एक सौ दोय, अठचाणवै, सौ, सत्यासी, इक्यासी, छिहंतरि जानना । अपूर्वकरणादिक विषैं गुणस्थानवत् बहत्तरि, छयासठि, साठि, गुणसठि, सत्तावन, बियालीस प्रकृति का जानना ।।३२७।।

भव्विदरुवसमवेदगखइये सगुणोघमुवसमे खयिये ।
ण हि सम्ममुवसमे पुण, णादितियाणू य हारदुगं ।।३२८।।

भव्येतरोपशमवेदकक्षायिके स्वगुणौघ उपशमे क्षायिके ।
नहि सम्यगुपशमे पुनर्नादित्रयानु चाहारद्विकं ।।३२८।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – भव्य, अभव्य; उपशम, वेदक, क्षायिक सम्यक्त्व इन मार्गणानि विषैं अपना - अपना गुणस्थान का सामान्य कथनवत् कथन जानना । विशेष इतना जो उपशम सम्यक्त्व विषैं दर्शनमोह का प्रशस्त उपशम भया है । क्षयोपशम सम्यक्त्व की ज्यों अप्रशस्तपनां नाहीं है; तातैं तहां सम्यक्त्व मोहनी का उदय नाहीं है । बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व विषैं दर्शन मोह का क्षय भया है; तातैं सम्यक्त्व मोहनी का उदय नाहीं है । बहुरि उपशम सम्यक्त्व विषैं नरक, तिर्यंच, मनुष्य आनुपूर्वी, आहारक द्विक – ए भी उदय योग्य नाहीं हैं, जातैं पूर्वै आयुबंध भए भी तहां मरण नाहीं ।।३२८।।

कैसें ? सो कहिए हैं—

मिस्साहारस्सयया, खवगा चडमाडपढमपुव्वा य ।
पढमुवसमया तमतम, गुडपडिवण्णा य ण मरंति ।।१।।
अणसंयोगे मिच्छे, मुहुत्तअंतोत्ति णत्थि मरणं तु ।
कदकरणिज्जं जाव दु, सव्वपरट्ठाण अट्ठपदा ।।२।।[1]

टीका – निर्वृत्ति अपर्याप्त अवस्था के धारी, बहुरि आहारकमिश्र योग के धारी, बहुरि क्षपकश्रेणीवाले, बहुरि उपशम श्रेणी चढ़ने विषैं अपूर्वकरण का प्रथम भागवाले, बहुरि प्रथमोपशम सम्यक्त्व संयुक्त, बहुरि तमस्तम सातवीं नरक पृथ्वी विषैं सम्यक्त्व गुण सहित जीव – एते मरण कौं प्राप्त न होंहि । बहुरि अनंतानुबंधी का विसंयोजन करि अन्य कषायरूप परिणमाइ पीछैं मिथ्यात्व कौं प्राप्त भया होइ, ताकैं अंतर्मुहूर्तकाल पर्यंत मरण न होइ, बहुरि दर्शन मोह का क्षय करनेवाले जीव कैं यावत् कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टिपना होइ तावत् मरण न होइ । 'तु' शब्द करि जिनके पूर्वे देवायु का बंध भया होइ, तिनके उपशम श्रेणी का उतरने विषैं अपूर्वकरण गुणस्थान पर्यंत मरण होइ, तब मर करि असंयत गुणस्थानवर्ती देव ही होइ; तातैं प्रथमोपशम सम्यक्त्व विषैं नरक, तिर्यंच, मनुष्य - आनुपूर्वी का उदय नाहीं । बहुरि द्वितीयोपशम सम्यक्त्व विषैं देवायु बिना और आयु का सत्व नाहीं । जातैं उपशम श्रेणी चढ़ने के निमित्त सातिशय - अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती जीव ही करि द्वितीयोपशम सम्यक्त्व अंगीकार कीजिए है । बहुरि अणुव्रत, महाव्रत, देवायु बिना और आयु का बंधवाले कैं होते नाहीं; तातैं उपशम सम्यक्त्व विषैं देव बिना तीन आनुपूर्वी का सत्व

१–ये दोनों गाथायें कर्मकाण्डागत स्थानसमुत्कीर्तनसंज्ञक पंचमाधिकार की ५६० एवं ५६१ नं० की हैं ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

नाहीं; तातैं उदय भी नाहीं। बहुरि दोऊ उपशम सम्यक्त्व विषैं आहारक ऋद्धि की प्राप्ति न होइ, असैं जानना।

सो भव्य मार्गणा विषैं गुणस्थानवत् उदययोग्य प्रकृति एक सौ बाईस, गुणस्थान चौदह, तथा व्युच्छित्ति, उदय, अनुदय सर्व गुणस्थानवत् जानना, विशेष किछू नाहीं। बहुरि अभव्य मार्गणा विषैं गुणस्थान एक – मिथ्यादृष्टि। तहां उदय योग्य प्रकृति एक सौ सतरह जाननी।

बहुरि सम्यक्त्व मार्गणा विषैं उपशम - सम्यक्त्व विषैं असंयत में उदय योग्य एक सौ च्यारि तहां **'णादितियाणू य हारदुगं'** असे वचन करि नारक, तिर्यंच, मनुष्य आनुपूर्वी तीन, सम्यक्त्व मोहनी – इन च्यारि बिना उदय योग्य प्रकृति सौ, गुणस्थान असंयतादिक आठ। तहां असंयत विषैं अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि, देवनरक-आयु, नरकगति, देवगति वा आनुपूर्वी, वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग, दुर्भगादि तीन एवं चौदह व्युच्छित्ति। इहां नरकगति, नरकायु का उदय प्रथमोपशम सम्यक्त्व की अपेक्षा जानना।

बहुरि देशसंयत विषैं प्रत्याख्यान कषाय च्यारि, तिर्यंचायु, उद्योत, नीचगोत्र, तिर्यंचगति – ए आठ व्युच्छित्ति। इहां भी तिर्यंचायु इत्यादिक च्यारि प्रकृतिनि का उदय प्रथमोपशम सम्यक्त्व की अपेक्षा ही जानना। बहुरि प्रमत्त विषैं आहारकद्विक उपशम सम्यक्त्ववाले कैं न होइ, यातैं स्त्यानगृद्धित्रिक व्युच्छित्ति है। बहुरि अप्रमत्त विषैं सम्यक्त्व मोहनी का मूल में उदय नाहीं; तातैं अंत के संहनन तीन व्युच्छित्ति। बहुरि अपूर्वकरण विषैं छह नोकषाय, अनिवृत्तिकरण विषैं वेद तीन, संज्वलन क्रोधादि तीन – एवं छह। सूक्ष्मसांपराय विषैं सूक्ष्म लोभ। उपशांत कषाय विषैं वज्रनाराच, नाराच – ए दोय व्युच्छित्ति है।

असैं होतैं असंयत विषैं अनुदय नास्ति, उदय सौ। बहुरि व्युच्छित्ति चौदह; तातैं देशसंयत विषैं अनुदय चौदह, उदय छियासी। बहुरि व्युच्छित्ति आठ; तातैं प्रमत्त विषैं अनुदय बाईस, उदय अठहत्तरि। बहुरि व्युच्छित्ति तीन; तातैं अप्रमत्त विषैं अनुदय पचीस, उदय पिचहत्तरि। बहुरि व्युच्छित्ति तीन; तातैं अपूर्वकरण विषैं अनुदय अठाईस, उदय बहत्तरि। बहुरि व्युच्छित्ति छह; तातैं अनिवृत्तिकरण विषैं अनुदय चौंतीस, उदय छयासठि। बहुरि व्युच्छित्ति छह; तातैं सूक्ष्मसांपराय विषैं अनुदय चालीस, उदय साठि। बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं उपशांतकषाय विषैं अनुदय इकतालीस, उदय गुणसठि है।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि वेदक सम्यक्त्व विषैं स्वगुणस्थानवत् । सो मिथ्यादृष्टयादिक तीन गुणस्थान विषैं पांच, नव, एक – असैं पंद्रह व्युच्छित्त भई । एक तीर्थंकर – असैं सोलह बिना उदय योग्य प्रकृति एक सौ छह । गुणस्थान असंयतादिक च्यारि । तहां असंयत, देशसंयत, प्रमत्त विषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् सतरह, आठ, पांच । बहुरि अप्रमत्तादिक की व्युच्छित्ति च्यारि, छह, छह, एक, दोय, सोलह, तीस तीर्थंकर बिना ग्यारह-सब मिलि छिहंतरि अप्रमत्त विषैं व्युच्छित्ति जानना; जातैं अपूर्वकरणादिक विषैं क्षयोपशम सम्यक्त्व नाहीं ।

असैं होतैं असंयत विषैं आहारकद्विक अनुदय, उदय एक सौ च्यारि । बहुरि सतरह व्युच्छित्ति; तातैं देशसंयत विषैं अनुदय उगणीस, उदय सित्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति आठ का उदय नाही, आहारक द्विक का उदय; तातैं प्रमत्त विषैं अनुदय पचीस, उदय इक्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति पांच; तातैं अप्रमत्त विषैं अनुदय तीस, उदय छिहंतरि ।

बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व विषैं मिथ्यादृष्टयादिक तीन गुणस्थाननि विषैं व्युच्छित्ति भई पंद्रह अर सम्यक्त्व मोहनी – इन बिना उदय योग्य प्रकृति एक सौ छह, गुणस्थान असंयतादिक ।।१–२।।

खाइयसम्मो देसो, णर एव जदो तहिं ण तिरियाऊ ।
उज्जोवं तिरियगदी, तेसिं अयदम्हि वोच्छेदो ।।३२६।।

क्षायिकसम्यग् देशो, नर एव यतस्तस्मिन् न तिर्यगायुः ।
उद्योतस्तिर्यग्गति स्तेषामयते व्युच्छेदः ।।३२६।।

टीका – क्षायिक सम्यग्दृष्टि देशसंयत गुणस्थानवर्ती मनुष्य ही होइ, तिर्यंच न होइ; तातैं तिर्यंचायु, उद्योत, तिर्यंचगति – इन तीन का उदय पंचम गुणस्थान विषैं नाहीं । इनकी व्युच्छित्ति चौथे ही भई; यातैं असंयत विषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् सतरह अर तिर्यंचायु, उद्योत, तिर्यंचगति – तीन ए – असे बीस व्युच्छित्ति है । बहुरि देशसंयत विषैं ते तीन नाहीं; तातैं प्रत्याख्यान कषाय च्यारि, नीचगोत्र – असैं पांच व्युच्छित्ति हैं । प्रमत्त विषैं गुणस्थानवत् पांच, अप्रमत्त विषैं सम्यक्त्व मोहनी नाहीं; तातैं तीन । बहुरि अपूर्वकरणादिक विषैं गुणस्थानवत् छह, छह, एक, दोय, सोलह, तीस, बारह व्युच्छित्ति जाननी ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ऐसैं होतैं असंयत विषैं आहारकद्विक तीर्थंकर – ए अनुदय तीन, उदय एकसौ तीन। बहुरि व्युच्छित्ति बीस; तातैं देशसंयत विषैं अनुदय तेईस, उदय तियासी। बहुरि व्युच्छित्ति पांच का अनुदय, आहारकद्विक का उदय; तातैं प्रमत्त विषैं अनुदय छब्बीस, उदय अस्सी। बहुरि अप्रमत्तादिक विषैं नीचली व्युच्छित्ति मिलाएं अनुदय अनुक्रम तैं इकतीस, चौंतीस, चालीस, छियालीस, सैंतालीस, गुणचास जानना। बहुरि व्युच्छित्ति सोलह, तीर्थंकर का उदय; तातैं सयोगी विषैं अनुदय चौंसठि। बहुरि व्युच्छित्ति तीस; तातैं अयोगी विषैं अनुदय चौराणवैं। बहुरि अप्रमत्तादिक विषैं उदय अनुक्रम तैं पिचहत्तरि, बहत्तरि, छयासठि, साठि, गुणसठि, सत्तावन, बियालीस, बारह जानना ॥३२९॥

सेसाणं सगुणोघं, सण्णिस्सवि णत्थि तावसाहरणं।
थावरसुहुमिगिविगलं, असण्णिणोवि य ण मणुदुच्चं ॥३३०॥

वेगुव्वछ पणसंहदिसंठाण सुगमण सुभगआउतियं।
आहारे सगुणोघं, णवरि ण सव्वाणुपुव्वीओ ॥३३१॥

शेषाणां स्वगुणौघः, संज्ञिनोऽपि नास्ति आतपसाधारणं।
स्थावरसूक्ष्मैकविकल मसंज्ञिनोऽपि च न मनुद्विउच्चं ॥३३०॥

वैगूर्वषट् पंचसंहतिसंस्थानं सुगमनं सुभगायुस्त्रयं।
आहारे स्वगुणौघो, नवरि न सर्वानुपूर्व्यः ॥३३१॥

टीका – अवशेष मिथ्यात्व, सासादन, मिश्र सम्यक्त्व विषैं अपने-अपने गुणस्थानवत् जानना। तहां मिथ्यारुचि विषैं मिथ्यादृष्टि गुणस्थानवत् उदय योग्य प्रकृति एकसौ सतरह, गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि। सासादन रुचि विषैं सासादन गुणस्थानवत् उदय योग्य प्रकृति एक सौ ग्यारह, गुणस्थान एक सासादन। मिश्ररुचि विषैं मिश्र गुणस्थानवत् उदय योग्य प्रकृति सौ, गुणस्थान एक मिश्र।

बहुरि संज्ञी मार्गणा विषैं आतप, साधारण, स्थावर, सूक्ष्म, एकेंद्री, विकलत्रय, तीर्थंकर – इन बिना उदय योग्य प्रकृति एक सौ तेरह, गुणस्थान मिथ्यादृष्टयादिक बारह। सयोगी - अयोगी मन रहित हैं; तातैं संज्ञी न कहिए। बहुरि तिर्यंच बिना अन्यत्र असंज्ञी नाहीं कहना; तातैं असंज्ञी भी न कहिए। तहां व्युच्छित्ति

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यात्व, अपर्याप्त – ए दोय, सासादन विषैं अनन्तानुबंधी च्यारि मिश्र विषैं मिश्रमोहनी । असंयतादिक विषैं गुणस्थानवत् क्रम तैं सतरह, आठ, पांच, च्यारि, छह, छह, एक, दोय । क्षीणकषाय विषैं सोलह अर सयोगी - अयोगी संबंधी तीर्थंकरत्व बिना इकतालीस – अैसें सत्तावन व्युच्छित्ति हैं ।

अैसें होतें मिथ्यादृष्टि विषैं मिश्रमोहनी, सम्यक्त्व मोहनी, आहारकद्विक – एवं अनुदय च्यारि, उदय एक सौ नव । बहुरि व्युच्छित्ति दोय, नारकानुपूर्वी का उदय नाहीं; तातैं सासादन विषैं अनुदय सात, उदय एक सौ छह । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि अर तिर्यंच – मनुष्य – देव आनुपूर्वी का उदय नाहीं, मिश्रमोहनी का उदय; तातैं मिश्र विषैं अनुदय तेरह, उदय सौ । बहुरि व्युच्छित्ति एक का उदय नाहीं, सम्यक्त्व मोहनी, आनुपूर्वी च्यारि का उदय; तातैं असंयत विषैं अनुदय नव, उदय एक सौ च्यारि ।

बहुरि मूल में नव प्रकृति उदय योग्य नाहीं; तातैं गुणस्थाननि के अनुदय तैं नव - नव घाटि अनुदय, देशसंयतादिक विषैं जानना । सो देशसंयतादिक विषैं क्रम तैं छब्बीस, बत्तीस, सैंतीस, इकतालीस, सैंतालीस, तरेपन, चौवन, छप्पन अनुदय जानना । बहुरि देशसंयतादिक विषैं गुणस्थानवत् क्रम तैं सित्यासी, इक्यासी, छिहंतरि, बहत्तरि, छयासठि, साठि, गुणसठि, सत्तावन उदय जानना ।

बहुरि असंज्ञी मार्गणा विषैं मनुष्यद्विक, उच्चगोत्र, देव - नारकगति वा आनुपूर्वी, वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग – ए छह, आदि के संहनन पांच, आदि के संस्थान पांच, प्रशस्त विहायोगति, सुभगादिक तीन, नरक - मनुष्य - देवायु – ए छब्बीस प्रकृति मिथ्यादृष्टि संबंधी एक सौ सतरह, तिनमें घटाइए तब उदययोग्य प्रकृति इक्याणवै हैं । गुणस्थान दोय ।

तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् पांच अर स्त्यानगृद्धित्रिक, परघात, उद्योत, उश्वास, दुःस्वर, अप्रशस्त विहायोगति – इनका उदय पर्याप्त अवस्था में होइ अर सासादन असैनी कैं पर्याप्त अवस्था में होइ नाहीं; तातैं इनकी भी व्युच्छिति मिथ्यादृष्टि विषैं ही है अैसैं व्युच्छित्ति है । सासादन विषैं गुणस्थानवत् नव व्युच्छित्ति हैं । अैसें होतें मिथ्यादृष्टि विषैं अनुदय शून्य, उदय इक्याणवै । बहुरि व्युच्छित्ति तेरह; तातैं सासादन विषैं अनुदय तेरह, उदय अठहत्तरि है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि आहारमार्गणा विषैं च्यारि आनुपूर्वी बिना उदय योग्य प्रकृति एक सौ अठारह। गुणस्थान आदि के तेरह। तहां मिथ्यादृष्ट्यादिक तीन विषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् पांच, नव, एक। असंयत विषैं च्यारि आनुपूर्वी बिना तेरह। देश-संयतादिक विषैं गुणस्थानवत् आठ, पांच, च्यारि, छह, छह, एक, दोय, सोलह। सयोगी विषैं बियालीस व्युच्छित्ति जाननी।

ऐसें होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं गुणस्थानवत् अनुदय पांच, उदय एक सौ तेरह। बहुरि व्युच्छित्ति पांच; तातैं सासादन विषैं अनुदय दश, उदय एक सौ आठ। बहुरि व्युच्छित्ति नव का उदय नाहीं, मिश्रमोहनी का उदय; तातैं मिश्र विषैं अनुदय अठारह, उदय सौ। बहुरि व्युच्छित्ति एक का उदय नाहीं, सम्यक्त्व मोहनी का उदय; तातैं असंयत विषैं अनुदय अठारह, उदय सौ।

बहुरि मूल में च्यारि प्रकृति का उदय योग्य नाहीं; तातैं गुणस्थानोक्त उदय तैं देशसंयतादिक विषैं अनुदय च्यारि - च्यारि घाटि जानना। उदय गुणस्थानोक्त ही जानना। तहां देशसंयतादिक विषैं क्रम तैं अनुदय इकतीस, सैंतीस, बियालीस, छियालीस, बावन, अठावन, गुणसठि, इकसठि, छिहंतरि जानना। बहुरि उदय सित्यासी, इक्यासी, छिहंतरि, बहत्तरि, छयासठि, साठि, गुणसठि, सत्तावन, बियालीस जानना ॥३३०-३३१॥

कम्मे व अणाहारे, पयडीणं उदयमेवमादेसे।
कहियमिणं बलमाहवचंदच्चियणेमिचंदेण ॥३३२॥

कार्मे इवानाहारे, प्रकृतिनामुदय एवमादेशे।
कथितोऽयं बलमाधवचंद्रार्चितनेमिचंद्रेण ॥३३२॥

टीका – बहुरि अनाहार मार्गणा विषैं कार्मणकाययोगवत् निवासी प्रकृति उदय योग्य हैं। गुणस्थान पांच। तहां व्युच्छित्ति – मिथ्यादृष्टि, सासादन, असंयत विषैं कार्मणकाय योगवत् तीन, दश, इक्कावन जानना। सयोगी विषैं साता - असाता मेंस्यों एक वेदनीय, निर्माण, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, तैजस, कार्माण, वर्णादिक, च्यारि, अगुरुलघु – ए तेरह व्युच्छित्ति हैं। अयोगी विषैं गुणस्थानवत् बारह व्युच्छित्ति हैं।

ऐसें होतैं मिथ्यादृष्टि, सासादन, असंयत, सयोगी विषैं अनुदय वा उदय कार्मणकाययोगवत् जानना। जहां अनुदय दोय, आठ, चौदह, चौंसठि जानना। उदय

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सित्यासी, इक्यासी, पिचहत्तरि, पचीस जानना । बहुरि सयोगी विषैं व्युच्छित्ति तेरह; तातैं अयोगी विषैं अनुदय सतहत्तरि, उदय बारह ।

असैं आदेश जो मार्गणास्थान तीहि विषैं उदय है, सो **'बल'** कहिए बलभद्र अर **'माधव'** कहिए नारायण इन करि **'अर्चित'** कहिए पूजित असे **'नेमिचंद्र'** कहिए नेमिनाथ तीर्थंकर सो भया चंद्रमा ताकरि कह्या है । अथवा **'बल'** कहिए बलदेव अपना भाई अर **'माधव'** कहिए माधवचंद्र त्रैविद्यदेव इनकरि **'अर्चित'** पूजित असा नेमिचंद्र सिद्धांत चक्रवर्ती ताकरि कह्या है, सो जानना ।।३३२।।

इति उदयप्रकरण समाप्त ।

आगैं सत्ता का निरूपण कीजिए है, तहां गुणस्थाननि विषैं सत्त्व कहिए हैं—

तित्थाहारा जुगवं, सव्वं तित्थं ण मिच्छगादितिए ।
तस्सत्तकम्मियाणं, तग्गुणठाणं ण संभवदि ।।३३३।।

तीर्थहारा युगपत्सर्वं, तीर्थं न मिथ्यकादित्रये ।
तत्सत्त्वकर्मकाणां, तद्गुणस्थानं न संभवति ।।३३३।।

टीका – मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं जाकैं तीर्थंकरत्व का सत्त्व होइ, ताकैं आहारकद्विक का सत्त्व न होइ । जाकैं आहारकद्विक का सत्त्व होइ, ताकैं तीर्थंकरत्व का सत्त्व न होइ । बहुरि दोऊनि का सत्त्व होतैं मिथ्यात्व न होइ; तातैं मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं युगपत् एक जीव की अपेक्षा तीर्थंकरत्व, आहारकद्विक – इन दोऊनि का सत्त्व न होइ, एक ही का होइ । बहुरि अनुक्रम तैं वा नाना - जीव की अपेक्षा तिन दोऊनि का सत्त्व पाइए है । बहुरि सासादन विषैं एक जीव की अपेक्षा व अनेक जीव की अपेक्षा क्रम तैं वा युगपत् तीर्थंकरत्व का अर आहारकद्विक का सत्त्व न पाइए है । बहुरि मिश्र विषैं एक तीर्थंकरत्व का सत्त्व न पाइए है; जातैं इन प्रकृतिनि का जिनकैं सत्त्व होइ, तिनकौं सो गुणस्थान न संभवै है ।।३३३।।

चत्तारिवि खेत्ताइं, आउगबंधेण होइ सम्मत्तं ।
अणुवदमहव्वदाइं, ण लहइ देवाउगं मोत्तुं ।।३३४।।

चतुर्णामपि क्षेत्राणामायुष्कबंधेन भवति सम्यक्त्वं ।
अणुव्रतमहाव्रतानि, न लभते देवायुष्कं मुक्त्वा ।।३३४।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – च्यारि जे 'क्षेत्र' कहिए गति तिन संबंधी जिनके आयु बंधी होइ, तिनकैं सम्यक्त्व होइ। बहुरि देवायु बिना और गति संबंधी आयु जिनकैं बंधी होइ ते तिर्यंच तौ अणुव्रत कौं अर मनुष्य अणुव्रत वा महाव्रत कौं न पावै।

भावार्थ – जो पहिले च्यारि आयु विषैं किसी आयु का बंध भया होइ अर पीछैं सम्यक्त्व कौं धारे तौ धारौ किछू दोष नाहीं। बहुरि जो पहिले नरक, तिर्यंच, मनुष्यायु का बंध भया होइ तौ अणुव्रत, महाव्रतनि के धारने को समर्थ न होइ। एक देवायु का बंध पहिले भया होइ अर अणुव्रत, महाव्रत धारै तौ धारै, किछू दोष नाहीं। जातैं और आयु का जिनकैं बंध भया होइ, तिनकैं व्रत परिणाम कौं कारण विशुद्ध रूप कषायनि के स्थानकनि का उदय संभवै नाहीं ।।३३४।।

णिरयतिरिक्खसुराउगसत्ते ण हि देससयलवदखवगा।
अयदचउक्कं तु अणं, अणियट्टीकरणचरिमम्हि ।।३३५।।

जुगवं संजोगित्ता, पुणोवि अणियट्टिकरणबहुभागं।
वोलिय कमसो मिच्छं, मिस्सं सम्मं खवेदि कमे ।।३३६।।

निरयतिर्यक्सुरायुष्क, सत्त्वे नहि देशसकलव्रतक्षपकाः।
अयतचतुष्कस्तु अन मनिवृत्तिकरणचरमे ।।३३५।।

युगपद्विसंयोज्य, पुनरपि अनिवृत्तिकरणबहुभागं।
व्यतीत्य क्रमशो मिथ्यं, मिश्रं सम्यक् क्षपयति क्रमेण ।।३३६।।

टीका – विद्यमान जिस आयु कौं भोगवै सो भुज्यमान अर आगामी जाका बंध किया सो बध्यमान, अैसैं दोऊ प्रकार अपेक्षा करि नरकायु का सत्त्व होतैं देशव्रत न होइ। नरक, तिर्यंचायु का सत्त्व होतैं सकलव्रत न होइ। नरक, तिर्यंच, देवायु का सत्त्व होतैं क्षपकश्रेणी न होइ। बहुरि अनंतानुबंधी च्यारि अर दर्शन मोहनी तीन – इन सातनि की सत्ता का असंयतादिक च्यारि गुणस्थाननि विषैं किसी एक गुणस्थान विषैं नाश करि क्षायिक सम्यग्दृष्टि होइ। सो कैसैं नाश करै सो कहिए हैं—

प्रथम तीन करण करै, तहां अनिवृत्तिकरण का अंतर्मुहूर्त काल ताका अंत समय विषैं अनंतानुबंधी की चोकडी ताकौ कहा करै, सो कहिए हैं—

तिस अनंतानुबंधी के चतुष्क कौं युगपत् एक ही बार विसंयोजन करै बारह कषाय वा नोकषाय रूप परिणमावैं अैसैं विसंयोजन करि अंतर्मुहूर्त काल विश्राम करै।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तहां पीछैं दर्शन मोह का नाश का उद्यमी होइ पहिले बहुरि अधःकरण, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण करै, तहां अनिवृत्तिकरण का जो अंतर्मुहूर्त मात्र काल, ताकौं संख्यात का भाग दीजिए, तामैं एक भाग अवशेष रहै और बहुभाग सर्व व्यतीत होइ जाइ, तब तिस एक भाग का पहिला समयस्यों लगाइ पहिलैं तौं मिथ्यात्व प्रकृति का क्षय करै। तहां पीछैं मिश्रप्रकृति का क्षय करैं, तहां पीछैं सम्यक्त्व प्रकृति का क्षय करैं, तब क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो है।

सो अब गुणस्थाननि विषैं सत्ता कहिए हैं—

मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं एक जीव की अपेक्षा आहारकद्विक अर तीर्थंकर का सत्त्व अनुक्रम करि पाइए है। कैसें ? कोई जीव ऊपरला गुणस्थाननि में आहारक का बंध करि मिथ्यात्व गुणस्थान विषैं आय आहारकद्विक का उद्वेलन किया – बंध भया था ताकौं दूरि किया, पीछैं नरकायु का बंध किया। तहां पीछैं असंयत गुणस्थानवर्ती होइ तीर्थंकर प्रकृति का बंध किया, पीछैं दूसरी वा तीसरी नरक पृथ्वी कौं जाने का काल विषैं मिथ्यादृष्टि बहुरि भया। ऐसें एक जीव कैं अनुक्रमकरि आहारकद्विक वा तीर्थंकर का सत्त्व पाइए है।

बहुरि नाना-जीव की अपेक्षा युगपत् पाइए है। एक ही काल विषैं कोई जीव कै आहारक द्विक का सत्त्व पाइए है, कोऊ जीव कैं तीर्थंकरत्व का सत्त्व पाइए है। ऐसें मिथ्यादृष्टि विषैं तीर्थंकर, आहारक का सत्त्व पाइए है अर अन्य प्रकृति का सत्त्व प्रगट है ही; तातैं मिथ्यादृष्टि विषैं सत्त्व एक सौ अठतालीस है।

बहुरि सासादन विषैं आहारक द्विक वा तीर्थंकरत्व का सत्त्व किसी भी प्रकार नाहीं; तातैं सत्त्व एक सौ पैंतालीस है। बहुरि मिश्र विषैं तीर्थंकरत्व का सत्त्व कोई प्रकार नाहीं; तातैं सत्त्व एकसौ सैंतालीस है; और असंयतादिक विषैं जिनकैं अनंतानुबंधी चतुष्क, दर्शन मोह तीन इनकी सत्ता पाइए है, असै उपशमी वा क्षायोपशमी सम्यग्दृष्टि जीव तिनकैं असंयत विषैं तौ सत्त्व एक सौ अठतालीस। देशसंयत विषैं नरकायु बिना सत्त्व एक सौ सैंतालीस। प्रमत्त विषैं नरकायु, तिर्यंचायु बिना सत्त्व एक सौ छियालीस। अप्रमत्त विषैं भी तैसें ही सत्त्व एक सौ छियालीस है। बहुरि क्षायिक सम्यग्दृष्टि कैं इन गुणस्थाननि विषैं सात-सात प्रकृति घाटि सत्त्व जानना। बहुरि अपूर्वकरणादिक विषैं दोय श्रेणी हैं – एक क्षपक श्रेणी, एक उपशमक श्रेणी।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तहां प्रथम क्षपक श्रेणी अपेक्षा कथन कीजिए हैं–

तहां अपूर्वकरण विषैं सत्त्व एकसौ अठतीस, जातैं सात प्रकृतिनि का असंयतादिक किसी एक गुणस्थान विषैं क्षय किया है अर नरक, तिर्यंच, देवायु का याकैं सत्त्व न होइ; जातैं जाकैं आयुबंध न भया होइ, सोई क्षपक श्रेणी मांडै है असैं एक सौ अडतीस की सत्ता है ।।३३६।।

आगैं अनिवृत्तिकरणादिक विषैं क्षययोग्य प्रकृतिनि का अनुक्रम कहैं हैं—

सोलट्ठेक्किगिछक्कं, चदुसेक्कं बादरे अदो एक्कं ।
खीणे सोलसऽजोगे, बावत्तरि तेरुवत्तंते ।।३३७।।

षोडशाष्टैकैकषट्कं, चतुर्ष्वेकं बादरे अत एकं ।
क्षीणेषोडशायोगे, द्वासप्ततिस्त्रयोदश उपरिमांते ।।३३७।।

टीका – इहां प्रकृतिनि की सत्त्व-व्युच्छित्ति कहैं हैं । सो जहां जिन प्रकृतिनि की व्युच्छित्ति होइ, तिसतैं ऊपरि तिन प्रकृतिनि की सत्ता का अभाव जानना । तहां अनिवृत्तिकरण गुणस्थान विषैं अनुक्रम तैं सोलह, आठ, एक, एक छह अर च्यारि विषैं एक-एक प्रकृति सत्ता तैं व्युच्छित्ति है । बहुरि सूक्ष्मसांपराय विषैं एक, क्षीण-कषाय विषैं सोलह, सयोगी विषैं शून्य, अयोगी का अंत का दोय समयनि विषैं द्विचरमसमय विषैं बहत्तरि, बहुरि अंतसमय विषैं तेरह सत्त्व तैं व्युच्छित्ति है ।।३३७।।

ते सोलह कौं आदि देकर प्रकृति कौंन ? सो कहैं हैं—

णिरयातिरिक्खदु वियलंथीणतिगुज्जोवतावएइंदी ।
साहरणसुहुमथावर, सोलं मज्झिमकसायट्ठं ।।३३८।।

निरयतिर्यग्द्वि विकलस्त्यानत्रिकमुद्योतातपैकेंद्रियं ।
साधारणसूक्ष्मस्थावरं, षोडश मध्यमकषायाष्टौ ।।३३८।।

टीका – नरकगति वा आनुपूर्वी, तिर्यंचगति वा आनुपूर्वी, विकलत्रिक, स्त्यानगृद्धित्रिक, उद्योत, आतप, एकेंद्री, साधारण, सूक्ष्म, स्थावर – ए सोलह अनिवृत्तिकरण का पहिला भाग विषैं व्युच्छित्ति हैं । बहुरि अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि, प्रत्याख्यान कषाय च्यारि – ए मध्यम आठ कषाय दूसरा भाग विषैं व्युच्छित्ति हैं ।।३३८।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

संढिथि छक्कसाया, पुरिसो कोहो य माण मायं च ।
थूले सुहुमे लोहो, उदयं वा होदि खीणम्हि ॥३३६॥

षंढस्त्री षट् कषायाः, पुरुषः क्रोधश्च मानं माया च ।
स्थुले सूक्ष्मे लोभ, उदयो वा भवति क्षीणे ॥३३६॥

टीका – बहुरि नपुंसक वेद तीसरा भाग विषैं, स्त्रीवेद चौथा भाग विषैं, छह नोकषाय पांचवां भाग विषैं, पुरुषवेद, संज्वलन क्रोध, संज्वलन मान, संज्वलन माया, – ए च्यारि छठां, सातवां, आठवां, नवां भाग विषैं अनुक्रम तैं व्युच्छित्ति हैं । असैं स्थूल कहिए अनिवृत्तिकरण, तामैं छत्तीस प्रकृति व्युच्छित्ति हैं । बहुरि सूक्ष्मसांपराय विषैं संज्वलन-लोभ व्युच्छित्ति है । क्षीणकषाय विषैं उदय व्युच्छित्ति उदयवत् पांच ज्ञानावरण, च्यारि दर्शनावरण, पांच अंतराय, निद्रा, प्रचला – ए सोलह व्युच्छित्ति हैं । सयोगी विषैं व्युच्छित्ति नास्ति है ॥३३६॥

देहादीफस्संता, थिरसुहसरसुरविहायदुग दुभगं ।
णिमिणाजसऽणादेज्जं, पत्तेया पुण्ण अगुरुचऊ ॥३४०॥

अणुदयतदियं णीचमजोगिदुचरिमम्मि सत्तवोच्छिण्णा ।
उदयगबार णराणू, तेरस चरिमम्हि वोच्छिण्णा ॥३४१॥

देहादिस्पर्शांताः, स्थिरशुभस्वरसुरविहायोद्विकं दुर्भगं।
निर्माणायशोनादेयं, प्रत्येकापूर्णमगुरुचत्वारि ॥३४०॥

अनुदयतृतीयं नीचमयोगिद्विचरमे सत्त्वव्युच्छिन्नाः
उदयगद्वादश नरानुः, त्रयोदश चरमे व्युच्छिन्नाः ॥३४१॥

टीका – पांच शरीर, पांच बंधन, पांच संघात, छह संस्थान, तीन अंगोपांग, छह संहनन, पांच वर्ण, दोय गंध, पांच रस, आठ स्पर्श, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, सुस्वर, दुःस्वर, देवगति वा आनुपूर्वी, प्रशस्त-अप्रशस्तविहायोगति, दुर्भग, निर्माण, अयशस्कीर्ति, अनादेय, प्रत्येक, अपर्याप्त, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उस्वास, जाका उदय न पाइए असी साता व असाता विषैं एक वेदनीय, नीचगोत्र – ए बहत्तरि प्रकृति अयोगी का द्विचरम समय विषैं व्युच्छित्ति हैं ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जिनका उदय अयोगी विषैं पाइए असे साता वा असाता वेदनीय एक, मनुष्यगति, पंचेंद्री, सुभग, त्रस, बादर, पर्याप्त, आदेय, यशस्कीर्ति, तीर्थंकरत्व, मनुष्यायु, उच्चगोत्र – ए बारह अर मनुष्यानुपूर्वी – एवं तेरह प्रकृति अयोगी का अंत के समय व्युच्छित्ति भई ।

असें होतैं असत्त्व-सत्त्व कहिए हैं—

जो जिन प्रकृतिनि की सत्ता न पाइए सो असत्त्व कहिए । जिनकी सत्ता पाइए सो सत्त्व कहिए । सो अनिवृत्तिकरण का पहिला भाग विषैं असत्त्व दश, सत्त्व एक सौ अठतीस । बहुरि व्युच्छित्ति सोलह; तातैं अनिवृत्तिकरण का दूसरा स्थान विषैं असत्त्व छब्बीस, सत्त्व एक सौ बाईस । बहुरि व्युच्छित्ति आठ; तातैं तिस ही का तीसरा स्थान विषैं असत्त्व चौंतीस, सत्त्व एक सौ चौदह । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं चौथा स्थान विषैं असत्त्व पैंतीस, सत्त्व एक सौ तेरह । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं पांचवां स्थान विषैं असत्त्व छत्तीस, सत्त्व एक सौ बारह । बहुरि व्युच्छित्ति छह; तातैं छठा स्थान विषैं असत्त्व बियालीस, सत्त्व एक सौ छह । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं सातवां स्थान विषैं असत्त्व तियालीस, सत्त्व एक सौ पांच । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं आठवां स्थान विषैं असत्त्व चवालीस, सत्त्व एक सौ च्यारि । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं अनिवृत्तिकरण का नवमां स्थान विषैं असत्त्व पैंतालीस, सत्त्व एक सौ तीन ।

बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं सूक्ष्मसांपराय विषैं असत्त्व छियालीस, सत्त्व एक सौ दोइ । बहुरि व्युच्छित्ति एक; तातैं क्षीणकषाय विषैं असत्त्व सैंतालीस, सत्व एक सौ एक । बहुरि व्युच्छित्ति सोलह; तातैं सयोगी विषैं असत्त्व तरेसठि, सत्त्व पिच्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति नास्ति; तातैं अयोगी का द्विचरम समय पर्यंत असत्त्व तरेसठि, सत्त्व पिच्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति बहत्तरि; तातैं अयोगी का अंत समय विषैं असत्त्व एक सौ पैंतीस, सत्त्व तेरह ।।३४०-३४१।।

असैं कह्या जो सत्त्व-असत्त्व तिन कौं आचार्य कहैं हैं—

णभतिगिणभइगि दोद्दो, दस दससोलट्ठगादिहीणेसु ।
सत्ता हवंति एवं, असहायपरक्कमुद्दिट्ठं ।।३४२।।

नभस्त्र्येकनभ एकं द्वे द्वे, दश दश षोडशाष्टकादिहीनेषु ।
सत्ता भवंति एवमसहायपराक्रमोद्दिष्टं ।।३४२।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – असत्त्व मिथ्यादृष्टि विषैं शून्य, सासादन विषैं तीन, मिश्र विषैं एक, असंयत विषैं शून्य, देशसंयत विषैं एक, प्रमत्त विषैं दोय, अप्रमत्त विषैं दोय, अपूर्वकरण विषैं दश, अनिवृत्तिकरण का पहिला भाग में दश, दूसरा, तीसरा भागादिक में सोला, आठ इत्यादिक मिलाएं असत्त्व हो है ।

सो सर्व प्रकतिनि मेंस्यों असत्त्वप्रकृति घटाएं तिस-तिस गुणस्थान विषैं सत्त्वप्रकृति पुर्वोक्त अनुक्रम करि जाननी; असैं सहाय जाकौं न चाहिए असे पराक्रम के धारी श्रीवर्धमान स्वामी ने कह्या है ।

इहां अनिवृत्तिकरणवाला बादर लोभ कौं खिपावै है – तिस लोभ की सूक्ष्मकृष्टि करै है । ते वे सूक्ष्मकृष्टि सूक्ष्मसांपराय विषैं उदय हो हैं, असा जानना । इस क्षपणाविधान विषैं उदय कौं प्राप्त जे पुरुषवेद आदि, तिनका एक निषेक तौ एक समय स्थिति लीएं है । दोय निषेक दोय समय स्थिति लीएं हैं; असैं अनुक्रम जानना । बहुरि उदय कौं प्राप्त नाहीं जे नपुंसक वेद आदि, तिनकी क्षय भएं पीछें अवशेष उच्छिष्ट रही सर्वस्थिति, समय अधिक आवली प्रमाण है; जातैं तहां एक निषेक दोय समय स्थिति लीएं है, दोय निषेक तीन समय स्थिति लीएं हैं, इत्यादि अनुक्रम का सद्भाव है; तातैं उच्छिष्टावली तैं एक समय अधिक स्थिति जाननी ।

बहुरि उदय कौं प्राप्त नाहीं जे नपुंसक वेद आदि परमुख उदय करि समान समयनि विषैं उदय रूप एक-एक निषेक कह्या अनुक्रम करि संक्रमणरूप होइ प्रवर्तें हैं । असैं स्वमुख-परमुख उदय का विशेष जानना ।

जो प्रकृति आपरूप ही होय उदय आवै तहां स्वमुख उदय है । जो प्रकृति अन्य प्रकृति रूप होइ उदय होय तहां परमुख उदय है । विशेष स्वरूप आगें क्षपणासार अनुसारि इस भाषाटीका विषैं कथन करैंगे, तहां जानना ।। ३४२ ।।

आगें उपशम श्रेणीवाला कैं मोह की सात प्रकृति तौ पूर्वैं उपशम भई थीं, अवशेष इकईस प्रकृति का उपशमावने का विधान कहैं हैं—

खवणं वा उवसमणे, णवरि य संजलणपुरिसमज्भम्हि ।
मज्भिमदोद्दो कोहादीया कमसोवसंता हु ।।३४३।।

क्षपणामिवोपशमने, नवरि च संज्वलनपुरुषमध्ये ।
मध्यमद्वौ द्वौ क्रोधाधिकौ क्रमश उपशांतौ हि ।।३४३।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – क्षपणावत् उपशमविधान विषैं भी अनुक्रम है। परंतु विशेष इतना है, जो संज्वलन कषाय अर पुरुष वेदी के बीच, मध्यम-बीचि के जे अप्रत्याख्यान वा प्रत्याख्यान क्रोधादिक ते अनुक्रम तैं उपशमै हैं। सोई कहिए हैं—

नपुंसकवेद, स्त्रीवेद, हास्यादिक छह, पुरुषवेद इनका अनुक्रम तैं उपशम हो है। पीछैं पुरुषवेद का उपशमने के अनंतरि तीहिं पुरुषवेद का नवकबंध सहित मध्यम जो अप्रत्याख्यान वा प्रत्याख्यान क्रोध युग्म, ताकौं उपशमावै है।

इहां जो तत्काल नवीन बंध भया ताका नाम **नवकबंध** जानना। सो पुरुषवेद का जो नवीन बंध भया, ताके निषेक पुरुषवेद कौं उपशमावने के काल विषैं उपशमावने योग्य न भए; जातैं अचलावली विषैं कर्म प्रकृति कौं अन्यथा परणमावने कौं असमर्थपना है; तातैं पुरुषवेद के निषेक मध्यम क्रोधयुग्म कौं उपशमावने के काल विषैं उपशमाइए है – असैं ही संज्वलन क्रोधादिक का भी नवकबंध का स्वरूप यथावस्थित जानना।

बहुरि ताके अनंतरि संज्वलन क्रोध कौ उपशमावै है। बहुरि ताके अनंतरि तीहिं संज्वलन क्रोध का नवकबंध सहित मध्यम जो अप्रत्याख्यान वा प्रत्याख्यान मान युग्म, ताकौं उपशमावै है। बहुरि ताके अनंतरि संज्वलन मान कौं उपशमावै है। बहुरि ताके अनंतरि तीहिं संज्वलन मान का नवकबंध सहित मध्यम जो अप्रत्याख्यान-प्रत्याख्यान माया युग्म, ताकौं उपशमावै है। बहुरि ताके अनंतरि संज्वलन माया कौं उपशमावै है। बहुरि ताके अनंतरि तीहि संज्वलन माया कौं नवकबंध सहित मध्यम जो अप्रत्याख्यान-प्रत्याख्यान लोभ युग्म ताकौं उपशमावै हैं। बहुरि ताके अनंतरि बादर संज्वलन लोभ कौं उपशमावै है।

असा विशेष मोहनीय कर्म ही का जानना; जातैं मोहनीय बिना और कर्मनि का उपशम विधान नाहीं है।

असैं उपशमश्रेणी विषैं मोह कौं उपशमावै है। सत्ता नाश न हो है; तातैं अपूर्वकरणादिक उपशांतकषाय गुणस्थानपर्यंत उपशमश्रेणीवाले कैं नरकायु, तिर्यंचायु बिना एक सौ छियालीस प्रकृति की सत्ता जाननी। बहुरि क्षायिक सम्यग्दृष्टि उपशमश्रेणीवाले कैं एक सौ अडतीस की सत्ता अपूर्वकरणादि उपशांत कषाय पर्यंत जाननी। तथा जाके आयु बंध न भया होइ तिस क्षायिक सम्यग्दृष्टि कैं असंयतादिक च्यारि गुणस्थाननि विषैं भी एक सौ अडतीस ही की सत्ता जाननी ॥३४३॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

णिरयादिसु पयडिट्ठिदिअणुभागपदेसभेदभिण्णस्स ।
सत्तस्स य सामित्तं, णेदव्वमिदो जहाजोग्गं ॥३४४॥

निरयादिषु प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशभेदभिन्नस्य ।
सत्त्वस्य च स्वामित्वं, नेतव्यमितो यथायोग्यं ॥३४४॥

टीका – इहांतैं आगैं नरकगत्यादिक मार्गणानि विषैं प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेश – च्यारि प्रकार भेदकौं लीए कर्मनि का जो सत्त्व सो यथायोग्य प्राप्त करना ॥३४४॥

आगैं परिभाषा कहैं हैं—

तिरिए ण तित्थसत्तं, णिरयादिसु तिय चउक्क चउ तिण्णि ।
आऊणि होंति सत्ता, सेसं ओघादु जाणेज्जो ॥३४५॥

तिरश्चि न तीर्थसत्वं, निरयादिषु त्रीणि चतुष्कं चत्वारि त्रीणि ।
आयूंषि भवंति सत्ताः, शेषमोघाज्ज्ञातव्यं ॥३४५॥

टीका – तिर्यंच विषैं तीर्थंकर प्रकृति का सत्त्व नाहीं है। बहुरि नरकगति विषैं भुज्यमान नरकायु, बध्यमान तिर्यंचायु वा मनुष्यायु – असैं तीन आयु ही का सत्त्व है, देवायु का नाहीं। बहुरि तिर्यंचगति विषैं भुज्यमान तिर्यंचायु, बध्यमान नरकायु, तिर्यंचायु, मनुष्यायु, देवायु – असैं च्यारयों आयु का सत्त्व है। बहुरि मनुष्यगति विषैं भुज्यमान मनुष्यायु; बध्यमान नरकायु, तिर्यंचायु, मनुष्यायु, देवायु – असैं च्यार्यों आयु का सत्त्व है। बहुरि देवगति विषैं भुज्यमान देवायु; बध्यमान तिर्यंचायु, मनुष्यायु – असैं तीन आयु का सत्त्व है।

जाकौं भोगवै है, ताकौं भुज्यमान कहिए, आगामी उदय होने कौं योग्य जाका बंध भया होइ सो बध्यमान कहिए।

बहुरि अवशेष प्रकृतिनि का सत्त्व, गुणस्थानवत् जानना ॥३४५॥

तहां नरकगति विषैं सत्त्व कहै हैं—

ओघं वा णेरइये, ण सुराऊ तित्थमत्थि तदियोत्ति ।
छट्ठित्ति मणुस्साऊ, तिरिए ओघं ण तित्थयरं ॥३४६॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ओघ इव नैरयिके, न सुरायुस्तीर्थमस्ति तृतीय इति ।
षष्ठ इति मनुष्यायुस्तिरश्चि ओघो न तीर्थकरं ।।३४६।।

टीका – नरकगति विषैं गुणस्थानवत् है । तहां देवायु का सत्त्व नाहीं; तातैं सत्त्व योग्य एक सौ सैंतालीस है । तहां भी तीर्थंकर का सत्त्व तीसरी पृथ्वी ताईं है; तातैं चौथी आदि पृथ्वीनि विषैं सत्त्व एक सौ छियालीस है । तहां भी मनुष्यायु का सत्त्व छठी पृथ्वी ताईं है; तातैं सातवीं माघवी पृथ्वी विषैं एक सौ पैंतालीस ही का सत्त्व है ।

तहां धर्मादिक तीन पृथ्वीनि विषैं सत्त्व एक सौ सैंतालीस, सो मिथ्यादृष्टि विषैं असत्त्व नास्ति, सत्त्व एक सौ सैंतालीस । सासादन विषैं आहारकद्विक, तीर्थंकर – ए असत्त्व तीन; सत्त्व एक सौ चवालीस । मिश्र विषैं असत्त्व एक तीर्थंकर, सत्त्व एक सौ छियालीस । असंयत विषैं असत्त्व शून्य, सत्त्व एक सौ सैंतालीस ।

बहुरि अंजनादिक तीन पृथ्वीनि विषैं सत्त्व एक सौ छियालीस, तहां मिथ्यादृष्टि विषैं असत्त्व नास्ति, सत्त्व एक सौ छियालीस । सासादन विषैं असत्त्व आहारकद्विक, सत्त्व एक सौ चवालीस । मिश्र-अविरत विषैं असत्त्व नास्ति, सत्त्व एक सौ छियालीस ।

बहुरि माघवी-सातवीं पृथ्वी विषैं सत्त्व एक सौ पैंतालीस । तहां मिथ्यादृष्टि, मिश्र, अविरत विषैं असत्त्व नास्ति, सत्त्व एक सौ पैंतालीस । सासादन विषैं असत्त्व आहारकद्विक, सत्त्व एक सौ तियालीस जानना ।

बहुरि तिर्यंचगति विषैं तीर्थंकर बिना गुणस्थानवत् सत्त्व एक सौ सैंतालीस । तहां मिथ्यादृष्टि, मिश्र, अविरत विषैं असत्त्व शून्य, सत्त्व एक सौ सैंतालीस । सासादन विषैं असत्त्व आहारकद्विक, सत्त्व एक सौ पैंतालीस । बहुरि असंयत विषैं नरकायु, मनुष्यायु की व्युच्छित्ति भई, जातैं इनका सत्त्व होतैं अणुव्रत न होइ; तातैं देशव्रत विषैं असत्त्व नरकायु, मनुष्यायु – दोय, सत्त्व एक सौ पैंतालीस है ।।३४६।।

एवं पंचतिरिक्खे, पुण्णिदरे णत्थि णिरयदेवाऊ ।
ओघं मणुसतियेसुवि, अपुण्णगे पुण अपुण्णेव ।।३४७।।

एवं पंचतिरश्चि, पूर्णेतरस्मिन् नास्ति निरयदेवायुः ।
ओघो मनुष्यत्रयेष्वपि, अपूर्णके पुनरपूर्णे इव ।।३४७।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – ऐसें ही सामान्य तिर्यंच, पंचेंद्री तिर्यंच, योनिमत् तिर्यंच, पर्याप्त तिर्यंच विषें जानना । विशेष इतना – जो लब्धि अपर्याप्तक विषें नरकायु, देवायु का सत्व नाहीं; तातें सत्व एक सौ पैंतालीस, गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि ही है । जातें **'गहि सासणो अपुण्णे'** इस वचन तें ताकें सासादन भी न होइ ।

बहुरि मनुष्यगति विषें सामान्य मनुष्य, पर्याप्त मनुष्य, योनिमत् मनुष्य विषें **ओघ:** – गुणस्थानवत् है । तहां योनिमत् मनुष्य विष क्षपकश्रेणी विषें विशेष है । जातें सामान्य मनुष्य अर पर्याप्त मनुष्य विषें मिथ्यादृष्ट्यादि अयोगी गुणस्थान पर्यंत सर्व सत्व, असत्व – गुणस्थान रचनावत् जानना । विशेष इतना जो देशसंयत गुणस्थान विषें तिर्यंचायु की भी सत्ता नाहीं; तातें तहां सत्व एक सौ छियालीस, असत्व दोय कहना । अन्य सर्व कथन समान जानना ।

बहुरि योनिमत् मनुष्य विषें क्षपकश्रेणी विषें तीर्थंकर सत्तावाले कें अप्रमत्त गुणस्थान तें ऊपरी स्त्रीवेदीपणा का अभाव है; तातें अपूर्वकरण विषें सत्व एक सौ सैंतीस, असत्व दश । ऐसें ही अनिवृत्तिकरण का नवभाग वा सूक्ष्मसांपरायादिक अयोगी पर्यंत विषें गुणस्थानोक्त सत्व तें एक-एक घाटि सत्व जानना, असत्व गुणस्थानोक्त ही जानना ।

बहुरि लब्धि अपर्याप्तक मनुष्य विषें लब्धि अपर्याप्तक तिर्यंचवत् तीर्थंकर, नरकायु, देवायु बिना सत्व एक सौ पैंतालीस, गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि जानना ॥३४७॥

आगें देवगति विषें कहैं हैं—

ओघं देवे ण हि णिरयाउ सारोत्ति होदि तिरियाऊ ।
भवणतियकप्पवासियइत्थीसु ण तित्थयरसत्तं ॥३४८॥

ओघो देवे न हि निरयायुः सार इति भवति तिर्यगायुः ।
भवनत्रयकल्पवासिकस्त्रीषु न तीर्थंकरसत्त्वं ॥३४८॥

टीका – देवगति विषें नरकायु बिना सामान्यवत् सत्व प्रकृति एक सौ सैंतालीस हैं । बहुरि तिर्यंचायु का सत्व सहस्रार पर्यंत ही है ऊपरि नाहीं है, सो सौधर्मादिक सहस्रार पर्यंत बारह स्वर्गनि विषें सत्व एक सौ सैंतालीस । तहां **'किण्ह दुगसुहतिलेस्सय वामेविणितित्थयरसत्तं'** इस वचन करि तीर्थंकर का सत्व बिना मिथ्यादृष्टि विषें सत्व एक सौ छियालीस, असत्व एक । सासादन विषें तीर्थंकर,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आहारकद्विक – ए असत्व तीन, सत्व एक सौ चवालीस । मिश्रविषैं असत्व एक तीर्थंकर, सत्व एक सौ छियालीस। असंयत विषैं असत्व नास्ति, सत्व एक सौ सैंतालीस है ।

बहुरि आनतादि च्यारि स्वर्ग अर नव ग्रैवेयक इनविषैं नरकायु, तिर्यंचायु बिना सत्व एक सौ छियालीस । तहां मिथ्यादृष्टि, मिश्र विषैं असत्व एक तीर्थंकर, सत्व एक सौ पैंतालीस। सासादन विषैं तीर्थंकर, आहारकद्विक – ए असत्व तीन, सत्व एक सौ तियालीस । असंयत विषैं असत्व नास्ति, सत्व एक सौ छियालीस ।

बहुरि नवानुदिश, पंचानुत्तरविमान विषैं नरकायु, तिर्यंचायु बिना सत्व प्रकृति एक सौ छियालीस । गुणस्थान एक असंयत ही है ।

बहुरि भवनत्रिक देव, कल्पवासिनी स्त्री – इनविषैं तीर्थंकर, नरकायु बिना सत्व एक सौ छियालीस। तहां मिथ्यादृष्टि विषैं सत्व एक सौ छियालीस, असत्व शून्य सासादन विषैं असत्व आहारकद्विक, सत्व एक सौ चवालीस । मिश्र-असंयत विषैं असत्व शून्य, सत्व एक सौ छियालीस जानना ॥३४८॥

आगैं इंद्रिय, कायमार्गणा विषैं कहै हैं—

ओघं पंचक्खतसे,[१] सेसिंदियकायगे अपुण्णं वा ।
तेउदुगे ण णराऊ सव्वत्थुव्वेल्लणावि हवे ॥३४९॥

ओघः पंचाक्षत्रसे, शेषेंद्रियकायके अपूर्णं वा ।
तेजोद्विके न नरायुः, सर्वत्रोद्वेल्लनापि भवेत् ॥३४९॥

१–पंचेंद्रियत्रसकायिकयोर्योग्याः सत्त्वप्रकृतयः १४८

व्यु	मि०	सा०	मि०	अ०	दे१	प्र०	अ८	अ०	अ१६	अ८	१	१
स	१४८	१४५	१४७	१४८	१४७	१४६	१४६	१३८	१३८	१२२	११४	११३
अ	०	३	१	०	१	२	२	१०	१०	२६	३४	३५

व्यु	६	१	१	१	१	सू१	उ	०	क्षी१६	स०	अ७२	१३
स	११२	१०६	१०५	१०४	१०३	१०२	१४६	१३८	१०१	८५	८५	१३
अ	३	४२	४३	४४	४५	४६	२	१०	४७	६३	६३	१३५

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – इंद्रियमार्गणा अर कायमार्गणानि विषैं पंचेंद्री अर त्रसकाय इनविषैं सामान्यवत् सत्व प्रकृति एक सौ अठतालीस, गुणस्थान सर्व चौदह । तिन विषैं सर्व रचना गुणस्थानवत् जाननी, किछू विशेष नाहीं ।

बहुरि अवशेष एकेंद्री, बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री मार्गणा अर पृथ्वी, अप, वनस्पती कायमार्गणा इनविषैं लब्धि अपर्याप्तवत् तीर्थंकर, नरकायु, देवायु बिना सत्व प्रकृति एक सौ पैंतालीस । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं सत्व एक सौ पैंतालीस, असत्व शून्य । सासादन विषैं असत्व आहारकद्विक, सत्व एक सौ तियालीस ।

बहुरि तेजकाय, वातकाय विषैं मनुष्यायु भी नाहीं; तातैं सत्व प्रकृति एक सौ चवालीस, गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि है । बहुरि सर्वत्र इंद्रियमार्गणा अर कायमार्गणा विषैं उद्वेलना भी हो है ।

उद्वेलना कहा कहिए ?

जैसैं जेवरा बल देइ करि वट्या था पीछेंहूं बलकरि उधेडिए, तैसैं जिन प्रकृतिनि का बंध किया था, पीछैं तिनकौं उद्वेलन भागहार तैं अपकर्षण करि अन्य प्रकृतिपनै कौं प्राप्त करि नाश करना उद्वेलन कहिए ।।३४९।।

ते उद्वेलन प्रकृति कौन हैं ? सो कहैं हैं—

हारदु सम्मं मिस्सं, सुरदुग णारयचउक्कमणुकमसो ।
उच्चागोदं मणुदुगमुव्वेल्लिज्जंति जीवेहिं ।।३५०।।

हारद्वि सम्यक् मिश्रं, सुरद्विकं नारकचतुष्कमनुक्रमशः ।
उच्चैर्गोत्रं मनुद्विकमुद्वेल्ल्यंते जीवैः ।।३५० ।

टीका – उद्वेलना का विधान आगै विस्तार तैं कहिएगा, तथापि इहां भी प्रसंग पाइ किछू कहिए हैं – आहारकद्विक, सम्यक्त्व मोहनी, मिश्र मोहनी, देवगति वा आनुपूर्वी, नरकगति वा आनुपूर्वी, वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग – ए वैक्रियिक चतुष्क वा नारक चतुष्क की च्यारि, उच्चगोत्र, मनुष्यगति वा आनुपूर्वी – तेरह प्रकृति अनुक्रम तैं उद्वेलना रूप कीजिए है ।।३५०।।

कौंन जीव किस प्रकृति की उद्वेलना करै, सो कहिए हैं—

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

चदुगदिमिच्छे चउरो, इगिविगले[१] छप्पि तिण्णि तेउदुगे[२] ।
सिय अत्थि णत्थि सत्तं, सपदे उप्पण्णठाणेवि ।।३५१।।

चतुर्गतिमिथ्ये चतस्र, एकविकले षडपि तिस्रस्तेजोद्विके ।
स्यादस्ति नास्ति सत्वं, स्वपदे उत्पन्नस्थानेऽपि ।।३५१।।

टीका – च्यार्यों गतिवाले मिथ्यादृष्टि-जीवनि विषैं च्यारि अर एकेंद्री, विकलेंद्री विषैं छह अर तेज, वातकाय विषैं तीन प्रकृति स्वस्थान अर उत्पन्न स्थान विषैं स्यादस्ति, स्यान्नास्ति कहिए; कोई प्रकार सत्व है, कोई प्रकार सत्व नाहीं है । जो उद्वेलना न भई होइ, तो सत्व पाइए अर जो उद्वेलना भई होय, तो सत्व न पाइए । सो कहिए हैं––

तीर्थंकर, नरकायु, देवायु इनकी सत्ता जाकैं न पाइए असैं चतुर्गतिवाले संक्लेशपरिणामी मिथ्यादृष्टि जीव, ताकैं उद्वेलना भए बिना सत्व तौ एक सौ पैंतालीस पाइए । बहुरि आहारकद्विक की उद्वेलना भएं एक सौ तियालीस का सत्व पाइये । बहुरि सम्यक्त्वमोहनी की उद्वेलना भए सत्व एक सौ बियालीस पाइए । बहुरि मिश्र मोहनी की उद्वेलना भए एक सौ इकतालीस का सत्व पाइए – असैं स्वस्थान विषैं सत्व जानना ।

बहुरि उत्पन्न स्थान विषैं एकेंद्री, बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री, पृथ्वी, अप, वनस्पतिकाय विषैं ते च्यारि पूर्वोक्त प्रकार करि एक सौ पैंतालीस, एक सौ तियालीस, एक सौ बिया-

तेजोद्विक योग्य १४४

(१)

	ए	द्वि	त्रि	च	पृ	अ	व	योग्य	१४५
	० आ २	० स १	० मि १	० सु २	० नार ४	उत्पन्न			
१४५	१४३	१४२	१४१	१३९	१३५	१३३	१३१		

(२)

	० आ २	० सं १	० मि १	० सु २	० ना ४	० उ १	० स २
१४४	१४२	१४१	१४०	१३८	१३४	१३३	१३१

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

लीस, एक सौ इकतालीस का सत्व पाइए है। बहुरि देवगति वा आनुपूर्वी – इन दोऊनि की उद्वेलना भएं स्वस्थान विषैं तिन एकेंद्रियादिकनि कैं एक सौ गुणतालीस का सत्व है। बहुरि वैक्रियिक चतुष्क की उद्वेलना भएं एक सौ पैंतीस का सत्व है।

बहुरि उत्पन्नस्थान विषैं तेजःकाय, वातकाय विषैं मनुष्यायु का भी सत्व नाहीं; तातैं बिना उद्वेलना भएं सत्व एक सौ चवालीस। बहुरि आहारकद्विक की उद्वेलना भएं क्रम से एक सौ बियालीस, एक सौ इकतालीस, एक सौ चालीस, सुरद्विक की उद्वेलना तैं एक सौ अडतीस, वैक्रियिक चतुष्क की उद्वेलना तैं एक सौ चौंतीस सत्व पाइए।

बहुरि स्वस्थान विषैं तेज, वातकायिक कैं उच्चगोत्र की उद्वेलना भए, सत्व एक सौ तेतीस का है। बहुरि मनुष्यद्विक की उद्वेलना भए, एक सौ इकतीस ही का सत्व पाइए है। ए अंत के दोय सत्व एक सौ तेतीस वा एक सौ इकतीस का उत्पन्न-स्थान विषैं एकेंद्री, बेंद्री, तेंद्री, चौंद्री, पृथ्वी, अप, वनस्पति विषैं भी जानना। यहां पूर्व पर्याय विषैं जो बिना उद्वेलनातैं वा उद्वेलनातैं सत्व भया तिस सहित उत्तर पर्याय विषैं उपजै, तहां उत्तर पर्याय विषैं तिस सत्व कौं उत्पन्न स्थान विषैं सत्व कहिए। बहुरि तिस विवक्षित पर्याय विषै बिना उद्वेलना वा उद्वेलनातैं जो सत्त्व होय, ताकौं स्वस्थान विषैं सत्त्व कहिये ॥३५१॥

आगैं योगमार्गणा विषैं कहै हैं—

पुण्णेकारसजोगे, साहारयमिस्सगेवि स गुणोघं।
वेगुव्वियमिस्सेवि य, णवरि ण माणुसतिरिक्खाऊ ॥३५२॥

पूर्णैकादयोगे, साहारकमिश्रकेऽपि स्वगुणौघः।
वैगूर्विकमिश्रेऽपि च, नवरि न मानुषतिर्यगायुः ॥३५२॥

टीका – च्यारि मनोयोग, च्यारि वचनयोग, औदारिक, वैक्रियिक, आहारक योग, आहारक मिश्रयोग – इन विषै अपना-अपना गुणस्थानवत् रचना है। तहां च्यारि मनोयोग, च्यारि वचनयोग, औदारिक शरीर – इनविषैं सत्व प्रकृति एक सौ अडतालीस, गुणस्थान बारह वा तेरह, तहां रचना गुणस्थानवत् जाननी, विशेष नाहीं।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि आहारक, आहारकमिश्रयोग विषैं नरकायु, तिर्यंचायु बिना सत्व एक सौ छियालीस, गुणस्थान एक प्रमत्त ।

बहुरि वैक्रियिक योग विषै सत्व प्रकृति एक सौ अडतालीस, गुणस्थान च्यारि । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं सत्व सर्व, असत्व नास्ति, जातैं तीर्थंकर सत्तावाला तृतीय पृथ्वी पर्यंत जाय है । सासादन, मिश्र, अविरत विषैं गुणस्थानवत् असत्व-सत्व जानना ।

बहुरि वैक्रियिकमिश्र विषैं तिर्यंचायु, मनुष्यायु विना सत्व प्रकृति एक सौ छियालीस । तहां मिथ्यादृष्टि अर असंयत विषैं असत्व नास्ति, सत्व सर्व । सासादन विषैं आहारकद्विक, तीर्थंकर, नरकायु – ए असत्व च्यारि, सत्व एक सौ बियालीस है ।।३५२।।

औदारिक मिश्रयोग विषैं कहैं हैं—

ओरालमिस्सजोगे, ओघं सुरणिरयआउगं णत्थि ।
तम्मिस्सवामगे ण हि, तित्थं कम्मेवि सगुणोघं ।।३५३।।

औरालमिश्रयोगे, ओघः सुरनिरयायुष्कं नास्ति ।
तन्मिश्रवामके न हि, तीर्थं कार्मेऽपि स्वगुणौघः ।।३५३।।

टीका – औदारिकमिश्रयोग विषैं देवायु, नरकायु बिना सामान्यवत् सत्व प्रकृति एक सौ छियालीस । तहां '**तम्मिस्सवामगे ण हि तित्थं**' इस वचन तैं मिथ्यादृष्टि विषैं असत्व एक तीर्थंकर, सत्व एक सौ पैंतालीस । सासादन विषैं तीर्थंकर, आहारकद्विक – ए असत्व तीन, सत्व एक सौ तियालीस । असंयत विषै असत्व शून्य, सत्व एक सौ छियालीस । सयोगी विषैं सत्व पिच्यासी, असत्व इकसठि ।

बहुरि कार्माणकाययोग विषैं च्यार्यो भुज्यमान आयु संभवै हैं; तातैं सत्व प्रकृति एक सौ अडतालीस । तहां मिथ्यादृष्टि, असंयत विषैं सत्व सर्व, असत्व नास्ति । सासादन विषैं तीर्थंकर, आहारकद्विक, नरकायु – ए असत्व च्यारि, सत्व एक सौ चवालीस । सयोगी विषैं असत्व त्रेसठि, सत्व पिच्यासी ।।३५३।।

आगै वेदमार्गणादिक विषैं कहैं हैं–

वेदादाहारोत्ति य, सगुणोघं णवरि संढथीखवगे ।
किण्हदुगसुहतिलेस्सियवामेवि ण तित्थयरसत्तं ।।३५४।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

**वेदादाहार इति च, स्वगुणौघः नवरि षंढस्त्रीक्षपके ।
कृष्णद्विकशुभत्रिलेश्यिकवामेऽपि न तीर्थकरसत्वं ।।३५४।।**

टीका – वेदमार्गणा तैं लगाय आहारमार्गणा पर्यंत अपने-अपने गुणस्थानवत् सामान्य रचना है। तहां पुरुषवेद विषैं सत्व प्रकृति एक सौ अडतालीस, गुणस्थान चौदह। तहां रचना सर्व गुणस्थानवत् जाननी। बहुरि नपुंसकवेद, स्त्रीवेद विषैं सत्व प्रकृति एक सौ अडतालीस। तहां **'णवरि संढथी खवगे'** इस वचन करि क्षपक श्रेणी-विषैं तीर्थंकर का सत्व नाहीं; तातैं अपूर्वकरणादिक विषैं सत्व प्रकृति गुणस्थानोक्त सत्व प्रकृति तैं एक-एक घाटि जाननी। और सर्व रचना गुणस्थानवत् जाननी।

बहुरि कषायमार्गणा विषैं सत्व एक सौ अडतालीस, गुणस्थान क्रोधमान-माया विषैं अनिवृत्तिकरण पर्यंत नव, लोभ विषैं सूक्ष्मसांपराय पर्यंत दश। तहां रचना सर्व गुणस्थानवत् जाननी।

बहुरि ज्ञानमार्गणा विषैं कुमति, कुश्रुत, विभंग विषैं सत्व एक सौ अडतालीस, गुणस्थान मिथ्यादृष्टि, सासादन – दोय, तहां रचना गुणस्थानवत्। बहुरि मति, श्रुत, अवधि विषैं सत्व प्रकृति एक सौ अडतालीस, गुणस्थान असंयतादिक नव। तहां रचना गुणस्थानवत् जाननी। बहुरि मनःपर्यय विषैं नरक, तिर्यंचायु बिना सत्व प्रकृति एक सौ छियालीस, गुणस्थान प्रमत्तादिक सात। तहां सत्व गुणस्थानवत्, असत्व गुणस्थानोक्त असत्व तैं दोय-दोय घाटि जानना। बहुरि केवलज्ञान विषैं सत्व प्रकृति पिच्यासी, गुणस्थान सयोगी-अयोगी दोय। तहां सत्व गुणस्थानवत्, असत्व सयोगी विषैं नास्ति, अयोगी विषैं द्विचरम समय पर्यंत नास्ति, चरम समय विषैं बहत्तरि।

बहुरि संयममार्गणा विषैं असंयत विषैं सत्व एक सौ अडतालीस, गुणस्थान मिथ्यादृष्टयादिक च्यारि। तहां रचना गुणस्थानवत् जाननी। बहुरि देशसंयत विषैं नरकायु बिना सत्व एक सौ सैंतालीस, गुणस्थान एक देशसंयत। बहुरि सामायिक-छेदोपस्थापन विषैं नरक, तिर्यंचायु बिना सत्व एक सौ छियालीस। गुणस्थान प्रमत्तादिक च्यारि। तहां सत्व गुणस्थानोक्त, असत्व गुणस्थानोक्त तैं दोय-दोय घाटि जानना।

बहुरि परिहार-विशुद्धि विषैं सत्व पूर्वोक्त एक सौ छियालीस, गुणस्थान प्रमत्त-अप्रमत्त दोय। बहुरि सूक्ष्मसांपराय विषैं सत्व एक सौ दोय, गुणस्थान एक सूक्ष्म-साम्पराय। बहुरि यथाख्यात विषैं गुणस्थान च्यारि, तहां उपशांत-कषाय विषैं सत्व

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

एक सौ छियालीस अथवा एक सौ अडतीस । क्षीणकषाय विषै एक सौ एक, सयोगी विषैं पिच्यासी, अयोगी विषैं द्विचरम-समय पर्यंत पिच्यासी, चरम-समय विषैं तेरह हैं ।

बहुरि दर्शनमार्गणा विषैं चक्षु-अचक्षुदर्शन विषैं सत्व एक सौ अडतालीस, गुणस्थान आदि के बारह, तहां गुणस्थानोक्तवत् रचना है । बहुरि अवधिदर्शन विषैं सत्व एक सौ अडतालीस, गुणस्थान असंयतादिक नव, तहां रचना गुणस्थानोक्त है । बहुरि केवलदर्शन विषैं रचना केवलज्ञानवत् जाननी ।

बहुरि लेश्यामार्गणा विषैं कृष्ण, नील विषैं सत्व प्रकृति एक सौ अडतालीस, गुणस्थान मिथ्यादृष्टयादिक च्यारि, तहां **'किण्हदुगेवामे ण तित्थयरसत्तं'** इस वचन तें मिथ्यादृष्टि विषैं तीर्थंकर सत्व नाहीं, जातैं तीन अशुभलेश्या विषैं तीर्थंकर का प्रारंभ न होय । बहुरि जाकै नरकायु बंध्या होइ, सो दूसरी-तीसरी पृथ्वी विषैं उपजै, तहां भी कापोतलेश्या पाइए; तातैं एक सौ सैंतालीस का सत्व है । बहुरि सासादनादिक विषैं गुणस्थानवत् रचना है ।

बहुरि कापोतलेश्या विषैं सत्व एक सौ अडतालीस, गुणस्थान च्यारि आदि के, तहां रचना गुणस्थानवत् जाननी ।

बहुरि तेजः-पद्म लेश्या विषैं सत्व एक सौ अडतालीस, गुणस्थान सात आदि के, तहां **'सुहतियलेस्सियवामे वि ण तित्थयरसत्तं'** इस वचन तें मिथ्यादृष्टि विषैं तीर्थंकर सत्व नाहीं, जातैं तीर्थंकर सत्तावाला जो नरक जाने कौं सन्मुख होइ तिसहीं कैं सम्यक्त्व की विराधना होइ है ।

तीनों शुभलेश्या विषैं सम्यक्त्व की विराधना होइ नाहीं; तातैं तहां सत्व एक सौ सैंतालीस । बहुरि सासादन विषैं गुणस्थानवत् रचना जाननी ।

बहुरि शुक्ल-लेश्या विषैं सत्व एक सौ अठतालीस, गुणस्थान मिथ्यादृष्टया-दिक तेरह । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं तीर्थंकर की सत्ता नाहीं; तातैं सत्व एक सौ सैंतालीस । सासादनादिक विषैं गुणस्थानवत् रचना जाननी ।

बहुरि भव्य-मार्गणा विषैं सत्व एक सौ अडतालीस, गुणस्थान चौदह, तहां रचना गुणस्थानवत् जाननी ।।३५४।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अभव्वसिद्धे णत्थि हु, सत्तं तित्थयरसम्ममिस्साणं ।
आहारचउक्कस्सवि, असण्णिजीवे ण तित्थयरं ।।३५५।।

अभव्यसिद्धे नास्ते हि, सत्वं तीर्थंकरसम्यग्मिश्राणां ।
आहारचतुष्कस्यापि, असंज्ञिजीवे न तीर्थंकरं ।।३५५।।

टीका – अभव्य मार्गणा विषैं तीर्थंकर, सम्यक्त्व मोहनी, मिश्र मोहनी, आहारकशरीर अंगोपांग, बंधन, संघात – ए च्यारि – इन सात का सत्व नाहीं, जातैं वाके कदाचित् सम्यग्दर्शनादिक की प्रगटता नाहीं; तातैं सत्व एक सौ इकतालीस, गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि ।

बहुरि सम्यक्त्व मार्गणा विषैं मिथ्यारुचि विषैं सत्व एक सौ अडतालीस, गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि, सासादन रुचि विषैं तीर्थंकर, आहारकद्विक बिना सत्व एक सौ पैंतालीस, गुणस्थान एक सासादन । मिश्र-रुचि विषैं तीर्थंकर बिना सत्व एक सौ सैंतालीस, गुणस्थान एक मिश्र । उपशम-सम्यक्त्व विषैं सत्व प्रकृति एक सौ अडतालीस, गुणस्थान असंयतादिक आठ । तहां असंयत विषैं असत्व नास्ति, सत्व सर्व । देशसंयत विषैं असत्व नरकायु, सत्व एक सौ सेंतालीस । प्रमत्तादि उपशांत-मोह पर्यंत विषैं असत्व नरकायु, तिर्यंचायु – दोय, सत्व एक सौ छियालीस ।

बहुरि वेदक-सम्यक्त्व विषैं सत्व एक सौ अडतालीस, गुणस्थान अविरतादिक च्यारि, तहां रचना गुणस्थानवत् ।

बहुरि क्षायिक-सम्यक्त्व विषैं च्यारि अनंतानुबंधी, तीन दर्शन-मोहनी का अभाव है; तातैं सत्व प्रकृति एक सौ इकतालीस, गुणस्थान असंयतादिक ग्यारह । तहां असंयत विषैं असत्व नास्ति, सत्व एक सौ इकतालीस । इहां ही नरकायु, तिर्यंचायु की व्युच्छित्ति भई, जातैं क्षायिकसम्यक्त्वी तिर्यंच देशगुणस्थानवर्ती न होंइ; यातैं देशसंयत विषैं असत्व दोय, सत्व एक सौ गुणतालीस । बहुरि प्रमत्त-अप्रमत्त विषैं भी एक सौ गुणतालीस सत्व है । बहुरि अपूर्वकरण विषैं दोऊ श्रेणीनि की अपेक्षा सत्व एक सौ अठतीस है । बहुरि अनिवृत्तिकरणादिक विषैं गुणस्थानवत् कथन जानना ।

बहुरि संज्ञीमार्गणा विषैं सत्व एक सौ अडतालीस, गुणस्थान मिथ्यादृष्ट्यादिक बारह, रचना गुणस्थानवत् जाननी । बहुरि असंज्ञी-मार्गणा विषैं **'ण तित्थयरं'** इस

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

वचन तैं तीर्थंकर बिना सत्व एक सौ सैंतालीस । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं असत्व नास्ति, सत्व सर्व । सासादन विषैं असत्व आहारक द्विक अर सत्व एक सौ पैंतालीस है ।

बहुरि आहारकमार्गणा विषैं सत्व एक सौ अडतालीस, गुणस्थान सयोगी पर्यंत तेरह, तहां रचना गुणस्थानवत् जाननी ।।३५५।।

कम्मेवाणाहारे,[1] पयडीणं सत्तमेवमादेसे ।
कहियमिणं बलमाहवचंदच्चियणेमिचंदेण ।।३५६।।

कार्मे एवानाहारे, प्रकृतीनां सत्वमेवमादेशे ।
कथितमिदं बलमाधवचंद्रार्चितनेमिचंद्रेण ।।३५६।।

टीका – अनाहार-मार्गणा विषैं कार्माणकाययोगवत् रचना जाननी । तहां मिथ्यादृष्टि, सासादन, अविरत, सयोगी विषैं कार्माणकाययोगवत् रचना है, अर अयोगी विषैं अयोगी गुणस्थानवत् रचना है ।

ऐसैं यहु मार्गणास्थान विषैं प्रकृतिनि का सत्व, सो प्रत्यक्ष वंदनेवाले ऐसे बलभद्र अर माधव कहिए वासुदेव तिन कर अर्चित पूजित ऐसा जु नेमिचंद्र तीर्थंकर देव ताकरि निरूपण किया है । अथवा बलदेव अपना भाई अर माधवचंद्र त्रैविद्यदेव इन करि पूजित ऐसा जु नेमिचंद्र सिद्धांतचक्रवर्ती ताकरि निरूपण किया है ।।३५६।।

सो मे तिहुवणमहियो, सिद्धो बुद्धो णिरंजणो णिच्चो ।
दिसदु वरणाणलाहं, बुहजणपरिपत्थणं परमसुद्धं ।।३५७।।

स मे त्रिभुवनमहितः, सिद्धो बुद्धो निरंजनो नित्यः ।
दिशतु वरज्ञानलाभं, बुधजनपरिप्रार्थनं परमशुद्धं ।।३५७।।

१–गाथा ३५६ के आधार से—

अनाहारयोग्य १४८

व्यु	मि	सा	अ६३	स	अ७२	१३
स	१४८	१४४	१४८	८५	८५	१२
अ	०	४	०	६३	६३	१३५

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – सो श्रीनेमिचंद्र स्वामी तीन भुवन करि पूजित हैं, सिद्ध हैं, बुद्ध हैं, निरंजन हैं, नित्य हैं, सो जाकौं बुध-ज्ञानी जन प्रार्थना करैं, जाचैं, बहुरि जो परम शुद्ध होइ ऐसा वर-उत्कृष्ट ज्ञान-लाभ कौं मोकूं द्यो – प्राप्त करो ।

सोरठा—**बंध, उदय फुनि सत्त्व, इस अधिकार विषैं कहे ।**
इनका जाने तत्त्व, सो ज्ञानी शिव पद लहे ।।२।।

इति आचार्य श्रीनेमिचंद्रविरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसंग्रह-ग्रंथ की जीवतत्वप्रदीपिका नाम संस्कृतटीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञानचंद्रिका नाम भाषाटीका विषैं बंधोदयसत्वनिरूपण नामा दूसरा अधिकार संपूर्ण भया ।।२।।

करणानुयोग का व्याख्यान विधान

करणानुयोग में यद्यपि वस्तु के क्षेत्र, काल, भावादिक अखंडित हैं, तथापि छद्मस्थ को हीनाधिक ज्ञान होने के अर्थ प्रदेश, समय, अविभाग-प्रतिच्छेदादिक का कल्पना करने का उनका प्रमाण निरूपित करते हैं । तथा एक वस्तु में भिन्न-भिन्न गुणों का व पर्यायों का भेद करके निरूपण करते हैं । तथा जीव पुद्गलादिक यद्यपि भिन्न-भिन्न हैं, तथापि सम्बन्धादिक द्वारा अनेक द्रव्य से उत्पन्न गति, जाति आदि भेदों को एक जीव के निरूपित करते हैं—इत्यादि व्याख्यान व्यवहारनय की प्रधानता सहित जानना, क्योंकि व्यवहार के बिना विशेष नहीं जान सकता । तथा कहीं निश्चयवर्णन भी पाया जाता है । जैसे—जीवादिक द्रव्यों का प्रमाण निरूपण किया, वहाँ भिन्न-भिन्न इतने ही द्रव्य हैं ।

– **आचार्यकल्प पं० टोडरमल**
– **मोक्षमार्ग-प्रकाशक, अध्याय-आठ, पृष्ठ-२७५**

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ॐ नमः

अथ सत्त्वस्थानभंगाधिकार ॥३॥

दोहा—करि विशेष सत्ता सहित, अष्टकर्म अरि नाश ।
महावीर जयवंत जगि, धारें ज्ञान प्रकाश ॥

णमिऊण वड्ढमाणं, कणयणिहं देवरायपरिपुज्जं ।
पयडीण सत्तठाणं, ओघे भंगे समं वोच्छं ॥३५८॥

नत्वा वर्धमानं, कनकनिभं देवराजपरिपूज्यं ।
प्रकृतीनां सत्त्वस्थानमोघे भंगेन समं वक्ष्यामि ॥३५८॥

टीका – कनक जो सोना तीहि सारिखा वर्णसंयुक्त, बहुरि देवनि का राजा जो इंद्र ताकरि सर्व प्रकार पूज्य असा वीर-वर्धमान तीर्थंकर-देव कौं नमस्कार करि, **ओघ** जो गुणस्थान तिन विषें भंगनिकरि सहित प्रकृतिनि का सत्व-स्थान कहूंगा । तहां स्थान कहा ? अर भंग कहा ? सो कहिए हैं—

संख्या-भेद करि एकै काल, एकै जीव विषें जो प्रकृतिनि का समूह संभवै सो **स्थान** है । बहुरि एक संख्या रूप जे प्रकृति तिनविषें प्रकृतिनि का पलटना सो **भंग** है । अथवा संख्या-भेदकरि एकत्व विषें प्रकृति भेद करि **भंग** हो है ।

भावार्थ – एक जीव कैं, एक काल विषैं, जितनी प्रकृतिनि की सत्ता पाइए, तिनके समूह का नाम **स्थान** कहिए, सो जहां अन्य-अन्य संख्या कौं लीएं प्रकृतिनि की सत्ता पाइए, तहां अन्य-अन्य स्थान कहिए हैं ।

जैसें केई जीवनि की एक सौ छियालीस की सत्ता पाइए, केई जीवनि कैं एक सौ पैंतालीस की सत्ता पाइए – तो इहां दोय स्थान भए – असैं ही सर्वत्र जानना । बहुरि जहां एक ही स्थान विषैं प्रकृतिनि का बदलना संभवै, सो भंग कहिए । जैसें केई जीवनि कै मनुष्यायु अर देवायु की सत्ता सहित एक सौ पैंतालीस की सत्ता पाइए है । केई जीवनि कैं तिर्यंचायु, नरकायु की सत्ता सहित एक सौ पैंतालीस की सत्ता पाइए है, तौ यहां स्थान तो एक ही भया, जातैं संख्या एक है । बहुरि भंग अन्य

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

भया, जातैं प्रकृति बदली गई । तहां मनुष्यायु, देवायु की सत्ता है, वहां तिर्यंचायु, नरकायु की सत्ता है – सो असैं ही सर्वत्र अन्य-अन्य प्रकृतिनि की संख्या तैं स्थान-भेद हो है । बहुरि एक-स्थान विषैं कोई प्रकृति अन्य-अन्य होने तैं भंग भेद हो – असैं जानना ॥३५८॥

आगें गुणस्थाननि विषैं स्थान अर भंग कहने का विधान कहै हैं—

आउगबंधाबंधणभेदमकाऊण वण्णणं पढमं ।
भेदेण य भंगसमं, परूवणं होदि बिदियम्हि ॥३५९॥

आयुष्कबंधाबंधनभेदमकृत्वा वर्णनं प्रथमं ।
भेदेन च भंगसमं, प्ररूपणं भवति द्वितीयस्मिन् ॥३५९॥

टीका – आयु के बंध का वा आयु के अबंध का भेद कौ न करि पहिला वर्णन है, बहुरि दूसरा वर्णन विषैं आयु का बंध का वा अबंध का भेद सहित प्ररूपण है ॥३५९॥

तहां प्रथम पक्ष विषैं आयु का बंध, अबंध विशेष बिना किये, जो सामान्य वर्णन, तीहि विषैं कैसें सत्ता पाइए, सो कहै हैं—

सव्वं तिगेग सव्वं, चेगं छसु दोण्णि चउसु छद्दस य दुगे ।
छस्सगदालं दोसु तिसट्ठी परिहीण पडि सत्तं जाणे ॥३६०॥

सर्वं त्रिकैकं सर्वं, चैकं षट्सु द्वयं चतुर्षु षट् दश च द्विके ।
षट्सप्तचत्वारिंशत् द्वयोस्त्रिषष्टिः परिहीनं प्रति सत्त्वं जानीहि ॥३६०॥

टीका – मिथ्यादृष्टि विषैं सत्व सर्व एक सौ अडतालीस है । सासादन विषैं तीर्थंकर, आहारकद्विक – इन तीन बिना एक सौ पैंतालीस सत्व है । मिश्र विषैं एक तीर्थंकर बिना एक सौ सैंतालीस सत्व है । असंयत विषैं सर्व एक सौ अडतालीस सत्व है । देशसंयत विषैं एक नरकायु बिना एक सौ सैंतालीस सत्व है । प्रमत्तादिक छह गुणस्थान विषैं उपशम-सम्यक्त्व अपेक्षा नरकायु, तिर्यंचायु – इन दोय बिना एक सौ छियालीस सत्व है । बहुरि अपूर्वकरणादिक च्यारि गुणस्थाननि विषैं अनंतानुबंधी विसंयोजना करने की अपेक्षा नरकायु, तिर्यंचायु, अनंतानुबंधी चतुष्क इन छहों बिना एक सौ बियालीस का भी सत्व पाइए है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि क्षपक-श्रेणी अपेक्षा अपूर्वकरणादिक दोय गुणस्थाननि विषैं नरकायु, तिर्यंचायु, देवायु, तीन दर्शन-मोह, अनंतानुबंधी चतुष्क – इन दश बिना एक सौ अडतीस सत्व है । सूक्ष्मसांपराय विषैं अनिवृत्तिकरण में व्युच्छित्ति भई सोलह, आठ, एक, एक, छह, एक, एक, एक, एक, तिन सहित छियालीस बिना एक सौ दोय सत्व है । क्षीणकषाय विषैं लोभ सहित सैंतालीस बिना एक सौ एक सत्व है । सयोगी, अयोगी विषैं घातियानि की सैंतालीस, नामकर्म की तेरह, तीन आयु – इन तरेसठि बिना पिच्यासी सत्व है, चकार तैं अयोगी का अंतसमय विषैं एक सौ पैंतीस बिना तेरह सत्व हैं ।

ऐसैं सत्व जानहु ।।३६०।।

आगैं जे ए प्रकृति घटाई तिनके नाम कहै हैं—

सासणमिस्से[1] देसे, संजददुग सामगेसु णत्थी य ।
तित्थाहारं तित्थं, णिरयाऊ णिरयतिरियआउअणं ।।३६१।।

सासादनमिश्रे देशे, संयतद्विके शामकेषु नास्ति च ।
तीर्थाहारं तीर्थं, निरयायुर्निरयतिर्यगायुरनं ।।३६१।।

१–गाथा ३६१ के आधार से—

	मि०	सा०	मि०	अ०	दे०	प्र०	अ०	अ०	उ०	क्षी०	सू०	उ०	क्षी०
स	१४८	१४५	१४७	१४८	१४७	१४६	१४६	१४६	१४२	१३८	१४६	१४२	१०२
अ	०	३	१	०	१	२	२	२	६	१०	२	६	४६

उ०		क्षी०	स०	अ०	चरम
१४६	१४२	१०१	८५	८५	१३
२	६	४७	६३	६३	१३५

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – सासादन विषैं, मिश्र विषैं, देशसंयत विषैं, संयतद्विक प्रमत्त-अप्रमत्त तिन विषैं, उपशमश्रेणी विषैं – अनुक्रम तैं तीर्थंकर, आहारकद्विक – ए तीन, बहुरि तीर्थंकर, बहुरि नरकायु, बहुरि नरकायु-तिर्यंचायु – ए दोय, बहुरि नरकायु-तिर्यंचायु, अनंतानुबंधी – ए छह – असैं सत्व विषैं घटाई हुई प्रकृति जाननी। **'चकार'** तैं क्षपक-श्रेणी विषैं **'दश य दुगे'** इत्यादि पूर्वोक्त प्रकार घाटि प्रकृति जाननी ।।३६१।।

आगैं गुणस्थान विषैं आयु के बंध-अबंध का भेद लीएं विशेष वर्णन कहै हैं, तहां स्थान-संख्या दोय गाथानि करि कहै हैं—

बिगुणणव चारि अट्ठं, मिच्छतिये अयदचउसु चालीसं ।
तिय उवसमगे संते, चउवीसा होंति पत्तेयं ।।३६२।।

चउछक्कदि चउअट्ठं, चउछक्क य होंति सत्तठाणाणि ।
आउगबंधाबंधे, अजोगिअंते तदो भंगा ।।३६३।।

द्विगुणनव चत्वारि अष्ट, मिथ्यत्रये अयतचतुर्षु चत्वारिंशत् ।
त्रीणि ऊपशामके शांते, चतुर्विंशतिः भवंति प्रत्येकं ।।३६२।।

चतुः षट्कृतिः चतुरष्ट, चतुःषट्कं च भवंति सत्त्वस्थानानि ।
आयुष्कबंधाबंधे, अयोग्यंते ततो भंगाः ।।३६३।।

टीका – मिथ्यादृष्टि विषैं नव के दूणे अठारह सत्व-स्थान हैं। सासादन विषैं च्यारि हैं। मिश्र विषैं आठ हैं। असंयतादिक च्यारि गुणस्थाननि विषैं प्रत्येक चालीस-चालीस सत्व-स्थान हैं। अपूर्वकरणादिक तीन उपशमश्रेणी युक्त अर उपशांत-कषाय इनविषैं प्रत्येक चौबीस-चौबीस सत्व स्थान हैं। क्षपकश्रेणी विषैं अपूर्वकरण विषैं तो च्यारि, अनिवृत्तिकरण विषैं छत्तीस, सूक्ष्मसांपराय विषैं च्यारि, क्षीणकषाय विषैं आठ, सयोगी विषैं च्यारि, अयोगी विषैं छह सत्व स्थान हैं। असैं आयु का बंध वा अबंध की विवक्षा विषैं अयोगी पर्यंत गुणस्थाननि विषैं सत्व-स्थान हैं। ।।३६२-३६३।।

ताके आगैं इन स्थाननि के भंगनि की संख्या कहै हैं—

पण्णास बार छक्कदि, वीससयं अट्ठदाल दुसु दालं ।
अडवीसा बासट्ठी, अडचउवीसा य अट्ठ चउ अट्ठ ।।३६४।।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पंचादश द्वादश षट्कृतिः, विंशशतं अष्टचत्वारिंशत् द्वयोः चत्वारिंशत् ।
अष्टाविंशतिः द्वाषष्टिः, अष्टचतुर्विंशतिः च अष्ट चत्वारि अष्ट ॥३६४॥

टीका – मिथ्यादृष्टि के अठारह स्थानकनि के पचास भंग हैं। सासादन के च्यारि स्थानकनि के बारह भंग हैं। मिश्र के आठ स्थानकनि के छत्तीस भंग हैं। असंयत के चालीस स्थानकनि के एक सौ बीस भंग हैं। देशसंयत के चालीस स्थानकनि के अडतालीस भंग हैं। प्रमत्त-अप्रमत्त के चालीस-चालीस स्थानकनि के चालीस-चालीस भंग हैं। दोऊ श्रेणीरूप अपूर्वकरण के अठाईस स्थानकनि के अठाईस भंग हैं। दोऊ श्रेणीरूप अनिवृत्तिकरण के साठि स्थानकनि के बासठि भंग हैं। दोऊ श्रेणीरूप सूक्ष्मसांपराय के अठाईस स्थानकनि के अठाईस भंग हैं। उपशांतकषाय के चौबीस स्थानकनि के चौबीस भंग हैं। क्षीणकषाय के आठ स्थानकनि के आठ भंग हैं। सयोगी के च्यारि-स्थानकनि के च्यारि भंग हैं। अयोगी के छह-स्थानकनि के आठ भंग हैं ॥३६४॥

आगे मिथ्यादृष्टि विषै अठारह स्थानकनि विषै प्रकृतिनि की संख्या आयु का बंध की वा अबंध की विवक्षाकरि कहै हैं—

दुतिछस्सत्तट्ठणवेक्कारस सत्तरसमूणवीसमिगिवीसं ।
हीणा सव्वे सत्ता, मिच्छे बद्धाउगिदरमेगूणं ॥३६५॥

द्वित्रिषट्सप्ताष्टनवैकादश सप्तदशोनविंशमेकविंशं ।
हीना सर्वा सत्ता, मिथ्ये बद्धायुष्कमितरदेकोनं ॥३६५॥

टीका – जाकैं आगामी-आयु का बंध भया होइ, ताकौं बद्धायु कहिए। बहुरि जाकैं आगामी-आयु बंध न भया होइ, ताकौं अबद्धायु कहिए। तहां बद्धायु मिथ्यादृष्टि विषैं सर्व सत्वरूप एक सौ अडतालीस प्रकृतिनि तैं दोय प्रकृति घाटि पहिला स्थान है। द्वितीयादिक स्थान अनुक्रम तैं तीन, छह, सात, आठ, नव, ग्यारह, सतरह, उगणीस, इकईस प्रकृति घाटि जानने।

ए दश-स्थान तो बद्धायु के हैं।

बहुरि अबद्धायु के स्थाननि तैं एक-एक अधिक प्रकृति घाटि स्थान जानने।

ऐसैं इन बीस स्थाननि विषैं पुनरुक्त दोय स्थानक घटाएं मिथ्यादृष्टि विषैं सव अठारह स्थान जानने। ॥३६५॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगें घटाई जे प्रकृति तिनके नाम कहै हैं—

तिरियाउगदेवाउगमण्णदराउगदुगं तहा तित्थं ।
देवतिरियाउसहियाहारचउक्कं तु छच्चेदे ॥३६६॥

आउदुगहारतित्थं, सम्मं मिस्सं च तह य देवदुगं ।
णारयछक्कं च तहा, णराउउच्चं च मणुवदुगं ॥३६७॥

तिर्यगायुष्कदेवायुष्कमन्यतरायुष्कद्विकं तथा तीर्थं ।
देवतिर्यगायुस्सहित, माहारचतुष्कं च षट् चैताः ॥३६६॥

आयुर्द्विकाहारतीर्थं, सम्यं मिश्रं च तथा च देवद्विकं ।
नारकषट्कं च तथा, नरायुरुच्चं च मानवद्विकं ॥३६७॥

टीका – जो जीव कैं तिर्यंचायु, देवायु बिना एक सौ छियालीस की सत्ता पाइए सो बद्धायु का एक स्थान तौ यहु है। बहुरि भुज्यमान, बध्यमान दोइ आयु बिना कोई दोय आयु अर तीर्थंकर – इन तीन बिना एक सौ पैंतालीस का सत्व पाइए, सो एक यहु स्थान है। बहुरि देवायु, तिर्यंचायु अर आहारक-चतुष्क – इन छह बिना एक सौ बियालीस का सत्व पाइए, सो यहु एक स्थान है। बहुरि कोऊ दोय आयु, आहारक चतुष्क, तीर्थंकर – इन सात बिना एक सौ इकतालीस का सत्व पाइए, सो एक यहु स्थान है। बहुरि पूर्वोक्त सात अर सम्यक्त्व मोहनी – इन आठ बिना एक सौ चालीस का सत्व पाइए, सो एक यहु स्थान है। बहुरि पूर्वोक्त आठ अर मिश्र-मोहनी – इन नव बिना एक सौ गुणतालीस का सत्त्व पाइए, सो एक यहु स्थान है। बहुरि पूर्वोक्त नव अर देवगति वा आनुपूर्वी – इन ग्यारह बिना एक सौ सैंतीस का सत्त्व पाइए, एक यहु स्थान है। बहुरि पूर्वोक्त ग्यारह अर नरकगति वा आनुपूर्वी, वैक्रियिक-शरीर अंगोपांग-बंधन-संघात – ए नारक षट्क – इन सतरह बिना एक सौ इकतीस का सत्व पाइए, सो एक यहु स्थान है। बहुरि पूर्वोक्त सतरह अर नरायु, उच्च गोत्र – इन उगणीस बिना एक सौ गुणतीस का सत्व पाइए, सो एक यहु स्थान है। बहुरि पूर्वोक्त उगणीस अर मनुष्यगति वा आनुपूर्वी – इन इकईस बिना एक सौ सताईस का सत्त्व पाइए, सो एक यहु स्थान है।

ऐसें बद्धायु के स्थान दश जानने।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि अबद्धायु के भुज्यमान आयु ही की सत्ता पाइए बध्यमान आयु की सत्ता न पाइए; तातैं पूर्वोक्त सत्त्व तैं एक-एक बध्यमान आयु करि हीन असैं अबद्धायु के दश स्थान जानने। तहां पुनरुक्त दोय स्थान दूर कीजिए, असैं अठारह स्थान मिथ्यादृष्टि विषैं हैं।

भावार्थ – इहां यहु है – जो मिथ्यादृष्टि विषैं इस प्रकार प्रकृतिनि की सत्ता एक जीव कै एक काल विषैं पाइए, अन्य प्रकार कदाचित् न पाइए। इहां विद्यमान जिस आयु कौं भोगवै है, सो भुज्यमान आयु कहिए। बहुरि जिस आगामी आयु का बंध किया होइ, ताकौं बध्यमान आयु कहिए।

सो अब इन अठारह-स्थाननि के पचास भंग रचना के अनुसारि परमगुरू के उपदेश करि कहिए हैं—

तहां पूर्वें नरकायु बंध जाकैं भया होइ, ऐसा मिथ्यादृष्टि मनुष्य सो वेदक सम्यक्त्व कौं अंगीकार करि असंयत गुणस्थानवर्ती होय केवली, श्रुतकेवली के निकटि षोडश भावनानि करि तीर्थंकर प्रकृति के बंध का प्रारंभ करि तीर्थंकर प्रकृति की सत्तायुक्त होइ मरण काल विषैं भुज्यमान मनुष्यायु का अंतर्मुहूर्त काल अवशेष रहैं मिथ्यादृष्टि भया, तिस जीव कैं तिर्यंचायु, देवायु के सत्व का अभाव है; तातैं एक सौ छियालीस प्रकृतिरूप सत्वस्थान पाइए। इहां भंग भी एक ही पाइए, जातैं जिनकै बध्यमान – तिर्यंचायु, मनुष्यायु होइ अर भुज्यमान-मनुष्यायु होइ, तिन असंयत-सम्यग्दृष्टिनि कैं तीर्थंकर-बंध का प्रारंभ न होइ। बहुरि बध्यमान देवायु, भुज्यमान मनुष्यायु युक्त जे असंयतादिक च्यारि गुणस्थानवर्ती जीव सम्यक्त्व तैं भ्रष्ट होइ मिथ्यादृष्टि होते नाहीं।

बहुरि भुज्यमान नरकायु, बध्यमान मनुष्यायु असा भंग नरकायु का छह महीना अवशेष रहैं संभवै, तहां गर्भावतरण कल्याण के सद्भाव तैं मिथ्यादृष्टिपना संभवै नाहीं; तातैं भुज्यमान मनुष्यायु, बध्यमान नरकायु असा एक ही भंग संभवै है। अन्य प्रकार प्रकृति के बदलने तैं एक सौ छियालीस का सत्व न पाइए है।

बहुरि अबद्धायु के भुज्यमान एक आयु का सत्त्व बिना अन्य आयु का सत्व संभवै नाहीं; तातैं देवायु, मनुष्यायु, तिर्यंचायु बिना एक सौ पैंतालीस का सत्वरूप स्थान होइ। तहां भी भंग एक भुज्यमान नरकायु रूप ही जानना। जातैं सोई बध्य-

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

मान नरकायु तीर्थंकर सत्तावाला मनुष्य मरि नारकी भया, ताकैं निर्वृत्ति अपर्याप्त अवस्था विषैं अंतर्मुहूर्त पर्यंत मिथ्यादृष्टि पना रहै है । तहां अबद्धायुपना तैं भुज्यमान एक नरकायु का सत्त्व बिना अन्य सत्त्व नाहीं है । तिस जीव कै एक सौ पैंतालीस का सत्त्व स्थान संभवै है, अन्य कैं ऐसा सत्त्व न पाइए ।

बहुरि बद्धायु का दूसरा स्थान भुज्यमान-बध्यमान दोय आयु अर तीर्थंकर इन तीन बिना एक सौ पैंतालीस प्रकृतिनि का सत्त्व रूप जानना । तहां भंग कहिए हैं—

१ भुज्यमान नरकायु, बध्यमान तिर्यंचायु; २ भुज्यमान नरकायु, बध्यमान मनुष्यायु; ३ भुज्यमान तिर्यंचायु, बध्यमान नरकायु; ४ भुज्यमान तिर्यंचायु, बध्यमान तिर्यंचायु; ५ भुज्यमान तिर्यंचायु, बध्यमान मनुष्यायु, ६ भुज्यमान तिर्यंचायु, बध्यमान देवायु; ७ भुज्यमान मनुष्यायु, बध्यमान नरकायु; ८ भुज्यमान मनुष्यायु, बध्यमान तिर्यंचायु; ९ भुज्यमान मनुष्यायु, बध्यमान मनुष्यायु; १० भुज्यमान मनुष्यायु, बध्यमान देवायु; ११ भुज्यमान देवायु, बध्यमान तिर्यंचायु; १२ भुज्यमान देवायु, बध्यमान मनुष्यायु – ऐसैं बारह भंग भए ।

इन विषैं भुज्यमान तिर्यंचायु, बध्यमान तिर्यंचायु अर भुज्यमान मनुष्यायु, बध्यमान मनुष्यायु – ए दोऊ भंग पुनरुक्त हैं, जातैं भुज्यमान तिर्यंचायु, बध्यमान तिर्यंचायु इस भंग विषैं एक तिर्यंचायु ही की सत्ता आई और दूसरी प्रकृति नाहीं । ऐसें ही भुज्यमान मनुष्यायु, बध्यमान मनुष्यायु विषैं भी जानना । यातैं ए दोऊ भंग न गिनै अवशेष दश रहे तिन विषैं भुज्यमान तिर्यंचायु, बध्यमान नरकायु कै अर भुज्यमान नरकायु, बध्यमान तिर्यंचायु के समानता है, जातैं दोऊ भंगनि विषैं नरकायु तिर्यंचायु ही की सत्ता पाइए; यातैं दोऊ भंगनि का एक ही भंग गिनिए ।

ऐसें ही भुज्यमान मनुष्यायु, बध्यमान नरकायु अर भुज्यमान नरकायु, बध्यमान मनुष्यायु विषैं; बहुरि भुज्यमान मनुष्यायु, बध्यमान तिर्यंचायु अर भुज्यमान तिर्यंचायु, बध्यमान मनुष्यायु विषैं; बहुरि भुज्यमान देवायु, बध्यमान तिर्यंचायु अर भुज्यमान तिर्यंचायु अर बध्यमान देवायु विषैं; बहुरि भुज्यमान देवायु, बध्यमान मनुष्यायु अर भुज्यमान मनुष्यायु, बध्यमान देवायु विषैं समानता हैं; तातैं एक-एक ही भंग गिन्या । ऐसें एक सौ पैंतालीस बद्धायु सत्ता विषैं पंच भंग जानने ।

यहां भंगनि का यहु भावार्थ है—

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

भुज्यमान-बध्यमान तिर्यंचायु, नरकायु वाले कैं तो तिर्यंचायु, नरकायु की सत्ता सहित एक सौ पैंतालीस सत्त्वस्थान पाइए, सो एक तो यहु भंग भया। बहुरि भुज्यमान-बध्यमान, मनुष्यायु-नरकायुवाले कैं मनुष्यायु-नरकायु सहित एक सौ पैंतालीस सत्त्व-स्थान पाइए सो दूसरा यहु भंग भया। सो उस भंग विषैं तिर्यंचायु अर इस भंग विषैं मनुष्यायु अैसैं एक प्रकृति बदली गई; तातैं अन्य-अन्य भंग कह्या। अैसैं ही अन्यत्र भी भंगनि का स्वरूप जानि लेना। बहुरि अबद्धायु का दूसरा स्थान एक सौ पैंतालीस में बध्यमान एक आयु की सत्ता घटाइए एक सौ चवालीस प्रकृति रूप है, यातैं च्यारों गति का जीव भुज्यमान की अपेक्षा च्यारि भंग हैं।

भुज्यमान तिर्यंचायुवाले कैं तिर्यंचायु सहित एक सौ चवालीस का सत्त्व स्थान है अर भुज्यमान नरकायुवाले कैं नरकायु सत्ता सहित एक सौ चवालीस रूप सत्त्व स्थान पाइए। अैसैं प्रकृति बदलने तैं इहां भी अन्य-अन्य भंग जानने। अैसैं ही अन्यत्र भी भंग जानने।

बहुरि कोई मिथ्यादृष्टि जीव पहिलैं अप्रमत्त गुणस्थान कौं प्राप्त होइ, तहां आहारक चतुष्टय का बंध न किया; तातैं ताकैं आहारक चतुष्टय का सत्त्व नाहीं है। अथवा अप्रमत्त गुणस्थान विषैं आहारक चतुष्टय का बंध करि पीछैं मिथ्यादृष्टि होइ आहारक चतुष्टय की उद्वेलना करी; तातैं आहारक चतुष्टय का सत्त्व रहित भया, अैसा मनुष्य, नरकायु का बंध पहिलैं करि, पीछैं वेदक सम्यक्त्व कौं धारि असंयत गुणस्थानवर्ती होइ केवली, श्रुतकेवली के निकटि षोडशकारण करि तीर्थंकर बंध का प्रारंभ करि तीर्थंकर सत्त्व सहित होइ भुज्यमान आयु का अंतर्मुहूर्त अवशेष रहैं दूसरी, तीसरी पृथ्वी विषैं गमन कौं योग्य मिथ्यादृष्टि होइ।

जिस जीव कैं तीसरा बद्धायुस्थान तिर्यंचायु, देवायु, आहारक चतुष्क बिना एक सौ बियालीस प्रकृति रूप पाइए, तहां भंग एक ही है। इस ही प्रकार एक सौ बियालीस का सत्त्व पाइए अन्य प्रकार नाहीं। जातैं मनुष्यायु, तिर्यंचायु का पहिलैं बंध भया होइ, ताकैं तीर्थंकर का बंध न होइ। देवायु का जाकैं बंध भया होइ, ताकैं तीर्थंकर का सत्त्व होइ, पर मिथ्यादृष्टि न होइ।

इहां प्रश्न – जो मनुष्य ही विषैं तीर्थंकर बंध का प्रारंभ कह्या, तो देव, नारकी कैं असंयत विषैं तीर्थंकर बंध कैसैं कह्या है ?

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ताका समाधान – जो पहिलैं तीर्थंकर बंध का प्रारंभ तो मनुष्य ही कैं होइ, पीछैं जो सम्यक्त्वस्यों भ्रष्ट न होइ, तो समय-समय प्रति अंतर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष घाटि दोय कोडि पूर्व अधिक तेतीस सागर पर्यंत उत्कृष्टपनैं तीर्थंकर प्रकृति का बंध समयप्रबद्ध विषैं हुआ करै; तातैं देव, नारकी विषैं भी तीर्थंकर का बंध संभवै है ।

बहुरि तीसरा अबद्धायुस्थान मनुष्यायु का भी सत्त्व रहित है; तातैं तिर्यंच, मनुष्य, देव – ए तीन आयु आहारक चतुष्टय – इन सात बिना एक सौ इकतालीस प्रकृति रूप जानना । इहां सो तीर्थंकर सत्तावाला मरि दूसरी, तीसरी नरक पृथ्वी विषैं प्राप्त भया । तहां अपर्याप्त अवस्था विषैं मिथ्यादृष्टि ही रहै, ताकैं भुज्यमान नरकायु का सत्त्व बिना अन्य आयु का सत्त्व नाहीं है । तिस ही जीव कैं असी सत्ता पाइए; तातैं भंग एक ही जानना अन्य प्रकार असी सत्ता न होइ ।

बहुरि चौथा बद्धायुस्थान भुज्यमान-बध्यमान बिना दोय आयु, आहारक चतुष्क, तीर्थंकर – इन सात बिना एक सौ इकतालीस प्रकृति रूप जानना । तहां पूर्वोक्त बारह भंगनि विषैं दोय पुनरुक्त अर पंच समान भंगनि बिना अवशेष पंच भंग जानने । बहुरि चौथा अबद्धायुस्थान भुज्यमान बिना तीन आयु, आहारक, चतुष्क, तीर्थंकर बिना एक सौ चालीस प्रकृति रूप जानना । तहां भुज्यमान च्यारि गति की अपेक्षा च्यारि भंग हैं ।

बहुरि पांचवां बद्धायुस्थान भुज्यमान-बध्यमान बिना दोय आयु, आहारक चतुष्क, तीर्थंकर, सम्यक्त्व मोहनी – इन आठ बिना एक सौ चालीस प्रकृतिरूप जानना । तहां पूर्वोक्त प्रकार बारह भंगनि विषैं पांच भंग जानने । बहुरि पांचवां अबद्धायुस्थान पूर्वोक्त एक सौ चालीस में बध्यमान आयु बिना एक सौ गुणतालीस प्रकृतिरूप जानना । तहां च्यारि गति के भेद तें भंग च्यारि जानने ।

बहुरि छठा बद्धायुस्थान भुज्यमान-बध्यमान बिना आयु दोय, तीर्थंकर, आहारक चतुष्क, सम्यक्त्व मोहनी, मिश्र मोहनी – इन बिना एक सौ गुणतालीस प्रकृतिरूप जानना । तहां भंग पूर्वोक्त प्रकार पंच जानने । बहुरि छठा अबद्धायुस्थान पूर्वोक्त एक सौ गुणतालीस में बध्यमान आयु बिना एक सौ अठतीस प्रकृतिरूप जानना । तहां भंग च्यारि गति की अपेक्षा च्यारि जानना ।

बहुरि सातवां बद्धायुस्थान देवद्विक की उद्वेलना जिनकै भई असे एकेंद्री, विकलत्रय जीवनि कैं भुज्यमान तिर्यंचायु, बध्यमान मनुष्यायु बिना अवशेष देवायु

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अर नरकायु । बहुरि आहारक चतुष्क, तीर्थंकर, सम्यक्त्व मोहनी, मिश्र मोहनी, देवगति वा आनुपूर्वी – इन बिना एक सौ सैंतीस प्रकृतिरूप जानना । तहां भुज्यमान एकेंद्री, विकलेंद्री संबंधी तिर्यंचायु, बध्यमान तिर्यंचायु । बहुरि भुज्यमान तिर्यंचायु, बध्यमान मनुष्यायु – ए दोय भंग हैं ।

तिन विषैं भुज्यमान तिर्यंचायु, बध्यमान तिर्यंचायु यहु पुनरुक्त भंग है, सो न गिन्या; तातैं भंग एक ही जानना ।

इहां उद्वेलना का स्वरूप पूर्वं कह्या है सो जानना ।।३६६-३६७।।

उव्वेल्लिददेवदुगे, बिदियपदे चारि भंगया एवं
सपदे पढमो बिदियं, सो चेव णरेसु उप्पण्णो ।।३६८।।

वेगुव्वअट्ठरहिदे, पंचिंदियतिरियजादिसुववण्णे ।
सुरछब्बंधे तदियो, णरेसु तब्बंधणे तुरियो ।।३६९।।

उद्वेल्लितदेवद्विके, द्वितीयपदे चत्वारो भंगा एवं ।
स्वपदे प्रथमो द्वितीयः, स चैवं नरेषु उत्पन्नः ।।३६८।।

वैगूर्वाष्टरहिते, पंचेंद्रियतिर्यग्जातिषूपपन्ने ।
सुरषड्बंधे तृतीयो, नरेषु तद्बंधने तुरीयः ३६९।।

टीका – बहुरि सातवां अबद्धायु-स्थान एक सौ छत्तीस प्रकृति रूप है । तहां देवद्विक की उद्वेलना जाकैं भई ऐसा एकेंद्री वा विकलत्रय-मिथ्यादृष्टि जीव, ताकैं तिस ही पर्याय विषैं आहारक-चतुष्क, तीर्थंकर, सम्यक्त्व-मोहनी, मिश्रमोहनी, देवगति वा आनुपूर्वी – नव तौ ए अर भुज्यमान-तिर्यंचायु बिना अवशेष तीन आयु – इन बारह बिना सत्त्व एक सौ छत्तीस का पाइए – सो एक तो यहु भंग है ।

बहुरि सोई देवद्विक की उद्वेलना जाकैं भई ऐसा एकेंद्री, विकलत्रय मिथ्यादृष्टि-जीव सो मरि करि मनुष्य उपजा । तहां अपर्याप्त-अवस्था विषैं मिथ्यादृष्टिपनां तैं सुरचतुष्क का बंध नाहीं; तातैं पूर्वोक्त नव अर भुज्यमान मनुष्यायु बिना तीन आयु – ऐसैं बारह बिना एक सौ छत्तीस का सत्त्व पाइए – सो यहु दूसरा भंग है ।

बहुरि जाकैं वैक्रियिक-अष्टक की उद्वेलना भई ऐसा कोई एकेंद्री, विकलत्रय-जीव मरि करि पंचेंद्री-तिर्यंच विषैं उपज्या, तहां पर्याप्त-दशा विषैं देवगति वा आनु-

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

पूर्वी, वैक्रियिक-शरीर वा अंगोपांग, बंधन, संघात इस सुरषट्क का तो बंध किया अर नरकगति वा आनुपूर्वी का बंध तहां किया, तहां आहारक-चतुष्क, तीर्थंकर, सम्यक्त्व मोहनी, मिश्रमोहनी, नरकगति वा आनुपूर्वी – नव तो ए अर भुज्यमान-तिर्यंचायु बिना तीन आयु – असैं बारह बिना एक सौ छत्तीस का सत्त्व पाइए, सो यहु तीसरा भंग है ।

बहुरि सोई जीव मरि करि मनुष्य विषैं उपज्या, तहां सुरषट्क का बंध होतैं पूर्वोक्त नव अर भुज्यमान-मनुष्यायु बिना तीन आयु – असैं बारह बिना एक सौ छत्तीस का सत्त्व पाइए, सो यहु चौथा भंग है । असैं च्यारि भंग भए । इहां सब भंगनि विषैं एक सौ छत्तीस ही की संख्या पाइए; तातैं स्थान एक कह्या अर प्रकृति बदलने तैं च्यारि प्रकार पाइए; तातैं भंग च्यारि कहे ।

बहुरि आठवां बद्धायुस्थान नारकषट्क की उद्वेलना भए एकेंद्री, विकलत्रय-जीव कैं हो है । सो भुज्यमान-तिर्यंचायु, बध्यमान-मनुष्यायु बिना देव, नरक दोय आयु, आहारक-चतुष्क, तीर्थंकर, सम्यक्त्वमोहनी, मिश्रमोहनी, देवगति वा आनुपूर्वी, नरकगति वा आनुपूर्वी, वैक्रियिक-शरीर-अंगोपांग-बंधन-संघात – ए नारक षट्क – इन सतरह बिना एक सौ इकतीस प्रकृतिरूप जानना । तहां भंग दोय भुज्यमान-तिर्यंचायु, बध्यमान-तिर्यंचायु (१); भुज्यमान तिर्यंचायु, बध्यमान मनुष्यायु (२) । तहां भुज्यमान-तिर्यंचायु, बध्यमान-तिर्यंचायु यहु भंग पुनरुक्त है; तातैं ग्रहण न करना – एक ही भंग जानना ।।३६८-३६९।।

णारकछक्कुव्वेल्ले, आउगबंधुज्झिदे दुभंगा हु
इगिविगलेसिगिभंगो, तम्मि णरे बिदियमुप्पण्णे ।।३७०।।

नारकषट्कोद्वेल्ये, आयुर्बंधोज्झिते द्विभंगौ हि ।
एकविकलेष्वेकभंगस्तस्मिन्नरे द्वितीयमुत्पन्ने ।।३७०।।

टीका – बहुरि सो आठवां-अबद्धायुस्थान भुज्यमान-आयु बिना तीन आयु अर आहारक-चतुष्टयादिक पंद्रह – इन बिना एक सौ तीस प्रकृति रूप जानना । तहां भंग दोय, नारक-षट्क की उद्वेलना भए एकेंद्री, विकलत्रय-जीव कैं तिर्यंचायु बिना तीन आयु, आहारक-चतुष्टयादि पंद्रह – इन बिना एक सौ तीस का सत्त्व पाइए, सो एक तो यहु भंग है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि सोई एकेंद्री, विकलत्रय-जीव मरि करि मनुष्य उपजा, तहां अपर्याप्त-काल विषैं मनुष्यायु बिना तीन आयु, आहारक-चतुष्टयादि पंद्रह – इन बिना एक सौ तीस का सत्त्व पाइए, सो यहु दूसरा भंग है ।

बहुरि नवमां बद्धायुस्थान उच्च गोत्र की उद्वेलना भए तेज:कायिक, वात-कायिक जीवनि विषैं पाइए, सो पूर्वोक्त एक सौ तीस मेंस्यों उच्च गोत्र का अभाव भया; तातैं एक सौ गुणतीस प्रकृतिरूप जानना ।

तहां भंग एक भुज्यमान-तिर्यंचायु, बध्यमान-तिर्यंचायु सो यहु भंग पुनरुक्त है, तथापि इहां अन्य प्रकार कोई भंग नाहीं; तातैं इस ही का ग्रहण करना । बहुरि नवमां अबद्धायु-स्थान भी एक सौ गुणतीस प्रकृतिरूप ही है, सो यहु स्थान बद्धायु-स्थान के समान है; तातैं पुनरुक्त है; तातैं इस स्थान का ग्रहण न करना ।

बहुरि दसवां बद्धायुस्थान मनुष्यद्विक की उद्वेलना भए तेज:-कायिक, वात-कायिक जीव कैं पाइए, सो पूर्वोक्त एक सौ गुणतीस में मनुष्यगति वा मनुष्यानुपूर्वी बिना एक सौ सत्ताईस का सत्त्व रूप जानना । तहां भंग एक ही है, सो यहु भंग पुनरुक्त है । तथापि ग्रहण करना । पूर्वैं पुनरुक्त भंग अबद्धायु-स्थान विषैं गर्भित हो गये थे; तातैं ग्रहण न किए थे इहां अबद्धायु स्थान का ग्रहण ही न किया; तातैं पुनरुक्त भंग का ग्रहण किया । बहुरि दसवां अबद्धायुस्थान भी तैसें ही एक सौ सत्ता-ईस प्रकृतिरूप जानना, सो इस बद्धायुस्थान अबद्धायुस्थान विषैं किछू संख्या वा प्रकृति विशेष नाहीं; तातैं यहु स्थान ग्रहण न करना ।।३७०।।

आगें कहे जे अठारह-स्थान तिनके पुनरुक्त अर समभंग बिना जे भंग कहे, तिनकी संख्या गाथाकरि कहैं हैं—

बिदिये तुरिये पणगे, छट्ठे पंचेव सेसगे एक्कं ।
बिगचउपणछस्सत्तय, ठाणे चत्तारि अट्ठगे दोण्णि ।।३७१।।

द्वितीये चतुर्थे पंचमे, षष्ठे पंचैव शेषके एकः ।
द्विकचतु:पंचषट्सप्तम, स्थाने चत्वारः अष्टमे द्वौ ।।३७१।।

टीका – दूसरा, चौथा, पांचवां, छठा बद्धायुस्थान विषैं पांच-पांच भंग जानने । अवशेष पहिला, तीसरा, सातवां, आठवां, नवमां, दशवां बद्धायुस्थान विषैं एक-एक

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

भंग जानना । बहुरि अबद्धायुस्थान विषैं दूसरा, चौथा, पांचवां, छठा, सातवां विषैं च्यारि-च्यारि, आठवां विषैं दोय, अवशेष पहिला, तीसरा विषैं एक-एक भंग जानने ।

ऐसैं मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं सत्त्वस्थान अठारह, भंग पचास जानने । ।।३७१।।

आगैं सासादन-मिश्र विषैं स्थान अर भंगनि की संख्या च्यारि गाथानि करि कहैं हैं—

सत्ततिगं आसाणे, मिस्से तिगसत्तसत्तएयारा ।
परिहीण सव्वसत्तं, बद्धस्सियरस्स एगूणं ।।३७२।।

सप्तत्रिकमासाने, मिश्रे त्रिकसप्तसप्तैकादश ।
परिहीनं सर्वसत्त्वं, बद्धस्येतरस्यैकोनं ।।३७२।।

टीका – सासादन विषैं सर्व सत्त्व में सातकरि हीन अर तीनकरि हीन – दोय स्थान जानने । बहुरि मिश्र विषैं तीन करि हीन, सात करि हीन, सात करि हीन, ग्यारह करि हीन – च्यारि स्थान जानने – सो ए बद्धायु के स्थान हैं । बहुरि अबद्धायु के स्थान बद्धायु के स्थाननि तैं एक-एक बध्यमान-आयु करि हीन स्थान जानने ।।३७३।।

ते हीन प्रकृति कौन-कौन ? सो सासादन विषैं कहैं हैं—

तित्थाहाराचउक्कं, अण्णदराउगदुगं च सत्तेदे ।
हारचउक्कं वज्जिय, तिण्णि य केइं समुद्दिट्ठं ।।३७३।।

तीर्थाहारचतुष्कं, मन्यतरायुष्कद्विकं च सप्तैताः ।
आहारकचतुष्कं वर्जयित्वा, तिस्रश्च केश्चित्समुद्दिष्टं ।।३७३।।

टीका – सासादन विषैं तीर्थंकर, आहारकचतुष्क, भुज्यमान-बध्यमान बिना दोय आयु – इन सात बिना एक सौ इकतालीस रूप प्रथम स्थान जानना । बहुरि तिन सात में आहारक-चतुष्क न गिनिए, तब एक सौ पैंतालीस रूप दूसरा स्थान जानना । सो इस एक सौ पैंतालीस का स्थान विषैं जो आहारक-चतुष्क का सत्त्व कह्या, सो केई आचार्यनि करि कह्या है; तातैं कह्या है । बहुरि केई आचार्य सासादन विषैं आहारक-चतुष्क के सत्त्व का अभाव ही कहैं हैं तिस अपेक्षा एक सौ इकतालीस का ही एक-स्थान है ।।३७३

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगैं मिश्र विषैं कहैं हैं—

तित्थण्णदराउदुगं, तिण्णिवि अणसहिय तह य सत्तं च ।
हारचउक्के सहिया, ते चेव य होंति एयारा ।।३७४।।

तीर्थान्यतरायुर्दिकं, तिस्रः अपि अनसहिताः तथा च सत्त्वं च ।
आहारचतुष्केण सहिता, स्ताः चैव च भवंति एकादश ।।३७४।।

टीका – मिश्र विषैं तीर्थंकर अर भुज्यमान, बध्यमान बिना दोय आयु – इन तीन बिना एक सौ पैंतालीसरूप प्रथम स्थान है । बहुरि तीन ए अर च्यारि अनंतानुबंधी अथवा आहारक-चतुष्क – इन सात बिना एक सौ इकतालीसरूप दूसरा, तीसरा स्थान है । बहुरि तीन पूर्वोक्त, च्यारि अनंतानुबंधी, आहारक-चतुष्क – इन ग्यारह बिना एक सौ सैंतीस रूप चतुर्थ स्थान है – असैं बद्धायु के स्थान कहे । इन विषैं एक-एक बध्यमान-आयु घटाए, अबद्धायु के स्थान हो हैं ।।३७४।।

आगैं इन विषैं भंग-संख्या कहैं हैं—

साणे पण इगि भंगा, बद्धस्सियरस्स चारि दो चेव ।
मिस्से पण पण भंगा, बद्धस्सियरस्स चउ चऊ णेया ।।३७५।।

साने पंच एको भंगा, बद्धस्येतरस्य चत्वारो द्वौ चैव ।
मिश्रे पंच पंच भंगा, बद्धस्येतरस्य चत्वारश्चत्वारो ज्ञेयाः ।।३७५।।

टीका – सासादन भंग विषैं बद्धायुस्थान के पांच अर एक भंग है इतर अबद्धायुस्थान के च्यारि अर दोय भंग हैं । बहुरि मिश्र विषैं बद्धायुस्थान के पांच-पांच भंग अर अबद्धायुस्थान के च्यारि-च्यारि भंग हैं । सोई कहिए हैं—

सासादन विषैं एक सौ इकतालीसरूप बद्धायुस्थान विषैं च्यारि गति का बद्धायु जीवनि की अपेक्षा पूर्वोक्त प्रकार बारह भंगनि विषैं समभंग पुनरुक्त भंग बिना पांच भंग जानने । बहुरि एक सौ चालीस प्रकृतिरूप अबद्धायुस्थान विषैं भुज्यमान च्यारि आयु की अपेक्षा च्यारि भंग जानने । बहुरि एक सौ पैंतालीसरूप बद्धायुस्थान विषैं आहारक-चतुष्क का बंध जाकैं भया, तिस किसी को सासादन की प्राप्ति हो है । इस उपदेश की अपेक्षा एक भंग ही है ।

बहुरि एक सौ चवालीसरूप अबद्धायुस्थान विषैं दोय भंग हैं । तहां भुज्यमान मनुष्यवाला उपशम-सम्यग्दृष्टि आहारक-चतुष्क का बंध करि मरि सासादन भया,

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सो एक तौ यहु भंग । बहुरि पूर्वै देवायु का बंध जाके भया था, असा उपशम-सम्यग्दृष्टि आहारक-चतुष्क का बंध करि मरि देव होइ सासादन भया, तहां भुज्यमान-देवायु का सत्त्व पाइए, सो यहु दूसरा भंग है । बहुरि मिश्र विषैं बद्धायु के चारचों स्थानकनि विषैं पूर्वोक्त प्रकार बारह-भंगनि मेंस्यों पंच-पंच भंग जानने । अबद्धायु के चारचों-स्थानकनि विषैं भुज्यमान च्यारि-आयु की अपेक्षा च्यारि-च्यारि भंग जानने ।

इहां प्रश्न – जो मिश्र विषैं अनंतानुबंधी का सत्त्व कैसें न पाइए ?

ताकां समाधान – असंयतादिक च्यारि गुणस्थान विषैं कही तीन करणकरि अनंतानुबंधी का विसंयोजन किया । बहुरि दर्शनमोहनी का क्षपणा करने कौं तो सन्मुख न भया अर संक्लेश परिणाम करि मिश्रमोहनी के उदय तैं मिश्र-गुणस्थान-वर्ती भया, ताकैं अनंतानुबंधी का सत्त्व न पाइए है, नवीन बंध तैं सत्त्व होइ, सो नवीन-बंध का सासादन विषैं ही व्युच्छेद हुआ है ।।३७५।।

आगें असंयत विषैं चालीस-स्थाननि का प्रकार अर तिनके एक सौ बीस भंग छह गाथानि करि कहैं हैं—

दुग छक्क सत्त अट्ठं, णवरहियं तह य चउपडिं किच्चा ।
णभमिगि चउ पण हीणं, बद्धस्सियरस्स एगूणं ।।३७६।।

द्विकं षट्कं सप्त अष्ट, नवरहितं तथा च चतुःपंक्तीः कृत्वा ।
नभं एकं चतुष्कं पंच हीनं, बद्धस्येतरस्यैकोनं ।।३७६।।

टीका – दोय, छह, सात, आठ, नव प्रकृतिनि करि रहित पंच-स्थानक बरोबरि लिखने । बहुरि असैं ही पंच-पंच स्थाननि कौं च्यारि पंक्ति नीचैं-नीचैं लिखनी । तहां प्रथम पंक्ति पंच-स्थानकनि विषैं तौ शून्य घटावनी ते पांचौं-स्थानक ज्यौं के त्यौं सर्व प्रकृतिनि मेंस्यों दोय, छह, सात, आठ, नव प्रकृति रहित जानने । बहुरि दूसरी पंक्ति विषैं एक-एक प्रकृति और घटावनी, ते पांचों-स्थानक सर्व प्रकृतिनि मेंस्यों तीन, सात, आठ, नव, दश प्रकृति रहित जानने । बहुरि तीसरी पंक्ति विषैं च्यारि-च्यारि प्रकृति घटावनी । ते पांचों-स्थानक छह, दश, ग्यारह, बारह, तेरह प्रकृति रहित जानने । बहुरि चौथी पंक्ति विषैं पांच-पांच प्रकृति घटावनी, ते पांचौं स्थानक सात, ग्यारह, बारह, तेरह, चौदह प्रकृति रहित जानने ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

इहां जहां दोय प्रकृति घटाई, तहां एक सौ छियालीस की सत्तारूप स्थान जानना। छह घटाई तहां एक सौ बियालीस की सत्तारूप स्थान जानना। असें जेती-जेती प्रकृति घटाईये, तितनी-तितनी एक सौ अडतालीस में स्यों घटाएं जेती रहे तितनी सत्तारूप स्थान जानना। सो असें बद्धायु के बीस सत्तारूप स्थान भए। बहुरि जे बद्धायु के स्थानक बीस कहे थे, तिनमें जेती-जेती प्रकृतिनि की सत्ता कही थी, तिनमें बध्यमान-आयुरूप एक-एक प्रकृति और घटाएं जेती-जेती रहे, तितनी-तितनी सत्तारूप बीस स्थान अबद्धायु के जानने।

सर्व मिलि असंयत विषैं चालीस सत्ता-स्थान भए।

असंयत विषैं स्थान भंगनि का यंत्र। कोठेनि विषैं ऊपरि प्रकृतिनि का प्रमाण, नीचैं भंगनि का प्रमाण जाननां।

बद्धायु का यन्त्रस्थान २० भंग ६०।

ती० आ० सहित	१४६ २	१४२ २	१४१ २	१४० २	१३९ २
तीर्थ० रहित	१४५ ५	१४१ ५	१४० ३	१३९ ३	१३८ ४
आ० रहित	१४२ २	१३८ २	१३७ २	१३६ २	१३५ २
ती० आ० रहित	१४१ ५	१३७ ५	१३६ ३	१३५ ३	१३४ ४

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अबद्धायु का यंत्रस्थान २० भंग ६० ।

ती० आ० सहित	१४५ ३	१४१ ३	१४० १	१३९ ३	१३८ ३
तीर्थ० रहित	१४४ ४	१४० ४	१३९ १	१३८ ४	१३७ ४
आ० रहित	१४१ ३	१३७ ३	१३६ १	१३५ ३	१३४ ३
ती० आ० रहित	१४० ४	१३६ ४	१३५ १	१३४ ४	१३३ ४

आगें च्यार्यौं पंक्ति विषैं तीर्थंकर, आहारक की अपेक्षा विशेष है सो कहै हैं—

तित्थाहारे सहियं, तित्थूणं अह य हारचउहीणं ।
तित्थाहारचउक्के। णूणं इति चउपढिट्ठाणं ॥३७७॥

तीर्थाहारेण सहितं, तीर्थोनमथ चाहारचतुर्हीनं ।
तीर्थाहारचतुष्कै, णोनमिति चतुःपंक्तिस्थानं ॥३७७॥

टीका – बद्धायु की अर अबद्धायु की पहिली दोय पंक्त, तिनके पांच-पांच स्थान, ते तीर्थंकर अर आहारक-चतुष्क सहित जानने; तातैं पहिली पंक्ति विषैं शून्य घटाया । जेती की तेती हो प्रकृति तहां कहीं । बहुरि बद्धायु अर अबद्धायु की दूसरी दोय पंक्तिनि के पंच-पंच स्थान ते तीर्थंकर प्रकृति रहित जानने; तातैं दूसरी पंक्ति विषैं एक-एक प्रकृति घटाई । बहुरि बद्धायु अर अबद्धायु की तीसरी दोय पंक्ति के पंच-पंच स्थान ते आहारक-शरीर-अंगोपांग-बंधन-संघात रहित जानने; तातैं तीसरी पंक्ति विषैं च्यारि-च्यारि प्रकृति घटाईं । बहुरि बद्धायु अर अबद्धायु कौ चौथी दोय पंक्ति के पंच-पंच स्थान ते आहारक-चतुष्क अर तीर्थंकर रहित जानने; तातैं चौथी पंक्ति विषैं पांच-पांच प्रकृति घटाईं ।

अैसें च्यारि पंक्तिरूप स्थान जानने ॥३७७॥

आगें एक पंक्ति विषैं दोय छह ने आदि देकरि जे प्रकृति घटाईं, तिनके नाम कहैं हैं—

अण्णदरआउसहिया, तिरिगाऊ ते चा तह य अणसहिया ।
मिच्छं मिस्सं सम्मं, कमेण खविदे हवे ठाणा ॥३७८॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अन्यतरायु:सहितं, तिर्यगायुस्ते च तथा च अनसहिते ।
मिथ्यं मिश्रं सम्यक्त्वं, क्रमेण क्षपिते भवेत्स्थानं ।।३७८।।

टीका – तिर्यंचायु अर एक कोई अन्य आयु – ए दोय तो प्रकृति जानना । बहुरि दोय तो ए अर अनंतानुबंधी चतुष्क – ए छह जाननी । बहुरि मिथ्यात्वमोहनी सहित ते सात जाननी । मिश्रमोहनी सहित आठ जाननी । सम्यक्त्वमोहनी सहित ते नव जाननी, ग्रैसें घटाई जे प्रकृति ते जाननी ।

भावार्थ—बद्धायु का प्रथम-पंक्ति का पहिला-स्थानक दोय आयु बिना एक सौ छियालीस प्रकृतिरूप है । दूसरी पंक्ति का पहिला स्थानक तीर्थंकर बिना एक सौ पैंतालीस-प्रकृति रूप है । तीसरी पंक्ति का पहिला-स्थानक आहारक-चतुष्क बिना एक सौ ब्यालीस प्रकृतिरूप है चौथी पंक्ति का पहिला-स्थानक आहारक-चतुष्क, तीर्थंकर बिना एक सौ इकतालीस प्रकृति रूप है । इनमें बध्यमान-आयु रूप एक-एक प्रकृति और घटाए अबद्धायु के च्यारि स्थानक हो हैं – ग्रैसें आठ स्थान भए ।

इन सबनि विषैं अनंतानुबंधी चतुष्क रूप च्यारि प्रकृति घटाए दूसरे आठ स्थान हो हैं । इन विषैं भी मिथ्यात्व घटाए तीसरे आठ स्थान हो हैं । इन विषैं भी भी मिश्रमोहनी घटाए चौथे आठ स्थान हो हैं । इन विषैं भी सम्यक्त्व-मोहनी घटाए पांचवें आठ स्थान हो हैं ।

ग्रैसें सर्व मिलि असंयत विषैं चालीस सत्ता स्थान जानने ।।३७८।।

आगें इन विषैं भंग दोय गाथानि करि कहैं हैं—

आदिमपंचट्ठाणे,[1] दुगदुगभंगा हवंति बद्धस्स ।
इयरस्सवि णादव्वा, तिगतिगइगि तिण्णितिण्णेव ।।३७९।।

आदिमपंचस्थाने, द्विकद्विकभंगौ भवतो बद्धस्य
इतरस्यापि ज्ञातव्याः, त्रिकत्रिकैकं त्रयस्त्रय एव ।।३७९।।

टीका – पहिली पंक्ति संबंधी बद्धायु के पंच-स्थान तिन विषैं दोय-दोय भंग हैं । सो ए दश भंग भए । बहुरि अबद्धायु के पंच-स्थानक, तिन विषैं अनुक्रम तैं तीन तीन, एक, तीन, तीन भंग हैं – सो ए तेरा भंग भए ।।३७९।।

---

१. इसका कोष्टक पृष्ठ ३८६ पर देखें ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बिदियस्सवि पणठाणे, पण पण तिग तिण्णि चारि बद्धस्स ।
इयरस्स होंति णेया, चउचउइगिचारि चत्तारि ॥३८०॥

द्वितीयस्यापि पंचस्थानं, पंच पंच त्रिकं त्रयश्चत्वारो बद्धस्य ।
इतरस्य भवंति ज्ञेयाः, चतुश्चतुरेकचत्वारश्चत्वारः ॥३८०॥

टीका – दूसरी पंक्ति संबंधी बद्धायु के पंच-स्थान, तिन विषैं अनुक्रम तैं पांच, पांच, तीन, तीन, च्यारि – भंग हैं – सो ए बीस भंग भए। बहुरि अबद्धायु के पंच-स्थान तिन विषैं अनुक्रम तैं च्यारि, च्यारि, एक, च्यारि, च्यारि भंग हैं – सो ए सतरह भंग भए ॥३८०॥

आदिल्लदसस्सु सरिसा, भंगेण य तिदियदसयठाणाणि ।
बिदियस्स चउथस्स य, दसठाणाणि य समा होंति ॥३८१॥

गाथा ३७९ का कोष्टक ।

०	०२	०६	०७	०८	०९
ब	१४६ २	१४२ २	१४१ २	१४० २	१३९ २
अ	१४५ ३	१४१ ३	१४० १	१३९ ३	१३८ ३
ब	१४५ ५	१४१ ५	१४० ३	१३९ ३	१३८ ४
अ	१४४ ४	१४० ४	१३९ १	१३८ ४	१३७ ४
ब	१४२ २	१३८ २	१३७ २	१३६ २	१३५ २
अ	१४१ ३	१३७ ३	१३६ १	१३५ ३	१३४ ३
ब	१४१ ५	१३७ ५	१३६ ३	१३५ ३	१३४ ४
अ	१४० ४	१३६ ४	१३५ १	१३४ ४	१३३ ४

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आद्यदशसु सदृशा, भंगेन च तृतीयदशकस्थानानि ।
द्वितीयस्य चतुर्थस्य च, दश स्थानानि च समानि भवंति ।।३८१।।

टीका – पहिली पंक्ति संबंधी पंच बद्धायु के अर पंच अबद्धायु के जे दश स्थान तिन विषैं जे भंग कहे । तिन ही के समान तीसरी पंक्ति के दश स्थान विषैं भी भंग जानने ।

भावार्थ—तीसरी पंक्ति विषैं प्रथम पंक्तिवत् बद्धायु के दश, अबद्धायु के तेरह भंग जानने । बहुरि दूसरी पंक्ति का अर चौथी पंक्ति का दश स्थाननि विषैं भंग समान जानने ।

भावार्थ—चौथी पंक्ति विषैं द्वितीय पंक्तिवत् बद्धायु के बीस अबद्धायु के सतरह भंग जानने ।

ऐसें सर्व मिलि असंयत विषैं चालीस सत्ता स्थाननि विषै एक सौ बीस भंग भए । अब इनका भेद कहिए हैं—

बद्धायु असंयत सम्यग्दृष्टि कैं पहली पंक्ति संबंधी जे पंच स्थान ते तीर्थंकर प्रकृति सहित हैं अर तिर्यंच विषैं तीर्थंकर सत्ता का अभाव है; तातैं प्रथम पंक्ति का पहिला स्थान एक तो भुज्यमान वा बध्यमान-तिर्यंचायु अर एक कोई अन्य आयु – इन दोऊ बिना एक सौ छियालीस प्रकृतिरूप है । तहां भुज्यमान-मनुष्यायु; बध्यमान-नरकायु १; भुज्यमान-मनुष्यायु, बध्यमान-देवायु २; भुज्यमान-नरकायु, बध्यमान-मनुष्यायु ३; भुज्यमान-देवायु, बध्यमान-मनुष्यायु ४; – ऐसें च्यारि भंग भए ।

इहां भुज्यमान-मनुष्यायु, बध्यमान-नरकायु अर भुज्यमान-नरकायु, बध्यमान-मनुष्यायु – इन दोऊ भंगनि विषैं प्रकृति समान है; तातैं एक ही भंग ग्रह्या, अर भुज्यमान-मनुष्यायु, बध्यमान-देवायु अर भुज्यमान-देवायु, बध्यमान-मनुष्यायु इन दोऊनि विषैं प्रकृति समान है; तातैं एक ही भंग ग्रह्या – ऐसैं दोय भंग जानने ।

बहुरि प्रथम पंक्ति के अनंतानुबंधी का जाकैं विसंयोजन भया होइ, ताकैं अनंतानुबंधी-च्यारि, तिर्यंचायु एक, अन्य कोऊ आयु – इन छह बिना एक सौ बियालीस रूप दूसरा स्थान । बहुरि जाकैं मिथ्यात्व-प्रकृति का क्षय भया होइ, ताकैं एक सौ इकतालीस प्रकृतिरूप तीसरा स्थान । बहुरि जाकैं मिश्रमोहनी का भी क्षय भया होइ, ताकैं एक सौ चालीस प्रकृतिरूप चौथा स्थान । बहुरि जाकैं सम्यक्त्व-मोहिनी का भी क्षय भया होइ, ताकैं एक सौ गुणतालीस प्रकृतिरूप पांचवां स्थान ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सो इन चारयों स्थानकनि विषैं भुज्यमान-मनुष्यायु, बध्यमान-नरकायु १; भुज्यमान-मनुष्यायु, बध्यमान-देवायु – ए दोय-दोय भंग जानने ।

बहुरि अबद्धायु के प्रथम पंक्ति संबंधी पंच स्थान तिन विषैं प्रथम स्थान एक सौ पैंतालीस प्रकृतिरूप अर अनंतानुबंधी का विसंयोजन भए दूसरा स्थान एक सौ इकतालीस प्रकृतिरूप इन दोऊ विषैं भुज्यमान-नरकायु, मनुष्यायु-देवायु की अपेक्षा – तीन भंग हैं । बहुरि मिथ्यात्व का क्षय भएं तीसरा स्थान एक सौ चालीस प्रकृतिरूप, तहां भुज्यमान-मनुष्यायु – असा एक ही भंग है । बहुरि मिश्रमोहनी का क्षय भएं एक सौ गुणतालीसरूप चौथा स्थान, तहां भुज्यमान-नरकायु, मनुष्यायु-देवायु की अपेक्षा – तीन भंग हैं, जातैं कृतकृत्य-वेदक-सम्यग्दृष्टि तीर्थंकर सत्तावाला मनुष्य मरि नरक, देवगति विषैं उपजै; तहां नरक, देवगति विषैं भी असी सत्ता पाइए ।

बहुरि सम्यक्त्व-मोहनी का अभाव भए एक सौ अठतीस की सत्तारूप पांचवां-स्थान, तहां भी भुज्यमान-मनुष्यायु, देवायु, नरकायु की अपेक्षा तीन भंग पाइए ।

तहां मनुष्यायु सहित एक सौ अडतीस सत्तास्थान वाला जो यहु क्षायिक-सम्यग्दृष्टि, सो तिस ही भव विषैं जो घातिया-कर्म नाशि केवली होइ, तौ इस जीव कैं गर्भ-कल्याण, जन्माभिषेक-कल्याण न होइ, तप आदि तीन ही कल्याण होंइ । बहुरि जो तीसरा-भव विषैं घातिकर्म का नाश करै तौ नियम करि देवायु ही कौं बांधै, तहां देवपर्याय विषैं देवायुसहित एक सौ अडतीस सत्त्व पाइए, तिसके छह-महीना अवशेष रहैं मनुष्यायु का बंध होइ, अर पंच-कल्याण ताकैं होंइ ।

बहुरि जाकैं मिथ्यादृष्टि विषैं नरकायु का बंध भया था अर तीर्थंकर का सत्त्व होइ तौ वह जीव नरक-पृथ्वी विषैं उपजै, तहां नरकायु सहित एक सौ अठतीस सत्त्व पाइए । तिसकै छह महीना आयु का अवशेष रहे मनुष्यायु का बंध होइ अर नारक-उपसर्ग का निवारण होइ अर गर्भ कल्याणादिक होंइ ।

बहुरि दूसरी पंक्ति संबंधी बद्धायु के पंचस्थान तिन विषैं भुज्यमान, बध्यमान बिना दोय आयु अर तीर्थंकर – इन बिना एक सौ पैंतालीस प्रकृतिरूप प्रथम स्थान है और अनंतानुबंधी का विसंयोजन भए एक सौ इकतालीस प्रकृति रूप दूसरा स्थान है । इन दोऊनि विषैं मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं एक सौ पैंतालीस का सत्त्व स्थान विषैं जैसे च्यार्यों गति संबंधी बारह भंगनि विषैं समभंग, पुनरुक्त भंग बिना पंच भंग कहे थे, तैसें पंच-पंच भंग जानने ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि मिथ्यात्व का क्षय भए एक सौ चालीस प्रकृतिरूप तीसरा स्थान है, तहां भुज्यमान-मनुष्यायु अर बध्यमान-नरकायु, तिर्यंचायु, मनुष्यायु, देवायु भेद तैं च्यारि भंग हो हैं। तहां भुज्यमान-मनुष्यायु, बध्यमान-मनुष्यायु – यहु भंग पुनरुक्त है, जातैं एक ही प्रकृति है – सो इस बिना तीन भंग जानने। बहुरि मिश्र-मोहनीय का क्षय भए एक सौ गुणतालीस प्रकृतिरूप चौथा स्थान है तहां भी तैसें ही तीन भंग जानने।

बहुरि सम्यक्त्व-मोहनीय का क्षय भए एक सौ अठतीस प्रकृतिरूप पांचवां स्थान है। तहां भुज्यमान-नरकायु, बध्यमान-मनुष्यायु १; भुज्यमान-तिर्यंचायु, बध्यमान-देवायु २; भुज्यमान-मनुष्यायु, बध्यमान-नरकायु ३; भुज्यमान-मनुष्यायु, बध्यमान-तिर्यंचायु ४; भुज्यमान-मनुष्यायु, बध्यमान-मनुष्यायु ५; भुज्यमान-मनुष्यायु, बध्यमान-देवायु ६, भुज्यमान-देवायु, बध्यमान-मनुष्यायु ७ – इन सात भंगनि विषैं पांचवां-भंग तौ पुनरुक्त है, जातैं एक मनुष्यायु ही है अर पहिला-भंग, तीसरा-भंग समान है अर सातवां-भंग, छठा-भंग समान है, जातैं प्रकृतिनि की समानता पाइए है। सो असै तीन-भंग बिना च्यारि भंग जानने। च्यारचों गति संबंधी बारह भंग पूर्वैं कहे थे, तिन विषैं इहां पंच भंग संभवै नाहीं; तातैं सात ही कहे।

बहुरि दूसरी पंक्ति संबंधी अबद्धायु के पंच-स्थान तिन विषैं भुज्यमान-आयु बिना तीन-आयु अर तीर्थंकर बिना एक सौ चवालीस प्रकृति रूप पहिला स्थान है अर अनंतानुबंधी का विसंयोजन भए एक सौ चालीस प्रकृतिरूप दूसरा-स्थान है। इन दोऊनि विषैं भुज्यमान च्यारि आयु की अपेक्षा च्यारि-च्यारि भंग हैं।

बहुरि मिथ्यात्व का क्षय भएं एक सौ गुणतालीसरूप तीसरा स्थान है। तहां भुज्यमान-मनुष्यायु बिना और भंग का अभाव है; तातैं एक ही भंग है। बहुरि मिश्र-मोहनी का क्षय भए एक सौ अठतीस प्रकृतिरूप चौथा स्थान है। तहां भुज्यमान-मनुष्यायु अर कृतकृत्य-वेदक-सम्यग्दृष्टि की अपेक्षा भुज्यमान-नरकायु, तिर्यंचायु, देवायु – असैं च्यारि भंग हैं। बहुरि सम्यक्त्वमोहनी का क्षय भए क्षायिक-सम्यग्दृष्टि के एक सौ सैंतीस प्रकृतिरूप पांचवां-स्थान है। तहां भुज्यमान च्यारि आयु की अपेक्षा च्यारि-भंग हैं।

बहुरि तीसरी पंक्ति विषैं पहिली पंक्ति का बद्धायु-अबद्धायुरूप दश-स्थानकनि विषैं आहारक-चतुष्क रूप च्यारि-च्यारि प्रकृति घटाए दश स्थान होइ तहां प्रथम पंक्तिवत् तेईस भंग जानने।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि चौथी पंक्ति विषै दूसरी पंक्ति का बद्धायु-अबद्धायुरूप दश स्थानकनि विषैं आहारक-चतुष्करूप च्यारि-च्यारि प्रकृति घटाएं दश स्थान होंइ । तहां द्वितीय पंक्तिवत् सैंतीस भंग जानने ।

असैं सर्व मिलि असंयत विषैं चालीस सत्त्व-स्थाननि विषैं एकसौ बीस भंग हैं ।।३०१।।

देसतियेसुवि एवं, भंगा एक्केक्क देसगस्स पुणो ।
पडिरासि बिदियतुरियस्सादीबिदियम्मि दो भंगा ।।३८२।।

देशत्रयेष्वपि एवं भंगा एकैकं देशकस्य पुनः ।
प्रतिराशि द्वितीयचतुर्थस्यादिद्वितीयस्मिन् द्वौ भंगौ ।।३८२।।

टीका – देशसंयत, प्रमत्त, अप्रमत्त - इन तीन गुणस्थाननि विषैं असैं ही असंयतवत् चालीस-चालीस स्थान जानने । तहां सर्व-स्थानकनि विषैं एक-एक भंग जानना । विशेष इतना – जो देशसंयत विषैं बद्धायु-अबद्धायु की दूसरी दोय पंक्ति अर चौथी दोयपंक्ति, तिनके पहिला अर दूसरा स्थान विषैं दोय-दोय भंग हैं । सोई कहिए हैं—

देशसंयतादिक तीन गुणस्थाननि विषैं भी असंयतवत् दोय, छह, सात, आठ, नव प्रकृति रहित पंच-स्थान बरोबरि लिखि, तिनके नीचैं-नीचैं च्यारि पंक्ति बद्धायु की करनी । अर तिनके नीचैं बध्यमान एक-एक आयु घटाइ च्यारि पंक्ति अबद्धायु की करनी । तिन पंक्तिनि विषैं पहिली पंक्ति तीर्थंकर, आहारक सहित है; तातैं शून्य घटावना । दूसरी पंक्ति विषैं तीर्थंकर प्रकृति घटावनी । तीसरी पंक्ति विषैं तीर्थंकर मिलाइ, आहारक-चतुष्क घटावना । चौथी पंक्ति विषै तीर्थंकर, आहारक चतुष्क घटावना ।

असैं बद्धायु-अबद्धायु की आठ पंक्तिनि के चालीस स्थान भए, तहां जे बद्धायु के बीस स्थान हैं, तहां भुज्यमान-मनुष्यायु, बध्यमान-देवायु असा एक-एक ही भंग है, जातैं और तीन-आयु का बंध भएं देशव्रत-महाव्रत न होंइ ।

अर अबद्धायु के बीस स्थान हैं, तहां भुज्यमान-मनुष्यायु असा एक-एक ही भंग है । तहां इतना विशेष है – जो देशसंयत विषैं तीर्थंकर रहित दूसरी पंक्ति के दश स्थाननि विषैं और चौथी पंक्ति के दश स्थाननि विषैं पहिला अर दूसरा स्थान

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

विषैं दोय-दोय भंग हैं । तहां बद्धायु का दूसरी, चौथी पंक्ति का पहिला, दूसरा स्थान विषैं तौ भुज्यमान मनुष्यायु, बध्यमान-देवायु १, भुज्यमान-तिर्यंचायु, बध्यमान देवायु १ – असैं दोय-दोय भंग हैं ।

बहुरि अबद्धायु का दूसरी-चौथी पंक्ति का पहिला-दूसरा स्थान विषैं भुज्यमान मनुष्यायु, भुज्यमान-तिर्यंचायु – असैं दोय-दोय भंग हैं ।

अैसें देशसंयत विषैं चालीस स्थाननि के अठतालीस भंग है ।

प्रमत्त, अप्रमत्त विषैं चालीस-चालीस स्थाननि के चालीस-चालीस भंग हैं ।।३८२।।

आगै उपशम श्रेणी संबंधी च्यारि गुणस्थाननि विषैं स्थान-भंग कह्या चाहै हैं, तहां प्रथम अपूर्वकरण विषैं कहै हैं—

दुगछक्कतिण्णिवग्गे, णूणापुव्वस्स चउपडिं किच्चा ।
णभमिगिचऊपणहीणं, बद्धस्सियरस्स एगूणं ।।३८३।।

द्विकषट्कत्रिवर्गेणोनानि अपूर्वस्य चतुःप्रतिं कृत्वा ।
नभएकचतुः पंचहीनं, बद्धस्येतरस्यैकोनं ।।३८३।।

टीका – उपशमक अपूर्वकरण विषैं दोय, छह, तीन का वर्ग नव इन प्रकृतिनि करि रहित तीन स्थान, तिनकी च्यारि पंक्ति करनी । पूर्ववत् प्रथम पंक्ति विषैं शून्य घटावना । दूजी पंक्ति विषैं तीर्थंकर एक प्रकृति घटावनी । तीजी पंक्ति विषैं आहारक-चतुष्क घटावना । चौथी पंक्ति विषैं तीर्थंकर, आहारक-चतुष्क – ए पांच प्रकृति घटावनी ।

असैं बद्धायु के बारह स्थान भए, अर अबद्धायु के च्यारचों पंक्ति विषैं सर्व स्थाननि विषैं अपने-अपने नीचें एक-एक बध्यमान आयु घटाएं बारह स्थान हो हैं ।

अैसें आठ पंक्तिनि के प्रत्येक तीन-तीन स्थान होंइ सर्व चौईस स्थान हो हैं । ।।३८३।।

आगें घटाई जे प्रकृति तिनके नाम अर स्थाननि विषैं भंग कहै हैं—

णिरयतिरियाउ दोण्णिवि, पढमकसायाणि दंसणतियाणि ।
हीणा एदे णेया, भंगे एक्केक्कगा होंति ।।३८४।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

निरयतिर्यगायुषी द्वे अपि, प्रथमकषाया दर्शनत्रीणि ।
हीनानि एतानि ज्ञेयानि, भंगा एकैकका भवंति ।।३८४।।

टीका – नरकायु, तिर्यंचायु – ए दोय प्रकृति घटाएं एक सौ छियालीस रूप प्रथम स्थान है । बहुरि दोय तौ ए अर अनंतानुबंधी का चतुष्क – ए छह प्रकृति घटाएं एक सौ बियालीस रूप दूसरा स्थान है । बहुरि छह तो ए अर तीन दर्शनमोह – ए नव घटाएं एक सौ गुणतालीस रूप तीसरा स्थान है । इन तीनों स्थानकनि की च्यारि पंक्ति करनी ।

तहां प्रथम पंक्ति विषैं तो इतनी-इतनी प्रकृति रूप ही तीन स्थान जानने । दूजी पंक्ति विषैं तीर्थंकर एक-एक प्रकृति घाटि तीन स्थान जानने । तीजी पंक्ति विषैं आहारक-चतुष्क रूप च्यारि-च्यारि प्रकृति घाटि तीन-स्थान प्रकृति घाटि तीन-स्थान जानने । तीजी-पंक्ति विषैं आहारक-चतुष्क तीर्थंकर इन पंच-पंच प्रकृति घाटि तीन स्थान जानने ।

असैं ए बारह स्थान बद्धायु के भए ।

इन सबनि विषैं बध्यमान आयु एक-एक घटाएं अबद्धायु के बारह स्थान हो हैं । सो इन चौबीसों स्थानकनि विषैं भंग एक-एक ही है । तहां बद्धायु स्थानकनि विषैं तौ भुज्यमान-मनुष्यायु, बध्यमान देवायु असा ही एक भंग जानना अर अबद्धायु स्थाननि विषैं भुज्यमान-मनुष्यायु असा ही एक भंग जानना ।

असैं उपशमक-अपूर्वकरण विषैं स्थान चौईस हैं अर भंग भी चौईस हैं ।।३८४।।

एवं तिसु उवसमगे, खवगापुव्वम्मि दसहिं परिहीणं ।
सव्वं चउपडि किच्चा, णभमेक्कं चारि पण हीणं ।।३८५।।

एवं त्रिषु उपशमकेषु, क्षपकापूर्वे दशभिः परिहीनं ।
सर्वं चतुः प्रतिकं कृत्वा, नभमेकं चत्वारि पंच हीनं ।।३८५।।

टीका – असैं ही उपशमक-अपूर्वकरणवत् उपशमक-अनिवृत्तिकरण, उपशमकसूक्ष्मसांपराय, उपशांत मोह इन तीनों विषैं भी स्थान वा भंग चौईस-चौईस जानने । बहुरि क्षपक अपूर्वकरण विषैं भुज्यमान-मनुष्यायु बिना तीन आयु, अनंतानुबंधी चतुष्क, दर्शनमोह तीन – इन दश करि रहित एकसौ अठतीस प्रकृति रूप

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

एक सत्त्वस्थान की च्यारि पंक्ति करनी । तहां पूर्ववत् पहिली पंक्ति विषैं तौ शून्य, दूसरी पंक्ति विषैं तीर्थंकर, तीसरी पंक्ति विषैं आहारक चतुष्क, चौथी पंक्ति विषैं तीर्थंकर, आहारक-चतुष्क घटाएं एकसौ अठतीस, एक सौ सैंतीस, एकसौ चौतीस, एक सौ तैतीस प्रकृति रूप च्यारि स्थान हो हैं। इन विषैं भुज्यमान-मनुष्यायु असैं एक-एक ही भंग है, तातैं भंग भी च्यारि ही हैं ।।३८५।।

एदे सत्तट्ठाणा, अणियट्ठिस्सवि पुणोवि खविदेवि ।
सोलस अट्ठेकेक्कं, छक्केव एक्कमेक्क तहा ।।३८६।।

एतानि सत्त्वस्थानानि, अनिवृत्तेरपि पुनरपि क्षपितेऽपि ।
षोडशाष्टैकैकं, षट्कैकमेकमेकं तथा ।।३८६।।

टीका – एं क्षपक अपूर्वकरण विषैं जे च्यारि स्थान कहे ते क्षपक अनिवृत्तिकरण विषैं भी पाइए है । बहुरि अनिवृत्तिकरण विषैं अनुक्रमतैं पूर्वोक्त सोलह, आठ, एक, एक, छह, एक, एक, एक प्रकृति खिपावै है; तातैं एकसौ बाईस, एकसौ चौदह, एकसौ तेरह, एकसौ बारह, एकसौ छह, एकसौ पांच, एकसौ च्यारि, एकसौ तीन प्रकृतिरूप आठ स्थान हो हैं ।

तिनकी च्यारि पंक्ति करि प्रथम पंक्ति विषैं शून्य घटावना । द्वितीय पंक्ति विषैं तीर्थंकर घटावनी । तीसरी पंक्ति विषैं आहारक-चतुष्क घटावना । चौथी पंक्ति विषैं तीर्थंकर, आहारक-चतुष्क घटावना । असैं च्यारयों पंक्ति विषैं बत्तीस स्थान भए अर च्यारि अपूर्वकरणवत् स्थान कहे थे, सब मिलि क्षपक-अनिवृत्तिकरण विषैं छत्तीस स्थान भए ।।३८६।।

आगैं इन विषैं भंग दोय गाथानि करि कहै हैं—

भंगा एक्केक्का पुण, णउंसयक्खविदचउसु ठाणेसु ।
बिदियतुरियेसु दो दो, भंगा तित्थयरहीणेसु ।।३८७।।

भंगाः एकैकः पुन, नपुंसकक्षपितचतुर्षु स्थानेषु ।
द्वितीयतुरीययोर्द्वौ द्वौ, भंगौ तीर्थंकरहीनयोः ।।३८७।।

टीका – ए क्षपक-अनिवृत्तिकरण के छत्तीस स्थान, तिन विषैं एक-एक भंग है । तहां इतना विशेष–जो नपुंसक वेद का जहां क्षय कह्या, असे च्यारी पंक्ति संबंधी

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

च्यारी स्थान, तिन विषैं तीर्थंकर सत्त्व रहित पहिली (?) वा चौथी पंक्ति संबंधी जे दोय स्थान तिन विषैं दोय दोय भंग हैं ॥३८७॥

सोई कहिए हैं—

थीपुरिसोदयचडिदे, पुव्वं संढं खवेदि थी अत्थि।
संढस्सुदये पुव्वं, थीखविदं संढमत्थित्ति ॥३८८॥

स्त्रीपुरुषोदयचटिते, पूर्वं षंढं क्षपयति स्त्री अस्ति।
षंढस्योदये पूर्वं, स्त्रीक्षपितं षंढमस्तीति ॥३८८॥

टीका – जे जीव स्त्री वा पुरुष-वेद का उदय सहित क्षपक श्रेणी चढैं हैं, ते पहिलैं नपुंसक वेद कौं खिपावै है। तिनकैं तो पूर्वोक्त दोऊ स्थानकनि विषैं स्त्री-वेद का सत्त्व पाइए है। बहुरि नपुंसक-वेद का उदय सहित क्षपक-श्रेणी चढै हैं, ते पूर्वैं स्त्री वेद कौं खिपावै है, तिसकैं पूर्वोक्त दोऊ स्थानकनि विषैं नपुंसक-वेद का सत्त्व पाइए है। असैं दोय स्थानकनि विषैं दोय-दोय भंग हैं।

असैं क्षपक के छत्तीस-स्थानकनि के अठतीस-भंग भए, अर चौईस उपशमक के थे, सब मिलि अनिवृत्तिकरण विषैं बासठि भंग भए।

इस पक्षविषैं माया का सत्त्व रहित च्यारि पंक्ति का च्यारि स्थान कहे हैं। **'चदुसेक्के बादरे'** इत्यादि गाथा आगैं कहैंगे। तिस पक्षकरि ते च्यारि स्थान पाइए है, सो कथन आगैं करैंगे ॥३८८॥

आगैं क्षपक सूक्ष्मसाम्पराय अर क्षीणकषाय विषैं कहै हैं—

अणियट्टिचरिमठाणा, चत्तारिवि एक्कहीण सुहुमस्स।
ते इगिदोण्णिविहीणं, खीणस्सवि होंति ठाणाणि ॥३८९॥

अनिवृत्तिचरमस्थानानि, चत्वार्यपि एकहीनं सूक्ष्मस्य।
तानि एकद्विविहीनं, क्षीणस्यापि भवंति स्थानानि ॥३८९॥

टीका – क्षपक-अनिवृत्तिकरण विषैं संज्वलन-मान रहित एकसौ तीन प्रकृतिरूप स्थान कह्या था। ताकी च्यारि पंक्ति विषैं शून्य, एक, च्यारि, पांच घटावनेतैं च्यारि स्थान कहे थे। इन च्यारचों विषैं संज्वलन माया घटाइये, तब एकसौ दोय, एकसौ एक, अठ्याणवै, सत्याणवैं, प्रकृतिरूप, च्यारि-स्थान क्षपक-सूक्ष्म

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सांपराय के हो हैं। बहुरि इन च्यारों स्थाननि विषैं संज्वलन-लोभ घटाइए, तब एकसौ एक, एकसौ, सत्याणवै, छिनवे प्रकृतिरूप क्षीणकषाय का अंत का दोय-समय अवशेष रहै, तहां पर्यंत च्यारि स्थान हैं, अर इन च्यारचों-स्थाननि विषैं निद्रा-प्रचला ए दोय घटाइए, तब निन्याणवै, अठचाणवै, पच्याणवै, चौराणवै प्रकृतिरूप क्षीणकषाय का अंत समय विषैं च्यारि स्थान हो हैं ॥३८९॥

आगैं सयोगी-अयोगी विषैं कहैं हैं—

ते चोद्दसपरिहीणा, जोगिस्स अजोगिचरिमगेवि पुणो ।
बावत्तरिमडसट्ठि, दुसु दुसु हीणेसु दुगदुगा भंगा ॥३९०॥

तानि चतुर्दशपरिहीनानि, योगिन अयोगिचरमकेऽपि पुनः ।
द्वासप्ततिरष्टषष्टिः, द्वयोर्दयो, हीनयोः द्विकद्विकौ भंगाः ॥३९०॥

टीका – ते क्षीणकषाय का अंत समय संबंधी च्यारि-च्यारि स्थान, तिन विषैं ज्ञानावरण पांच, दर्शनावरण च्यारि, अंतराय पांच – ए चौदह प्रकृति घटाएं पिच्यासी, चौरासी, इक्यासी, असी प्रकृतिरूप सयोगी अर अयोगी का अंत का दोय समय अवशेष रहै, तहां पर्यंत च्यारि स्थान पाइए है। बहुरि तिन विषैं पहिला, दूसरा स्थान विषैं तौ सामान्य-सत्ता विषैं कही बहत्तरि प्रकृति, ते घटाइए, तब तेरह वा बारह प्रकृतिरूप दोय-स्थान होई, अर तीसरा, चौथा विषैं आहारक-चतुष्क बिना अडसठि प्रकृति घटाइए, तब तेरह वा बारह प्रकृतिरूप दोय स्थान होइ ।

इन चारचों स्थानकनि विषैं तेरह-तेरह का स्थान दोय बार कहे, तातैं पुनरुक्त भया; तातैं एक स्थान ही ग्रहण करना । असैं ही एक बारह का स्थान अंगीकार करना। असैं अयोगी का अंत-समय विषैं दोय स्थान पाइए, तहां जाकैं साता-वेदनी का उदय पाइए, ताकैं साता ही का सत्त्व है अर असाता का सत्त्व नाहीं, अर जाकैं असाता का उदय पाइए, ताकैं असाता ही का सत्त्व है, साता का सत्त्व नाहीं; तातैं तिन दोऊ स्थानकनि विषै साता-असाता प्रकृति बदलने तैं दोय-दोय भंग जानने ।

असैं गुणस्थाननि विषैं सत्त्व-स्थान भंग सहित कहे ॥३९०॥

आगें 'दुगछक्कतिण्णिवग्गे' इत्यादि गाथा करि पूर्वैं अनंतानुबंधी सहित आठ स्थान उपशम श्रेणी वालों के कहे, ते अपने पक्ष विषैं नाहीं है, इत्यादि विशेष वा तिनके भंग-संख्यानि कौं च्यारि गाथानि करि कहै हैं—

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

णत्थि अणं उवसमगे, खवगापुव्वं खवित्तु अट्ठा य।
पच्छा सोलादीणं, खवणं इदि केइं णिद्दिट्ठं ॥३६१॥

नास्ति अनमुपशमके, क्षपकापूर्वं क्षपयित्वा अष्टौ च ।
पश्चात् षोडशादीनां, क्षपणमिति कैर्निर्दिष्टं ॥३६१॥

टीका – श्रीकनकनंदि सिद्धांतचक्रवर्ती तिनका संप्रदाय विषैं असैं कहैं हैं–जो उपशम का च्यारि गुणस्थाननि विषैं अनंतानुबंधी का सत्त्व सहित एकसौ छियालीस का सत्त्व नैं आदि देकरि बद्धायु, अबद्धायु की च्यारि पंक्तिनि विषैं आठ स्थान कहे ते नाहीं हैं; तातैं चौबीस स्थान कहे थे, ते सोला ही स्थान हैं ।

बहुरि क्षपक-अनिवृत्तिकरण वाले पहिली तौ अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान कषायरूप आठ प्रकृति खिपावै हैं, पीछै सोलह आदि प्रकृतिनि कौं खिपावै हैं, असैं केई आचार्यनि करि कहिए ॥३६१॥

अणियट्टिगुणट्ठाणे, मायारहिदं च ठाणमिच्छंति ।
ठाणा भंगपमाणा, केई एवं परूवेंति ॥३६२॥

अनिवृत्तिगुणस्थाने, मायारहितं च स्थानमिच्छंति ।
स्थानानि भंगप्रमाणानि, केचिदेवं प्ररूपयंति ॥३६२॥

टीका – अनिवृतिकरण गुणस्थान विषैं माया-कषाय रहित च्यारि स्थान केई आचार्य कहैं हैं । इसप्रकार केई आचार्य स्थान वा भंगनि का प्रमाण प्ररूपण करै हैं ॥३६२॥

असैं होतैं स्थाननि की अर भंगनि की संख्या कहा, सो कहै हैं—

अट्ठारह चउ अट्ठं, मिच्छतिये उवरि चाल चउठाणे ।
तिसु उवसमगे संते, सोलस सोलस हवे ठाणा ॥३६३॥

अष्टादश चत्वारि अष्ट, मिथ्यत्रये उपरि चत्वारिंशत् चतुःस्थानानि ।
त्रिषु उपशमके शांते, षोडश भवंति स्थानानि ॥३६३॥

टीका – मिथ्यादृष्टयादिक तीन गुणस्थाननि विषैं क्रम तैं पूर्वोक्त प्रकार अठारह, च्यारि, आठ स्थान हैं । बहुरि उपरि असंयतादिक च्यारि गुणस्थाननि विषैं

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

भी पूर्वोक्त चालीस-चालीस स्थान हैं। बहुरि उपशमक-अपूर्वकरणादिक तीन अर उपशांत मोह इन विषैं अनंतानुबंधी सत्त्व रहित बद्धायु, अबद्धायु संबंधी च्यारि पंक्तिनि के आठ-आठ स्थान हैं; तातैं सोलह-सोलह स्थान ही हैं। बहुरि क्षपक-अपूर्व-करण विषैं पूर्वोक्त च्यारि स्थान हैं। बहुरि क्षपक-अनिवृत्तिकरण विषैं छत्तीस स्थान तौ पूर्वोक्त अर संज्वलन माया रहित च्यारि स्थान जे सूक्ष्मसांपराय विषैं कहे थे, ते अनिवृत्तिकरण विषैं ही कहिए असैं चालीस-स्थान हैं। बहुरि क्षपक-सूक्ष्मसांपराय विषैं च्यारि, क्षीणकषाय विषैं आठ, सयोगी विषैं च्यारि, अयोगी विषैं छह पूर्वोक्त स्थान जानने ॥३६३॥

पण्णेकारं छक्कदि, वीससयं अट्ठदाल दुसु तालं।
वीसडतिण्णं वीसं, सोलट्ठ य चारि अट्ठेव ॥३६४॥

पंचाशदेकादश षट्कृतिः, विंशशतमष्टचत्वारिंशत् द्वयोश्चत्वारिंशत्।
विंशाष्टत्रिंशत् विंशं, षोडशाष्ट च चत्वारः अष्टैव ॥३६४॥

टीका – तिन स्थाननि के भंग पूर्वोक्त प्रकार मिथ्यादृष्टि विषैं पचास, बहुरि सासादन विषैं बारह, तिनमें बद्धायुस्थान विषैं देव-अपर्याप्तक भेद दूर कीजिए, तब ग्यारह भंग होंइ।

इहां जाकैं देवायु बंध भया, असा द्वितीयोपशम-सम्यग्दृष्टि जीव, ताका सासादन विषैं मरण नाहीं, असैं केई आचार्य कहे हैं, तिनकी अपेक्षा ग्यारह ही भंग हैं।

बहुरि मिश्र विषैं छत्तीस, असंयत विषैं एकसौ बीस, देशसंयत विषैं अठतालीस, सप्रमत्त-अप्रमत्त विषैं चालीस-चालीस, अपूर्वकरण विषैं उपशमक विषैं सोलह, स्थान कहे; तातैं सोलह अर क्षपक विषैं च्यारि असा सर्व बीस। अनिवृत्ति-करण विषैं उपशमक विषैं सोलह, क्षपक विषैं पूर्वोक्त छत्तीस-स्थाननि के नपुंसकवेद क्षपणा का च्यारि स्थाननि विषैं तीर्थंकर रहित दूसरा, चौथा स्थान विषैं स्त्री-नपुंसकवेद; बदलनै तैं दोय-दोय भंग भए, तातैं अठतीस अर मायारहित च्यारि स्थाननि के च्यारि भंग एवं बियालीस मिलिकरि सर्व अठावन।

बहुरि सूक्ष्म-सांपराय विषैं उपशमक विषैं सोलह, क्षपक विषैं च्यारि मिलि करि सर्व बीस। बहुरि उपशांत-कषाय विषैं सोलह, क्षीणकषाय विषैं आठ स्थाननि के आठ, सयोगी विषैं च्यारि, अयोगी विषैं छह स्थाननि के आठ असैं भंग जानना।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

प्रत्यक्ष केवली, श्रुतकेवली के अभाव तैं एक निश्चय होता नाहीं, तातैं यहां अनेक प्रकार कथन कीया है ॥३९४॥

एवं सत्तट्ठाणं, सवित्थरं वण्णियं मए सम्मं ।
जो पढइ सुणइ भावइ, सो पावइ णिव्वुदिं सोक्खं ॥३९५॥

एवं सत्त्वस्थानं, सविस्तरं वर्णितं मया सम्यक् ।
यः पठति शृणोति भावयति स प्राप्नोति निर्वृतिं सौख्यं ॥३९५॥

टीका – असैं सत्त्व-स्थान विस्तार सहित मैं वर्णन कीया है । सम्यक् प्रकार जो पढै, सुनै, भावै सो निर्वाणसुख कौं प्राप्त हो है ॥३९५॥

वरइंदणंदिगुरुणो, पासे सोऊण सयलसिद्धंतं ।
सिरिकणयणंदिगुरुणा, सत्तट्ठाणं समुद्दिट्ठं ॥३९६॥

वरेंद्रनंदिगुरोः, पार्श्वे श्रुत्वा सकलसिद्धांतं ।
श्रीकनकनंदिगुरुणा, सत्त्वस्थानं समुद्दिष्टं ॥३९६॥

टीका – आचार्यनि में प्रधान ऐसे श्रीमत् इंद्रनंदी नामा भट्टारक, ताके पास सकल-सिद्धांत कौं सुणि करि श्री 'कनकनंदी' नामा सिद्धांतचक्रवर्ती करि यहु सत्त्व-स्थान सम्यक् प्रकार प्ररूपण कीया है ॥३९६॥

जह चक्केण य चक्की, छक्खंडं साहियं अविग्घेण ।
तह मइचक्केण मया, छक्खंडं साहियं सम्मं ॥३९७॥

यथा चक्रेण च चक्रिणा, षट्खंडं साधितमविघ्नेन ।
तथा मतिचक्रेण मया, षट्खंडं साधितं सम्यक् ॥३९७॥

टीका – जैसैं चक्रकरि चक्रवर्ती छह-खंड क्षेत्र निर्विघ्नपनैं करि साध्या, तैसैं मैं मतिरूपी चक्रकरि जीवस्थान, क्षुद्रक- बंध, बंधस्वामी, वेदनाखंड, वर्गणाखंड, महाबंध भेद लीए षट्रूप-सिद्धांत-शास्त्र भले प्रकार करि साध्या है ॥३९७॥

इति आचार्य श्रीनेमिचन्द्रविरचित गोम्मटसार द्वितीय नामा पंचसंग्रह ग्रंथ की जीवतत्त्व-प्रदीपिका नाम संस्कृतटीका के अनुसारि इस सम्यग्ज्ञानचंद्रिका नामा भाषाटीका विषै कर्मकांड विषै कनकनंदि आचार्यकृत सत्त्वस्थानभंगप्ररूपण नामा तीसरा अधिकार संपूर्ण भया ॥३॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

अथ त्रिचूलिका अधिकार ॥४॥

दोहा—तीन भवन चूडारतन, सम श्री जिनके पाय।
नमत पाइए आप पद, सबविधि बंध नसाय ॥४॥

असहाय जिणवरिंदे, असहायपरक्कमे महावीरे।
पणमिय सिरसा वोच्छं, तिचूलियं सुणह एयमणा ॥३९८॥

असहायजिनवरेंद्रानसहायपराक्रमान् महावीरान्।
प्रणम्य शिरसा वक्ष्यामि, त्रिचूलिकं शृणुतैकमनसः ॥३९८॥

टीका – इंद्रियादिक का सहाय रहित है ज्ञानादि शक्तिरूप पराक्रम जिनि का असे महावीर गुरु अर वृषभादिक जिनवरेंद्र तीर्थंकर तीनकौं मस्तक नमाय-नस्कार करि नवप्रश्न, पंचभागहार, दशकरण नाम कौं लीए त्रिचूलिका-अधिकार कहोंगा, सो तुम एकाग्रचित्त होतै संते सुणो।

चूलिका कहा कहिए ? जो अर्थ कह्या वा न कह्या वा विशिष्टरूप न कह्या ताका जो चिंतवन सो चूलिका कहिए। सो इस अधिकार विषैं तीन-चूलिका का व्याख्या है, तातैं त्रिचूलिका कहिए ॥३९८॥

तहां प्रथम ही नवप्रश्नचूलिका कौं कहै हैं—

किं बंधो उदयादो, पुव्वं पच्छा समं विणस्सदि सो।
सपरोभयोदयो वा, णिरंतरो सांतरो उभयो ॥३९९॥

को बंधो उदयात्पूर्वं पश्चात् समं विनश्यति सः।
स्वपरोभयोदयो वा, निरंतरः सांतर उभयः ॥३९९॥

टीका – पूर्वैं जो प्रकृति कहीं, तिन विषैं उदय की व्युच्छित्ति के पहिलैं बंध की व्युच्छित्ति कौन प्रकृतिनि की हो है ? बहुरि उदय की व्युच्छित्ति के पीछैं बंध की व्युच्छित्ति कौन प्रकृतिनि की हो है ? बहुरि उदय-व्युच्छित्ति की साथि युगपत् बंध की व्युच्छित्ति कौन प्रकृतिनि की हो है ? असैं तीन प्रश्न तो ए भए।

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि जिनका अपना उदय होत संतैं बंध होए, ते प्रकृति कौन हैं ? बहुरि जिनका अन्य-प्रकृतिनि का उदय होतैं बंध होइ ते प्रकृति कौन हैं ? बहुरि जिनका अपना वा अन्य-प्रकृतिनि का उदय होतैं बंध होइ, ते प्रकृति कौन हैं ? असैं तीन प्रश्न ए भए ।

बहुरि जिनका निरंतर-बंध होई, ते प्रकृति कौन हैं ? बहुरि जिनका सांतर-बंध होई, कदाचित् होइ, कदाचित् न होइ, ते प्रकृति कौन हैं ? बहुरि जिनका निरंतर वा सांतर दोऊ प्रकार बंध होइ, ते प्रकृति कौन हैं ? असैं तीन प्रश्न ए भए ।

असैं नव प्रश्न हैं ॥३९९॥

तिनविषैं पहिलैं तीन प्रश्ननि की प्रकृति दोय गाथानि करि कहैं हैं—

देवचउक्काहारदुगज्जसदेवाउगाण सो पच्छा ।
मिच्छत्तादावाणं, णराणुथावरचउक्काणं ॥४००॥

पण्णरकसायभयदुगहस्सदुचउजाइपुरिसवेदाणं ।
सममेक्कत्तीसाणं, सेसिगिसीदाण पुव्वं तु ॥४०१॥

देवचतुष्काहारद्विकायशोदेवायुष्काणां स पश्चात् ।
मिथ्यात्वातापानां, नरानुस्थावरचतुष्काणां ॥४००॥

पंचदशकषायभयद्विकहास्यद्विचतुर्जातिपुरुषवेदानां ।
सममेकत्रिंशतां, शेषैकाशीतेः पूर्वं तु ॥४०१॥

टीका – देवगति वा आनुपूर्वी, वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग, ए च्यारि आहारक-शरीर वा अंगोपांग, अयशस्कीर्ति, देवायु, इन आठ-प्रकृतिनि की उदय व्युच्छित्ति के पीछैं बंधव्युच्छित्ति हो है । सोई कहिए हैं—

देव-चतुष्क की उदय-व्युच्छित्ति तो असंयत विषैं भई अर बंध-व्युच्छित्ति अपूर्वकरण का छठा-भाग विषैं भई । आहारकद्विक की उदयव्युच्छित्ति प्रमत्तविषैं भई, बंध-व्युच्छित्ति अपूर्वकरण का छठा भाग विषैं भई । अयशस्कीर्ति की उदय-व्युच्छित्ति असंयत विषैं भई, बंध-व्युच्छित्ति प्रमत्त विषैं भई, देवायु की उदय व्युच्छित्ति असंयत विषैं भई, बंध-व्युच्छित्ति अप्रमत्त विषैं भई ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

असें ही जिनकी युगपत् बंध व्युच्छित्ति, उदय व्युच्छित्ति है वा बंध-व्युच्छित्ति के पीछें उदय व्युच्छित्ति है, तिनका भी कथन गुणस्थाननि विषैं उदय, बंध का कथन पूर्वैं कह्या, तातैं जानि लेना ।

सो मिथ्यात्व, आतप, मनुष्यानुपूर्वी, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्तक, साधारण, संज्वलन-लोभ बिना १५ कषाय, भय, जुगुप्सा, हास्य, रति, एकेंद्रियादि जाति च्यारि, पुरुष वेद, इन इकतीस प्रकृतिनि की उदय-व्युच्छित्ति अर बंध व्युच्छित्ति युगपत् हो हैं ।

इहां महाधवल के अनुसार तैं स्थावर, एकेंद्री, विकलत्रय की व्युच्छित्ति मिथ्यात्व विषैं हो है, तीस अपेक्षा कथन जानना ।

बहुरि अवशेष ज्ञानावरण पांच, दर्शनावरण नव, वेदनीय दोय, संज्वलन लोभ, स्त्री-नपुंसक वेद, अरति,शोक, नरक-तिर्यंच-मनुष्यायु, नरक, तिर्यंच, मनुष्यगति तीन, पंचेंद्री जाति, औदारिक तैजस-कार्मारण शरीर ३, छह संहनन, औदारिक-अंगोपांग, षट् संस्थान, वर्णादिक च्यारि, नरक तिर्यंच-आनुपूर्वी२, अगुरुलघु आदि च्यारि, उच्छ्वास, विहायोगति दोय, त्रस-चतुष्क, स्थिरद्विक, शुभद्विक, सुभगद्विक, सुस्वरद्विक, आदेयद्विक, यशस्कीर्ति, निर्माण, तीर्थंकर, गोत्रद्विक, अंतराय पांच – इन इक्यासी प्रकृतिनि की उदय व्युच्छित्ति पींछें हो है । पहिलै बंध व्युच्छित्ति हो है ।

व्युच्छित्ति नाम अभाव होने का जानना ।।४००–४०१।।

आगे दूजे तीन-प्रश्ननि की प्रकृति कहै हैं—

सुरणिरयाऊ तित्थं, वेगुव्वियछक्कहारमिदि जेसिं ।
परउदयेण य बंधो, मिच्छं सुहुमस्स घादीओ ।।४०२।।

सुरनिरयायुषी तीर्थं, वैर्मूविकषट्काहारमिति यासां ।
परोदयेन च बंधो, मिथ्यं सूक्ष्मस्य घातिन्यः ।।४०२।।

टीका – देव नरक आयु दोय, तीर्थंकर, वैक्रियिक-शरीर वा अंगोपांग, देव-नरक-गति वा आनुपूर्वी ए छह, आहारक शरीर वा अंगोपांग, इन ग्यारह प्रकृतिनि का पर उदय तैं बंध है । इन प्रकृतिनि का उदय होतैं इन प्रकृति का बंध न हो है । बहुरि मिथ्यात्व, सूक्ष्मसांपराय विषैं जिनकी व्युच्छित्ति भई, असे पंच ज्ञानावरण, च्यारि-दर्शनावरण, पांच अंतराय मिलि घातियन की चौदह ।।४०२।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

तेजदुगं वण्णचऊ, थिरसुहजुगलगुरुणिमिणधुवउदया ।
सोदयबंधा सेसा, बासीदा उभयबंधाओ ॥४०३॥

तेजोद्विकं वर्णचत्वारि, स्थिरशुभयुगलागुरुनिर्माणध्रुवोदयाः ।
स्वोदयबंधाः शेषाः, द्वयशीतिरुभयबंधाः ॥४०३॥

टीका – तैजस, कार्माण, वर्णादिक च्यारि, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, अगुरुलघु, निर्माण – ए बारह प्रकृति ध्रुवोदय हैं । इनका निरंतर-उदय पाइए हैं । इनविषैं पूर्वोक्त पंद्रह मिलाएं सताईस प्रकृति भई, ते ए स्वोदय हैं, अपना संबंधी उदय होतैं संतै ही इनका बंध हो है । बहुरि इनका उदय है, सो इनका बंध न होतैं भी हो हैं, जैसैं चौदह प्रकृतिनि का बंध तो दशवां गुणस्थान पर्यंत है, उदय बारह्वां पर्यंत है, ऐसैं अन्य प्रकृतिनि का भी जानना ।

बहुरि अवशेष पंच-निद्रा, दोय वेदनीय, मोहनी-पचीस, तिर्यंच-मनुष्य आयु, तिर्यंच-मनुष्यगति, जाति पांच, औदारिक शरीर वा अंगोपांग, छह संहनन, छह-संस्थान, तिर्यंच-मनुष्य आनुपूर्वी, उपघात, परघात, आतप, उद्योत, उच्छ्वास, विहायोगति द्विक, त्रसद्विक, बादर द्विक, पर्याप्तद्विक, प्रत्येक साधारण, सुभगद्विक, सुस्वरद्विक, आदेयद्विक, यशस्कीर्तिद्विक, गोत्रद्विक, ए बियासी-प्रकृति उभयोदयबंधी हैं । इनका उदय होतैं संतैं भी इनका बंध हो है अर इनका उदय न होतैं भी इनका बंध हो है ॥४०३॥

आगें तीजे तीन प्रश्ननि की प्रकृति च्यारि गाथानि करि कहै हैं—

सत्तेताल धुवावि य, तित्थाहाराउगा णिरंतरगा ।
णिरयदुजाइचउक्कं, संहदिसंठाणपणपणगं ॥४०४॥

दुग्गमणादावदुगं, थावरदसगं असादसंढित्थि ।
अरदीसोगं चेदे, सांतरगा होंति चोत्तीसा ॥४०५॥

सप्तचत्वारिंशत् ध्रुवा अपि च, तीर्थाहारायुष्का निरंतरका ।
निरयद्विजातिचतुष्कं, संहतिसंस्थानपंचपंचकं ॥४०४॥

दुर्गमनातापद्विकं, स्थावरदशकमसातषंढस्त्री ।
अरतिः शोकं चैताः, सांतरका भवंति चतुस्त्रिंशत् ॥४०५॥

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – पांच ज्ञानावरण, नव दर्शनावरण, पांच अंतराय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा, तैजस, कार्माण, अगुरुलघु द्विक, निर्माण, वर्णादिक च्यारि – ए सैंतालिस प्रकृतिनि का अपनी-अपनी व्युच्छित्ति पर्यंत सदा उदय पाइए तातैं – ए ध्रुवोदयी ध्रुवबंधी हैं। अर तीर्थंकर, आहारकद्विक आयु च्यारि ए – सात मिलिकिरि चौवन प्रकृति भई, ते निरंतर-बंधी हैं। तहां सैंतालीस प्रकृतिनि का तो व्युच्छित्ति तैं पहिलैं समय-समय निरंतर बंध सदा पाइए अर तीर्थंकर, आहारक का प्रारम्भ भएं पीछैं जन गुणस्थाननि विषैं इनका बंध पाइए, तहां निरंतर समय-समय बंध पाइए है। बहुरि आयु का जिस काल विषैं आयु बंध होना योग्य है, तहां आयु बंध भए पीछैं तिस काल विषैं समय-समय निरंतर बंधै है, तातैं इननौं निरंतरबंधीं कही हैं।

बहुरि नरक गति वा आनुपूर्वी, एकेंद्रियादिक च्यारि जाति, वज्रवृषभ-नाराच बिना पांच संहनन, समचतुरस्र बिना पांच संस्थान, अप्रशस्त-विहायोगति, आतप, उद्योत, स्थावर-सूक्ष्म-अपर्याप्त-साधारण-अस्थिर-अशुभ-दुर्भग-दुस्वर अनादेय अयशस्कीर्ति – ए स्थावर-दशक, असाता वेदनीय, स्त्री नपुंसक वेद, अरति, शोक – ए चौंतीस प्रकृति सांतरबंधी हैं।

जैसे किसी समय नरक-गति का बंध होई, किसी समय विषैं अन्य गतिनि का बंध होइ। जाति विषैं किसी समय विषैं एकेंद्री जाति का बंध होइ, किसी समय वेंद्रियादिक जाति का बंध होइ इत्यादिक ऐसैं ए प्रकृति सांतरबंधी जाननी ॥४०४–४०५॥

सुरणरतिरियोरालियवेगुव्वियदुगपसत्थगदिवज्जं।
परघाददुसमचउरं, पंचिंदिय तसदसं सादं ॥४०६॥

हस्सरदिपुरिसगोददु, सप्पडिवक्खम्मि सांतरा होंति।
णट्ठे पुण पडिवक्खे, णिरंतरा होंति बत्तीसा ॥४०७॥

सुरनरतिर्यगौरालिकवैगूर्विकद्विकप्रशस्तगतिवज्रं।
परघातद्विसमचतुरस्रं, पंचेंद्रियं त्रसदशं सातं ॥४०६॥

हास्यरतिपुरुषगोत्रद्विकं, सप्रतिपक्षे, सांतरा भवंति।
नष्टे पुनः प्रतिपक्षे, निरंतरा भवंति द्वात्रिंशत् ॥४०६॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – देवगति वा आनुपूर्वी, मनुष्यगति वा आनुपूर्वी, तिर्यंचगति वा आनुपूर्वी, औदारिक शरीर वा अंगोपांग २, वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग २ ,प्रशस्त विहायोगति, वज्रवृषभ नाराच, परघात, उच्छ्वास, समचतुरस्र संस्थान, पंचेंद्री, त्रस-बादर-पर्याप्त-प्रत्येक-स्थिर-शुभ-सुभग-सुस्वर-आदेय-यशस्कीर्ति– ए त्रस दशक, साता-वेदनीय, हास्य, रति, पुरुषवेद, गोत्रद्विक ए बत्तीस प्रकृति सांतर वा निरंतर उभय-बंधी हैं। तहां प्रतिपक्षी होतें संतै सांतरबंधी हैं, प्रतिपक्षी जहां नाहीं तहां निन्तर-बंधी हैं।

जैसें अन्य गति का जहां बंध पाइए, तहां तो देवगति सप्रतिपक्षी है, सो तहां कौई समय देवगति का बंध होइ, कोइ समय अन्य गति का बंध होइ, तातैं सांतरबंधी है। बहुरि जहां अन्य गति का बंध नाहीं केवल देवगति का बंध है, तहाँ देवगति निष्प्रतिपक्षी है, सो तहां समय-समय देवगति ही का बंध पाइए, तातैं निरंतरबंधी है, तातैं देवगति कौं उभयबंघी कहिए।

अैसें सी अन्य- प्रकृतिनि कैं उभयबंध जानना।

अब ए प्रकृति सप्रतिपक्षी कही हैं। निःप्रतिपक्षी कहा है, सो कहिए हैं—

देवगति ना आनुपूर्वी हैं, सो मिथ्यादृष्टि विषैं तो नरक, तिर्यंच, मनुष्य का द्विक करि, सासादन विषैं तिर्यंच, मनुष्य का द्विक करि, मिश्र-असंयत विषैं मनुष्य का द्विककरि सप्रतिपक्ष है। ऊपरि अपूर्वकरण का छठा भाग पर्यंत वा भोगभूमि विषैं केवल देवद्विक ही का बंध है, तातैं तहां निष्प्रतिपक्ष है।

बहुरि मनुष्यद्विक है सो '**सदरसहस्सारगोत्ति तिरियदुगं**' इस वचन तें आनत आदि स्वर्ग वा ग्रैवेयकादि विषैं निष्प्रतिपक्ष है। बहुरि नीच-गोत्र अर तिर्यंचद्विक ये सातवीं नरक-पृथ्वी विषैं वा तेजोकायिक, वातकायिक विषैं निष्प्रतिपक्ष है। बहुरि औदारिकद्विक है, सो नारक देबगति विषैं निष्प्रत्तिपक्ष है। बहुरि उच्चगोत्र अर वैक्रियिकद्विक–ए मनुष्य, तिर्यंच असयतादिक विषैं वा भोगभूमि विषैं निष्प्रतिपक्ष हैं।

बहुरि प्रशस्त-विहायोगति है, सो अप्रशस्त-विहायोगति की सासादन ही में बंधव्युच्छित्ति भई; तातैं मिश्रादिक अपूर्वकरण का छठा-भाग पर्यंत निष्प्रतिपक्ष है। बहुरि बज्रवृषभ-नाराच मिथ्यादृष्टि, सासादन विषैं तो सप्रतिपक्ष है, मिश्र, असंयत विषैं निष्प्रतिपक्ष है। बहुरि परघात, उच्छ्वास ए अपर्याप्त अपेक्षा सप्रतिपक्ष हैं,

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अपर्याप्त प्रकृति की साथि इनका बंध न हो है । अर अपर्याप्त-प्रकृति की मिथ्यादृष्टि विषैं ही व्युच्छित्ति भई; तातैं परघात, उस्वास सासादनादिक अपूर्वकरण का छठा भाग पर्यंत निष्प्रतिपक्ष हैं ।

बहुरि आतप मिथ्यादृष्टि विषैं अपर्याप्त प्रकृति का बंध होतैं सप्रतिपक्षी है, जातैं अपर्याप्त का बंध होतैं याका बंध न हो है, बहुरि बंधै है । पर्याप्त अपेक्षा निष्प्रतिपक्ष है । बहुरि समचतुरस्र-संस्थान मिश्रादिक अपूर्वकरण का छठा भाग पर्यंत निष्प्रतिपक्ष है । पंचेंद्रिय-प्रकृति मिथ्यादृष्टि विषैं सप्रतिपक्ष है । सासादनादिक अपूर्वकरण का छठा भाग पर्यंत निष्प्रतिपक्ष है । बहुरि त्रस बादर, पर्याप्त, प्रत्येक ए च्यारि मिथ्यादृष्टि विषैं स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण का भी बंध है, तातैं तहां सप्रतिपक्ष हैं । ऊपरि अपूर्वकरण का छठा भाग पर्यंत निष्प्रतिपक्ष हैं ।

बहुरि स्थिर, शुभ, यशस्कीर्ति ए तीन प्रमत्त पर्यंत अस्थिर, अशुभ, अयशस्कीर्ति का बंध है, तातैं तहां सप्रतिपक्ष हैं । ऊपरि अपूर्वकरण का छठा भागपर्यंत निष्प्रतिपक्ष हैं, तहां यशस्कीर्ति सूक्ष्मसांपरायपर्यंत निष्प्रतिपक्ष है । बहुरि सुभग, सुस्वर, आदेय है, सो सासादन पर्यंत दुर्भगादिक तीन का बंध है; तातैं तहां सप्रतिपक्ष है । बहुरि मिश्रादिक अपूर्वकरण का छठा भाग पर्यंत निष्प्रतिपक्ष है । बहुरि सातावेदनीय है, सो प्रमत्तपर्यंत असाता का बंध है, तातैं सप्रतिपक्ष है । ऊपरि सयोगी पर्यंत निष्प्रतिपक्ष है ।

बहुरि हास्य-रति ए दोऊ प्रमत्त पर्यंत अरति, शोक का बंध है, तातैं तहां सप्रतिपक्ष हैं । ऊपरि अपूर्वकरण का अंतसमय पर्यंत निष्प्रतिपक्ष हैं । बहुरि पुरुषवेद सासादन पर्यंत सप्रतिपक्ष है, जातैं मिथ्यादृष्टि विषैं नपुंसक, स्त्रीवेद का अर सासाद विषैं स्त्रीवेद का भी बंध है । ऊपरि अनिवृत्तिकरण का सवेदभाग पर्यंत निष्प्रतिपक्ष है । बहुरि उच्चगोत्र सासादनपर्यंत नीचगोत्र का बंध है, तातैं तहां सप्रतिपक्ष है । ऊपरि सूक्ष्मसांपरापराय पर्यंत निष्प्रतिपक्ष है ।

ऐसैं जहां स्वजाति अन्यप्रकिति का भी बंध पाइए, तहां सप्रतिपक्ष कहिए तहां सांतरबंधी है । बहुरि जहां केवल आप ही का बंध पाइए, तहां निष्प्रतिपक्षी कहिए, सो तहां निरंतरबंधी है ।

ऐसैं उभयबंधी प्रकृति जाननी ।।४०६-४०७।।

।। इति नवप्रश्नचूलिका समाप्ता ।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अथ पंचभागहारचूलिका

जत्थ वरणेमिचंदो, महणेण विणा सुणिम्मलो जादो ।
सो अभयणंदिणिम्मलसुओवही हरउ पावमलं ।।४०८।।

यत्र वरनेमिचंद्रो, मथनेन विना सुनिर्मलो जातः ।
स अभयनंदिनिर्मलश्रुतोदधिर्हरतु पापमलं ।।४०८।।

टीका – जिस विषैं उत्कृष्ट नेमिचंद्र, मंथन विना ही निर्मल भया, सो अभयनंदी का निर्मल शास्त्रसमुद्र है, सो जीवनि के पापमल को दूरि करो ।

भावार्थ – लोकोक्ति असी है, जो समुद्र मथिकरि चंद्रमा निकास्या, सो अभयनंदि नामा आचार्य का उपदेश्या शास्त्र-समुद्र विषैं बिना ही मंथन कीए नेमिचंद्र-आचार्यरूपी चंद्रमा निर्मल प्रगट भया । बहुत तिस शास्त्र का अभ्यास न कीया थोरे ही अभ्यास तैं निर्मल भया, असा निर्मलता कौं कारण सो शास्त्र-समुद्र है, सो सब जीवनि के पापमल कौं हरो, असा आशीर्वादात्मक मंगल इहां कीया है ।।४०८।।

उव्वेलणविज्झादो, अधापवत्तो गुणो य सव्वो य ।
संकमदि जेहिं कम्मं, परिणामवसेण जीवाणं ।।४०९।।

उद्वेल्लनविध्यातः, अधःप्रवृतः गुणश्च सर्वश्च ।
संक्रामति यैः कर्म, परिणामवशेन जीवानां ।।४०९।।

टीका – जिन भागहारनि करि शुभकर्म वा अशुभकर्म संसारी-जीवनि कैं अपने परिणामनि के वश तैं संक्रमण करैं अन्य प्रकृतिरूप होइकरि परिणमैं ते भागहार पंच प्रकार हैं – उद्वेलन, विध्यात, अधःप्रवृत्त, गुणसंक्रम, सर्वसंक्रम – ए पंच भागहारनि के नाम है ।

भावार्थ – जो उद्वेलन-प्रकृति है, ताके जितने परमाणु हैं, तिनकों उद्वेलन नामा भागहार का जो प्रमाण, ताका भाग दीए जो प्रमाण आवै, तितनी परमाणू जहां अन्य प्रकृतिरूप होइ परिणमै, तहां उद्वेलन जानना । असैं ही अन्य भागहारनि का स्वरूप जानना । इनका प्रमाण आगैं कहैंगे ।।४०९।।

संक्रमण का स्वरूप कहैं हैं—

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बंधे संकामिज्जदि, णोबंधे णत्थि मूलपयडीणं ।
दंसणचरित्तमोहे, आउचउक्के ण संकमणं ॥४१०॥

बंधे संक्रामति, नोबंधे नास्ति मूलप्रकृतीनां ।
दर्शनचारित्रमोहे, आयुश्चतुष्के न संक्रमणं ॥४१०॥

टीका – बंधे कहिए जिस प्रकृति का बंध होंइ तिस प्रकृति विषैं संक्रमण होइ अन्य प्रकृति तद्रूप होइ परिणमै है, यहु सामान्य कथन है, जातैं कही जाका बंध नाहीं, तिसविषैं भी संक्रमण हो है । बहुरि **'नो बंधे'** कहिए जाका बंध नाहीं, तिहिविषैं नाहीं संक्रमण करै है । असा वचन कहने का अभिप्राय यहु है–जो दर्शन-मोहनी बिना अवशेष प्रकृति जाका बंध होइ, तिहिविषैं संक्रमण हो है, असा नियम जानना ।

बहुरि मूलप्रकृति के परस्पर संक्रमण नाहीं है । ज्ञानावरण, दर्शनावरणादिक रूप न हो है, इत्यादिक जानना ।

बहुरि उत्तर प्रकृति विषैं संक्रमण है । ज्ञानावरण की पंच प्रकृतिनि विषैं परस्पर संक्रमण पाइए । असैं सबनि विषैं जानना ।

तहां भी दर्शनमोह अर चारित्र मोह विषैं परस्पर संक्रमण नाहीं है । दर्शन-मोह की प्रकृति चारित्रमोह की प्रकृति रूप होइ परिणमैं नाहीं, चारित्रमोह की प्रकृति दर्शनमोह की प्रकृति रूप होइ परिणमैं नाहीं ।

बहुरि च्यारि आयु तिनकैं परस्पर संक्रमण नाहीं देवायु, मनुष्यायु आदि रूप होंइ न परिणमें इत्यादि ।

असैं संक्रमण का स्वरूप जानना ॥४१०॥

सम्मं मिच्छं मिस्सं, सगुणट्ठाणम्मि णेव संकमदि ।
सासणमिस्से णियमा, दंसणतियसंकमो णत्थि ॥४११॥

सम्यं मिथ्यं मिश्र, स्वगुणस्थाने नैव संक्रामति ।
सासनमिश्रे नियमाद्दर्शदत्रिकसंक्रमो नास्ति ॥४११॥

टीका – सम्यक्त्व मोहनी, मिथ्यात्व-मोहनी, मिश्रमोहनी अपना-अपना असंयतादिक वा मिथ्यादृष्टि वा मिश्र गुणस्थान विषैं संक्रमण नाहीं करैं हैं ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि सासादन अर मिश्र विषैं नियम करि तीनों ही दर्शन-मोह का संक्रमण नाहीं, असंयतादिक च्यारि गुणस्थान विषैं संक्रमण है ॥४११॥

मिच्छे सम्मिस्साणं, अधापवत्तो मुहुत्तअंतोत्ति ।
उव्वेलणं तु तत्तो, दुचरिमकंडोत्ति णियमेण ॥४१२॥

मिथ्ये सम्यग्मिश्रयोरधःप्रवृतो मुहूर्तांतरिति ।
उद्वेलनं तु ततो, द्विचरमकांड इति नियमेन ॥४१२॥

टीका – मिथ्यात्व कौं प्राप्त होतैं संतैं सम्यक्त्वमोहनी अर मिश्रमोहनी इनकैं अधःप्रवृत्त नामा संक्रमण अंतर्मुहूर्त पर्यंत प्रवर्तै है । बहुरि उद्वेलना, भागहार नामा संक्रमण उपांत कांडक पर्यंत वर्तै है नियम करि । तहां अधःप्रवृत्त संक्रमण फालिरूप करि वर्तै है । उद्वेलना-संक्रमण-कांडकरुप करि वर्तै है । एक समय विषैं संक्रमण होइ सो फालि कहिए । बहुत समय समुदाय विषैं संक्रमण होइ सो कांडक कहिए ।

इनका विशेष वर्णन आगैं इस भाषा विषैं लब्धिसार, क्षपणासार अनुसारि कथन लिखेंगे तहां जानना ॥४१२॥

उव्वेलणपयडीणं, गुणं तु चरिमम्हि कंडये णियमा ।
चरिमे फालिम्मि पुणो, सव्वं च य होदि संक्रमणं ॥४१३॥

उद्वेलनप्रकृतीनां गुणं तु चरमे कांडके नियमात् ।
चरमे फालौ पुनः, सर्वं च भवति संक्रमणं ॥४१३॥

टीका – जे उद्वेलनप्रकृति हैं तिनके द्विचरम-कांडक पर्यंत तौ उद्वेलन-संक्रमण है । बहुरि अंत का कांडक विषैं नियमकरि गुण-संक्रमण है । बहुरि अंत फालि विषैं सर्व-संक्रमण है; तातैं सम्यक्त्व-मोहनी अर मिश्रमोहनी भी उद्वेलन-प्रकृति है, सो इनके भी चरम-कांडक विषैं गुणसंक्रमण अर चरम फालि विषैं सर्व-संक्रमण सिद्ध भया । इहां पंच प्रकार संक्रमण का स्वरूप कहिए हैं—

जो अधःप्रवृत्त आदि तीन करण रूप परिणाम बिना ही कर्म-प्रकृति के परमाणूनि का अन्य-प्रकृति रूप परिणमना सो उद्वेलन-संक्रमण है ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

बहुरि '**विध्यातविशुद्धकस्से** कहिए मंद है विशुद्धता जाकैं अैसा जो जीव, ताकैं स्थिति-अनुभाग के घटावने रूप कांडक वा गुणश्रेणि आदि परिणाम, तिनकौ होइ गए संतैं जो प्रवर्तै सो विध्यात-संक्रमण है ।

बहुरि बंधरूप भई जे प्रकृति तिनका अपने बंध विषैं संभवती-प्रकृतिनि विषैं परमाणूनि का जो संक्रमण होना सो अधःप्रवृत्त-संक्रमण है ।

बहुरि समय-समय प्रति जहां श्रेणी जो पंक्ति, तींहि रूप असंख्यात-असंख्यात गुणे परमाणू अन्य प्रकृतिरूप होइ परिणमैं सो गुणसंक्रमण है ।

बहुरि अंत का कांडक का जो अंत का फालि सर्व प्रदेशनि विषैं जो पीछैं ही पीछैं अन्य प्रकृति रूप न भया-अैसा परमाणू तिसका जो अन्य-प्रकृति रूप होना सो सर्वसंक्रमण है ।

अैसैं पंच-संक्रमण जानने ।।४१३।।

आगैं सर्व-संक्रमण प्रकृतिनि विषैं तिर्यक् एकादश है, ताकौं कहै हैं—

तिरियदुजाइचउक्कं, आदावुज्जोवथावरं सुहुमं ।
साहारणं च एदे, तिरियेयारं मुणेदव्वा ।।४१४।।

तिर्यग्द्विजातिचतुष्कमातापोद्योतस्थावरं सूक्ष्मं ।
साधारणं चैताः तिर्यगेकादश मंतव्याः ।।४१४।।

टीका – तिर्यंचगति वा आनुपूर्वी, एकेंद्रियादिक जाति च्यारि, आतप, उद्योत, स्थावर, सूक्ष्म साधारण इन ग्यारह प्रकृतिनि का तिर्यंच ही विषैं उदय है । तातैं इनका तिर्यगेकादश नाम जानना ।।४१४।।

आगै उद्वेलना-प्रकृति कहै हैं—

आहारदुगं सम्मं, मिस्सं देवदुगणारयचउक्कं ।
उच्चं मणुदुगमेदे, तेरस उव्वेलणा पयडी ।।४१५।।

आहारद्विकं सम्यं, मिश्रं देवद्विकनारक चतुष्कं ।
उच्चं मनुद्विकमेताः, त्रयोदश उद्वेल्लनाप्रकृतयः ।।४१५।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – आहारक-द्विक, सम्यक्त्वमोहनी, मिश्रमोहनी, देवद्विक, नरकगति वा आनुपूर्वी वैक्रियिकशरीर वा अंगोपांग – ए च्यारि, उच्चगोत्र, मनुष्यद्विक – ए तेरह उद्वेलना-प्रकृति हैं ।।४१५।।

बंधे अधापवत्तो, विज्झादं सत्तमोत्ति हु अबंधे ।
एत्तो गुणो अबंधे, पयडीणं अप्पसत्थाणं ।।४१६।।

बंधे अधः प्रवृत्तो; विध्यातः सप्तम इति हि अबंधे ।
इतो गुणः अबंधे, प्रकृतीनामप्रशस्तानां ।।४१६।।

टीका – प्रकृतिनि के बंध कौं होतैं संतैं अपनी-अपनी बंधव्युच्छिति पर्यंत अधःप्रवृत्त संक्रमण है । तहां मिथ्यात्व का नाहीं है; जातैं **'सम्मं मिच्छं मिस्सं'** इत्यादि गाथा विषैं मिथ्यात्व का संक्रमण मिथ्यादृष्टि-गुणस्थान विषैं निषेध कीया है अर मिथ्यात्व का बंध मिथ्यादृष्टि विषैं ही है, तातैं मिथ्यात्व को नाहीं कह्या । बहुरि बंध की व्युच्छित्ति कौं होत संतै असंयतादिक अप्रमत्त पर्यंत विध्यात नामा संक्रमण है । बहुरि यातैं अप्रमत्त-गुणस्थान के ऊपरि उपशांत-कषाय पर्यंत बंध रहित जे अप्रशस्त-प्रकृति तिनकैं गुणसंक्रमण है; तातैं अन्यत्र भी प्रथमोपशम-सम्यक्त्व के ग्रहण का प्रथम-समय तें लगाय अंतर्मुहूर्त पर्यंत गुण-संक्रमण है । बहुरि मिश्रमोहनी, सम्यक्त्व-मोहनी का पूरण-काल विषैं मिथ्यात्व कौं क्षय करने विषैं अपूर्वकरण परिणाम है; तातैं मिथ्यात्व का अंत का कांडक का द्विचरम फालि पर्यंत गुणसंक्रमण है । चरम-फालि विषैं सर्वसंक्रमण है ।।४१६।।

तिन सर्वसंक्रमण रूप प्रकृतिनि कौं कहैं हैं—

तिरियेयारुव्वेल्लणपयडी संजलणलोहसम्ममिस्सूणा ।
मोहा थीणतिगं च य बावण्णे सव्वसंकमणं ।।४१७।।

तिर्यगेकादशोद्वेल्लन प्रकृतयः संज्वलनलोभसम्यग्मिश्रोनाः ।
मोहाः स्त्यानत्रिकं च, द्वापंचाशत् सर्वसंक्रमणं ।।४१७।।

टीका – पूर्वोक्त तिर्यगेकादश की ग्यारह, उद्वेलना-प्रकृति तेरह, संज्वलन लोभ-सम्यक्त्व-मिश्र इन तीन बिना मोहनीय की पचीस, स्त्यानगृद्ध्यादिक तीन ए बावन प्रकृतिनि विषैं सर्व-संक्रमण हो है ।।४१७।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

आगें प्रकृतिनि के संक्रमण का नियम कहै हैं—

उगुदालतीससत्तयवीसे एक्केक्कबारतिचउक्के ।
इगिचदुदुगतिगतिगचदु,पणदुगदुगतिण्णि संकमणा ॥४१८॥

एकोनचत्वारिंशत्त्रिंशत्सप्तकविंशे एकैकद्वादशत्रिचतुष्के ।
एकचतुर्द्विकत्रिकत्रिक, चतुः पंचद्विकत्रयःसंक्रमणाः ॥४१८॥

टीका – गुणतालीस प्रकृतिनि विषैं, तीस विषैं, सात बिषैं, वीस विषैं, एक विषैं, बारह विषैं, च्यारि विषैं, च्यारि विषैं, च्यारि विषैं अनुक्रमतैं एक, च्यारि दोय, तीन, तीन, च्यारि, पांच, दोय, तीन संक्रमण पाइए है ॥४१८॥

आगें तिन प्रकृतिनि कौं क्रमतैं सात गाथानि करि कहैं हैं—

सुहुमस्स बंधघादी, सादं संजलणलोह पंचिंदी ।
तेजदुसमवण्णचऊ, अगुरुगपरघादउस्सासं ॥४१९॥

सत्थगदी तसदसयं, णिमिणुगुदाले अधापवत्तो दु ।
थीणतिबारकसाया, संढित्थी अरइ सोगो य ॥४२०॥

सूक्ष्मस्य बंधघातिन्यः, सातं संज्वलनलोभ पंचेंद्रियं ।
तेजोद्विसमवर्णचतुर, गुरुकपरघातोच्छ्वासं ॥४१९॥

शस्तगतिः त्रसदशकं, निर्माणमेकोनचत्वारिंशत्सु अध प्रवृत्तस्तु ।
स्त्यानत्रिद्वादशकषायाः, षंढस्त्री अरतिः शोकश्च ॥४२०॥

टीका – पांच ज्ञानावरण, च्यारि दर्शनावरण, पंच अंतराय, सातावेदनीय, संज्वलन-लोभ, पंचेंद्री, तैजस, कार्माण, समचतुरस्र, वर्णादिक च्यारि, अगुरुलघु, परघात, उस्वास, प्रशस्त-विहायोगति, त्रसबादर-पर्याप्त-प्रत्येक-स्थिर-शुभ-सुभग-सुस्वर-आदेय-यशस्कीर्ति ए दश, निर्माण ए गुणतालीस प्रकृति उद्वेलन रहित हैं, तातैं इन विषैं उद्वेलन-संक्रमण नाहीं । बहुरि **'विज्झादं सत्तमोत्ति हु अबंधे'** इस अनुसार तैं अप्रमत्तगुणस्थान के नीचैं इनकी बंध-व्युच्छिति नाहीं; तातैं विध्यात-संक्रमण भी इन विषैं नाहीं ।

बहुरि **'एत्तो गुणे अबंधे'** इस अनुसार तैं गुण संक्रमण भी नाहीं । बहुरि बावन-प्रकृति सर्व-संक्रमणरूप कहीं; तिनविषैं ये प्रकृति न कहीं; तातैं इन विषैं

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सर्वसंक्रमण भी नाहीं, तौ इन गुणतालीस प्रकृतिनि विषैं एक अधः प्रवृत्त नामा संक्रमण ही संभवै है ।

ऐसैं ही अन्य प्रकृतिनि विषैं संक्रमण कहिए हैं, तहां भी विचार करि लेना ।

मिथ्यात्व कैं मिथ्यादृष्टि-गुणस्थान विषैं अधःप्रवृत्त-संक्रमण क्यों न कहो ?

ताकां उत्तर– '**सम्मं मिच्छं मिस्सं सगुणट्ठाणम्मि णेव संकमदि**' इस गाथा करि पहिली ही कह्या था, सो जानना ।

बहुरि स्त्यानगृद्धयादिक तीन, बारह कषाय, नपुंसक-स्त्री-वेद, अरति, शोक और ।।४१९—४२०।।

आगैं कहै हैं—

तिरियेयारं तीसे, उव्वेलणहीणचारि संकमणा ।
णिद्दा पयला असुहं, वण्णचउक्कं च उवघादे ।।४२१।।

सत्तण्हं गुणसंकममधापवत्तो य दुक्खमसुहगदी ।
संहदिसंठाणदसं, णीचापुण्णथिरछक्कं चं ।।४२२।।

तिर्यगेकादश त्रिशत्सु, उद्वेल्लनहीनचत्वारः संक्रमणाः ।
निद्रा प्रचला अशुभं, वर्णचतुष्कं च उपघातं ।।४२१।।

सप्तानां गुणसंक्रमोऽधः प्रवृत्तश्च दुःखमशुभगतिः ।
संहतिसंस्थान दशं, नीचा पूर्णमस्थिषट्कं च ।।४२२।।

टीका – तिर्यगेकादश की ग्यारह, इन तीस प्रकृतिनि विषैं उद्वेलना बिना च्यारि संक्रमण पाइए है । बहुरि निद्रा, प्रचला, अशुभ वर्णादिक च्यारि, उपाघात, इन सप्तनि विषैं गुण-संक्रमण अर अधःप्रवृत्त संक्रमण – ए दोय पाइए हैं । बहुरि असाता-वेदनीय, अप्रशस्त-विहायोगति, पहिला बिना पांच-संहनन, पांच संस्थान, नीचगोत्र, अपर्याप्त, अस्थिर-अशुभ-दुर्भग-दुःस्वर-अनादेय-यशस्कीर्ति – ए छह ऐसैं बीस भईं ।।

वीसण्हं विज्झादं, अधापवत्तो गुणो य मिच्छत्ते ।
विज्झादगुणे सव्वं, सम्मे विज्झादपरिहीणा ।।४२३।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

विंशानां विध्यातोऽधःप्रवृत्तो गुणश्च मिथ्यात्वे ।
विध्यातगुणौ सर्वः, सम्यक्त्वे विध्यातपरिहीनाः ।।४२३।।

टीका – तिन बीसनि विषैं विध्यात, अधःप्रवृत्त, गुणसंक्रमण – ए तीन पाइए हैं। बहुरि मिथ्यात्व विषैं विध्यात-संक्रमण, गुण संक्रमण, सर्व-संक्रमण ये तीन पाइये हैं। बहुरि सम्यक्त्व-मोहनीय विषैं विध्यात बिना च्यारि संक्रमण पाइए हैं ।।४२३।।

सम्मविहीणुव्वेल्ले, पंचेव य तत्थ होंति संकमणा ।
संजलणतिये पुरिसे, अधापवत्तो य सव्वो य ।।४२४।।

सम्यग्विहीनोद्वेल्ये, पंचैव च तत्र भवंति संक्रमणाः ।
संज्वलनत्रये पुरुषे, अधःप्रवृत्तश्च सर्वश्च ।।४२४ ।।

टीका – सम्यक्त्व-मोहनी बिना उद्वेलना-प्रकृति बारह, तिन विषैं पांचौं संक्रमण पाइए हैं। बहुरि संज्वलन क्रोध-मान-माया, पुरुष वेद इन च्यारिनि विषैं अधःप्रवृत्त, सर्व संक्रमण – ए दोय पाइए हैं। इन प्रकृतिनि कैं बंध-व्युच्छित्ति होतैं भी गुणसंक्रमण की प्राप्ति नाहीं है ।।४२४।।

ओरालदुगे वज्जे, तित्थे विज्झादधापवत्तो य ।
हस्सरदिभयजुगुच्छे, अधापवत्तो गुणो सव्वो ।।४२५।।

औरालद्विके वज्रे, तीर्थे विध्यातोऽधः प्रवृत्तश्च ।
हास्यरतिभयजुगुप्सायामधः प्रवृत्तो गुणः सर्वः ।।४२५।।

टीका – औदारिक शरीर वा अंगोपांग, वज्रवृषभनाराच, तीर्थंकर – इनविषैं विध्यात-संक्रमण, अधःप्रवृत्त-संक्रमण – ए दोय पाइए हैं। ए प्रशस्त-प्रकृति हैं; तातैं इन विषैं गुण-संक्रमण नाहीं है। इहां तीर्थंकर विषैं विध्यात-संक्रमण कह्या है, सो नरक जाने कौं सन्मुख भया मनुष्य वा मरिकरि भया नारकी अपर्याप्त तिस मिथ्यादृष्टि जीव कैं जानना। बहुरि हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, इन च्यारि विषैं अधःप्रवृत संक्रमण, गुण-संक्रमण, सर्व संक्रमण – ए तीन पाइए हैं।

ऐसैं प्रकृतिनि विषैं संक्रमण कह्या ।।४२५।।

सम्मत्तूणुव्वेलणथीणतितीसं च दुक्खवीसं च ।
वज्जोरालदुतित्थं, मिच्छं विज्झादसत्तट्ठी ।।४२६।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

सम्यक्त्वोनोद्वेल्लनस्त्यानत्रिंत्रिंशच्च दुःखविंशश्च ।
वज्रोरालद्वितीर्थं, मिथ्यं विध्यातसप्तषष्टिः ।।४२६।।

टीका – सम्यक्त्व-मोहनी बिना बारह उद्वेलना-प्रकृति, स्त्यानगृद्धि त्रयादिक तीस, असातावेदनीय आदि बीस, वज्रवृषभनाराच, औदारिक द्विक, तीर्थंकर, मिथ्यात्व – ए सतसठि प्रकृति विध्यात-संक्रमण संयुक्त जाननी ।।४२६।।

मिच्छूणिगिवीससयं, अधापवत्तस्स होंति पयडीओ ।
सुहुमस्स बंधघादिप्पहुदी उगुदालुरालदुगतित्थं ।।४२७।।

मिथ्योनैकविंशशतमधःप्रवृत्तस्य भवंति प्रकृतयः ।
सूक्ष्मस्य बंधघातिप्रभृतयः एकोनचत्वारिंशदौरालद्विकतीर्थं ।।४२७।।

टीका - मिथ्यात्व बिना एक सौ इकईस प्रकृति अधःप्रवृत्त-संक्रमण संयुक्त जाननी । बहुरि सूक्ष्मसांपराय विषैं जिनिका बंध असो घातियानि की चौदह-प्रकृति आदि दे करि गुणतालीस (३९), औदारिक द्विक, तीर्थंकर ।।४२७।।

वज्जं पुंसंजलणति,ऊणा गुणसंकमस्स पयडीओ ।
पणहत्तरिसंखाओ, पयडीणियमं विजाणाहि ।।४२८।।

वज्रं पुंसंज्वलनत्रिकमूना गुणसंक्रमस्य प्रकृतयः ।
पंचसप्ततिसंख्याः, प्रकृतिनियमं विजानीहि ।।४२८।।

टीका – वज्रवृषभ-नाराच, पुरुष-वेद, संज्वलन क्रोध-मान-माया – इन सैंतालीस-प्रकृति बिना एकसौ बाईस प्रकृति मेंस्यों पिचहत्तरि प्रकृति गुण-संक्रमण संयुक्त जाननी । असैं प्रकृतिनि विषैं नियम जानना ।।४२८।।

आगैं स्थिति-अनुभाग बंध कैं अर प्रदेश-बंध का संक्रमण कैं गुणस्थाननि की संख्या कहै हैं—

ठिदिअणुभागाणं पुण, बंधो सुहुमोत्ति होदि णियमेण ।
बंधपदेसाणं पुण, संकमणं सुहुमरागोत्ति ।।४२९।।

स्थित्यनुभागयोः पुनः, बंधः सूक्ष्म इति भवति नियमेन ।
बंधप्रदेशानां पुनः, संक्रमणं सूक्ष्मराग इति ।।४२९।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – स्थिति-अनुभागनि का बंध सूक्ष्मसांपराय पर्यंत ही है, जातैं स्थिति-अनुभाग कौं कारण कषाय ही है। बहुरि सूक्ष्म-सांपराय के ऊपरि साता वेदनीय का बंध भी है, सो प्रकृतिबंध, प्रदेशबंध मात्र ही है। बहुरि बंध रूप भए जे परमाणू, तिनका संक्रमण भी सूक्ष्मसांपराय पर्यंत ही है। '**बंधे अधापवत्तो**' इस सूत्र के अभिप्राय तैं स्थितिबंध पर्यंत ही संक्रमण संभवै है ॥४२६॥

आगें पंचभागहारनि का अल्पबहुत्व छह गाथानि करि कहैं हैं–

सव्वस्सेक्कं रूवं, असंखभागो दु पल्लछेदाणं।
गुणसंकमो दु हारो, ओकट्टुक्कट्टणं तत्तो ॥४३०॥

हारं अधापवत्तं, तत्तो जोगम्हि जो दु गुणगारो।
णाणागुणहाणिसला, असंखगुणिदक्कमा होंति ॥४३१॥

तत्तो पल्लसलायच्छेदहिया पल्लछेदणा होंति।
पल्लस्स पढममूलं, गुणहाणीवि य असंखगुणिदकमा ॥४३२॥

अण्णोण्णब्भत्थं पुण, पल्लमसंखेज्जरूवगुणिदकमा।
संखेज्जरूवगुणिदं, कम्मुक्कस्सट्ठिदी होदि ॥४३३॥

अंगुलअसंखभागं, विज्झादुव्वेल्लणं असंखगुणं।
अणुभागस्स य णाणागुणहाणिसला अणंताओ ॥४३४॥

गुणहाणिअणंतगुणं, तस्स दिवड्ढं णिसेयहारो य।
अहियकमाणण्णोण्णब्भत्थो रासी अणंतगुणो ॥४३५॥

सर्वस्यैकं रूपमसंख्यभागस्तु पल्यच्छेदानां।
गुणसंक्रमस्तु हारः, अपकर्षणोत्कर्षणं ततः ॥४३०॥

हारोऽधःप्रवृत्तस्ततो योगे यस्तु गुणकारः।
नानागुणहानिशला, असंख्यगुणितक्रमा भवंति ॥४३१॥

ततः पल्यशलाकच्छेदाधिकाः पल्यच्छेदना भवंति।
पल्यस्य प्रथममूलं, गुणहानिरपि चासंख्यगुणितक्रमा ॥४३२॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अन्योन्याभ्यस्तं पुनः, पल्यमसंख्येयरूपगुणितक्रमं ।
संख्येयरूपगुणिता, कर्मोत्कृष्टस्थितिर्भवति ।।४३३।।

अंगुलासंख्यभागं, विध्यातोद्वेल्लनमसंख्यगुणं ।
अनुभागस्य च नानागुणहानिशला अनंताः ।।४३४।।

गुणहान्यनंतगुणा, तस्या द्व्यर्धं निषेकहारश्च ।
अधिकक्रमाणामन्योन्याभ्यस्तो राशिरनंतगुणः ।।४३५।।

टीका – सर्व-संक्रमण नामा भागहार सर्व तैं स्तोक है, तिसका प्रमाण एक रूप है । अंत फालि विषैं जेति परमाणू अवशेष रही थीं, ताकौं इस भागहार का प्रमाण एक, ताका भाग दीएं सर्व परमाणू जहां ही आए ते अन्य प्रकृतिरूप परिणमै, तहां सर्वसंक्रमण जानना । बहुरि यातैं असंख्यात गुणा असा पल्य का अर्धच्छेदनि कैं असंख्यातवें भाग प्रमाण गुण-संक्रमण नामा भागहार है । सो गुणसंक्रमण रूप जे प्रकृति ताके जे परमाणु, तिनकौं इस भागहार का प्रमाण का भाग दीएं जो परिमाण आवै, तितनी परमाणू यथायोग्य काल विषैं समय-समय प्रति असंख्यात गुणी होंइ अन्य प्रकृतिरूप परिणमै, तहां गुणसंक्रमण कहिए । बहुरि यातैं उत्कर्षण-भागहार वा अपकर्षण-भागहार असंख्यात गुणे हैं, तथापि ए दोन्यों जुदे-जुदे पल्य के अर्धच्छेदनि के असंख्यातवें भाग प्रमाण है । सो इन पंच-भागहारनि विषैं इनका कथन नाहीं, तथापि जहां उत्कर्षण-भागहार का वा अपकर्षण-भागहार का कथन आवै, तहां असा प्रमाण जानना ।

बहुरि यातैं अधःप्रवृत्तसंक्रमण भागहार असंख्यात गुणा है, तथापि सो भी पल्य के अर्धच्छेदनि के असंख्यातवें भाग प्रमाण है, सो जो अधःप्रवृत्तसंक्रमण रूप प्रकृति है, ताके परमाणूनि कौं याका भाग दीएं जो प्रमाण आवै, तितनी परमाणू अन्य प्रकृति रूप होइ जहां परिणमैं, तहां अधःप्रवृत्त-संक्रमण कहिए । बहुरि यातैं योगनि का कथन विषैं जो गुणाकार कह्या है सो असंख्यात गुणा है, तथापि सो भी पल्य के अर्धच्छेदनि के असंख्यातवें भाग ही है । जघन्य-योगस्थान कौं याकरि गुणैं उत्कृष्ट-योगस्थान हो है ।

बहुरि यातैं कर्म की जो स्थिति, ताकी नानागुणहानि शलाका का प्रमाण सो असंख्यात गुणा है, सो पल्य की वर्ग शलाका का अर्धच्छेद पल्य का अर्धच्छेदनि में घटाएं जो परिमाण रहै, तितना है, बहुरि यातैं पल्य का अर्धच्छेदनि का प्रमाण

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अधिक है, सो पल्य की वर्ग शलाका का जितने अर्धच्छेद, तितना अधिक है । बहुरि यातैं पल्य का प्रथम वर्गमूल असंख्यात गुणा है, जातैं द्विरूप वर्गधारा विषैं पल्य के अर्धच्छेद रूप स्थान तैं असंख्यात-स्थान गएं पल्य का प्रथम मूल हो है ।

बहुरि यातैं कर्म की स्थिति की जो एक गुणहानि, ताके समयनि का प्रमाण असंख्यात गुणा है, जातैं सातसैं कौं च्यारि बार कोडि करि गुणैं जो प्रमाण होई, ताकरि गुण्या असा पल्य ताकौं स्थिति की नानागुणहानि का प्रमाण का भाग दीएं यहु प्रमाण आवै है । बहुरि यातैं कर्म की स्थिति की अन्योन्याभ्यस्त-राशि का प्रमाण असंख्यात गुणा है, जातैं नाना-गुणहानि का प्रमाण दोय का अंक मांडि परस्पर गुणैं अन्योन्याभ्यस्त-राशि का प्रमाण हो है ।

बहुरि यातैं पल्य का प्रमाण असंख्यात गुणा है, जातैं तिस अन्योन्याभ्यस्त-राशि के प्रमाण कौं पल्य की वर्गशलाका तैं गुणे पल्य हो है । बहुरि यातैं कर्म की उत्कृष्ट-स्थिति का प्रमाण संख्यात गुणा है, जातैं एक सागर के दश-कोडाकोडी पल्य हैं, तौ सत्तरि कोडाकोडी सागरनि की च्यारि बार कोडि करि सातसै कौं गुणिए इतनी पल्य भई ।

बहुरि यातैं विध्यात संक्रम नामा भागहार असंख्यात गुणा है सो सूच्यंगुल के असंख्यातवें भाग प्रमाण है, सो विध्यात संक्रम रूप प्रकृतिनि के परमाणूनि कौं याका भाग दीएं जो परिमाण होइ, तितनी परमाणू अन्य प्रकृतिरूप होइ जहां परिणमै, तहां विध्यात-संक्रम जानना ।

बहुरि यातैं उद्वेलन-भागहार असंख्यात गुणा है, सो भी सूच्यंगुल के असंख्यातवैं भाग प्रमाण है । सो उद्वेलन प्रकृतिनि के परमाणूनि कौं याका भाग दीएं जो परिमाण आवै, तितनी परमाणू जहां अन्य प्रकृति रूप होइ परिणमै, तहां उद्वेलन-संक्रम जानना ।

बहुरि यातैं कर्मनि का अनुभाग का कथन विषैं नानागुणहानि शलाका अनंत प्रविष्ट है । बहुरि यातैं तिस अनुभाग की एक गुणहानि का आयाम का प्रमाण अनंत गुणा है । बहुरि यातैं तिसही की द्व्यर्धगुणहानि का प्रमाण तिसका आधा प्रमाण करि अधिक है । बहुरि यातैं तिसही की दोगुणहानि का प्रमाण आधा गुणहानिका आयाम का प्रमाण करि अधिक है । बहुरि यातै तिस अनुभाग की अन्योन्याभ्यस्त-राशि का प्रमाण अनंत गुणा जानना ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अैसें पंचभागहारनि का अल्पबहुत्व का प्रसंग पाइ अन्य का भी अल्प-बहुत्व निरूपण किया ।।४३०—४३५।।

इति पंचभागहार चूलिका समाप्ता ।

अथ दशकरण चूलिका चौदह गाथानि करि कहने कौं उद्यम करें हैं । तहां प्रथम ही अपने श्रुत-गुरु कौं नस्कार करै हैं--

जस्स य पायपसायेणणंतसंसारजलहिमुत्तिण्णो ।
वीरिंदणंदिवच्छो, णमामि तं अभयणंदिगुरुं ।।४३६।।

यस्य च पादप्रसादेनानंतसंसारजलधिमुत्तीर्णः ।
वरेंद्रनंदिवत्सो, नमामि तमभयनंदिगुरुं ।।४३६।।

टीका – जिस शास्त्र-शिक्षादायक गुरु के चरणनि के प्रसाद करि वीरेंद्रनंदि नामा आचार्य का वत्स-शिष्य जो मैं (ग्रंथकर्ता) सो संसार समुद्र कौं पार भया, तिस 'अभयनंदि' नामा श्रुतगुरु कौं मैं नमस्कार करौं हौं ।।४३६।।

बंधुक्कट्टणकरणं, संकममोकट्टुदीरणा सत्तं ।।
उदयुवसामणिधत्ती, णिकाचणा होदि पडिपयडी ।।४३७।।

बंधोत्कर्षणकरणं, संक्रममपकर्षणोदीरणा सत्त्वं ।
उदयोपशांतनिधत्ति, निष्काचना भवति प्रतिप्रकृति ।।४३७।।

टीका – १ बंध, २ उत्कर्षण, ३ संक्रम, ४ अपकर्षण, ५ उदीरणा, ६ सत्त्व, ७ उदय, ८ उपशम, ९ निधत्ति, १० निःकाचना- ए दश करण प्रकृति-प्रकृति प्रति संभवै हैं ।।४३७।।

कम्माणं संबंधो, बंधो उक्कट्टणं हवे वड्ढी ।
संकमणमणत्थगदी, हाणी ओकट्टणं णाम ।।४३८।।

कर्मणां संबंधो, बंध उत्कर्षणं भवेद्वृद्धि ।
संक्रमणमन्यत्रगतिर्हानिरपकर्षणं नाम ।।४३८।।

टीका – मिथ्यात्वादिक परिणामनि करि जो पुद्गल-द्रव्य ज्ञानावरणादिक रूप होइ परिणमैं, सो ज्ञानादि कौं आवरै अैसा इत्यादिक संबंध का होना सो बंध

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

कहिए। बहुरि जो स्थिति-अनुभाग पूर्वै था, तिसतैं स्थिति-अनुभाग की वृद्धि जो अधिकता, ताका होना सो उत्कर्षण कहिए। बहुरि जो प्रकृति पूर्वै बंधने में आई थी, सो प्रकृति अन्य प्रकृतिरूप होइ परिणमै-तिस प्रकृति के परमाणू अन्य प्रकृतिरूप होइ सो संक्रमण कहिए। बहुरि जो स्थिति अनुभाग पूर्वै था, तिसतैं स्थिति-अनुभाग की हानि जो घटावना सो अपकर्षण कहिए ।।४३८।।

अण्णत्थठियस्सुदये, संथुहणमुदीरणा हु अत्थित्तं ।
सत्तं सकालपत्तं, उदओ होदित्ति णिद्दिट्ठो ।।४३९।।

अन्यत्र स्थितस्योदये, संस्थापनमुदीरणा हि अस्तित्वं ।
सत्त्वं स्वकालप्राप्तमुदयो भवतीति निर्दिष्टः ।।४३९।।

टीका – उदयावली के बाह्य तिष्ठता जो द्रव्य ताकौं अपकर्षण के वश तैं उदयावली विषैं मिलावना, सो उदीरणा कहिए।

भावार्थ – जिन प्रकतिनि के निषेकनि का उदय काल न आया है, उदयावली तैं अधिक काल है, तिनकी स्थिति कौं घटाइ करि जे निषेक आवली मात्र काल विषैं उदय आवैं, तिन विषैं तिनके परमाणूनि कौं मिलावना, तिनके साथि ही उनका भी उदय होइ सो उदीरणा है। बहुरि अस्तित्व कहिए पुद्गलनि का कर्म रूप रहना, सो सत्त्व कहिए। बहुरि जो कर्म की स्थिति तिस स्थिति कौं प्राप्त होना, सो उदय कहिए, असा कह्या है ।। ४३९ ।।

उदये संकममुदये, चउसुवि दादुं कमेण णो सक्कं ।
उवसंतं च णिधत्तिं, णिकाचिदं होदि जं कम्मं ।।४४०।।

उदये संक्रमोदययोः, चतुर्ष्वपि दातुं क्रमेण नो शक्यं ।
उपशांतं च निधत्तिः, निकाचितं भवति यत्कर्म ।।४४०।।

टीका – जो कर्म उदयावली विषैं प्राप्त करने कौं समर्थ न हूजे, सो उपशांत कहिए। बहुरि जो कर्म उदयावली विषैं प्राप्त करने कौं वा अन्य-प्रकृति रूप संक्रमण करने कौं समर्थ हूजे, सो निधत्ति कहिए। बहुरि जो कर्म उदयावली विषैं प्राप्त करने कौं वा अन्य प्रकृतिरूप संक्रमण करने कौं वा उत्कर्षण वा अपकर्षण करने कौं समर्थ न हूजे, सो निकाचित कहिए ।।४४०।।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

ऐसें दश करण निरूपण करि प्रकृतिनि विषैं वा गुणस्थाननि विषैं जो ए करण संभवैं, ते कहिए हैं—

संकमणाकरणूणा, णवकरणा होंति सव्वआऊणं ।
सेसाणं दसकरणा, अपुव्वकरणोत्ति दसकरणा ॥४४१॥

संक्रमणकरणोनानि, नवकरणानि भवंति सर्वायुषां ।
शेषाणां दशकरणान्यपूर्वकरण इति दशकरणानि ॥४४१॥

टीका – च्यारि आयु तिनकैं संक्रमण-करण विना नव करण पाइए हैं, जातैं चारयों आयु परस्पर परिणमें नाहीं । अवशेष सर्व प्रकृतिनि कैं दश-करण पाइए है । बहुरि मिथ्यादृष्टयादिक अपूर्वकरण पर्यंत तो दश-करण पाइए हैं ॥४४१॥

आदिमसत्तेव तदो, सुहुमकसाओत्ति संकमेण विणा ।
छच्च सजोगित्ति तदो, सत्तं उदयं अजोगित्ति ॥४४२॥

आदिमसप्तैव ततः, सूक्ष्मकषाय इति संक्रमेण विना ।
षट् च सयोगीति ततः, सत्त्वमुदयः अयोगीति ॥४४२॥

टीका – तिस अपूर्व-करण गुणस्थान के ऊपरि सूक्ष्म-सांपराय पर्यंत उपशांत, निधत्ति, निकाचित बिना आदि के सात करण ही पाइए हैं । तहां भी संक्रम-करण बिना सयोगी पर्यंत छह करण ही पाइए हैं । तिसतैं ऊपरि अयोगी विषैं सत्त्व, उदय – ए दोय ही करण पाइए हैं ॥४४२॥

णवरि विसेसं जाणे, संकममवि होदि संतमोहम्मि ।
मिच्छस्स य मिस्सस्स य, सेसाणं णत्थि संकमणं ॥४४३॥

नवरि विशेषं जानीहि, संक्रममपि भवति शांतमोहे ।
मिथ्यस्य च मिश्रस्य च, शेषाणां नास्ति संक्रमणं ॥४४३॥

टीका – उपशांत-कषाय विषैं विशेष है, सो कहा ? मिथ्यात्व, मिश्र इन दोऊ प्रकृतिनि कैं तहां संक्रम-करण भी पाइए है । इनके परमाणूनि कौं सम्यक्त्वमोहनी रूप परिणमावै है । अवशेष प्रकृतिनि के छह ही करण हैं । ऐसें अपूर्वकरण विषैं तो उपशम, निधत्ति, निकाचित – ए तीन करण व्युच्छित्ति भए ।

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

अनिवृत्ति-करण, सूक्ष्मसांपराय विषैं व्युच्छित्ति शून्य। उपशांत-कषाय विषैं मिथ्यात्व, मिश्र इनके सात करण, औरनि के संक्रमण बिना छह करण हैं। क्षीणकषाय विषैं व्युच्छित्ति शून्य, सयोगी विषैं बंध, उत्कर्षण, अपकर्षण, उदीरणा – ए च्यारि करण व्युच्छित्ति भए। अयोगी विषै सत्व, उदय – ए दोय करण व्युच्छित्ति भए। अवशेष कथन सर्व सुगम है ॥४४३॥

बंधुक्कट्टकरणं, सगसगबंधोत्ति होदि णियमेण।
संकमणं करणं पुण सगसगजादीण बंधोत्ति ॥४४४॥

बंधोत्कर्षणकरणं, स्वकस्वकबंध इति भवति नियमेन।
संक्रमणं करणं पुनः, स्वकस्वकजातीनां बंध इति ॥४४४॥

टीका – बंध-करण अर उत्कर्षण-करण – ए तो दोऊ जिस-जिस प्रकृतिनि की जहां बंधव्युच्छित्ति भई, तिस-तिस प्रकृति का तहां ही पर्यंत जानने नियम करि। बहुरि जिस-जिस प्रकृति के जे-जे स्वजाति हैं, जैसे ज्ञानावरण की पांचों प्रकृति परस्पर स्वजाति हैं-ऐसैं स्वजाति-प्रकृतिनि की बंध की व्युच्छित्ति जहां भई, तहां पर्यंत तिन प्रकृतिनि कैं संक्रमण-करण जानना ॥४४४॥

ओक्कट्टणकरणं पुण अजोगिसत्ताण जोगिचरिमोत्ति।
खीणं सुहुमंताणं, खयदेसं सावलीयसमयोत्ति ॥४४५॥

अपकर्षणकरणं पुनरयोगिसत्त्वानां योगिचरम इति।
क्षीण सूक्ष्मांतानां, क्षयदेशं सावलिक समय इति ॥४४५॥

टीका – बहुरि अयोगी विषैं सत्व-रूप कही पिच्यासी-प्रकृति तिनकैं सयोगी का अंत समय पर्यंत अपकर्षण-करण जानना। बहुरि क्षीण-कषाय विषै सत्व तैं व्युच्छित्ति भई सोलह अर सूक्ष्मसांपराय विषैं सत्व तैं व्युच्छित्ति भया सूक्ष्म-लोभ इन सतरह-प्रकृतिनि कैं क्षयदेशपर्यंत अपकर्षण-करण जानना।

तहां क्षयदेश कहा? सो कहिए हैं—

जे प्रकृति अन्य प्रकृति रूप उदय देइ विनसै हैं, ऐसी परमुखोदयी प्रकृति हैं, तिनकैं तौ अंत-कांडक को अंत फालिक्षयदेश है। बहुरि अपने ही रूप उदय देइ विनसै हैं, ऐसी स्वमुखोदयी-प्रकृति तिनके एक-एक समय अधिक आवली प्रमाण काल क्षय-देश

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

है, तातें तिन सतरह प्रकृतिनि के एक समय अधिक आवली काल पर्यंत अपकर्षण-करण पाइए है ॥४४५॥

ठवसंतोत्ति सुराऊ, मिच्छत्तिय खवगसोलसाणं च ।
खयदेसोत्ति य खवगे, अट्ठकसायादिवीसाणं ॥४४६॥

उपशांत इति सुरायुर्मिथ्यत्रयं क्षपकषोडशानां च ।
क्षयदेश इति च क्षपके, अष्टकषायादिविंशानां ॥४४६॥

टीका – उपशांत-कषाय पर्यंत देवायु के अपकर्षण-करण हैं । बहुरि मिथ्यात्व सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक्त्व-प्रकृति ए तीन अर 'णिरयतिरिक्ख' इत्यादिक सूत्रोक्त अनिवृत्तिकरण विषें क्षय भईं सोलह-प्रकृति इनकें क्षय-देश पर्यंत अपकर्षण-करण है– अंत-कांडक का अंत का फालि पर्यंत है ऐसा अर्थ जानना । बहुरि आठ कषायनै आदि देकरि अनिवृत्ति-करण विषें क्षय भईं ऐसी बीस-प्रकृति तिन कें अपने-अपने क्षयदेश पर्यंत अपकर्षण-करण है । जिस स्थानक क्षय भया सो क्षयदेश कहिए है ॥४४६॥

मिच्छतियसोलसाणं, उवसमसेढिम्मि संतमोहोत्ति ।
अट्ठकसायादीणं, उवसमियट्ठाणगोत्ति हवे ॥४४७॥

मिथ्यत्रयषोडशानामुपशमश्रेण्यां शांतमोह इति ।
अष्टकषायादीनामुपशमिकस्थानक इति भवेत् ॥४४७॥

टीका – उपशम-श्रेणी विषें मिथ्यात्व, मिश्र, सम्यक्त्व-प्रकृति तीन अर नरक-द्विकादिक सोलह इनकें उपशांत-कषाय पर्यंत अपकर्षण-करण है । बहुरि अष्टकषायादिक तिनके अपने-अपने उपशमने के ठिकाने पर्यंत अपकर्षण करण है । प्रकृतिनि के नाम पूर्वें सत्ता कथन विषें कहे ही थे ॥४४७॥

पढमकसायाणं च विसंजोजकं वोत्ति अयददेसोत्ति ।
णिरयतिरियाउगाणमुदीरणसत्तोदया सिद्धा ॥४४८॥

प्रथमकषायाणां च विसंयोजकं वा इति अयतदेश इति ।
निरयतिर्यगायुषोरुदीरणसत्वोदयाः सिद्धाः ॥४४८॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com

Version 001: remember to check http://www.AtmaDharma.com for updates

टीका – अनंतानुबंधी-चतुष्क के असंयत, देशसंयत प्रमत्त, अप्रमत्तनि विषै यथासंभव जहां विसंयोजन होइ, तहां पर्यंत अपकर्षण-करण है। बहुरि नरकायु कौं असंयत पर्यंत, तिर्यंचायु के देश-संयत पर्यंत उदीरणाकरण, सत्त्वकरण, उदयकरण ए प्रसिद्ध हैं–पूर्वं कथन कीया ही था ॥४४८॥

मिच्छस्स य मिच्छोत्ति य उदीरणा उवसमाहिमुहियस्स।
समयाहियावलित्ति य सुहुमे सुहुमस्स लोहस्स ॥४४६॥

मिथ्यस्य च मिथ्येति चोदीरणा उपशमाभिमुखस्य।
समयाधिकावलीति च सूक्ष्मे सूक्ष्मस्य लोभस्य ॥४४६॥

टीका – मिथ्यात्व-प्रकृति के मिथ्यादृष्टि-गुणस्थान विषैं उपशम-सम्यक्त्व कौं सन्मुख भया जीव कैं एक समय अधिक आवली काल पर्यंत उदीरणा-करण हो है, तितने ही तिसका उदय है। बहुरि सूक्ष्म-लोभ कैं सूक्ष्मसांपराय विषैं ही उदीरणा करण हैं; जातैं अन्यत्र तिसका उदय नाही हैं ॥४४६॥

उदये संकममुदये चउसुवि दादुं कमेण णो सक्कं।
उवसंतं च णिधत्तिं णिकाचिदं तं अपुव्वोत्ति ॥

उदये संक्रमोदययोः चतुर्ष्वपि दातुं क्रमेण नो शक्यं।
उपशांतं च निधत्तिः निकाचितं तत् अपूर्वं इति ॥४५०॥

टीका – जो उदयावली विषैं प्राप्त करनें कौं समर्थ न हूजै असा उपशांत द्रव्य, बहुरि जो संक्रम वा उदय कौं प्राप्त करणे कौं समर्थ न हूजै असा निधत्ति-करण द्रव्य, बहुरि जो उदयावली संक्रम, उत्कर्षण, अपकर्षण कौं प्राप्त करने कौं समर्थ न हूजै – असा निकाचित-करण द्रव्य – सो ए तीनौं अपूर्व-करण गुणस्थान पर्यंत ही हैं, ऊपरि यथासंभव उदयावली आदि विषैं प्राप्त करने कौं समर्थ हूजै, असे ही कर्म-परमाणू पाइए है ॥४५०॥

इति दशकरणचूलिका।

इति आचार्य श्रीनेमिचंदविरचित गोम्टसार द्वितीय नाम पंचसंग्रह ग्रन्थ की जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम संस्कृत-टीका के अनुसारि सम्यग्ज्ञानचंद्रिका नाम भाषा टीका विषै कर्मकांड विषैं त्रिचूलिका नामा चौथा-अधिकार संपूर्ण भया ॥४॥

Please inform us of any errors on rajesh@AtmaDharma.com